हिंदुई साहित्य का इतिहास

हिंदुई साहित्य का इतिहास

गार्सां द तासी

की 'इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐंदूई ऐ ऐंदूस्तानी'
नामक फ्रांसीसी भाषा की पुस्तक से अनूदित

अनुवादक
लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
एम्० ए०, डी० फिल्०, डी० लिट्०

हिंदुस्तानी एकेडेमी, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण :: १९५३ :: २०००

मूल्य ७)

मुद्रक—एस० एस० शर्मा, आजाद प्रेस, इलाहाबाद

प्रकाशकीय

हिंदी साहित्य का सबसे पुराना इतिहास फ़्रांसीसी विद्वान् गार्सां द तासी कृत 'इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐंदूई ऐ ऐंदूस्तानी' है। इसका पहला संस्करण दो भागों में १८३९ तथा १८४७ में प्रकाशित हुआ था। दूसरा परिवर्द्धित संस्करण तीन भागों में १८७०-७१ में प्रकाशित हुआ था। हिंदी में लिखा हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास शिवसिंह सेंगर कृत 'शिवसिंहसरोज' है जो १८७७ में प्रकाशित हुआ था तथा अंग्रेज़ी में लिखा हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास सर जार्ज ग्रियर्सन कृत 'वर्नाक्यूलर लिटरेचर अव् हिंदुस्तान' १८८९ में प्रकाशित हुआ था।

फ़्रेंच में होने के कारण तासी के ग्रंथ का उपयोग अभी तक हिंदी साहित्य के विद्यार्थी नहीं कर सके हैं, न हिंदी साहित्य के इतिहासों में इस सामग्री का उपयोग हो सका है। तासी के ग्रंथ में हिंदी तथा उर्दू साहित्यों का परिचय मिश्रित रूप में है। डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने हिंदी साहित्य से संबंधित अंश का हिंदी अनुवाद मूल ग्रंथ के आधार पर किया है। ग्रंथ अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। हिंदुस्तानी एकेडेमी से इसके प्रकाशन पर हमें विशेष प्रसन्नता है।

धीरेंद्र वर्मा
मंत्री तथा कोषाध्यक्ष
हिंदुस्तानी एकेडेमी, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद।

अनुवादक की ओर से

हिन्दी साहित्य के इतिहास में उन्नीसवीं शताब्दी का जहाँ एक ओर आधुनिकता के बीजारोपण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान है, वहाँ दूसरी ओर साहित्य के इतिहास-निर्माण की दृष्टि से भी यह शताब्दी उल्लेखनीय है। तासी, सेंगर और ग्रियर्सन की कृतियों (क्रमशः १८३९, १८७७, १८८९ ई०) का जन्म उन्नीसवीं शताब्दी में ही हुआ था। उनमें से फ्रांसीसी लेखक गार्सां द तासी कृत फ्रेंच भाषा में लिखित 'इस्त्वार द ल लितेरत्यूर ऐंदूई ऐ ऐंदूस्तानी' (हिन्दुई और हिन्दुस्तानी साहित्य का इतिहास) का अपना विशेष स्थान है, क्योंकि हिन्दी साहित्य की दीर्घकालीन गाथा को सूत्रबद्ध रूप में स्पष्ट करने का यह सर्वप्रथम प्रयास था[1] और जिस वृत्त-संग्रह शैली के अंतर्गत सेंगर और ग्रियर्सन ने अपने ग्रन्थों का निर्माण किया उसका जन्म तासी के ग्रन्थ से ही होता है। वास्तव में जितनी विस्तृत सूचनाएं तासी के ग्रन्थ में उपलब्ध होती हैं वे अन्य दो ग्रन्थों में प्राप्त नहीं होतीं, इस दृष्टि से भी इस आदि इतिहास ग्रन्थ का महत्त्व है। यद्यपि तासी ने कवियों और उनकी रचनाओं को अविच्छिन्न जीवन की विविध परिस्थितियों के बीच

---

[1] सेंगर ने 'सरोज' की भूमिका में लिखा है: 'मुझको इस बात के प्रकट करने में कुछ संदेह नहीं कि ऐसा संग्रह कोई आज तक नहीं रचा गया।' तासी ने कवियों की कविताओं का संग्रह तो नहीं दिया, किन्तु 'कवियों के जीवन चरित्र सन् संवत्, जाति, निवास स्थान आदि' उनकी रचना से छः वर्ष पूर्व द्वितीय बार तासी द्वारा प्रस्तुत किए जा चुके थे।

रख कर आलोचनात्मक दृष्टि से परखने का प्रयास नहीं किया, और न काल-विभाजन का क्रम ही ग्रहण किया (यद्यपि, जैसा कि उनकी भूमिका से ज्ञात होता है, वे इस क्रम से अपरिचित नहीं थे और कुछ व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण ही वे ऐसा करने में असमर्थ रहे), तो भी उनके ग्रन्थ का मूल्य किसी प्रकार भी कम नहीं हो जाता, विशेष रूप से उस समय जब कि 'विनोद' (१९१३ ई०) की रचना के समय तक इतिहास-प्रणयन की तासी शैली अबाध रूप से प्रचलित रही। भाषा-संबंधी कठिनाई होने के कारण, ग्रियर्सन को छोड़ कर, हिन्दी साहित्य के अन्य किसी इतिहास-लेखक ने तासी द्वारा संकलित सामग्री की परीक्षा और उसका उपयोग भी नहीं किया। ऐसी परिस्थिति में तासी के इतिहास-ग्रंथ में से हिन्दुई (आधुनिक अर्थ में हिन्दी) से संबंधित अंश का प्रस्तुत अनुवाद निश्चय ही अपना महत्त्व रखता है।

तासी ने हिन्दुई और हिन्दुस्तानी शब्दों का जिस अर्थ में प्रयोग किया है उसके संबंध में मैं अपनी ओर से कुछ न कह कर पाठकों का ध्यान मूल ग्रन्थ की भूमिकाओं की ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ। ग्रन्थ लिखते समय उनका क्या दृष्टिकोण था और उसकी उन्होंने किस प्रकार रूपरेखा तैयार की, इसका परिचय भी उनकी भूमिकाओं में मिल जायगा। अतएव उसकी पुनरावृत्ति की यहाँ कोई आवश्यकता नहीं है।

मुझे इस बात का दुःख है कि प्रयत्न करने पर भी तासी का जीवन-संबंधी विवरण उपलब्ध न हो सका। इस समय उन्हीं के उल्लेखानुसार केवल इतना ही कहा जा सकता है कि वे फ्रांस के एक राजकीय और विशेष स्कूल में जीवित पूर्वी भाषाओं के प्रोफ़ेसर, और फ्रांसीसी इन्स्टीट्यूट, पेरिस, लंदन, कलकत्ता, मद्रास और बंबई की एशियाटिक सोसायटियों, सेंट पीटर्सबर्ग की इंपीरियल एकेडेमी ऑव साइन्सेज़, म्यूनिख़, लिस्बन और ट्यूरिन

की रॉयल एकेडेमियों, नॉर्वे, उप्सल और कोपेनहेगेन की रॉयल सोसायटियों, अमेरिका के ऑरिएंटल, लाहौर के 'अंजुमन' तथा अलीगढ़ इन्स्टीट्यूट के सदस्य थे। उन्होंने 'नाइट ऑव दी लिजियन ऑव ऑनर' (फ्रांस), 'स्टार ऑव दि साउथ पोल' आदि उपाधियाँ भी प्राप्त की थीं, और संभवतः युद्ध क्षेत्र से भी वे अपरिचित न थे। उनकी रचनाओं में 'इस्तवार' के अतिरिक्त 'ले ओत्यूर ऐंदूस्तानी ऐ ल्यूर उवरज़' (हिन्दुस्तानी लेखक और उनकी रचनाएँ, १८६८, पेरिस, द्वितीय संस्करण), 'ल लाँग ऐ ल लितेरत्यूर ऐंदूस्तानी द १८५० अ १८६९' (१८५० से १८६९ तक हिन्दुस्तानी भाषा और साहित्य), 'दिस्कुर द उवरत्यूर दु कुर द ऐंदूस्तानी' (हिन्दुस्तानी की प्रारंभिक गति पर भाषण, १८७४, पेरिस, द्वितीय संस्करण), 'ल लाँग ऐ ल लितेरत्यूर ऐंदूस्तानी—रेव्यू ऐन्युऐल, १८७०-१८७६' (हिन्दुस्तानी भाषा और साहित्य-वार्षिक समीक्षा, १८७०-१८७६, १८७१ और १८७३-१८७६ में पेरिस से प्रकाशित), 'रुदीमाँ द ल लाँग ऐंदूई' (हिन्दुई भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त), 'रुदीमाँ द ल लाँग ऐंदूस्तानी' (हिन्दुस्तानी भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त), 'मेम्वार सूर ल रेलीजिओं मुसलमान दाँ लिंद' (भारत में मुसलमानों के धर्म का विवरण), 'ल पोएज़ी फ़िलोसोफ़ीक ऐ रेलीज्यूस शे लै पैर्सां' (फ़ारस-निवासियों का दार्शनिक और धार्मिक काव्य), 'र्हतोरीक दै नैसिओं मुसलमान' (मुसलमान जातियों का काव्य-शास्त्र) आदि रचनाएं विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उनके अनेक भाषण भी मिलते हैं। उनके इतिहास ग्रन्थ से ज्ञात होता है कि उन्होंने भारत के लोकप्रिय उत्सवों का विवरण भी प्रस्तुत किया था, और 'महाभारत' का एक संस्करण भी प्रकाशित किया था। उनके कुछ भाषण तो 'ख़ुतबात तासी' के नाम से उर्दू में अनूदित हो चुके हैं। उनके अन्य किसी ग्रन्थ का अनुवाद उपलब्ध नहीं हो सका। प्रस्तुत अनुवाद उनके इतिहास-

ग्रन्थ में से हिन्दुई से संबंधित अंश का सर्वप्रथम अनुवाद है। उनके इस ग्रन्थ का पूर्ण या आंशिक अनुवाद न तो अँगरेज़ी में है और न अन्य किसी भारतीय भाषा में।

तासी कृत 'इस्त्वार' के दो संस्करण हैं। प्रथम संस्करण दो जिल्दों में, क्रमशः १८३९ और १८४७ में, ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड की ऑरिएंटल ट्रान्सलेशन कमिटी की अध्यक्षता में प्रकाशित हुआ। ऑरिएंटल ट्रान्सलेशन फ़ंड की स्थापना लंदन में १८२८ में हिज़ मोस्ट ग्रेशस मेजेस्टी विलियम चतुर्थ के संरक्षण में हुई थी। जिस समय प्रथम संस्करण की प्रथम जिल्द प्रकाशित हुई उस समय सर जी० टी० स्टॉन्टन (Staunton), बार्ट०, एम० पी०, एफ़० आर० एस०, रॉयल एशियाटिक सोसायटी के उप-सभापति ऑरिएंटल ट्रान्सलेशन कमिटी के उप-प्रधान सभापति थे। उन्होंने ऑरिएंटल ट्रान्सलेशन फ़ंड में रुपया भी दिया था। पहली और दूसरी दोनों जिल्दें श्री ल गार्द दे सो (M. le Garde des Sceaux) की आज्ञा से फ़्रांस के राजकीय मुद्रणालय में छपी थीं और लंदन तथा पेरिस दोनों नगरों में बिक्री के लिए रखी गई थीं। प्रथम संस्करण की पहली जिल्द के मुख्यांश में भूमिका के बाद हिन्दी और उर्दू के सात सौ अड़तीस (७३८) कवियों और लेखकों की जीवनियां और ग्रंथों का उल्लेख है। अंत में परिशिष्ट और लेखकों तथा ग्रन्थों की अनुक्रमणिकाएँ अलग हैं। उसमें कुल मिला कर XVI और ६३० पृष्ठ हैं। प्रथम संस्करण की दूसरी जिल्द में उद्धरण और विश्लेषण हैं। भूमिका के पश्चात् प्रारम्भ में कबीर, पीपा, मीराबाई, तुलसी-दास, बिल्व-मंगल, पृथीराज, मधुकर साह, अग्रदास, शंकराचार्य, नामदेउ, जयदेव, रैदास, रांका और बाँका, माधोदास, रूप और सनातन से संबंधित प्रसिद्ध 'भक्तमाल' से फ़्रेंच में अनूदित विवरण उद्धृत हैं। तत्पश्चात् तासी ने बाइबिल की कथाओं से तुलना करते हुए और ईश्वरावतार, गोप-गोपियों,

भारतीय विवाह-प्रथा, जाति-प्रथा, तथा अन्य रीति-रस्मों आदि का परिचय देने की दृष्टि से कुछ अंशों का शब्दशः फ्रेंच में अनुवाद और कुछ का अपनी भाषा में सार प्रस्तुत किया है। उदाहरण स्वरूप, कंस-वध, शंख-जन्म, द्वारिका-स्थापना, राजसूय-यज्ञ, नरकासुर, ऋतु-वर्णन, मथुरा-वर्णन आदि ऐसे ही प्रसंग हैं। अनुवाद या सार प्रस्तुत करते समय उन्होंने मूल 'प्रेमसागर' के अध्यायों के क्रम का अनुसरण नहीं किया। 'प्रेमसागर' को तासी काफ़ी महत्त्व देते थे और उसका उन्होंने जिस प्रकार विश्लेषण किया है उससे उनके कट्टर ईसाई होने का प्रमाण मिलता है। 'प्रेमसागर' के बाद तुलसी कृत 'सुंदर-काण्ड' का और फिर 'सिंहासन बत्तीसी' के प्रारम्भिक अंश का अनुवाद है। इस दूसरी जिल्द के शेषांश का संबंध उर्दू से है जिसमें 'आराइश-इ महफ़िल', सौदा कृत लाहौर के कवि फ़िदवी पर तथा अन्य व्यंग्य, गज़ल, क़सीदा, मसनवी आदि फ्रेंच में अनूदित हैं। अन्त में विषय-सूची है। कुल मिला कर उसमें XXXII और ६०८ पृष्ठ हैं।

प्रथम संस्करण की दूसरी जिल्द में दिए गए उद्धरण और विश्लेषण द्वितीय संस्करण में मुख्यांश में जीवनी और ग्रन्थों के विवरणों के साथ ही दे दिए गए हैं। जैसे, जहाँ 'कबीर' का उल्लेख हुआ है वहीं उनसे सम्बन्धित 'भक्तमाल' वाला अंश भी है, अलग नहीं है। अपवाद-स्वरूप केवल 'मधुकर साह' और 'राँका और बाँका' हैं। इन दोनों का उल्लेख न तो प्रथम संस्करण की पहली जिल्द में और न द्वितीय संस्करण की किसी जिल्द में है। अतः वे प्रस्तुत अनुवाद के परिशिष्ट ४ और ५ के अन्तर्गत रख दिए गए हैं।

द्वितीय परिवर्द्धित और संशोधित संस्करण तीन जिल्दों में है। पहली और दूसरी जिल्दें १८७० में और तीसरी जिल्द १८७१ में

प्रकाशित हुई। द्वितीय संस्करण पेरिस की 'सोसिएते एसियातीक' (एशियाटिक सोसायटी) के पुस्तक-विक्रेता अदोल्फ लबीत (Adolphe Labitte) द्वारा प्रकाशित और हेनरी प्लौं (Henri Plon) द्वारा मुद्रित है। पहली जिल्द में प्रस्तावना और लम्बी भूमिका के बाद एक हज़ार दो सौ तेईस (१२२३), दूसरी जिल्द में एक हज़ार दो सौ (१२००), और तीसरी जिल्द में छोटी-सी विज्ञप्ति के बाद आठ सौ एक (८०१) कवियों और लेखकों का उल्लेख है। दूसरी जिल्द में कोई विज्ञप्ति, प्रस्तावना और भूमिका नहीं है और इस गणना में तीसरी जिल्द के अंत में परिशिष्ट में दिए गए कवियों और लेखकों की संख्या सम्मिलित नहीं है। तीसरी जिल्द के अंत में उर्दू से संबंधित एक संयोजित अंश (Post-Scriptum) के बाद ग्रन्थों और समाचारपत्रों-सम्बन्धी दो परिशिष्ट और लेखकों तथा ग्रन्थों की दो अनुक्रमणिकाएँ हैं। तीनों जिल्दों में क्रमशः IV, ७१ तथा ६२४, ६०८ और VIII तथा ६०३ पृष्ठ हैं।

प्रस्तुत अनुवाद में सम्मिलित कवियों और लेखकों की संख्या तीन सौ अट्ठावन (३५८) है जिनमें से केवल बहत्तर (७२) का उल्लेख प्रथम संस्करण की पहली जिल्द में हुआ है। इन तीन सौ अट्ठावन (३५८) में से कुछ कवि और लेखक ऐसे हैं जो प्रधानतः उर्दू के हैं (इस बात का अनुवाद में यथास्थान उल्लेख कर दिया गया है)। उन्हें इसलिए सम्मिलित कर लिया गया है क्योंकि या तो उनका हिन्दी की कुछ प्रसिद्ध रचनाओं से संबंध है, जैसे जवाँ और विला का 'सिंहासन बत्तीसी', 'बैताल पचीसी' आदि से, अथवा जिनकी किसी रचना का हिन्दी में अनुवाद हुआ बताया गया है, अथवा जिनकी कोई रचना हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं में प्रकाशित हुई, अथवा जिनकी कुछ रचनाओं के लिए तासी ने 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग किया है (क्योंकि उर्दू के

लिए प्राय: 'हिन्दुस्तानी' शब्द का प्रयोग हुआ है), उदाहरण के लिए, करीमबख़्श, कालीचरण, काशी-नाथ, चिरंजीलाल ज़मीर, जवाहरलाल हकीम, तमीज़, नज़ीर, फ़रहत, महदी, वज़ीर अली, वहशत, शिवनारायण, सदासुखलाल, सफ़दर अली, हुकूमत राय आदि ऐसे ही लेखक हैं। कुछ कवि या लेखक स्पष्टत: मराठी या गुजराती के हैं, जैसे, चोकमेल, तुकाराम, जनार्दन, रामचन्द्र जी, दामा जी पन्त, मोरोपन्त, मुक्तेश्वर, वामन, नाथभाई तिलकचंद आदि। किन्तु क्योंकि तासी ने हिन्दी या हिन्दुई कवियों के रूप में उनका उल्लेख किया है, इसलिए उन्हें भी प्रस्तुत अनुवाद में सम्मिलित कर लिया गया है। सिक्ख धर्म से संबंधित सभी कवियों के अतिरिक्त तानसेन और बैजू बावरा जैसे प्रसिद्ध गायकों को भी अनुवाद में स्थान दे दिया गया है क्योंकि उन्हें कुछ हिन्दुई गीतों का रचयिता बताया गया है।

प्रस्तुत अनुवाद प्रथम और द्वितीय दोनों संस्करणों के सम्मिलित आधार पर किया गया है। प्रथम संस्करण की पहली जिल्द में सम्मिलित बहत्तर (७२) कवियों में से कुछ का तो ज्यों-का-त्यों विवरण द्वितीय संस्करण में मिलता है, और कुछ के संबंध में जिनमें हिन्दी के प्रसिद्ध कवि कबीर, तुलसी, सूर आदि भी सम्मिलित हैं, नवीन सामग्री मिलती है। इसलिए प्रस्तुत अनुवाद में प्राचीन और नवीन दोनों प्रकार की सामग्री है। इसके अतिरिक्त मूल फ्रेंच के दोनों संस्करणों की तुलना करने से ज्ञात होता है कि कहीं कुछ शब्दों के हिज्जों में अन्तर मिलता है, कहीं-कहीं प्रथम संस्करण की बातें द्वितीय संस्करण में नहीं हैं, कहीं-कहीं वर्णन क्रम में कुछ परिवर्तन है, कहीं-कहीं विराम-चिह्नों में अंतर मिलता है, प्रथम संस्करण में अनेक कवियों, लेखकों और ग्रन्थों आदि के नाम फ़ारसी और देवनागरी लिपि में हैं, किन्तु द्वितीय संस्करण में सर्वत्र रोमन लिपि का व्यवहार किया

गया है। वास्तव में द्वितीय संस्करण में न केवल कुछ कवियों के संबंध में नवीन सामग्री ही उपलब्ध होती है, वरन् उसमें अनेक नवीन कवियों और लेखकों का भी उल्लेख हुआ है। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम साठ-सत्तर वर्षों के गद्य-लेखकों का उल्लेख द्वितीय संस्करण की विशेषता है। तासी के उल्लेखों से यह प्रमाणित हो जाता है कि गद्य के विकास में नवीन शिक्षा ने भारी योग प्रदान किया। और जैसा कि पहले कहा जा चुका है, प्रथम संस्करण की दूसरी जिल्द की सामग्री का उपयोग द्वितीय संस्करण के मुख्यांश में ही हो गया है। प्रस्तुत अनुवाद के अंत में मूल के परिशिष्टों और 'मधुकर साह' और 'राँका और बाँका' संबंधी परिशिष्टों के अतिरिक्त 'जै देव' और 'संकर आचार्य' को भी परिशिष्टों में रख दिया गया है। मूल परिशिष्टों के अनुवाद में ऐतिहासिक या विषय के महत्त्व की दृष्टि से कुछ अहिन्दी पुस्तकें भी सम्मिलित कर ली गई हैं। तासी द्वारा 'भक्तमाल' से लिए गए अवतरणों का फ्रेंच से हिन्दी में अनुवाद करते समय मैंने छप्पय सर्वत्र और कुछ अन्य उपयुक्त अंश मूल 'भक्तमाल' से ही ले लिए हैं, जिनकी ओर यथास्थान फुटनोट में संकेत कर दिया गया है। तासी ने सर्वत्र अकारादिक्रम ग्रहण किया है। प्रस्तुत अनुवाद में रोमन के स्थान पर देवनागरी अकारादिक्रम ग्रहण किया गया है जिससे कवियों, लेखकों और ग्रन्थों आदि का वह क्रम नहीं रह गया जो मूल फ्रेंच में है।

अनुवाद करते समय इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि जहाँ तक हो सके अनुवाद मूल के समीप रहे। मूल लेखक विदेशी था, इसलिए अनेक शब्दों को ठीक-ठीक समझने और लिखने में उसने भूल की है। अनुवाद में उन्हें शुद्ध रूप में लिखने की चेष्टा नहीं की गई; उन्हें उसी रूप में रहने दिया गया है जिस रूप में तासी ने लिखा है। इसीलिए प्रस्तुत पुस्तक में अनेक शब्दों और

नामों के हिज्जे ऐसे मिलेंगे जो हिन्दी या उर्दू भाषाभाषियों की दृष्टि से स्पष्टतः अशुद्ध हैं। ऐसे अनेक शब्दों और लगभग सभी यूरोपीय व्यक्तिवाचक नामों को रोमन लिपि में लिख दिया गया है ताकि कोई भ्रम न रह जाय। जहाँ मैंने अपनी ओर से कुछ कहा है उसका द्योतन 'अनु०' शब्द से हुआ है।

कुछ असाधारण परिस्थितियों के कारण कवियों और लेखकों तथा सभी ग्रन्थों की अनुक्रमणिका प्रस्तुत अनुवाद के अंत में नहीं दी जा सकी। मुख्य भाग (अ से ह तक) में उल्लिखित कवियों और लेखकों की सूची तो प्रारम्भ में दे दी गई है। अनुवाद के मुख्य भाग (अ से ह तक) में आए केवल ग्रन्थों, पत्रों और प्रधान यूरोपीय लेखकों की अनुक्रमणिका अन्त में है।

अनुवाद में विस्तृत टीका-टिप्पणियाँ देने का भी विचार था, क्योंकि कुछ तो स्वयं तासी ने अशुद्धियाँ की हैं और कुछ नवीनतम खोजों के प्रकाश में उनकी सूचनाएँ पुरानी पड़ गई हैं। किन्तु एक तो पुस्तक का आकार बढ़ जाने के भय से और दूसरे इस विचार से कि खोज-विद्यार्थी अपनी स्वतन्त्र खोज के फलस्वरूप निष्कर्ष निकालेंगे ही, टीका-टिप्पणियाँ देने का विचार छोड़ दिया गया।

तासी ने हिन्दी-उर्दू के मूल ग्रन्थों का अवलोकन करने के साथ-साथ भारतीय तथा यूरोपीय विद्वानों द्वारा निर्मित संदर्भ-ग्रन्थों का आश्रय भी ग्रहण किया था। जिन लेखकों और उनके संदर्भ-ग्रन्थों का उन्होंने उपयोग किया उनमें से प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार हैं:

१. जनरल हैरियट : 'मेम्वार ऑन दि कबीरपंथी'

२. एच० एच० विल्सन : 'मेम्वार ऑन दि रिलीजस सेक्ट्स ऑव दि हिन्दूज़'
'मैकैन्ज़ी कलेक्शन की भूमिका'

'हिन्दू थिएटर'
'एशियाटिक रिसर्चेज़' में प्रकाशित
उनके लेख

३. कनिंघम : 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस'
४. डब्ल्यू० प्राइस : 'हिन्दी एन्ड हिन्दुस्तानी सलेक्शन्स'
५. ब्राउटन : 'पॉप्युलर पोयट्री ऑव दि हिन्दूज़'
६. मौंट्गोमरी मार्टिन : 'इस्टर्न इंडिया'
७. जनार्दन रामचन्द्र : 'कवि चरित्र' (मराठी)
८. नाभादास : 'भक्तमाल'
९. कृष्णानन्द व्यासदेव : 'राग कल्पद्रुम'
१०. ... : 'आदि ग्रंथ'
११. रोएबक : 'ऐनल्स ऑव दि कॉलेज ऑव फ़ोर्ट विलियम'
१२. टॉड : 'ऐनल्स ऑव राजस्थान'
'ट्रैविल्स'
१३. वॉर्ड : 'हिस्ट्री (या व्यू) ऑव दि लिट्रेचर एट्सीटरा ऑव दि हिन्दूज़'
१४. गिलक्राइस्ट : 'ग्रैमर', 'अलर्टीमेटम', 'हिन्दी मैनुअल'
१५. विलड : 'ए ट्रिटाइज़ ऑन दि म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान'
१६. लैंग्लुवा : 'मान्यूमाँ लितरेअर द लिंद'
१७. लशिंगटन : 'कैलकटा इन्स्टीट्यूशन्स'
१८. एच० एस० रीड : 'रिपोर्ट ऑन दि इन्डेजेनस ऐज्यूकेशन'
१९. सेडन : 'ऐड्रेस ऑन दि लैंग्वेज ऐंड लिट्रेचर ऑव एशिया'
२०. तासी : 'रुदीमाँ', भाषण
२१. 'प्रोसीडिंग्स ऑव दि वर्नाक्यूलर सोसायटी'
२२. 'प्रीमीटी ऑरिएंटालिस'

२३. लाँसरो : 'क्रिस्तोमेती' (विविध संग्रह)

२४. लासेन का प्राथमिक संग्रह

२५. 'हिस्ट्री ऑव दि सेक्ट ऑव दि महाराजाज़'

इसके अतिरिक्त उन्होंने दोशोआ, फ़िट्ज़ एड्वर्ड हॉल, कोलब्रुक, ब्यूकैनैन, मार्कस अ तुम्बा आदि अन्य अनेक लेखकों के लेखों और उनके द्वारा संपादित संस्करणों का उपयोग किया।

'कवि वचन सुधा', 'सुधाकर' आदि अनेक हिन्दी-उर्दू-पत्रों की फ़ाइलों के अतिरिक्त जिन अँगरेज़ी और फ्रेंच के पत्रों का तासी ने आश्रय ग्रहण किया उनमें से प्रमुख इस प्रकार हैं :

१. 'ज़ूर्ना दे सावाँ'

२. 'नूवो ज़ूर्ना एसियातीक'

३. 'ज़ूर्ना एसियातीक'

४. 'एशियाटिक जर्नल'

५. 'एशियाटिक रिसर्चेज़'

६. 'जर्नल एशियाटिक सोसायटी ऑव बेंगाल (या कैलकटा)'

७. 'जर्नल ऑव दि बॉम्बे ब्रांच ऑव रॉयल एशियाटिक सोसायटी'

८. 'जर्नल ऑव दि रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑव लंदन'

९. 'कलकत्ता रिव्यू'

जिन पुस्तक-सूचियों, गज़ट आदि से तासी ने सहायता ली उनमें से प्रमुख के नाम इस प्रकार हैं :

१. जे० लौंग : 'डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग' (ऑव बेंगाली वर्क्स)

२. ज़ेंकर : 'बिबलिओथेका ऑरिएंटालिस'

३. 'आगरा गवर्नमेंट गज़ट'

४. 'ट्रूबनर्स लिट्रेरी रेकॉर्ड्स'

५. सर डब्ल्यू० आउज़ले के संग्रह (ऑरिएंटल कॉलेज) का सूचीपत्र (स्टीवर्ट द्वारा तैयार किया गया)

६. 'जनरल कैटैलौग ऑव ऑरिएंटल वर्क्स' (आगरा)
७. टीपू के पुस्तकालय का सूचीपत्र
८. फ़ोर्ट विलियम कॉलेज के पुस्तकालय का सूचीपत्र
९. विल्मेट पुस्तकालय का सूचीपत्र
१०. स्प्रेंगर : 'ए कैटैलौग ऑव दि लाइब्रेरीज़ ऑव दि किंग ऑव अवध'
११. 'ए डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग ऑव मैकेन्ज़ीज़ कलेक्शन'
१२. मार्सडेन की पुस्तकों का सूचीपत्र
१३. 'कैटैलौग ऑव नेटिव पब्लिकेशन्स इन दि बॉम्बे प्रेसीडेंसी'
१४. हैमिल्टन और लैंग्ले (Lànglés) : 'सड़क रिशल्यू के पुस्तकालय का सूचीपत्र'
१५. ई० एच० पामर द्वारा प्रस्तुत प्राच्य हस्तलिखित ग्रन्थों का सूचीपत्र
१६. 'बिब्लिओथेका रिशल्यू'
१७. 'बिब्लिओथेका स्प्रेंगरिआना'

अंत में, जिन पुस्तकालयों और संग्रहों का तासी के ग्रन्थ में उल्लेख हुआ है वे इस प्रकार हैं :

१. जाँती संग्रह (Fonds Gentil)
२. पोलिए संग्रह (Fonds Polier)
. लीडेन संग्रह (Fonds Leyden)
४. बोर्जिया संग्रह (Fonds Borgia)
५. उएसाँ संग्रह
६. मैकेन्ज़ी संग्रह
७. डंकन फ़ोर्ब्स का संग्रह

८. पेरिस का राजकीय पुस्तकालय
९. ईस्ट इंडिया हाउस का पुस्तकालय (इंडिया ऑफ़िस लाइब्रेरी)
१०. मुहम्मद बख़्श ख़ाँ का पुस्तकालय
११. ट्यूबिन्गेन का पुस्तकालय
१२. लीड का पुस्तकालय
१३. रॉयल एशियाटिक सोसायटी का पुस्तकालय
१४. टीपू का संग्रह
१५. फ़ोर्ट विलियम कॉलेज का पुस्तकालय
१६. किंग्स कॉलेज (केम्ब्रिज) का पुस्तकालय

हिन्दी साहित्य के विद्वानों ने इस समस्त सामग्री और संग्रहों से कहाँ तक लाभ उठाया है, यह विचारणीय है।

× × ×

आज से तीन वर्ष पूर्व मैंने तासी के ग्रन्थ से हिन्दुई-अंश का अनुवाद करना प्रारम्भ किया था। धीरे-धीरे वह पूर्ण हुआ। अब एक सौ चौदह वर्ष बाद हिन्दी साहित्य के इस ऐतिहासिक महत्त्व से पूर्ण आदि इतिहास-ग्रन्थ को विद्वानों के सामने रखते हुए मुझे स्वाभाविक प्रसन्नता हो रही है।

पुस्तक-प्रकाशन की स्वीकृति और सुविधा के लिए मैं हिन्दुस्तानी एकेडेमी के मंत्री श्री डॉ० धीरेन्द्र जी वर्मा एम्० ए०, डी० लिट्० (पेरिस) और श्री रामचन्द्र जी टण्डन, एम्० ए०, एल०-एल० बी० का आभारी हूँ। अनुवाद करते समय तालिकाएँ तैयार करने तथा इसी प्रकार के अन्य कार्यों में श्रीमती राज वार्ष्णेय बी० ए० ने जो सहायता पहुँचाई है वह भी किसी प्रकार कम नहीं है।

पुस्तक की अनुक्रमणिका तैयार करने के लिए मैं श्री माधव प्रसाद पांडेय, एम्० ए० का कृतज्ञ हूँ।

लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय

हिन्दी विभाग,

यूनिवर्सिटी, इलाहाबाद

मंगलवार, फागुन सुदी ११, सं० २००६ वि०

(२४ फ़रवरी, १९५३)

विषयानुक्रम

[मूल के प्रथम संस्करण का समर्पण]

ग्रेट ब्रिटेन की सम्राज्ञी को

देवि,

यह नितान्त स्वाभाविक है कि मैं सम्राज्ञी से एक ऐसा ग्रन्थ समर्पित करने का सम्मान प्राप्त करने की प्रार्थना करूँ जिसका संबंध भारतवर्ष, आपके राजदण्ड के अंतर्गत आए हुए इस विस्तृत और सुन्दर देश, और जो इतना खुशहाल कभी नहीं था जितना कि वह इँगलैंड के आश्रित होने पर है, के साहित्य के एक भाग से है। यह तथ्य सर्वमान्य है; और, इसके अतिरिक्त, आधुनिक हिन्दुस्तानी-लेखक इस का प्रमाण देते हैं : जिस ब्रिटिश शासन के अंतर्गत न तो लूट का भय है और न देशी सरकारों का अत्याचार है, उसका उनकी रचनाओं में यश-गान हुआ है।

हिन्दुस्तान के प्राचीन शासकों में, एक महिला ही थी जिसने अपने व्यक्तिगत गुणों के कारण ही सम्भवत: अत्यधिक ख्याति प्राप्त कर ली थी। कृपालु सम्राज्ञी की भाँति गुणों से विभूषित राजकुमारी के मंगल सिंहासनारूढ़ होने का समाचार सुनकर, देशवासियों को अपनी प्रिय सुल्ताना रज़िया को स्मरण करना पड़ा। वास्तव में, विक्टोरिया रानी में उन्होंने रज़िया का तारुण्य और उसके अलभ्य गुण फिर पाए हैं; और केवल यही बात उनका उस देश के साथ संबंध और भी दृढ बना सकती है जिसके उनका अधीन होना ईश्वरेच्छा थी।

मैं हूँ, अत्यधिक आदर सहित,

देवि,

सम्राज्ञी,

अत्यन्त तुच्छ और अत्यन्त आज्ञाकारी दास,

पेरिस, १५ अप्रैल, १८३९ गार्सां द तासी

प्रथम संस्करण (१८३९) की पहली जिल्द

की

भूमिका

ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे सन् की १६वीं शताब्दी से पूर्व भारत की आधुनिक भाषाओं ने सर्वत्र वेदों की पवित्र भाषा का स्थान ग्रहण कर लिया था। भारत के प्राचीन साम्राज्य में जिसका विकास हुआ उसे सामान्यतः 'भाषा' या 'भाखा', और विशेषतः 'हिन्दवी' या 'हिन्दुई' (हिन्दुओं की भाषा), के नाम से पुकारा जाता है। महमूद ग़ज़नवी के आक्रमण के समय इस नवीन भाषा का पूर्ण विकास न हो पाया था। बहुत बाद को, सत्रहवीं शताब्दी के लगभग अंत में, दिल्ली में पठान-वंश की स्थापना के समय, हिन्दुओं और ईरानियों के पारस्परिक सम्बन्धों के फल-स्वरूप, मुसलमानों द्वारा विजित नगरों में विजयी और विजित की भाषाओं का एक प्रकार का मिश्रण हुआ। प्रसिद्ध विजेता तैमूर के दिल्ली पर अधिकार प्राप्त कर लेने के समय यह मिश्रण और भी स्थायी हो गया। सेना का बाजार नगर में स्थापित किया जाता था, और जो तातारी शब्द 'उर्दू' द्वारा सम्बोधित होता था, जिसका ठीक-ठीक अर्थ है 'सेना' और 'शिविर'। यहीं पर ख़ास तौर से हिन्दू-मुसलमानों की नई (मिश्रित) भाषा बोली जाती थी ; साथ ही उसे सामान्य नाम 'उर्दू भाषा' भी मिला, यद्यपि कवि-गण उसे 'रेख़्ता' (मिश्रित) के नाम से पुकारते हैं। इसी समय के लग-भग, भारत के दक्षिण में, नर्मदा के दक्षिण में उत्तरोत्तर स्थापित किए गए विभिन्न राज्यों के शासक मुसलमान-वंशों के अंतर्गत समान भाषा सम्बन्धी घटना घटित हुई ; और हिन्दू-मुसलमानों की मिश्रित भाषा ने एक विशेष

नाम 'दक्खिनी' (दक्षिण की) ग्रहण किया। मध्ययुगीन फ्रांस की 'उई' (oil) और 'ओक' (oc) की भाँति, इन दोनों बोलियों का[१] भारत में प्रचार हो गया है, एक का उत्तर में, दूसरी का दक्षिण में, जहाँ कहीं भी मुसलमानों ने अपने राज्य स्थापित किए, जब कि पुरानी बोली का प्रयोग अब भी गाँवों में, उत्तरी प्रान्तों के हिन्दुओं में, होता है;[२] किन्तु यद्यपि शब्दों के चुनाव में ये बोलियाँ एक दूसरे से भिन्न हैं, तो भी, उचित बात तो यह है कि वे अपनी-अपनी वाक्य-रचना-पद्धति के अंतर्गत एक ही और समान बोलियाँ हैं, और वे हमेशा 'हिन्दी' या 'हिन्द की'[३] के अनिश्चित नाम से तथा यूरोपियन लोगों द्वारा 'हिन्दुस्तानी' के नाम से पुकारी जाती हैं; और जिस प्रकार जर्मन लेटिन या गोथिक अक्षरों में लिखी जाती है, उसी प्रकार स्थान और व्यक्तियों की रुचि के अनुसार हिन्दुस्तानी[४] लिखने

---

[१] सेडन (Seddon) का ठीक ही कहना है ('स्पीचेस ऑन दि लैंग्वेज ऐंड लिटरेचर ऑव एशिया'— एशिया की भाषा और साहित्य पर भाषण) कि उर्दू और दक्खिनी का हिन्दुई के साथ वही संबंध है जो उइगूर (Ouïgour) का तुर्की और सैक्सन का अंगरेजी के साथ है।

[२] फ़ारसी और अरबी शब्दों के मिश्रण से रहित हिन्दी 'ठेठ' या 'खड़ी बोली' (शुद्ध भाषा) कही जाती है; ब्रज प्रदेश की खास बोली, 'ब्रज भाखा' उन आधुनिक बोलियों में से है जो पुरानी हिन्दुई के सब से अधिक निकट है; अंत में 'पूर्वी भाखा', उसी बोली का एक दूसरा प्रकार जो दिल्ली के पूर्व में बोली जाती है।

[३] संक्षेप में, यह स्पष्ट है, कि हिन्दुस्तानी पुरानी हिन्दुस्तानी या हिन्दुई, और आधुनिक हिन्दुस्तानी में विभक्त है। हिन्दुई का काल वहाँ से प्रारंभ होता है जहाँ से संस्कृत का समाप्त होता है। आधुनिक का तीन बोलियों में उप-विभाजन है, दो उत्तर में, एक दक्षिण में। उत्तर की है उर्दू या मुसलमानी बोली, और ब्रज भाखा या हिन्दुओं की बोली (ठीक, या लगभग, पुरानी हिन्दुई)। दक्षिण की बोली या दक्खिनी का प्रयोग केवल मुसलमानों द्वारा होता है।

[४] हिन्दुस्तानी अरबी या भारतीय अक्षरों में लिखी जाती है। प्रथम या तो नस्तालीक या नस्खी, या शिकस्ता है। नस्तालीक का सबसे अधिक प्रयोग होता है।

के लिए भी यद्यपि आज कल फ़ारसी अक्षरों का प्रयोग किया जाता है, हिन्दू, अपने पूर्वजों की भाँति प्रायः देवनागरी अक्षरों का प्रयोग करते हैं।[१]

मैंने यहाँ हिन्दुस्तानी के राजनीतिक या व्यावसायिक लाभों के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा। इस तथ्य का, निर्विवाद होने के अतिरिक्त, मेरे विषय के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। किन्तु, पहले तो, बोलचाल की भाषा के रूप में, हिन्दुस्तानी को समस्त एशिया में कोमलता और विशुद्धता की दृष्टि से जो ख्याति प्राप्त है वह अन्य किसी को नहीं है।[२] फ़ारसी की एक कहावत कही जाती है जिसके अनुसार मुसलमान अरबी को पूर्वी मुसलमानों की भाषाओं के आधार और अत्यधिक पूर्ण भाषा के रूप में, तुर्की को कला और सरल साहित्य की भाषा के रूप में, और फ़ारसी को काव्य, इतिहास, उच्च स्तर के पत्र-व्यवहार की भाषा के रूप में मानते हैं। किन्तु जिस भाषा ने समाज की सामान्य परिस्थितियों में अन्य तीनों के गुण ग्रहण किए हैं वह हिन्दुस्तानी है, जो बोलचाल की भाषा और व्यावहारिक प्रयोग के, जिनके साथ उसका विशेष सम्बन्ध स्थापित किया जाता है, रूप में उनसे बहुत-कुछ मिलती-जुलती है।[3] वह वास्तव में भारत की

नस्ख़ी का दक्षिण के कुछ प्रदेशों में प्रयोग होता है। शिकस्ता घसीट नस्तालीक अक्षर है। भारतीय अक्षर या तो देवनागरी या कैथी नागरी हैं; नागरी के और भी थोड़े-बहुत विभिन्न रूप हैं। औरों के अतिरिक्त, कबीर की कविताओं का अक्षर कैथी नागरी है: कलकत्ते से कुछ पुस्तिकाएँ छापने के लिए उसका व्यवहार किया गया है। पत्र और कुछ हस्तलिखित ग्रंथ घसीट नागरी अक्षरों में लिखे जाते हैं।

१ जहाँ मैंने लेखकों के नाम और रचनाओं के शीर्षक मूल अक्षरों में दिए हैं, मैंने, अवसर के अनुकूल, अरबी या संस्कृत वर्णमाला का प्रयोग किया है।

२ देखिए जो कुछ दिल्ली के अम्मन ने इसके संबंध में कहा है, मेरी 'रुदीमाँ' में उद्धृत, (प्रथम संस्करण का) पृ० ८०।

३ सेडन, 'ऐड्रेस ऑन दि लैंग्वेज ऐंड लिट्रेचर ऑव एशिया', पृ० १२

सबसे अधिक अभिव्यंजना-शक्ति-सम्पन्न और सबसे अधिक शिष्ट प्रचलित भाषा है, यहाँ तक कि उसके सामान्य प्रयोग का कारण जानना अत्यधिक लाभदायक है।[१] वह अपने आप दिन भर में एक नवीन महत्त्व ग्रहण कर लेती है। दफ़्तरों और अदालतों में तो उसने फ़ारसी का स्थान ग्रहण कर ही लिया है; निस्सन्देह वह शीघ्र ही राजनीतिक पत्र-व्यवहार में भी उसका स्थान ग्रहण कर लेगी।

लिखित भाषा के रूप में, प्रसिद्ध भारतीयविद्याविशारद विल्सन, जिनके शब्द ज्यों-के-त्यों मैंने इस लेख के लिए ग्रहण किए हैं, के साथ मैं कह सकता हूँ: 'हिन्दी की बोलियों का एक साहित्य है जो उनकी विशेषता है, और जो अत्यधिक रोचक है'; और यह रोचकता केवल काव्य-गत ही नहीं, ऐतिहासिक और दार्शनिक भी है; हम पहले हिन्दुस्तानी के ऐतिहासिक महत्त्व की परीक्षा करेंगे। हिन्दुई में, जो हिन्दुस्तान की रोमांस की भाषा भी कही जा सकती है, जिसे मैं भारत का मध्ययुग कह सकता हूँ उससे संबंधित महत्त्वपूर्ण पद्यात्मक विवरण हैं। उनके महत्त्व का अनुमान बारहवीं शताब्दी में लिखित चन्द के काव्य, जिससे कर्नल टॉड ने 'ऐनल्स ऑव राजस्थान'[२] की सामग्री ली, और सत्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ में लिखित लाल कवि कृत बुन्देलों का इतिहास रचना से, जिससे मेजर पॉग्सन (Pogson) ने हमें परिचित कराया था, लगाया जा सकता है। यदि यूरोपीय अब तक ऐसी बहुत कम रचनाओं से परिचित रहे हैं, तो इसका यह तात्पर्य नहीं कि वे और हैं ही नहीं। प्रसिद्ध अँगरेज़ विद्वान् जिसे मैंने अभी उद्धृत किया है हमें विश्वास दिलाता है कि इस

---

१ सात करोड़ से भी अधिक के लगभग भारतीय ऐसे हैं जिनकी मातृभाषा हिन्दुस्तानी है।

२ इस लेखक तथा उसकी प्रसिद्ध कविता के संबंध में मैंने 'रुदीमाँ द लाँग ऐंदुई' की भूमिका और अपने १८६८ के भाषण में जो कुछ कहा उसे देखिए, पृ० ४९ और ५०।

प्रकार की अनेक रचनाएँ राजपूताने[1] में भरी पड़ी हैं।[2] केवल एक उत्साही यात्री उनकी प्रतियाँ प्राप्त कर सकता है।

हिन्दुई और हिन्दुस्तानी में जीवनी सम्बन्धी कुछ रोचक रचनाएँ भी मिलती हैं। १६ वीं शताब्दी के अंत में लिखित, अत्यधिक प्रसिद्ध हिन्दू सन्तों की एक प्रकार की जीवनी 'भक्तमाल' प्रधान है।

जहाँ तक दार्शनिक महत्त्व से सम्बन्ध है, यह उसकी विशेषता है और यह विशेषता हिन्दुस्तानी को एक बहुत बड़ी हद तक उन्नत आत्माओं द्वारा दिया गया अपनापन प्रदान करती है। वह भारतवर्ष के धार्मिक सुधारों की भाषा है। जिस प्रकार यूरोप के ईसाई सुधारकों ने अपने मतों और धार्मिक उपदेशों के समर्थन के लिए जीवित भाषाएँ ग्रहण कीं; उसी प्रकार, भारत में हिन्दू और मुसलमान संप्रदायों के गुरुओं ने अपने सिद्धांतों के प्रचार के लिए सामान्यतः हिन्दुस्तानी का प्रयोग किया है। ऐसे गुरुओं में कबीर, नानक, दादू, बीरभान, बख़्तावर, और अंत में अभी हाल के मुसलमान सुधारकों में, अहमद नामक एक सैयद हैं। न केवल उनकी रचनाएँ ही हिन्दुस्तानी में हैं, वरन् उनके अनुयायी जो प्रार्थना करते हैं, वे जो भजन गाते हैं, वे भी उसी भाषा में हैं।

अंत में, हिन्दुस्तानी साहित्य का एक काव्यात्मक महत्त्व है, जो न तो किसी दूसरी भाषा से हीन है, और न जो वास्तव में कम है। सच तो यह है कि प्रत्येक साहित्य में एक अपनापन रहता है जो उसे आकर्षण-

---

[1] 'मैकेन्ज़ी कैटेलौग', पहला जिल्द, पृ० ५२ (lij)—१

[2] 'हर गुले रा रंगो बूए दीगरेस्त' (फ़ारसी लिपि से)। इस चरण का अन्वय अफ़सोस ने भी अपने 'आराइश-इ-महफ़िल' में किया है :

हर एक गुल का है रंगो आलम जुदा
नहीं लुत्फ़ से कोई ख़ाली ज़रा

(फ़ारसी लिपि से)

पूर्ण बनाता है, प्रत्येक पुष्प की भाँति जिसमें, एक फ़ारसी कवि [१] के कथनानुसार, अलग-अलग रंग ओ बू रहती है। भारतवर्ष वैसे भी कविता का प्रसिद्ध और प्राचीन देश है; यहाँ सब कुछ पद्य में है—कथाएँ, इतिहास, नैतिक रचनाएँ, कोष, यहाँ तक कि रुपए की गाथा भी [१]। किन्तु जिस विशेषता का मैं उल्लेख कर रहा हूँ वह केवल कर्ण-सुखद शब्दों के सुन्दर सामंजस्य में, अलंकृत पंक्तियों के कम या अधिक अनुरूप क्रम में ही नहीं है; उसमें कुछ अधिक वास्तविकता है, यहाँ तक कि प्रकृति और भूमि सम्बन्धी उपयोगी विवरण भी उसी में हैं, जिनसे कम या ग़लत समझे जाने वाले शब्द-समूह की व्याख्या प्रस्तुत करने वाले मानव-जाति सम्बन्धी विस्तार ज्ञात होते हैं। मैं इतना और कहूँगा कि हिन्दुस्तानी कविता धर्म और उच्च दर्शन के सर्वोत्कृष्ट सिद्धान्तों के प्रचलित करने में विशेषतः प्रयुक्त हुई है। वास्तव में, उर्दू कविता का कोई संग्रह खोल लीजिए, और आपको उसमें मनुष्य और ईश्वर के मिलन-सम्बन्धी विविध रूपकों के अंतर्गत वे ही बातें मिलेंगी। सर्वत्र भ्रमर और कमल, बुलबुल और गुलाब, परवाना और शमा मिलेंगे।

हिन्दुस्तानी साहित्य में जो अत्यधिक प्रचुर हैं, वे दीवान, या ग़ज़ल-संग्रह, समान गति की एक प्रकार की कविता (ode) और विशेषतः दक्खिनी में, पद्यात्मक कथाएँ हैं। इन्हीं चीज़ों का फ़ारसी और तुर्की में स्थान है और इन तीनों साहित्यों में अनेक बातें समान हैं। हिन्दुस्तानी में अनेक अत्यन्त रोचक लोकप्रिय गीत भी हैं, और यही भाषा है जिसका वर्तमान भारत के नाटकों में बहुत सामान्य रूप से प्रयोग होता है।

मुझे यह कहना पड़ता है कि हिन्दुस्तानी साहित्य का बहुत बड़ा भाग, फ़ारसी, संस्कृत और अरबी से अनूदित है; किन्तु ये अनुवाद प्रायः महत्त्वपूर्ण होते हैं, क्योंकि वे मूल के कठिन और संदिग्ध अंशों की व्याख्या करने के साधन सिद्ध हो सकते हैं; कभी-कभी ये अनुवाद ही हैं जो

---

[१] दे० 'आईन-इ-अकबरी' और मार्सडेन (Marsden) द्वारा 'न्यूमिस्मैटा ओरिएंटालिआ' (Numismata Orientalia) शीर्षक रचना।

दुर्भाग्यवश खोई हुई मूल रचनाओं के स्थान पर काम आते हैं।[1] जहाँ तक फ़ारसी से अनूदित कही जाने वाली कथाओं से सम्बन्ध है, वे वास्तविक अनुवाद होने के स्थान पर अनुकरण मात्र हैं और परिचित कथाएँ ही नए ढंग से प्रस्तुत की गई हैं ; अथवा एक सुन्दर अनुकरण हैं, जो कभी-कभी मूल की अपेक्षा अच्छी रहती हैं; उनकी रोचकता में कोई कमी नहीं होती।[2] इसके अतिरिक्त मेरे विचार से हिन्दुस्तानी रचनाएँ फ़ारसी की रचनाओं (प्रायः जिनकी विशेषता अत्यधिक अतिशयोक्ति रहती है) से अधिक स्वाभाविक होती हैं। वास्तव में इस साहित्य का स्थान फ़ारसी की अतिशयोक्तियों और संस्कृत की उच्च कोटि की सरलता के बीच में है।

यूरोप में लगभग अज्ञात इसी साहित्य का विवरण मैं प्रस्तुत करना चाहता हूँ। मेरी इच्छा उसे समृद्ध बनाने वाले और विद्वानों का ध्यान आकृष्ट करने वाले सभी प्रकार के पद्य और गद्य-ग्रन्थों की ओर संकेत करने की है। इसके लिए मैंने अनेक हिन्दुस्तानी-ग्रन्थों का अध्ययन किया है, और उससे भी अधिक सरसरी निगाह से देखे हैं। जहाँ तक हो सका है मैंने अधिक से अधिक हस्तलिखित ग्रन्थ प्राप्त करने की चेष्टा की है; सार्वजनिक और निजी पुस्तकालयों के हिन्दुस्तानी भण्डारों से परिचित होने के लिए मैं दो बार इँगलैंड गया हूँ, और मुझे यह बात ख़ास तौर से कहनी है

---

[1] उदाहरण के लिए, जैसा, मेरा विचार है, 'बैताल पचीसी' (तथा अन्य अनेक रचनाओं) का हाल है। सुरत पर लेख देखिए।

[2] विला ने 'तारीख़-इ- शेर शाही' के संबंध में जो कहा है वही अन्य सभी अनुवादों के संबंध में कहा जा सकता है : 'अपने तौर पर इसकी फ़ारसी चाहे जितनी पूर्ण हो, मैं भी अंत में इसे पूर्ण बना सका हूँ।'

गर चे अपनो तौर पर थी फ़ारसी इसकी तमाम
लेक अच्छी तरह पाया इसने हुस्ने इनसिराम

(फ़ारसी लिपि से)

बंगाल की एशियाटिक सोसायटी के उत्साही मंत्री की स्नेहपूर्ण उदारता के कारण मुझे इस ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रति प्राप्त हो सकी।

कि मुझे संग्रह बहुत अच्छे मिले, और सहायता अत्यन्त उदार मिली। हिन्दुस्तानी के हस्तलिखित ग्रन्थों का जो सबसे अच्छा संग्रह मुझे मिल सका, वह ईस्ट इंडिया हाउस के पुस्तकालय का है, और इस पुस्तकालय में विशेषतः लीडन (Leyden) संग्रह इस प्रकार का सर्वोत्तम संग्रह है। डॉ० लीडन फ़ोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दुस्तानी के परीक्षक थे[1]; उन्होंने इस भाषा का काफ़ी अध्ययन किया था। वास्तव में जो हिन्दुस्तानी की जिल्दें उन्होंने तैयार की हैं उसमें इतने अन्य अनेक प्राच्यविद्याविशारदों ने सहयोग प्रदान किया है, कि साहित्यिक जनता को देने के लिए उन्होंने मुझे जितने की आज्ञा प्रदान की थी उससे भी अधिक विवरण मैं प्रस्तुत कर सकता हूँ।

उन ग्रन्थकारों के लिए जिनके बारे में मुझे ज्ञात नहीं था, और अन्य के संबंध में कुछ विस्तार दे सकने के लिए, मुझे सामान्यतः जीवनियों और मूल संग्रहों का आश्रय लेना पड़ा है। इस प्रकार ग्रन्थ जो मुझे प्राप्त हो सके, या जिन्हें कम-से-कम मैं देख सका, निम्नलिखित हैं :

१. 'निकात् उसृशौअरा', अथवा कवियों के सुन्दर शब्द, मीर कृत, फ़ारसी में लिखित हिन्दी जीवनी ;

२ 'तज़्किरा-इ शौअरा-इ हिन्दी', अथवा हिन्दी कवियों का विवरण, मुसहफ़ी (Mushafi) कृत, फ़ारसी में ही लिखित;

३. 'तज़्किरा-इ शौअरा-इ हिन्दी', अथवा हिन्दी कवियों का विवरण, फ़तह अली हुसैनी कृत, फ़ारसी में ही;

४. 'गुलज़ार-इ इब्राहीम' (वही), नवाब अली इब्राहीम ख़ाँ कृत ;

५. 'गुलशन-इ हिन्द', अथवा भारत का बाग़, लतीफ़ कृत, हिन्दुस्तानी में लिखित हिन्दी जीवनी ;

---

[1] ये वही विद्वान् हैं जिन्होंने डब्ल्यू० अर्सकिन(Erskine) द्वारा पूर्ण और शुद्ध किए गए और एडिनबरा से, १८२६ में प्रकाशित मुग़ल सुलतान बाबर के संस्मरणों का अनुवाद किया है, चौपेजा।

६. 'दीवान-इ जहाँ', हिन्दुस्तानी संग्रह, बेनी नरायन कृत ;

७. 'गुलदस्ता-इ निशात', अथवा ख़ुशी का गुलदस्ता, मन्नू लाल कृत, फ़ारसी और हिन्दुस्तानी में एक प्रकार का वर्णनात्मक संग्रह ।

इन रचनाओं में से सबसे अधिक बड़ी रचना अली इब्राहीम की है ।[1] उसमें लगभग तीन सौ कवियों के संबंध में सूचनाएँ, और उनकी रचनाओं से प्रायः बड़े-बड़े उद्धरण हैं । लेखक ने इस जीवनी को जो 'गुलज़ार-इ इब्राहीम' या अब्राहम का बाग़, शीर्षक दिया है, उसका सम्बन्ध अपने निजी नाम और साथ ही पूर्वपुरुष अब्राहम से है ।[2] हमारे जीवनी-लेखक ने १७७२ से १७८४, बारह वर्ष तक इस ग्रन्थ पर परिश्रम किया । उस समय वह बंगाल में, मुर्शिदाबाद में, रहता था ।

जिन अन्य रचनाओं का मैंने उल्लेख किया है उनके सम्बन्ध में मैं कुछ न कहूँगा; उनके रचयिताओं से सम्बन्धित लेखों में उनके बारे में कहा जायगा ।

दुर्भाग्यवश ये तज़्किरे बहुत कम सन्तोषजनक रूप में लिखे गए हैं । उनमें प्रायः उल्लिखित कवियों के नाम और उनकी प्रतिभा के उदाहरण-स्वरूप उनकी रचनाओं से कुछ पद्य उद्धृत किए हुए मिलते हैं । अत्यधिक विस्तृत सूचनाओं में, उनकी जन्म-तिथि प्रायः कभी नहीं मिलती, मृत्यु-तिथि

---

[1] मेरे पास उसकी दो प्रतियाँ हैं । सबसे अधिक प्राचीन, 'शाह-नामा' के संपादक, स्व० टर्नर मैकन (Turner Macan) की है; दूसरी मेरे आदरणीय मित्र श्री ट्रौयर (Troyer) के माध्यम द्वारा, भारत में, मेरे लिए उतारी गई थी । पहली, यद्यपि शिकस्ता में लिखी हुई है, बहुत सुंदर नस्तालीक में चित्रित दूसरी से अच्छी है; किन्तु दोनों में भद्दी ग़लतियाँ और वैसी ही भूलें पाई जाती हैं, विशेषतः दूसरी में ।

[2] इस अंतिम संकेत को समझने के लिए, यह जानना ज़रूरी है कि, मुसलमानों के अनुसार, अग्नि-पूजा के संस्थापक, निमरूद (Nemrod) ने, विश्वासियों के पिता द्वारा इस तत्व की पूजा अस्वीकृत होने पर, अब्राहम को एक जलती हुई भट्ठी में फेंक दिया था, किन्तु यह भट्ठी फूलों की क्यारी में परिवर्तित हो गई ।

और व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित विस्तार मुश्किल से मिलते हैं। उनकी रचनाओं के सम्बन्ध में भी लगभग कुछ नहीं कहा गया, इसी प्रकार उनके शीर्षकों के बारे में; हमारी समझ में यह कठिनाई से आता है कि इन कवियों ने अपने अस्थायी पद्यों का संग्रह 'दीवान' में किया है, और इस बात का संकेत केवल इसलिए प्राप्त होता है क्योंकि जिन कवियों ने एक या कई ऐसे संग्रह प्रकाशित किए हैं वे 'दीवान के रचयिता' कहे जाते हैं, जो शीर्षक उन्हें अन्य लेखकों से अलग करता है, और जो 'महा कवि' का समानार्थवाची प्रतीत होता है। इन तज़्किरों का ख़ास उपयोग यह है कि जिन कवियों की रचनाएँ यूरोप में अज्ञात हैं उनके उनमें अनेक अवतरण मिल जाते हैं। मूल जीवनी-लेखकों में से मीर एक ऐसे हैं जो उद्धृत पद्यों के सम्बन्ध में कभी-कभी अपना निर्णय देते हैं; वे दूसरों से ली गई बातों और कुछ हद तक अनुपयुक्त और त्रुटिपूर्ण प्रतीत होने वाली अभिव्यंजनाएँ चुनते हैं, और जिस कवि के अवतरण वे उद्धृत करते हैं उनमें किस तरह होना चाहिए था प्रायः यह बताते हैं। इसके अतिरिक्त, यदि विश्वास किया जाय तो ख़ास तौर से उर्दू कवियों से सम्बन्धित जीवनियों में उनका जीवनी-ग्रन्थ सबसे अधिक प्राचीन है।[१]

अन्य मूल तज़्किरों में से जिन तक मेरी पहुँच हो सकी है अनेक का उल्लेख मेरे प्रस्तुत ग्रन्थ में हुआ है, किन्तु जिनकी एक भी प्रति के यूरोप में होने के सम्बन्ध में मैं नहीं जानता। तो भी दो ऐसे हैं जिनका मैं यहाँ उल्लेख करना चाहता हूँ : वे दोनों सर गोर (Gore) के भाई, सर डब्ल्यू० आउज़्ले (Ouseley) के सुन्दर संग्रह में हैं। पहला अबुल-हसन कृत तज़्किरा है; उसका इस संग्रह के मुद्रित सूचीपत्र में नं० ३७४ के अन्तर्गत, अकारादि क्रम से रखे गए, हिन्दुस्तानी में लिखने वाले कवियों के एक इतिहास रूप में उल्लेख हुआ है। नं० ३७१ के अन्तर्गत उल्लिखित, दूसरा 'तज़्किरा-इ शौअरा-इ जहाँगीर शाही' शीर्षक, अर्थात् सुलतान जहाँगीर

[१] 'निकात उस्शौअरा' की भूमिका।

के शासन-काल में रहने वाले कवियों का विवरण, है। लेखक ने तो इस बात का उल्लेख नहीं किया, किन्तु यह कहा जाता है कि उसमें उल्लिखित अनेक कवियों ने फ़ारसी में लिखा, लोगों का अनुमान है कि अन्य ने हिन्दुस्तानी में लिखा; और वह एक उर्दू का जीवनी-ग्रन्थ ही है। मैं ये दोनों तज़्किरे नहीं देख सका; किन्तु यदि, जैसी कि मुझे आशा है, दूसरी जिल्द छपने से पूर्व मुझे उनके सम्बन्ध में सूचना प्राप्त हो गई, तो निस्संदेह उनके द्वारा मुझे नवीन और अजीब बातें ज्ञात होंगी।

मौलिक जीवनियाँ जो मेरे ग्रन्थ का मूलाधार हैं सब अकारादिक्रम से रखी गई हैं। मैंने यही पद्धति ग्रहण की है, यद्यपि शुरू में मेरा विचार काल-क्रम ग्रहण करने का था : और, मैं यह बात छिपाना नहीं चाहता कि, यह क्रम अधिक अच्छा रहता, या कम-से-कम जो शीर्षक मैंने अपने ग्रन्थ को दिया है उसके अधिक उपयुक्त होता; किन्तु मेरे पास अपूर्ण सूचनाएँ होने के कारण उसे ग्रहण करना कठिन ही था। वास्तव में, जब मैं उसके सम्बन्ध में कहना चाहता हूँ, मौलिक जीवनियाँ हमें यह नहीं बतातीं कि उल्लिखित कवियों ने किस काल में लिखा; और यद्यपि उनमें प्रायः काफ़ी अवतरण दिए गए हैं, तो भी उनसे शैली के सम्बन्ध में बहुत अधिक विचार नहीं किया जा सकता, क्योंकि प्रतिलिपि करते समय उनमें ऐसे पाठ-सम्बन्धी परिवर्तन हो गए हैं जो उन्हें आधुनिक रूप प्रदान कर देते हैं, चाहे कभी-कभी वे प्राचीन ही हों। जहाँ तक हिन्दुई लेखकों से सम्बन्ध है, उनकी भी अधिकांश रचनाओं की निर्माण-तिथियाँ निश्चित नहीं हैं। यदि मैंने काल-क्रम वाली पद्धति ग्रहण की होती, तो अनेक विभाग स्थापित करने पड़ते : पहले में मैं उन लेखकों को रखता जिनका काल अच्छी तरह ज्ञात है; दूसरे में उनको जिनका काल सन्देहात्मक है; अंत में, तीसरे में, उन्हें जिनका काल अज्ञात है। यही विभाजन उन रचनाओं के लिए करना पड़ता जिन्हें इस ग्रन्थ के प्रधान अंश में स्थान नहीं मिल सका। अपना कार्य सरल बनाने और पाठक की सहूलियत दोनों ही दृष्टियों से मुझे यह पद्धति छोड़ने के लिए बाध्य होना पड़ा।

तो मैंने उन लेखकों को अकारादिक्रम से रखा है जिनके नाम मैं संग्रहीत कर सका हूँ, और तत्पश्चात्, परिशिष्ट शीर्षक के अंतर्गत, उन रचनाओं की सूची रख दी है जिनका जीवनियों में कोई स्थान नहीं हो सकता था; और यद्यपि हिन्दुस्तानी साहित्य का यह विवरण स्वभावतः बहुत पूर्ण न हो, यह है भी ऐसा हो, किन्तु मैं यह विश्वास करने का साहस करता हूँ, कि इसमें रोचकता का अभाव नहीं है : क्योंकि अभी इस विषय पर कुछ लिखा नहीं गया, और यूरोपियनों में हिन्दुस्तानी के अध्ययन के प्रचारक, स्वयं गिलक्राइस्ट हिन्दी के किन्हीं तीस लेखकों का उल्लेख मुश्किल से कर सके थे। आज, मेरे पास सामग्री की कमी होने पर भी, मैंने केवल इस पहली जिल्द में सात सौ पचास लेखकों[1] और नौ सौ से अधिक रचनाओं का उल्लेख किया है। प्रसंगवश, मैंने उर्दू-लेखकों की फ़ारसी रचनाओं का उल्लेख किया है और यह जानकर किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि काफ़ी हिन्दुस्तानी कवियों ने फ़ारसी छन्द और इसी भाषा में ही ग्रन्थ लिखे हैं, जो इस बात की याद दिलाते हैं कि रसीन (Racine), ब्वालो (Boileau), और चौदहवें लुई के काल के बहुत से अत्यधिक प्रसिद्ध कवियों ने यदि अपनी कविताओं में लेटिन के कुछ अंश न रखे होते, तो वे अपने कार्यों के सम्बन्ध में एक ख़राब धारणा उत्पन्न करने वाले माने जाते !

हिन्दुई के लेखकों की परंपरा बारहवीं शताब्दी से प्रारंभ होकर हम लोगों के समय तक आती है।[2] उत्तर के मुसलमान लेखकों की तेरहवीं

---

[1] मुझे यहाँ हिन्दुस्तानी रचनाओं के भारतीय संपादकों, और डॉ० गिलक्राइस्ट तथा अन्य यूरोपियनों द्वारा नियुक्त उनकी पुनर्निरीक्षण करने वालों के संबंध में कहना चाहिए था; किन्तु आगे अवसर आने पर उनके संबंध में कहना अच्छा रहेगा।

[2] संभवतः भारतीय नरेशों के पुस्तकालयों में प्राचीन काल की हिन्दी रचनाएँ हैं; किन्तु अभी तक यूरोपियनों को उनके बारे में ज्ञात नहीं है। लोकप्रिय गीतों से जहाँ तक संबंध है, वे तो निस्संदेह बहुत प्राचीन मिलते हैं; दूसरी जिल्द में मैं उनके संबंध में कहूँगा।

शताब्दी के अंत या चौदहवीं शताब्दी के प्रारंभ में कुछ कविताएँ मिलती हैं। किन्तु इस साहित्य को प्रकाश में लाने वाले प्रसिद्ध कवियों के लिए अठारहवीं शताब्दी पर आना पड़ेगा : सौदा, मीर, हसन। दक्खिनी लेखकों की परंपरा सोलहवीं शताब्दी से प्रारंभ होती है, और अखण्ड रूप में हम लोगों के समय तक आती है। हिन्दी साहित्य की यह शाखा, जो अँगरेजों द्वारा नितान्त उपेक्षित रही है, मुझे विविधि प्रकार की रचनाओं की दृष्टि से अधिक समृद्ध प्रतीत होती है। मेरे ग्रन्थ में उसे एक उच्च स्थान प्राप्त हुआ है।

मेरे ग्रन्थ की दो जिल्दें हैं। पहली, जिसे मैं इस समय प्रकाशित कर रहा हूँ, में हैं : १. विवरण जो लगभग हिन्दी-लेखकों से सम्बन्धित हैं; २. परिशिष्ट में अज्ञात लेखकों और यूरोपियन लेखकों की रचनाओं से सम्बन्धित संक्षिप्त सूचनाएँ हैं[१]; ३. अंत में, एक लेखकों की, और दूसरी रचनाओं की, दो अनुक्रमणिकाएँ हैं, जो इस प्रकार की रचना में अनिवार्य हैं। खोज-कार्य को और अधिक सरल बनाने के लिए, मैंने इसी एक जिल्द में जीवनी और ग्रन्थ-सम्बन्धी सभी अंश रख दिए हैं, जिससे यह पूर्ण हो गई है; इस जिल्द का और आकार न बढ़ाने तथा लेखों के अनुपात में समानता रखने के लिए, मैंने केवल अलभ्य और छोटे उद्धरण दिए हैं। अत्यधिक बड़े अंश और रूपरेखाएँ मैंने दूसरी जिल्द के लिए रख छोड़ी हैं। वह वास्तव में संग्रह भाग होगा। उसमें होंगे : १. प्रधान हिन्दी-रचनाओं के उद्धरण और रूपरेखाएँ; २. हिन्दुस्तानी पर प्रकाशित प्रारंभिक रचनाओं की सूची; ३. जीवनी और ग्रन्थों में परिवर्धन शीर्षक के अंतर्गत,

---

[१] जिन रचनाओं की ओर मैंने संकेत किया है उनके अतिरिक्त, अन्य अनेक हैं जो मुझे 'किताब' या 'पोथी' (पुस्तक); 'क़िस्सा', 'हिकायत' या 'नक्ल' (कथा); 'मसनवी', 'क़सीदा,' 'रिसाला-मन्ज़ूमा' (कविता) आदि अनिश्चित शीर्षकों के उल्लेख से, इधर-उधर मिली हैं—पूर्व की खराब परंपरा के अनुसार न पढ़े जाने वाले शीर्षकों तथा बिना शीर्षक की रचनाओं को छोड़ कर।

मैं वे नई सूचनाएँ दूँगा जो मुझे पहली जिल्द की छपाई के दौरान और उसके बाद मिलेंगी।[१]

मुझे एक कर्त्तव्य पूर्ण करना शेष रह जाता है, वह है ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड की पूर्वी-ग्रन्थ-अनुवाद समिति (Committee of Oriental Translations) के माननीय सदस्यों, और विशेषत: उन के आदरणीय सभापति, सर गोर आउज़्ले (Sir Gore Ouseley), को धन्यवाद देना है, जिन्होंने, एक बड़े दान द्वारा, एक ऐसे ग्रन्थ के प्रकाशन को प्रोत्साहन दिया जिसके लिए नियम अनुकूल नहीं थे। उन्होंने एक ऐसे ग्रन्थ के प्रकाशन के साधन की सुविधाएँ भी मुझे प्रदान की हैं जिसमें नए तथ्य प्रकट किए गए हैं जो सम्भवतः उनकी व्यापक सहायता के बिना अभी बहुत दिनों तक उपेक्षित पड़े रहते।

ऑरिएंटल ट्रान्सलेशन फ़ंड के नियमों की ३३ वीं (xxxiii) धारा के अनुसार मैंने जो हिज्जे ग्रहण किए हैं उनके बारे में बताना आवश्यक है। ये हिज्जे वही हैं जो 'Aventures de Kâmrûp' (कामरूप की साहसपूर्ण कथा) में रखे गए हैं, और जिन्हें मैंने, प्रस्तुत ग्रंथ की भाँति, पूर्वी-ग्रंथ-अनुवाद समिति के तत्वावधान में मुद्रित उक्त ग्रन्थ की भूमिका में विकसित किया है।

मैं यह आत्मश्लाघा करने का साहस करता हूँ कि इसमें त्रुटियों के मिलने पर भी[२] साहित्यिक अध्ययनों का आदर करने वाले मेरे ग्रंथ को प्रसन्नता के साथ पढ़ेंगे; और इस सम्बन्ध में वली के साथ कहने की आज्ञा देंगे :

---

[१] कुछ शुद्धियों और अनेक नई बातों सहित, मुझे इस जिल्द के अंत में ही दे देनी चाहिए थी; किन्तु इसे बहुत बड़ा न बनाने के ख़याल से मैं उन्हें दूसरी जिल्द में दूँगा।

[२] अन्य के अतिरिक्त, व्यक्तिवाचक नामों के संबंध में, पूरा ध्यान देने पर भी असावधानी से काफ़ी अनिश्चितता रह गई है। मैं पाठकों की विद्वत्ता पर छोड़ता हूँ कि वे उन्हें ठीक कर लेंगे।

'मैं पारखियों के सामने अपनी रचना रखता हूँ, वैसे ही जैसे जौहरी से परखवाने के लिए रत्न।'[1]

वही है मेरे हर्फ़ का क़द्रदाँ
कि जौहर न बूझे बजुज़ जौहरी
(फ़ारसी लिपि से)

---

१ मेरे संस्करण का पृ० १२२

प्रथम संस्करण की दूसरी जिल्द (१८४७)
की
भूमिका

इस इतिहास की पहली जिल्द की भूमिका में, मैंने केवल एक दूसरी और अंतिम जिल्द की घोषणा की थी; किन्तु जीवनी और ग्रंथों-संबंधी मिलीं नवीन सूचनाएँ इतनी प्रचुर हैं कि मुझे इस ग्रंथ के शेष भाग को दो जिल्दों में विभाजित करना पड़ा।

इस समय प्रकाशित होने वाली जिल्द, जिसमें अवतरण और रूप-रेखाएँ हैं, के लिए सामग्री का अभाव नहीं रहा; किन्तु उसकी प्रचुरता के अनुरूप दिलचस्पी नहीं रही; क्योंकि हिन्दुई और हिन्दुस्तानी रचनाओं के संबंध में वही कहा जा सकता है जो मार्शल (Martial) ने अपनी हास्योत्पादक छोटी कविताओं के बारे में कहा है :

Sunt bona, sunt quaedam mediocria.
Sunt mala plura

मैंने ग्रंथ प्राप्त करने, बहुत-सों को पढ़ने; उनका विश्लेषण करने, उनमें से अनेक का अनुवाद करने में अत्यधिक समय व्यतीत किया है : किन्तु जो अंश मेरे सामने थे, या जिन्हें मैंने तैयार कर लिया था, उनका बहुत बड़ा भाग मुझे छोड़ देना पड़ा, क्योंकि या तो वे हमारे आचार विचारों के अत्यधिक विरुद्ध थे, या क्योंकि उनमें अनैतिक बातों का उल्लेख है या

वे अश्लीलता से दूषित हैं,[1] या अंत में क्योंकि वे ऐसे अलंकारों से भरे हुए हैं जिन्हें यूरोपीय पाठकों के लिए समझना असम्भव है।[2]

हिन्दुई रचनाओं से लिए गए उद्धरण, जो 'भक्तमाल' से लिए गए हैं, जितने महत्त्वपूर्ण हैं उतने ही अधिक रोचक हैं, क्योंकि उनमें उल्लिखित अधिकतर हिन्दू सन्त उनके शिष्यों द्वारा सुरक्षित धार्मिक हिन्दुई कविताओं के रचयिता हैं, और जिनके उद्धरण इस पुस्तक में पाए जायँगे।

'प्रेम सागर' पर मैंने विस्तार से दिया है, क्योंकि यह रचना वस्तुतः अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उसके पद्य हिन्दुई में हैं, और शेष वे प्राचीन रूपान्तर हैं, या संभवतः वे परंपरा द्वारा सुरक्षित लोकप्रिय भजनों के अंश हैं। गद्य अधिक आधुनिक शैली है, और लगभग सामान्य हिन्दी में है ;[3] किंतु वह अत्यन्त सुन्दर और प्रायः लयात्मक है।

---

[1] एक बात ध्यान देने योग्य है, कि फ़ारस और भारत के अत्यन्त प्रसिद्ध मुसलमान रचयिताओं, जिन्हें संत व्यक्ति समझा जाता है, जैसे, हाफ़िज़, सादी, जुरत, कमाल, आदि लगभग सभी ने अश्लील कविताएँ लिखी हैं। मुसलमानों के बारे में वही कहा जा सकता है जो संत पॉल ने मूर्तिपूजकों के बारे में कहा है : 'Professing themselves to be wise, they become fools... God gave them up...to uncleanness through the lusts of their own hearts'' (Epistle to the Romans. 1, 22)

[2] मैं इसलिए और भी नहीं दे रहा, क्योंकि मेरी पहली जिल्द के निकलने के बाद वे प्रकाशित हो चुके हैं। जैसे आसाम का इतिहास है, जिसके मैंने उद्धरण नहीं दिए, क्योंकि श्री पैवी (Th. Pavie) ने हाल ही में उसका एक सुन्दर अनुवाद प्रकाशित किया है; और मिस्कीन कृत मर्सिया, जिसके संबंध में मैंने, अपने अत्यन्त प्रसिद्ध शिष्य में से एक, मठधारी श्री बरत्राँ (l'abbé Bertrand), को 'गुल-इ मगफिरात', जिसे उन्होंने 'les séances de Haidari' शीर्षक के अंतर्गत फ़्रेंच में निकाला है, के बाद प्रकाशित करने का अधिकार दिया है।

[3] उचित रूप में कही जाने वाली हिन्दी और हिन्दुई के अंतर के लिए, देखिए मेरी 'Rudiments de la langue hindoui' (हिन्दुई भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त), पृ० १०।

मैंने तुलसी-दास कृत 'रामायण' के एक काण्ड का अनुवाद दिया है, यद्यपि मुझे इस काव्य की, जो मुश्किल से समझने में आने वाली हिन्दुई बोली में लिखा गया है, टीका उपलब्ध नहीं हो सकी।

हिन्दुस्तानी रचनाओं के उद्धरणों में, मैंने 'आराइश-इ महफ़िल' से लिए गए उद्धरणों को सबसे अधिक स्थान दिया है, क्योंकि यह रचना भारत के आधुनिक साहित्य की एक प्रमुख रचना है। अन्य के लिए मैंने अपने को सीमित परिधि तक रखा है। पहली जिल्द में मैं हिन्दुई और हिन्दुस्तानी साहित्य के छोटे-छोटे उदाहरण दे चुका हूँ। इसमें मैंने अधिक विस्तार से दिए हैं, जो पहली जिल्द की भाँति, इसमें पहली बार अनूदित हुए हैं; और मुझे प्रसन्नता है कि ये उसी आनन्द के साथ पढ़े जायँगे जिस प्रकार वे पढ़े गए थे जिन्हें मैं पहले 'ज़ूर्ना एसियातीक' (Journal Asiatique) में दे चुका हूँ, उदाहरण के लिए 'गुल ओ बकावली' की रोचक कहानी, 'कुकवियों को नसीहत' शीर्षक सुन्दर व्यंग, कलकत्ते का वर्णन, आदि आदि। मैं अपने अनुवादों द्वारा यह सिद्ध करना चाहता हूँ, कि अब तक अज्ञात ये दोनों साहित्य वास्तविक और विविध प्रकार की दिलचस्पी पैदा करते हैं।

वास्तविक अनुवादों में, पाठ में जो कुछ नहीं है उसे मैंने इटैलिक अक्षरों द्वारा दिखाया है, अर्थात्, वे शब्द जो मूल का अर्थ बताने की दृष्टि से रखे गए हैं; किन्तु रूप-रेखा और स्वतंत्र या संक्षिप्त अनुवाद में मैंने इस ओर ध्यान नहीं दिया। इस संबंध में मैंने मैस्त्र द सैसी (le Maistre de Sacy) द्वारा, बाइबिल के अनुवाद, और सेल (Sale) द्वारा क़ुरान के अनुवाद में[1] गृहीत सिद्धान्त ग्रहण किया है; और अपने

[1] मेरा संकेत यहाँ मूल संस्करण की ओर है; क्योंकि बाद के संस्करणों में इन भेदों की ओर ध्यान नहीं दिया गया।

अनुवादों में मिलने वाले कुछ ऐसे अंशों के लिए जिनमें कैथलिक ईसाई मत से साम्य न रखने वाले विचार पाए जा सकते हैं विरोध प्रकट करना मेरा कर्त्तव्य है, और लोग यह याद रखें कि मैं उनका एक साधारण अनुवादक हूँ।

इस इतिहास की पहली जिल्द की भूमिका में, मैंने हिन्दुस्तानी साहित्य के काल-क्रम का उल्लेख किया है, और साहित्यिक, इतिहास-लेखक, दार्शनिक के लिए उसका महत्त्व बताया है। इस समय मैं इस साहित्य की रचनाओं के वर्गीकरण, और उसके विशेष विविध रूपों के सम्बन्ध में बताना चाहता हूँ।

हिन्दुई में केवल पद्यात्मक रचनाओं के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता। सामान्यतः चार-चार शब्दांशों (Syllable) के ये छन्द दो लययुक्त चरणों में विभाजित रहते हैं। किन्तु साधारण गद्य, या लययुक्त गद्य, में भी रचनाएँ हैं, जैसे हिन्दुस्तानी में, किन्तु अधिकतर प्रायः पद्यों से मिश्रित जो सामान्यतः उद्धरणों के रूप में रहते हैं।

यदि हम, श्री गोरेसिओ (Gorresio) द्वारा 'रामायण' के अपने सुन्दर संस्करण की भूमिका में उल्लिखित, संस्कृत विभाजन का अनुगमन करें, तो हिन्दी-रचनाएँ चार भागों में विभाजित की जा सकती हैं।

१. 'आख्यान', कहानी, क़िस्सा। इनसे वे कविताएँ समझी जानी चाहिए जिनमें लोकप्रिय परंपराओं से संबंधित विषय रहते हैं, और कथाएँ पद्यात्मक, कभी-कभी, फ़ारसी अक्षरों में लिखित, छंदों के रूप में, रहती हैं, यद्यपि लय मसनवियों की भाँति हर एक पद्य में बदलती जाती है।

२. 'आदि काव्य', अथवा प्राचीन काव्य। उससे विशेषतः 'रामायण' समझा जाता है।

३. 'इतिहास', गाथा, वर्णन। ऐतिहासिक-पौराणिक परंपराओं में ऐसे अनेक हैं, जैसे 'महाभारत' तथा पद्यात्मक इतिहास।

४. अंत में 'काव्य', किसी प्रकार की काव्यात्मक रचना। इस वर्गगत

नाम से, जो पूर्वी मुसलमानों के नज़्म के समान है, हिन्दुई की वे सभी छोटी-छोटी कविताएँ समझी जाती हैं जिनकी मैं शीघ्र ही समीक्षा करूँगा।

तीसरे भाग में पद्य-मिश्रित गद्य की कहानियाँ रखी जानी चाहिए, विशेषतः कहानियों और नैतिक कथाओं के संग्रह, जैसे, 'तोता कहानी' (एक तोते की कहानियाँ), 'सिंहासन-बत्तीसी' (जादुई सिंहासन) ;'बैताल-पचीसी' (बैताल की कहानी), आदि।

राजाओं को सत्य बताने के लिए, पूर्व में, जहाँ उनकी इच्छा ही सब कुछ होती है, उसका खण्डन करना एक कठिन कार्य है। इसी बात पर कवि-दार्शनिक सादी का कहना है कि यदि सम्राट् भरी दुपहरी को रात बताए तो चाँद-तारे देखना समझ लेना चाहिए। तब उस समय इन कोमल कानों तक सत्य की आवाज़ पहुँचाने के लिए कल्पित कथाओं का आश्रय ग्रहण किया जाता है। इसी दृष्टि से नैतिक कथाओं की उत्पत्ति हुई, जिनसे बिना किसी ख़तरे के अत्याचारियों को शिक्षा दी जा सकती है, जिससे वे कभी-कभी लाभान्वित हुए हैं। देखिए फ़ारस के उस राजा को जिसने अपने वज़ीर से, जो पशुओं की बोली सुन कर नाराज़ होता था, पूछा कि दो उल्लू, जो उसने साथ-साथ देखे थे, आपस में क्या बातचीत करते हैं। निर्भीक दार्शनिक ने उत्तर दिया, 'वे कहते हैं कि वे आप के राज्य पर मुग्ध हो गए हैं ; क्योंकि वे आप के अत्याचारी शासन में प्रतिदिन उत्पन्न होने वाले खँडहरों में अपनी इच्छा के अनुसार शरण ले सकते हैं।' वास्तव में हम देखते हैं कि पूर्वी कथाओं में राजनीति सर्वोच्च स्थान ग्रहण किए हुए है, और उनका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग है। भारतीय कहानियों और नैतिक कथाओं के ख़ास-ख़ास संग्रहों के ज्ञान से इस बात की परीक्षा की जा सकती है। उनमें कथाओं के अत्यन्त प्रवाहपूर्ण रूपों के बीच में बुद्धि की भाषा मिलती है ; क्योंकि, जैसा कि एक उर्दू कवि ने कहा है, 'केवल शारीरिक सौन्दर्य ही हृदय नहीं हरता, लुभा लेने वाली मधुर बातों में और भी अधिक आकर्षण होता है।'

न तनहा हुस्न ख़ूबाँ दिल रुबा है
अदा फ़हमी सख़ुनदानी बला है
(फ़ारसी लिपि से)

पद्य में प्रधान हिन्दुई रचनाओं के नाम, अकारादिक्रम के अनुसार इस समय इस प्रकार हैं :

'अभङ्ग', एक प्रकार की एक चरण विशेष में रचित गीति-कविता जिसकी पंक्तियों में, अँगरेज़ी की भाँति, शब्दों के स्वराघात का नियम रहता है, न कि शब्दांशों की संख्या (दीर्घ या ह्रस्व) का, जैसा संस्कृत, ग्रीक और लेटिन में रहता है। इस कविता का प्रयोग विशेषतः मराठी में होता है।

'आल्हा', कविता जिसका नाम उसके जन्मदाता से लिया गया है।[1]

'कड़खा', लड़ने वालों में उत्साह भरने के लिए राजपूतों में व्यवहृत युद्ध-गान। उसमें शौर्य की प्रशंसा की जाती है, और प्राचीन वीरों के महान् कृत्यों का यशगान किया जाता हे। पेशेवर गाने वालों को 'कड़खैल' या 'ढाढ़ी' कहते हैं जो ये गाने सुनाते हैं।

'कवित' या 'कविता', चार पंक्तियों की छोटी कविता।

'कहर्वा', 'मलार', जिसके बारे में (आगे) बताया जायगा, के रूप की भाँति कविता। वास्तव में यह एक नृत्य का नाम है जिसमें पुरुष स्त्रियों के कपड़े पहनते हैं, और स्त्रियाँ पुरुषों के ; और फलतः इस नृत्य के साथ वाले गाने को यह नाम दिया गया है।

'कुण्डल्या' या 'कुण्डर्या', कविता या कहिए छन्द जिसका एक ही शब्द से प्रारंभ और अंत होता है।[2]

'गाली', यह शब्द भी जिसका ठीक-ठीक अर्थ है 'अपमान', विवाहों

[1] शेक्सपियर (Shak.), 'डिक्शनरी हिन्दुस्तानी ऐंड इँगलिश'

[2] दे०, कोलब्रुक, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', x, ४१७

और उत्सव के अवसर पर गाए जाने वाले कुछ अश्लील गीतों का नाम है।

'गीत', गीतों, गानों, प्रेम-गीतों आदि का वर्गीय नाम।

'गुज्जरी', एक रागिनी, और एक गौण संगीत-रूप-संबंधी गाने का नाम।

'चतुरङ्ग', चार भागों की कविता जो चार विभिन्न प्रकार से गाई जाती हैं : 'खियाल', 'तराना',[1] 'सरगम'[2] और 'तिरवत'[3] (tirwat)।

'चरणाकुलछन्द', अर्थात् विभिन्न पंक्तियों में कविता। 'महाभारत' के हिन्दुई रूपान्तर में उसके उदाहरण मिलते हैं।

'चुटकुला', केवल दो तुकों का दिल खुश करने वाला खियाल।

'चौपाई', तुकान्तयुक्त चार अर्द्धालियों या दो पंक्तियों की कविता। किन्तु, तुलसी कृत 'रामायण' में, इस शीर्षक की कविताओं में नौ पंक्तियाँ हैं।

'छन्द', छः पंक्तियों में रचित कविता। तुलसी कृत 'रामायण' में उनकी एक बहुत बड़ी संख्या मिलती है। लाहौर में उसका बहुत प्रयोग होता है।

'छप्पै', या छः वाली, एक साथ लिखे गए 'छः', चरणों 'पै' ('पद' का समानार्थवाची) की कविता, जिनसे तीन पद्य बनते हैं। यह उस चरण से प्रारंभ होता है जिससे कविता का अन्त भी होता है।

'जगत बर्णन', शब्दशः संसार, पृथ्वी का वर्णन। यह हिन्दुई की एक वर्णनात्मक कविता है जिसके शीर्षक से विषय का पता चलता है।

---

[1] आगे चलकर हिन्दुस्तानी काव्यों की सूची में इस शब्द की व्याख्या देखिए।

[2] इस शब्द का ठीक-ठीक अर्थ है gamme (गम्म्), और जिससे शेष व्युत्पत्ति मालूम हो जाता है।

[3] इस अंतिम तान और गोत पर देखिए विलर्ड, 'ए ट्रिटाइज ऑन दि म्यूजिक ऑव हिन्दुस्तान', पृ० ९२।

'जत' [यति], होली का, इसी नाम के संगीत-रूप से संबंधित, एक गीत ।

'जयकरी छन्द', अथवा विजय का गीत, एक प्रकार की कविता जिसके उदाहरण मेरी 'हिन्दुई भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त' (Rudiments de la langue hindoui) के बाद मेरे द्वारा प्रकाशित 'महाभारत' के अंश में मिलेंगे ।

'झूलना', अथवा झूला झूलना, झूले का गीत, वैसा ही जैसा हिण्डोला है । अन्य के अतिरिक्त वे कबीर की रचनाओं में हैं । एक उदाहरण, पाठ और अनुवाद, गिलक्राइस्ट कृत 'ऑरिएंटल लिंग्विस्ट', पृ० १५७, में है ।

'टप्पा', इसी नाम के संगीत रूप में गाई गई छोटी शृंगारिक कविता । उसमें अन्तरा अन्त में दुबारा आने वाले प्रथम चरणार्द्ध से भिन्न होता है । गिलक्राइस्ट ने इस कविता को अँगरेज़ी नाम 'glee' ठीक ही दिया है, जिसका अर्थ टेक वाला गाना है । पंजाब के लोकप्रिय गीतों में ये विशेष रूप से मिलते हैं, जिनमें हिन्दुई के 'कौ' और हिन्दुस्तानी के 'का' के स्थान पर 'दौ' या 'दा' संबंध कारक का प्रयोग अपनी विशेषता है ।[१]

'ठुम्री', थोड़ी संख्या में चरणार्द्धों वाले हिन्दुई के कुछ लोकप्रिय गीतों का नाम । ज़नानों या रनिवासों में उनका विशेषत: प्रयोग होता है ।

'डोमरा', नाचने वालों की जाति, जो इसे गाती है, के आधार पर इस प्रकार के नाम की कविता । उसमें पहले एक चरण होता है, फिर दो अधिक लंबे चरणों का एक पद्य, और अन्त में एक अंतिम पंक्ति जो कविता का प्रथम चरण होती है ।

'तुक' का ठीक-ठीक अर्थ है एक चरणार्द्ध (hémistiche) । यह मुसलमानों की काव्य-रचनाओं का पृथक् चरण फ़र्द है ।

---

[१] दे०, मेरी 'Rudiments de la langue hindoui' (हिन्दुई भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त), नोट ३, पृ० ६, और नोट २, पृ० ११ ।

'दादा', विशेषतः बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड में प्रयुक्त और स्त्रियों के मुख से कहलाया जाने वाला शृंगारपूर्ण गीत।

'दीप चन्दी', एक ख़ास तरह का गीत, जो होली के समय पर ही गाया जाता है।

'दोहा' या 'दोह्रा' (distique)। यह मुसलमानी कविताओं का 'बैत' है, अर्थात् दो चरणों से बनने वाला दोहा पद्य।

'धम्माल', गीत जो भारतीय आनंदोत्सव-पर्व, जब कि यह सुना जाता है, के नाम के आधार पर 'होली' या 'होरी' भी कहा जाता है।

'धुर्पद', सामान्यतः एक ही लय के पाँच चरणों में रचित छोटी कविता। वे सब प्रकार के विषयों पर हैं, किन्तु विशेषतः वीर-विषयों पर। इस कविता के जन्मदाता, जिसे वे स्वयं गाते थे, ग्वालियर के शासक राजा मान थे।[1]

'पद'। इस शब्द का ठीक-ठीक अर्थ है 'पैर', जिसका प्रयोग एक छन्द के लिए किया जाता है, और फलतः एक छोटी कविता।

'पहेली', गूढ़ प्रश्न।

'पाल्ना'। इस शब्द का अर्थ है जिसमें बच्चे झुलाए जाते हैं, जो उन गानों को प्रकट करने के लिए भी प्रयुक्त होता है जो बच्चों को झुलाते समय गाए जाते हैं।

'प्रबन्ध', प्राचीन हिन्दुई गान।

'प्रभाती', एक रागिनी और साधुओं में प्रयुक्त एक कविता का नाम। बीरभान की कविताओं में प्रभातियाँ मिलती हैं।

'बधावा', चार चरणार्द्धों की कविता, जिसका पहला कविता के प्रारंभ और अंत में दुहराया जाता है। यह बधाई का गीत है, जो बच्चों के

---

[1] विलर्ड (Willard), 'ऑन दि म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान', पृ० १०७

जन्म, विवाह-संस्कार, आदि के समय सुना जाता है। उसे 'मुबारक बाद' भी कहते हैं, किन्तु यह दूसरा शब्द मुसलमानी है।

'बर्वा', या 'बर्वी', इसी नाम के संगीत-रूप-सम्बन्धी दो चरण की कविता। उसका 'खियाल' नामक प्रकार से संबंध है; उसका एक उदाहरण 'सभा विलास' में पाया जाता है, पृ० २३।

'बसंत', एक राग या संगीत रूप और एक विशेष प्रकार की कविता का नाम जो इस राग में गाई जाती है। गिलक्राइस्ट[१] और विलर्ड (Willard)[२] ने, सरल व्याख्या सहित, समस्त रागों (प्रधान रूपों) और रागिनियों (गौण रूपों) के नाम दिए हैं। उन्हें जानना और भी आवश्यक है क्योंकि वे विभिन्न रूपों में गाई जाने वाली कविताओं के प्रायः शीर्षक रहते हैं। किन्तु मैंने यहाँ लिखित कविता में अत्यधिक प्रयुक्त होने वाले का उल्लेख किया है।

'भक्त मार्ग', शब्दशः, भक्तों का रास्ता, कृष्ण-संबंधी भजन के एक विशेष प्रकार का नाम।[3]

'भड़याल', मुसलमानों के 'मरसिया' के अनुकरण पर एक प्रकार का हिन्दुई विलाप।

'भोजङ्ग', या 'भुजङ्ग', कविता जिसे टॉड[४] ने 'lengthened serpentine couplet' कहा है।

'मङ्गल' या 'मङ्गलाचार', उत्सवों और खुशियों के समय गाई जाने वाली छोटी कविता। बधावे का, विवाह का गीत।

'मलार', एक रागिनी, और वर्षा ऋतु, जो भारत में प्रेम का समय भी है, की एक छोटी वर्णनात्मक कविता का नाम।

---

१ 'ग्रैमर हिन्दुस्तानी' (Gram. Hind.), २६७ तथा बाद के पृष्ठ

२ 'ऑन दि म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान', ४९ तथा बाद के पृष्ठ

3 ब्राउटन, 'पॉप्युलर पोयट्री ऑव दि हिन्दूज़', पृ० ७८

४ 'एशियाटिक जर्नल', अक्तूबर १८४०, पृ० १२९

'मुक्री', एक प्रकार की पहेली जिसका एक उदाहरण मैंने अपने 'हिन्दुस्तानी भाषा के सिद्धान्त' की भूमिका में दिया है, पृ० २३।

'रमैनी', सारगर्भित कविता। इस शीर्षक की कविताओं की एक बहुत बड़ी संख्या कबीर की काव्य-रचनाओं में पाई जाती है।

'रसादिक', अर्थात् रसों का संकेत। यह चार पंक्तियों की एक छोटी शृंगारिक कविता है; यह शीर्षक बहुत-से लोकप्रिय गीतों का होता है।

'राग', हिन्दुओं के प्रधान संगीत-रूपों और मुसलमानों की ग़ज़ल से मिलती-जुलती एक कविता का नाम, और जिसे 'राग पद'—राग संबंधी कविता—भी कहते हैं। अन्य के अतिरिक्त सूरदास में उसके उदाहरण मिलते हैं।

'राग-सागर'– रागों का समुद्र—एक प्रकार की संगीत-रचना (Rondeau) को कहते हैं जिसका प्रत्येक छन्द एक विभिन्न राग में गाया जा सकता है, और 'राग-माला' —रागों की माला—चित्रित किए जाने वाले रूपकों सहित विभिन्न रागों से सम्बन्धित छन्दों के संग्रह को।

'राम पद', चरणार्द्धों के अनुसार १५-१५ शब्दांशों का छंद, राम के सम्मान में, जैसा कि शीर्षक से प्रकट होता है।

'रास', कृष्ण-लीला का वर्णन करने वाला गान होने से यह नाम दिया गया है।

'रेखतस', कबीर की कविताएँ, जिनका नाम, हिन्दुस्तानी कविताओं के लिए प्रयुक्त, फ़ारसी शब्द रेखतः—मिश्रित—से लिया गया है।

'रोलाछन्द'। बाईस लंबी पंक्तियों की, इस नाम की कविता से, 'महाभारत' के हिन्दुई रूपान्तर में, 'शकुन्तला' का उपाख्यान प्रारम्भ होता है।

'विष्नु पद', विकृत रूप में 'बिपन पद', केवल इस बात को छोड़ कर

कि इसका विषय सदैव विष्णु से सम्बन्धित रहता है, यह 'डोमरा' की तरह कविता है। कहा जाता है, इसके जन्मदाता सूरदास थे। मथुरा में इसका ख़ास तौर से व्यवहार होता है।

'शब्द' या 'शब्दी', कबीर की कुछ कविताओं का ख़ास नाम।

'सङ्गीत', नृत्य के साथ का गाना।

'सखी', और बहुवचन में 'सखयां', कबीर की कुछ कविताओं का विशेष नाम। कृष्ण और गोपियों के प्रेम से संबंधित एक गीत को 'सखी सम्बन्ध' कहते हैं।

'समय', कबीर के भजनों का एक दूसरा विशेष नाम।

'साद्रा', ब्रज और ग्वालियर में व्यवहृत गीत, और उसकी तरह जिसे 'कड़खा' कहते हैं।

'सोर्ठा',[1] एक रागिनी और एक विशेष छन्द की छोटी हिन्दुई-कविता का नाम।

'सोह्ला', (Sohlâ)। यह शब्द, जिसका अर्थ 'उत्सव' है, उत्सवों और ख़ुशियों, और ख़ास तौर से विवाहों में गाई जाने वाली कविताओं को प्रकट करने के लिए भी होता है। विलर्ड (Willard) ने हिन्दुस्तान के संगीत पर अपनी रोचक रचना में इस गीत का उल्लेख किया है, पृ० ९३।

'स्तुति', प्रशंसा का गीत।

'हिण्डोल'—escarpolette (झूला), इस विषय का वर्णनात्मक गीत, जिसे भारतीय नारियाँ अपनी सहेलियों को झुलाते समय गाती हैं।

'होली' या 'होरी'। यह एक भारतीय उत्सव है जिसका उल्लेख मेरे

---

[1] यह शब्द संस्कृत 'सौराष्ट्र' (Surate) से निकला है, जो उस प्रदेश का नाम है जहाँ इसी नाम के गीत का प्रयोग होता है।

'भारत के लोकप्रिय उत्सवों का विवरण'[1] में देखा जा सकता है। यही नाम उन गीतों को भी दिया जाता है जो इस समय सुने जाते हैं—गाने जिसका एक सुन्दर उदाहरण पहली जिल्द, पृ० ५४६ में है। 'होली' नाम का गीत प्रायः केवल दो पंक्तियों का होता है, जिसमें से अंतिम पंक्ति उसी चरणार्द्ध से समाप्त होती है जिससे कविता प्रारंभ होती है। लोकप्रिय गीतों में उसके उदाहरण मिलेंगे।

अब, यदि ब्राह्मणकालीन भारत को छोड़ दिया जाय, और मुसलमान-कालीन भारत की ओर अपना ध्यान दिया जाय तो मुसलमान काव्य-शास्त्रियों के अनुसार,[2] सर्वप्रथम हम हिन्दुस्तानी काव्य-रचनाओं, उर्दू और दक्खिनी दोनों, को सात प्रधान भागों में विभाजित कर सकते हैं।

१. वीर कविता (अल्हमासा)।

२. शोक कविताएँ (अल्मरासी)।[3]

३. नीति और उपदेश की कविताएँ (अल्अदब वन्नसीहत)।

४. शृंगारिक कविता (अल्नसीब)।

५. प्रशंसा और यशगान की कविताएँ (अल्सना व अल्मदीह)।

६. व्यंग्य (अल्हिजा)।

७. वर्णनात्मक कविताएँ (अल्सिफ़ात)।

पहले भाग में कुछ क़सीदे,[4] और विशेष रूप से बड़ी ऐतहासिक कविताएँ जिनका नाम 'नामा'—पुस्तक[5]—और 'क़िस्सा'—या पद्यात्मक कथा हैं, रखी जानी चाहिए। उन्हीं में वास्तव में कहे जाने वाले

---

१ 'ज़ुर्ना एसियातीक', वर्ष १८३४

२ इस विभाजन का विस्तार डब्ल्यू० जोन्स कृत 'Poëseos Asiaticae commentarii' में मिलता है।

३ अल्मरासी, मरासिया शब्द का, जिसकी व्याख्या और आगे की जायगी, 'अल्' सहित, अरबी बहुवचन है।

४ इस नाम की विशेष प्रकार की कविता की व्याख्या मैं आगे करूँगा।

५ केवल एक प्रधान रचना उद्धृत करने के लिए, 'शाहनामा' ऐसी ही रचना है।

इतिहास रखे जा सकते हैं जिनके काव्यात्मक गद्य में अनेक पद्य मिले रहते हैं। पूर्वी कल्पना से सुसज्जित यही शेष इतिहास हैं जिनसे निस्संदेह ऐतिहासिक कथाओं का जन्म हुआ (जो) एक प्रकार की रचना है (जिसे) हमने पूर्व से लिया है।[१] इन पिछली रचनाओं के प्रेम-सम्बन्धी विषयों की संख्या अंत में थोड़े-से क़िस्सों तक रह जाती है जिनमें से अनेक अरबों, तुर्कों, फ़ारस-निवासियों और भारतीय मुसलमानों में प्रचलित हैं। सिकन्दर महान् के कारनामे, .ख़ुसरो और शीरीं, यूसुफ़ और ज़ुलेखा, मजनूँ और लैला का प्रेम ऐसे ही क़िस्से हैं। अनेक फ़ारसी कवियों ने, पाँच मसनवियों[२] का संग्रह तैयार करने की भाँति, पाँच विभिन्न क़िस्सों को विकसित करने की चेष्टा की है जिनके संग्रह को उन्होंने 'ख़म्स:', 'पाँच' शीर्षक दिया है। उदाहरण के लिए निज़ामी[3], जामी, .ख़ुसरो, कातिबी (Kâtibî), हातिफ़ी (Hâtifî) आदि ऐसे ही कवि हैं।

पूर्व में वीरतापूर्ण कथाएँ भी मिलती हैं; जैसे अरबों में इस प्रकार का अन्तर (Antar) का प्रसिद्ध इतिहास है, जिसमें हमारी प्राचीन वीर-कथाओं की भाँति, मरे हुए व्यक्ति, उखड़े हुए वृक्ष, केवल एक व्यक्ति द्वारा नष्ट की गई सेनाएँ मिलती हैं। हिन्दुस्तानी में 'क़िस्सा-इ अमीर हमज़ा', 'ख़ाविर-नामा' आदि की गणना वीर-कथाओं में की जा सकती है।

---

[१] प्रसिद्ध साहित्यिकों ने इस प्रकार की कथाओं का यह कह कर विरोध किया है कि 'ऐतिहासिक कथा' शब्द में ही विरोधी विचार है, किन्तु उन्होंने यह नहीं सोचा कि अनेक प्रसिद्ध कथाएँ केवल नाममात्र के लिए ऐतिहासिक कथाएँ हैं।

[२] इस शब्द का अर्थ मैं आगे बताऊँगा।

[3] निज़ामी के 'ख़म्स:' में हैं—'मख़ज़न उल्असरार', '.ख़ुसरो ओ शीरीं', 'हफ़्त पैकर', 'लैला-मजनूँ', और 'सिकन्दर-नामा'।

इस पहले भाग में ही अनेकानेक पूर्वी कहानियों का उल्लेख किया जाना चाहिए : 'एक हज़ार-एक रातें', जिसके हिन्दुस्तानी में अनुवाद हैं; 'ख़िरद अफ़रोज़', 'मुफ़रः उल्क़ुलूब' (Mufarrah ulculûb) आदि।

दूसरे भाग में भारतीय मुसलमानों में अत्यन्त प्रचलित काव्य, 'मर्सिये' या हसन, हुसेन और उनके साथियों की याद में विलाप, रखे जाने चाहिए।

तीसरे में 'पंदनामे' या शिक्षा की पुस्तकें, रखी जाती हैं, जो सारा (Sirach) के पुत्र, ईसा की धर्म-संबंधी पुस्तक की भाँति शिक्षाप्रद कविताएँ हैं; 'अख़लाक', या आचार, पद्यात्मक उद्धरणों से मिश्रित, गद्य में नैतिकता-संबंधी ग्रन्थ हैं, जैसे 'गुलिस्ताँ' और उसके अनुकरण पर बनाए गए ग्रन्थ : उदारहण के लिए 'सैर-इ इशरत', जिसके उद्धरण मैंने इस जिल्द में दिए हैं।

चौथे में केवल वास्तव में शृंगारिक कही जाने वाली कविताएँ ही नहीं, किन्तु समस्त रहस्यवादी ग़ज़लों को रखना चाहिए जिनमें दिव्य प्रेम प्रायः अत्यन्त लौकिक रूप में प्रकट किया जाता है, जिनमें आध्यात्मिक और इन्द्रिय-संबंधी बातों का अकथनीय मिश्रण रहता है।[1] इन कवियों का संबंध सामान्यतः सूफ़ियों के, जिनके सिद्धान्त वास्तव में वही हैं जो जोगियों द्वारा माने जाने वाले भारतीय सर्वदेववाद के हैं, मुसलमानी दार्शनिक संप्रदाय से रहता है। इन पुस्तकों में ईश्वर और मनुष्य, भौतिक वस्तुओं की निस्सारता, और आध्यात्मिक वस्तुओं की वास्तविकता पर जो कुछ प्रशंसनीय है उसे समझने के लिए एक क्षण उनकी घातक प्रवृत्तियों को भूल जाना आवश्यक है।

---

[1] इस प्रकार के भावों में अनिवार्यतः जो दुर्बोधता रहती है, वह इन अंशों में एकरूपता के अभाव के कारण है। वास्तव में सामान्यतः पद्यों में परस्पर कोई संबंध नहीं होता।

पाँचवें में वे रखी जानी चाहिए जिनमें ईश्वर-प्रार्थना जो दीवानों और बहुत-सी मुसलमानी रचनाओं के प्रारम्भ में रहती है, मुहम्मद और प्रायः उनके बाद के इमामों की प्रशंसा करने वाली कविताएँ, और अंत में वे कविताएँ जिनमें कवि द्वारा शासन करने वाले सम्राट् या अपने आश्रयदाता का यशगान रहता है। पिछली रचनाओं में प्रायः अतिशयोक्ति से काम लिया गया है। अन्य अनेक बातों की तरह हिन्दुस्तानी कवियों ने इस बात में भी फ़ारसी वालों का पूर्ण अनुकरण किया है। सेल्यूकिड (Seljoukides) और अताबेक (Atabeks)वंश के दर्प-पूर्ण शाहंशाह थे जिनके अंतर्गत कृपा ही के भूखे कवियों ने इन शाहंशाहों की तारीफ़ों के पुल बाँध दिए, अपनी रची कविताओं में आवश्यकता से अधिक अतिशयोक्तियों का प्रयोग करने लगे जिनसे विषय संकीर्ण और जी उबा देने वाले हो गए।[1] ये कवि ऐसी प्रशंसा करने में कोई संकोच नहीं करते जो न केवल चापलूसी की, वरन् कुत्सित रुचि और उसी प्रकार बुद्धि की सीमा का उल्लंघन कर जाती है। अपने-अपने चरित-नायकों का चित्र प्रस्तुत करने के लिए दृश्यमान् जगत से ही इन कवियों की कल्पना को यथेष्ट बल नहीं मिलता, वे आध्यात्मिक जगत् में भी विचरण करने लगते हैं। उसी प्रकार, उदाहरण के लिए, उनके शाहंशाह की इच्छा पर प्रकृति की सब शक्तियाँ निर्भर रहती हैं। वही सूर्य और चन्द्र का मार्ग निर्धारित करती है। सब कुछ उनकी आज्ञा के वशीभूत है। स्वयं भाग्य उनकी इच्छा का दास है।[2]

मुसलमानी रचनाओं के छठे भाग में व्यंग्य आते हैं। दुनिया के सब

---

१. गेटे (Goethe), Ost. West, Divan (पूर्वी पश्चिमी दीवान)

२. वैसे भी क्लैसीकल लेखकों में ऐसी अतिशयोक्तियाँ पाई जाती हैं। क्या वर्जिल ने अपने 'Géorgiques के प्रारंभ में सीज़र को देवताओं का स्वामी नहीं बताया ? क्या उसने टेथिस (Téthys) की पुत्री को स्त्री रूप में नहीं दिया ? क्या इस बात की इच्छा प्रकट नहीं की कि उसके सिंहासन को स्थान प्रदान करने के लिए स्कौरपियन (राशिचक्र का प्रतीक-अनु०) का तारा-मडंल आदरपूर्वक मार्ग से हट जाय।

देशों में आलोचक, व्यंग्य ने सब बाधाओं को पार कर प्रकाश पाया है। परीक्षा करना, तुलना करना, वास्तव में यह मानवी प्रकृति का अत्यन्त सुन्दर विशेषाधिकार है। अथवा क्योंकि मनुष्य के सब कार्य अपूर्णता पर आधारित हैं, उन्हें आलोचक से कोई नहीं बचा सकता। कभी-कभी अत्यन्त साधारण आत्माएँ महानों के प्रति यह व्यवहार न्यायपूर्वक कर सकती हैं। यद्यपि कोई इलियड की रचना न कर सकता हो, तब भी होरेस (Horace) के अनुसार यह पाया जाता है कि :

Quandoque bonus dormitat Homerus.

उसी प्रकार राज्य के प्रसिद्ध व्यक्तियों द्वारा की गई ग़लतियाँ, उनका स्थान ग्रहण कर लेने की भावना के बिना, देखी जा सकती हैं। दुर्भाग्यवश आलोचक की ओर प्रवृत्ति प्रायः द्वेष से, ईर्ष्या से तथा अन्य कुत्सित आवेगों से उत्पन्न होती है। जो कुछ भी हो, यूरोप की भाँति पूर्व में व्यंग्य प्रचलित है; एशिया का बड़े से बड़ा अत्याचारी इन बाणों से नहीं बचा। जैसा कि ज्ञात है, दो शताब्दी पूर्व, तुर्क कवि उवैसी (Uweïci) ने कुस्तुन्तुनिया की जनता के सामने तुर्क शासकों के पतन पर अपनी व्यंग्य-वर्षा की थी, व्यंग्य जिसमें उसने सम्राट् से अपमानजनक विशेष दोषों से सजीव प्रश्न किए थे, जिसमें उसने अन्य बातों के अतिरिक्त बड़े वज़ीर के स्थान पर बहुत दिनों से पशुओं को भरे रखने की शिकायत की है।[1] और न केवल प्रशंसनीय व्यक्तियों ने, ख़ास हालतों में, अनिवार्य

मध्ययुगीन शृंगारी कवि (troubadours) इसी अतिशयोक्ति में डूबे हुए हैं; वे समस्त प्रकृति को अपनी नायिका की अनुचरी बना देते हैं और ल फ़ौतेंन (la Fontaine) ने अपनी सरलता के साथ कभी-कभी चतुराई की बात कह दी है:—

'तीन प्रकार के व्यक्तियों की जितनी अधिक प्रशंसा की जाय थोड़ी है—अपना ईश्वर, अपनी प्रेयसी और अपना राजा।'

१. यह व्यंग्य डीट्ज़ (Dietz) द्वारा जर्मन में अनूदित हुआ है, और उसके कुछ अंश कारदोन (Cardone) कृत 'मेलाँज द लितेरत्यूर ओरिएँ'

परिस्थितियों में व्यंग्य लिखे हैं ; किन्तु कवियों ने, जैसा कि यूरोप में, इस प्रकार के प्रति अपनी रुचि प्रकट की है, जिसमें उन्होंने अपनी व्यंग्य-शक्ति प्रकट की हैं ; और, यह ख़ास बात है, कि सामान्यत: लेखकों ने व्यंग्य और यशगान एक साथ किया है; क्योंकि वास्तव में यदि किसी को बुरी बातें अरुचिकर प्रतीत होती हैं, तो अच्छी बातों के प्रति उत्साह भी रहता है ; यदि हमें कुछ लोगों के दोषों पर आश्चर्य होता है, तो दूसरों के अच्छे गुणों से उत्साह होता है। फ़ारसी के अत्यन्त प्रसिद्ध व्यंग्यकार, अनवरी (Anwarî), को इस प्रकार दूसरे क्षणों में यशगान करते हुए भी देखते हैं। भारतवर्ष में भी यही बात है : अत्यन्त प्रसिद्ध व्यंग्यकार कवियों ने, जिनके व्यंग्यों में अतिशयोक्तियाँ मिलती हैं, यशगान भी किया है ; किन्तु व्यंग्यों में यशगान की अपेक्षा उनका अच्छा रूप मिलता है। उनके व्यंग्यों में अधिक मौलिकता पाई जाती है, और स्वयं उनके देशवासी उन्हें उनके यशगान से अच्छा समझते हैं। यह सच है कि हिन्दुस्तानी कवियों ने व्यंग्य सफलतापूर्वक लिखे हैं। उनमें व्यंग्य की परिधि उत्तरोत्तर विस्तृत होती जाती है। उन्होंने पहले व्यक्तियों को, फिर संस्थाओं को, फिर अन्त में उन चीज़ों को जो मनुष्य-इच्छा पर निर्भर नहीं रहतीं अपना निशाना बनाया है। यहाँ तक कि उन्होंने स्वयं प्रकृति की[1] उसके भयंकर और डरावने रूप में आलोचना की है। इसी प्रकार उन्होंने गर्मी के विरुद्ध, जाड़े के विरुद्ध,[2] बाढ़ों के विरुद्ध, और साथ ही अत्यन्त भयंकर और

(Mèlanges de littérature orient, पूर्वी साहित्य का विविध-संग्रह) की जि० २ में फ्रेंच में अनूदित हुए हैं। श्री द सैसी (de Sacy) का 'मैगासाँ आँसीक्लोपेदा (Magasin encycl. मैगासाँ विश्वकोष), जि० ६, १८११ में एक लेख भी देखिए।

[1] इसी तरह कभी-कभी परमात्मा की भी। रोमनों में भी जुवेनल (Juvénal) ने, बड़े आदमियों द्वारा अपनी शक्ति के दुरुपयोग का बुद्धिमानी के साथ विरोध करते हुए, भाग्य की ग़लतियों के विरुद्ध, अर्थात् ईश्वर, जो बुराई से अच्छाई पैदा करता है, के रहस्यों के विरुद्ध आवाज़ उठाते हुए समाप्त किया।

[2] दे०, जि० १, पृ० १३६

अत्यन्त घृणित बीमारियों पर व्यंग्य लिखे हैं। हम कह सकते हैं कि आधुनिक भारत के व्यंग्यों के अधिकांश भाग का विषय यही बातें हैं। तो भी पूर्व में सर्वप्रथम, घरेलू जीवन के रीति-रस्मों पर व्यंग्य प्रारंभ करने में हिन्दुस्तानी कवियों की विशेषता है।[1] किन्तु इन व्यंग्यों में अधिकतर एक कठिनाई है, वह यह कि उनका ऐसे विषयों से संबंध है जिनका केवल स्थानीय या परिस्थितिजन्य महत्त्व है, और जो अश्लीलता द्वारा दूषित और छोटी-छोटी बातों द्वारा विकृत हैं, जो, सौदा और जुरत जैसे अत्यन्त प्रसिद्ध कवियों में भी, अत्यन्त साधारण हैं; मैं भी अपने अवतरणों में उन्हें थोड़ी संख्या में, और वह भी काट-छाँट कर, दे सका हूँ। मुझे स्पष्टतः अत्यन्त प्रसिद्ध व्यंग्य छोड़ देने पड़े हैं, ऐसे जिन्होंने अपने रचयिताओं को अत्यधिक ख्याति प्रदान की,[2] और जिनका भारत की प्रधान रचनाओं के रूप में उल्लेख होता है, जिनमें सदाचारों से संबंधित जो कुछ है उसके बारे में शिथिलता पाई जाती है।

किसी ने ठीक कहा है कि प्रहसन (Comédie) केवल कम व्यक्तिगत और अधिक अस्पष्ट व्यंग्य है। आधुनिक भारतवासी निंदा के इस साधन से विहीन नहीं हैं। यदि वे वास्तविक नाटकों, जिनके संस्कृत में सुन्दर उदा-

[1] अरबी, तुर्की और फ़ारसी, जो हिन्दुस्तानी सहित पूर्वी मुसलमानों की चार प्रधान भाषाएँ हैं, के साहित्यों में भी व्यंग्य मिलते हैं; किन्तु उनमें हिन्दुस्तानी व्यंग्यों की ख़ास विशेषता नहीं है। 'हमासा' (Hamâca) में व्यंग्य 'अल्हिजा', संबंधी तीन पुस्तकें हैं; अन्य के अतिरिक्त एक काहिली पर है; एक दूसरा स्त्रियों के विरुद्ध, तीसरा पुरुषों के विरुद्ध हैं; किन्तु वे एक प्रकार से छोटी हास्योत्पादक कविताएँ हैं। फ़ारसी में व्यंग्य कम संख्या में है किन्तु वे एक प्रकार से व्यक्तियों के प्रति अपशब्द हैं। महमूद के विरुद्ध फ़िरदौसी का प्रसिद्ध व्यंग्य ऐसा ही है।

[2] उदाहरण के लिए मैंने घोड़े पर, उसकी चमकने की आदत के विरुद्ध लिखे गए, सौदा कृत व्यंग्य का अनुवाद नहीं दिया, यद्यपि वही बात भारतवर्ष में बहुत अच्छी समझी जाती है, और ख़ास तौर से मीर द्वारा जो स्वयं एक अच्छे लेखक होने के साथ-साथ अच्छी पहिचान भी रखते थे।

हरण हैं, से परिचित नहीं हैं, तो उनके पास एक प्रकार के प्रहसन हैं जिन्हें बड़े मेलों में बाज़ीगार[१] खेलते हैं और जिनमें कभी-कभी राजनीतिक संकेत रहते हैं। उत्तर भारत के बड़े नगरों में इस प्रकार के अभिनेता पाए जाते हैं जो काफ़ी चतुर होते हैं। कभी-कभी इन कलाकारों का एक समुदाय देशी अश्वारोहियों के अस्थायी सेनादल के साथ रहता है। जब कभी किसी रईस नवाब को अपने मनोरंजन की आवश्यकता पड़ती है, या जब वह अपने अतिथि को ख़ुश करना चाहता है तो वह उन्हें पैसा देता है। प्रधान मुसलमानी त्यौहारों, ख़ास तौर से इस्लाम धर्म के सबसे बड़े धार्मिक कृत्य बकराईद या ईदुज्ज़ुहा, के अवसर पर वे बुलाए जाते हैं। उनके प्रदर्शन इटली के पुराने मूक अभिनयों से बहुत मिलते-जुलते हैं, जिनमें कुछ अभिनेता अपना रूप बनाते हैं और हमें समाज की कहावतें देते हैं। विभिन्न व्यक्तियों में कथोपकथन, यद्यपि कभी-कभी भद्दा रहता है, आध्यात्मिक और चुभता हुआ रहता है। वह श्लेष शब्दों के साथ खिलवाड़, अनुप्रास और दो अर्थ वाली अभिव्यंजनाओं से पूर्ण रहता है—सौन्दर्य-शैली जिसका हिन्दुस्तानी में अद्भुत प्राचुर्य है और जो उसकी अत्यधिक समृद्धि और विभिन्न उद्गमों से लिए गए शब्दों-समूह से निर्मित होने के कारण अन्य सभी भाषाओं की अपेक्षा संभवतः अधिक उचित है। जैसा कि मैंने कहा, ये तुरंत बनाए गए अंश प्रायः राजनीतिक संकेतों से पूर्ण रहते हैं। वास्तव में अभिनेता अँगरेज़ों और उनकी रीति-रस्मों का मज़ाक बनाते हैं, विशेषतः नवयुवक सिविलियनों का जो प्रायः दर्शकों में रहते हैं।[२] यह सत्य

---

[१] या अभिनेता। बाज़ीगार नटों की क़ौम के होते हैं, और सामान्यतः मुसलमान हैं। कभी-कभी ये आवारा लोग होते हैं जिनका किसी धर्म से संबंध नहीं होता, और इसीलिए हिन्दुओं के साथ ब्रह्म की पूजा, और मुसलमानों के साथ मुहम्मद का आदर करते हुए बताए जाते हैं।

[२] उदाहरणार्थ, इन रचनाओं में से एक का विषय इस प्रकार है। दृश्य में एक कचहरी दिखाई गई है जिसमें यूरोपियन मजिस्ट्रेट बैठे हुए हैं। अभिनेताओं में से एक, गोल टोप सहित अँगरेज़ी वेशभूषा में, सीटी बजाते और अपने बूटों

है कि चित्रण बहुत बोझिल रहता है और रीति-रस्म बहुत बढ़ा कर दिखाए जाते हैं, जब कि वे अधिकतर ख़ाली यूरोपियन दृश्य तक रहते हैं; किन्तु अंत में वे विविधता से संपन्न रहते हैं और पात्रों के चरित्र में कौशल रहता है। इस प्रकार के अभिनयों से पहले सामान्यतः नाच और इस संबंध में उत्तर में 'कलावन्त' और मध्य भारत में 'भाट', 'चारण' और

में चाबुक मारते हुए सामने आता है। तब किसी अपराध का दोषी क़ैदी लाया जाता है; किन्तु जज, क्योंकि वह एक नवयुवती भारतीय महिला, जो गवाह प्रतीत होती है, के साथ व्यस्त रहता है, ध्यान नहीं देता। जब कि गवाहियाँ सुनी जा रही हैं, वह कनखियों से देखे बिना, और इशारे किए बिना, बिना किसी अन्य बात की ओर ध्यान दिए हुए, नहीं रहता, और बाद के परिणाम के प्रति उदासीन प्रतीत होता है। अंत में जज का ख़िदमतगार आता है, जो अपने मालिक के पास जाकर, और हाथ जोड़कर, आदरपूर्वक और विनम्रता के साथ, धीमे स्वर में उससे कहता है: 'साहिब, टिफ़िन तैयार है'। तुरन्त जज जाने के लिए उठ खड़ा होता है। अदालत के कर्मचारी उससे पूछते हैं कि क़ैदी का क्या होगा। नवयुवक सिविलियन, कमरे से बाहर जाते समय, एड़ी के बल घूमते हुए चिल्लाकर कहता है, 'गॉडैम (Goddam), फाँसी।'

ऊपर जो कुछ कहा गया है वह 'एशियाटिक जर्नल' (नई सीरीज़, जि० २२, पृ० ३७) में पढ़ने को मिलता है। बेवन (Bevan) ने भी एक हास्य-रूपक या प्रहसन का उल्लेख किया है ('Thirty years in India', भारत में तीस वर्ष, जि० १ पृ० ४७) जो उन्होंने मद्रास में देखा था, और जिसका विषय एक यूरोपियन का भारत में आना, और अपने दुभाषिए की चालाकियों का अनुभव करना है। अपनी यात्रा करते समय हेबर (Héber) एक उत्सव का उल्लेख करते हैं जिसमें उनकी स्त्री भी थीं, और जहाँ तीन प्रकार के मनोरंजन थे—संगीत, नृत्य और नाटक। वीकी (Viiki) नामक एक प्रसिद्ध भारतीय गायिका ने उस समय, अन्य के अतिरिक्त, अनेक हिन्दुस्तानी गाने गाए थे। मेरे माननीय मित्र स्वर्गीय जनरल सर विलियम ब्लैकबर्न (William Blackburne) ने भी दक्खिन में हिन्दुस्तानी रचनाओं का अभिनय देखने की निश्चित बात कही है।

'बरदाई' कहे जाने वाले गायकों द्वारा गाए जाने वाले हिन्दुस्तानी गाने रहते हैं।[1]

अंत में वर्णनात्मक कविताओं के सातवें भाग में ऋतुओं, महीनों, फूलों, मृगया आदि से संबंधित अनेक कविताएँ रखी जाती हैं जिनमें से कुछेक इस जिल्द में दिए गए अवतरणों में मिलेंगी।

मैं यहाँ बता देना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तानी छंद-शास्त्र (उरूज़) के नियम, कुछ थोड़े से अंतर के साथ, वही हैं जो अरबी-फ़ारसी के हैं, जिनकी व्याख्या मैंने एक विशेष विवरण (Mémoire) में की है।[2] उर्दू और दक्खिनी की सब कविताएँ तुकपूर्ण होती हैं; किन्तु जब पंक्ति के अंत में एक या अनेक शब्दों की पुनरावृत्ति होती है तो तुक पूर्ववर्ती शब्द में रहता है। तुक को 'क़ाफ़िया', और दुहराए गए शब्दों को 'रदीफ़' कहते हैं।[3]

अपने तज़्किरा के अंत में मीर तक़ी ने रेख़्ता या विशेषतः हिन्दुस्तानी कविता के विषय पर जो कहा है वह इस प्रकार है।

---

१ कुछ वर्ष पूर्व, कलकत्ते में एक रईस बाबू का निजी थिएटर था, जो 'शाम-बाज़ार' नामक हिस्से में स्थित उसके घर में था। भद्दी भाषा में लिखी गई रचनाएँ हिन्दू स्त्री या पुरुष अभिनेताओं द्वारा खेली जाती थीं। देशी गवैए, जो लगभग सभी ब्राह्मण होते थे, वाद्य-संगीत (ऑरकैस्ट्रा) प्रस्तुत करते थे, और अपने राष्ट्रीय गाने 'सितार', 'सारंगी', 'पखवाज' आदि नामक बाजों पर बजाते थे। अभिनय ईश्वर की प्रार्थना से आरंभ होता था, तब एक प्रस्तावना के गान द्वारा रचना का विषय बताया जाता था। अंत में नाटक का अभिनय होता था। ये अभिनय बँगला में, जो बंगाल के हिन्दुओं द्वारा प्रयुक्त विशेष भाषा है, होते थे। ('एशियाटिक जर्नल', जि० १६, नई सीरीज़, पृ० ४५२, as. int.)

२ 'ज़ूर्नाल एसियातीक' (Journal Asiatique), १८३२

३ 'Rhétorique des peuples musulmans' (मुसल्मान जातियों का काव्यशास्त्र) पर मेरा चौथा लेख देखिए, भाग २३।

'रेख़्ता (मिश्रित) पद्य लिखने की कई विधियाँ हैं : १. एक मिसरा फ़ारसी और एक हिन्दी [1] में लिखा जा सकता है, जैसा ख़ुसरो ने अपने एक परिचित क़िता (quita) में किया है। २. इसका उल्टा, पहला मिसरा हिन्दी में, और दूसरा फ़ारसी में, भी लिखा जा सकता है. जैसा मीर मुईज़ (Mir Muîzz) ने किया है।[2] ३. केवल शब्दों का, वह भी फ़ारसी क्रियाओं का प्रयोग किया जा सकता है[3] ; किन्तु यह शैली सुरुचिपूर्ण नहीं समझी जाती, 'क़बीह' । ४. फ़ारसी संयुक्त शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है, किन्तु उनका प्रयोग सोच-समझ कर, और

---

[1] यह अनिश्चित शब्द, जिसका ठीक-ठीक अर्थ 'भारतीय' है, हिन्दुस्तानी के लिए प्रयुक्त होता है, तथा विशेषतः, जैसा कि मैंने अपनी 'Rudiments de la langue hindoui' (हिन्दुई भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त) की भूमिका में बताया है, हिन्दुओं की देवनागरी अक्षरों में लिखित आधुनिक बोली (dialecte) के लिए।

[2] एक अरबी के मिसरे में और एक हिन्दुस्तानी के मिसरे में रचित पद्य भी पाए जाते हैं। उसका एक उदाहरण मैंने अपने छंदों के विवरण(Mémoire sur le mtérique) में उद्धृत किया है। ऐसे मिश्रितों के उदाहरण फ्रांसीसी में मिलते हैं ; अन्य के अतिरिक्त पानार (Panard) की रचनाओं में पाए जाते हैं। फ़ारसी में भी ऐसे पद्य पाए जाते हैं जिनका एक मिसरा अरबी में, और दूसरा फ़ारसी में है। उन्हें 'मुलम्मा' कहते हैं। देखिए, ग्लैड्विन, 'Dissertation on the Rhetorics etc. of the Persians' (फ़ारस वालों के काव्यशास्त्र आदि पर दावा)।

[3] संभवतः लेखक कुछ ऐसे पद्यों का उल्लेख करना चाहता है जो इस समय फ़ारसी और हिन्दी में हैं ; चियब्रेरा (Chiabrera) के लैटिन-इटैलियन दो चरणों वाले छंद के लगभग समान, जिसे मेरे पुराने साथी श्री यूसेब द सल (M. Eusèbe de Salles), ने मेरी पहली जिल्द पर एक विद्वत्तापूर्ण लेख में उद्धृत किया है :

In mare irato, in subita procella
Invoco te, nostra benigna stella .

केवल उसी समय जब कि वह हिन्दी भाषा की प्रतिभा के अनुकूल हो, करना चाहिए, जैसे उदाहरणार्थ गुफ़्त व गोई, 'बातचीत'। ५. 'इल्हाम' नामक शैली में लिखा जा सकता है। यह प्रकार पुराने कवियों द्वारा बहुत पसन्द किया जाता है; किन्तु वास्तव में उसका प्रयोग केवल कोमलता और संयम के साथ होता है। उसमें ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है जिसके दो अर्थ होते हैं, एक बहुत अधिक प्रयुक्त (क़रीब) और दूसरा कम प्रयुक्त (बईद) और कम प्रयुक्त अर्थ में उन्हें इस प्रयोग में लाना कि पाठक चक्कर में पड़ जाय।[1] ६. एक प्रकार का मध्यम मार्ग ग्रहण किया जा सकता है, जिसे 'अन्दाज़' कहते हैं। इस प्रकार में, जिसे मीर ने स्वयं अपने लिए चुना है, तजनीस (Alliteration), तरसीअ़ (Symmetry), तशबीह (Similitude), सफ़ाई गुफ़्तगू (Belle diction), फ़साहत (Eloquence), ख़याल (Imagination) आदि का प्रयोग अवश्य होना चाहिए। मीर का कहना है कि काव्य-कला के जो विशेषज्ञ हैं वे मैंने जो कुछ कहा है उसे पसन्द करेंगे। मैंने गँवारों के लिए नहीं लिखा; क्योंकि मैं जानता हूँ कि बातचीत का क्षेत्र व्यापक है, और मत विभिन्न होते हैं।'

जहाँ तक गद्य से संबंध है, उसके तीन प्रकार हैं: १. वह जो 'मुरज्जज़' या काव्यात्मक गद्य (Poetic prose) कहा जाता है, जिसमें बिना तुक के लय होती है; २. जिसे 'मुसज्जा' या विकृत रूप में 'सजा' कहते हैं[2]; ३. जिसे 'आरी' कहते हैं, जिसमें न तो तुक होती है और न छन्द। अन्तिम दो का सबसे अधिक प्रयोग होता है; कभी कभी ये दोनों

---

[1] 'इल्हाम' नामक अलंकार पर, देखिए, 'Rhétorique des nations musulmanes.' (मुसलमान जातियों का काव्य-शास्त्र) पर मेरा तीसरा लेख, पृ० ९७।

[2] इस तुक युक्त गद्य के तीन प्रकारों की गणना की जाती है। इस संबंध में 'Rhètorique des nations musulmanes' (मुसलमान जातियों का काव्य-शास्त्र) पर मेरा चौथा लेख देखिए, भाग २२।

मिला दिए जाते हैं। 'नज़्म' के, जो कविता के लिए प्रयुक्त सामान्य शब्द है, विपरीत गद्य को 'नस्र' कहते हैं। गद्य सामान्य हो तुकयुक्त हो, अधिकतर सामान्यतः पद्यों-सहित होता है, तथा जो प्रायः उद्धरण होते हैं।

अब मैं, जैसा कि मैंने हिन्दुई के संबंध में किया है, निम्नलिखित अकारादिक्रम में हिन्दुस्तानी रचनाओं के विभिन्न प्रकारों के नामों पर विचार करता हूँ।

'इंशा' अर्थात्, 'उत्पत्ति'। यह हमारे पत्र-संबंधी रिसाले से बहुत-कुछ मिलता-जुलता पत्रों की भाँति लिखी गई चीज़ों का संग्रह है। अनेक लेखकों ने इस प्रकार की रचना का अभ्यास किया है, और गद्य और पद्य दोनों में ही रूपकालंकार के लिए अपनी अनियंत्रित रुचि प्रकट की है। मुझे यह कहने की आवश्यकता नहीं कि उसमें मौलिक, और विशेषतः उद्धृत पद्यों का बाहुल्य रहता है।

'क़सीदा'। इस कविता में, जिसमें प्रशंसा (मुदा), या व्यंग्य (हजो) रहता है, एक ही तुक में बारह से अधिक (सामान्यतः सौ) पंक्तियाँ रहती हैं, अपवाद स्वरूप पहली है, जिसके दो 'मिसरों' का तुक आपस में अवश्य मिलना चाहिए, और जिसे 'मुसर्रा' अर्थात्, तुक मिलने वाले दो 'मिसरे', और 'मतला' कहते हैं। अंत, जिसे 'मक़्ता' कहते हैं, में लेखक का उपनाम अवश्य आना चाहिए।

'क़िता', 'टुकड़ा', अर्थात् चार मिसरों, या दो पंक्तियों में रचित छन्द जिसके केवल अंतिम दो मिसरों की तुक मिलती है। पद्य मिश्रित गद्य-रचनाओं में प्रायः उनका प्रयोग होता है। 'क़िता' के एक छन्द को 'क़िताबन्द' कहते हैं।

'क़ौल' एक प्रकार का गीत, 'आइने अकबरी' के अनुसार, जिसका व्यवहार विशेषतः दिल्ली में होता है।[1]

---

[1] जि० २, पृ० ४५९

'ख़याल', विकृत रूप में 'ख़ियाल', और हिन्दुई में 'ख्याल'।[१] हिन्दू और मुसलमान टेक वाली कुछ छोटी कविताओं को यह नाम देते हैं, जिनमें से अनेक लोकप्रिय गाने बन गई हैं, जिन्हें गिलक्राइस्ट ने अँगरेज़ी नाम 'Catch' दिया है। इन कविताओं का विषय प्रायः शृंगारात्मक, या कम-से-कम भावुकतापूर्ण रहता है। वे किसी स्त्री के मुँह से कहलाई जाती हैं, और उनकी भाषा अत्यन्त कृत्रिम होती है। इस विशेष गाने के आविष्कारक जौनपुर के सुल्तान हुसेन शर्क़ी बताए जाते हैं।[२]

'ग़ज़ल' एक प्रकार की गीति-कविता (ode) है जो रूप में क़सीदा के समान है, केवल अंतर है तो यही कि यह बहुत छोटी होती है, बारह पंक्तियों से अधिक नहीं होनी चाहिए। पिछली (पंक्ति) जिसे 'शाह बैत', या शाही पद्य, कहते हैं, में, कसीदा की भाँति, लिखने वाले का तख़ल्लुस आना चाहिए।

कभी-कभी ग़ज़ल में विशेष श्लेष शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार पहले पद्य के दो मिसरों का और आगे आने वाले पद्यों के अंतिम का समान रूप से या समान शब्दों से प्रारंभ और अंत हो सकता है; यह चीज़ वही है जिसे 'बाज़गश्त' कहते हैं।[3]

'चीस्तान', पद्य और गद्य में पहेली।

'ज़िक्री'—'बयान', गाना जिसका विषय गंभीर और नैतिक रहता है। गुजरात में इसका जन्म हुआ, और काज़ी महमूद द्वारा हिन्दुस्तान में प्रचलित हुआ।[४]

---

[१] सोचने का बात है, कि यद्यपि आधुनिक भारतीयों में यह शब्द चिर परिचित अरबी शब्द का एक रूप माना जाता है, और जिसका अर्थ है 'विचार', वह संस्कृत 'खेलि'—भजन, गीत—का रूपान्तर है।

[२] विलर्ड (Willard), 'म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान', पृ० ८८

[३] वली की ग़ज़ल जो 'दिलरुबा' शब्दों से प्रारंभ होती है, और जो मेरे संस्करण के पृ० २३ पर है, उसका एक उदाहरण प्रस्तुत करती है, साथ ही वह जो 'सब चमन' शब्दों से प्रारंभ होती है, और जो २६ पर पढ़ी जा सकती है।

[४] विलर्ड (Willard), 'म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान', पृ० ९२

'तज़्किरा'—'संस्मरण' या जीवनी। जिस प्रकार फ़ारसी में उसी प्रकार हिन्दुस्तानी में, इस शीर्षक की अनेक रचनाएँ हैं, और जिनमें कवियों के सम्बन्ध में, उनकी रचनाओं से उद्धरणों सहित, सूचनाएँ रहती हैं।

'तज़्मीन'—'सन्निवेश करना'। इस प्रकार का नाम उन पद्यों को दिया जाता है जो किसी दूसरी कविता का विकास प्रस्तुत करते हैं। उनमें परिचित पंक्तियों के साथ नई पंक्तियाँ रहती हैं। अपनी ख़ास ग़ज़लों में से एक पर सौदा ने लिखा है, और ताबाँ ने हाफ़िज़ की एक ग़ज़ल पर।

'तराना'। यह शब्द, जिसका अर्थ है 'स्वर का मिलाना', 'रुबाई' में एक गीत, विशेषतः दिल्ली में प्रयुक्त, के लिए आता है। इन गीतों के बनाने वालों को 'तराना-परदाज़'-'गीत बनाने वाले' कहते हैं।

'तश्बीब'। यह शब्द, जिसका अर्थ है 'युवावस्था और सौन्दर्य का वर्णन', एक शृंगारिक कविता का द्योतक है जिसे मुसलमान काव्य-शास्त्री प्रधान काव्य-रचनाओं में स्थान देते हैं।

'तारीख़'—'इतिहास'। इस प्रकार का नाम काल-चक्र-संबंधी पद्य को दिया जाता है, जिसमें, एक मिसरा या एक पंक्ति के, एक या कुछ शब्दों के अक्षरों की संख्यावाची शक्ति के आधार पर, किसी घटना की तिथि निर्धारित की जाती है। यह आवश्यक है कि कविता और काल-चक्र का उल्लिखित घटना से संबंध हो। ये कविताएँ प्रायः इमारतों और क़ब्रों पर खोदे गए लेखों का काम देती हैं, और सामान्यतः उन रचनाओं के अंत में आती हैं जिनकी ये तिथि भी बताती हैं। 'तारीख़' से कालक्रमानुसार वृतान्त, इतिहास, सामान्य इतिहास या एक विशेष इतिहास-संबंधी सब बड़े ग्रन्थ भी समझे जाते हैं।

'दीवान'। पंक्तियों के अंतिम वर्ण के अनुसार क्रम से रखी गई ग़ज़लों के संग्रह को भी कहते हैं, और फलतः एक ही लेखक की कविताओं का संग्रह। किन्तु इस अंतिम अर्थ में ख़ास तौर से 'कुल्लियात' अथवा पूर्ण, शब्द का प्रयोग होता है।

भारतीय मुसलमानों के साहित्य में ग़ज़लों के संग्रह सबसे अधिक

प्रचलित हैं। लोग एक या दो ग़ज़ल लिखते हैं, तत्पश्चात् कुछ और; अंत में जब उनकी संख्या काफ़ी हो जाती है, तो दीवान के रूप में संकलित कर दी जाती हैं, उसकी प्रतियाँ उतारी जाती हैं, और अपने मित्रों में बाँट दी जाती हैं। कुछ कवियों ने तो कई दीवान तैयार किए हैं; उदाहरणार्थ मीर तक़ी ने छः लिखे हैं। दुर्भाग्यवश उनमें लगभग हमेशा एक से विचार रहते हैं, और कभी-कभी भाषा भी एक सी रहती है; साथ ही, कई सौ कविताओं के दीवान में नए विचार प्रस्तुत करने वाली या मौलिक रूप में लिखी गईं कविताएँ ढूँढ़ना कठिन हो जाता है।

'नुक्ता'—'विन्दु', 'सुन्दर शब्द', एक प्रकार का हरम का गाना।[1]

'फ़र्द' अर्थात् 'एक'। लोग 'मिसरा' भी कहते हैं।

'बन्द' का ठीक-ठीक अर्थ है 'छन्द': जैसे 'हफ़्त बन्द' में सात छन्द होते हैं। 'तर्जी बन्द' अथवा 'टेकयुक्त छन्द', उस कविता को कहते हैं जिसमें विभिन्न तुक वाले, पाँच से ग्यारह पंक्तियों तक के, छन्द होते हैं, जिनमें से हर एक के अंत में कविता से बाहर की एक ख़ास पंक्ति[2] दुहराई जाती है, किंतु जिसके अर्थ का छन्द के साथ साम्य होता है, चाहे वह बिना पंक्तियों के अपने में पूर्ण ही हो। उसमें पाँच से कम और बारह से अधिक छन्द तो होने ही नहीं चाहिए।[3] 'तरकीब बन्द'—क्रमयुक्त छन्द, उस रचना को कहते हैं जिसके छन्दों की अंतिम पंक्तियाँ बदल जाती हैं। यह सामान्यतः प्रशंसात्मक कविता होती है[4]; कभी-कभी प्रत्येक छन्द के अंत में आने

[1] विलर्ड (Willard), 'म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान', पृ० ९३

[2] इसका एक उदाहरण इस जिल्द के पृष्ठ ४४३ पर मिलेगा।

[3] न्यूबोल्ड (Newbold), 'Essay on the metrical compositions of the Persians' (फ़ारस वालों की छन्दोबद्ध रचनाओं पर निबन्ध)।

[4] इस प्रकार का एक उदाहरण मीर तक़ी की रचनाओं में पाया जाता है, कलकत्ते का संस्करण, पृ० ८७५, जिसका हरएक छन्द बदल जाता है। कमाल ने अपने तज़्किरा में हसन की एक कविता उद्धृत की है, जिसकी रचना १७ बन्दों या

वाली स्फुट पंक्तियों के जोड़ देने से एक ग़ज़ल बन सकती है। इस कविता के अंतिम छन्द में, साथ ही पिछली के में, कवि अपना तख़ल्लुस अवश्य देता है। इस संबंध में सौदा ने, फ़िदवी पर अपने व्यंग्य में, कहा है कि कवियों को पंक्तियों में अपना तख़ल्लुस तो अवश्य रखना चाहिए, किंतु असली नाम कभी नहीं।

'बयाज़', या संग्रह-पुस्तक (album)। यह विभिन्न रचनाओं के के पद्यों का संग्रह होता है। आयताकार संग्रह-पुस्तक (album) को जिसमें दूसरों तथा ख़ास मित्र-बांधवों के पद्य रहते हैं विशेष रूप से 'सफ़ीना' कहा जाता है। अरबी के विद्वान् श्री वरसी (M. Varsy) ने मुझे निश्चित रूप से बताया है कि मिश्र (ईजिप्ट) में इस शब्द का यही अर्थ है, और वास्तव में एक बक्स में बन्द आयताकार संग्रह-पुस्तक का द्योतक है।

'बैत'। यह शब्द[1] 'शेर' का सामानार्थवाची है, और एक सामान्य पद्य का द्योतक है; किन्तु उसका एक अधिक विशेष अर्थ भी है, और जिसे कभी-कभी दो अलग-अलग पंक्तियों वाला छन्द कहते हैं, क्योंकि उसमें दो 'मिसरा' होते हैं। वह हिन्दुई के 'दोहा' या 'दोहरा' के समान हैं।

'दो-बैत', दो पंक्तियों, या चार 'मिसरों' की छोटी कविता को कहते हैं। 'चार-बैत' चार छन्दों के उर्दू गाने को कहते हैं।

'मन्क़बा', प्रशंसा। यह वह शीर्षक है जो किसी व्यक्ति की प्रशंसा में लिखी गई कुछ कविताओं को दिया जाता है।

'मर्सिया', 'शोक', अथवा ठीक-ठीक 'विलाप' गीत, मुसल्मान शहीदों के संबंध में साधारणतः चार पंक्तियों के पचास छन्दों

चार पंक्तियों के छन्दों में हुई है, जिनमें से पहली तीन उर्दू में और अंतिम फ़ारसी में, एक विशेष तुक में, है।

[1] 'बैत' का ठीक ठीक अर्थ है 'ख़ेमा', और फलतः 'घर', और उसी से एक ख़ेमे के दो द्वार हैं जिन्हें 'मिसरा' कहते हैं, इस प्रकार पद्य में इसी नाम के दो मिसरे होते हैं।

में रचित काव्य। बहुत पीछे तथा अन्य स्थानों पर मैं इसका उल्लेख कर चुका हूं।[1]

'मसनवी'। अरबी में जिन पद्यों को 'मुज़्दविज' कहते हैं उन्हें फ़ारसी और हिन्दुस्तानी में इस प्रकार पुकारा जाता है। ये दोनों शब्द 'मिसरों' के जोड़ों से सार्थक होते हैं, और वे पद्यों की उस शृंखला का द्योतन करते हैं जिनके दो मिसरों की आपस में तुक मिलती है, और जिसकी तुक प्रत्येक पद्य में बदलती है, या कम-से-कम बदल सकती है।[2] इस रूप में 'वअ़ज़' या 'पन्दनामे', उपदेशात्मक कविताएँ, किसी भी प्रकार की सब लम्बी कविताएँ और पद्यात्मक वर्णन लिखे जाते हैं। उन्हें प्रायः खण्डों या परिच्छेदों में बाँटा जाता है जिन्हें 'बाब'—दरवाज़ा, या 'फ़स्ल'-भाग कहते हैं। पिछला शब्द हिन्दुई-कविताओं के 'कांड' की तरह है।

'मुअम्मा'—पहेली, छोटी कविता जिसका विषय एक पहेली रहती है;[3] उसे 'लुग्ज़' भी कहते हैं।

'मुबारक-बाद'। बधाई और प्रशंसा संबंधी काव्य को यह नाम दिया जाता है। हिन्दुई में 'बधावा' के समानार्थवाची के रूप में उसका प्रयोग होता है।

'मुसम्मत', अर्थात् 'फिर से जोड़ना'। इस प्रकार उस कविता को कहा जाता है जिसके छन्दों में से हर एक भिन्न-तुकान्त होता है, किन्तु जिनके अंत में एक ऐसा मिसरा आता है जिसकी तुक अलग-अलग रूप में मिल जाती है, और जो क्रम पूरी कविता के लिए चलता है। उसमें

[1] इन विलाप-गीतों पर विस्तार मेरा 'Mémoir sur la religion musulmane dans l' Inde' (भारत में मुसलमानी धर्म का विवरण) में, और 'Séances de Haïdari' (हैदरी से भेंट) में देखिए।

[2] ये 'lèonins' नामक लैटिन पद्यों की तरह हैं। अँगरेजी उपासना-पद्धति में इसी प्रकार के बहुत हैं।

[3] 'गुलदस्ता-इ निशात' में इस प्रकार की पहेलियाँ बहुत बड़ी संख्या में मिलती हैं, पृ० ४४४।

प्रति छन्द में तीन, चार, पाँच, छः, सात, आठ और दस मिसरे होते हैं, और जो फलतः 'मुसल्लस', 'मुरब्बा', 'मुख़म्मस', 'मुसद्दस', 'मुसब्बा', 'मुसम्मन' और 'मुअशर' कहे जाते हैं। 'मुख़म्मस' का बहुत प्रयोग होता है। कभी-कभी किसी दूसरे लेखक की ग़ज़ल के आधार पर इस कविता की रचना की जाती है। उस समय छन्द के पाँच मिसरों में से अंतिम दो मिसरे ग़ज़ल की हर पंक्ति के होते हैं। इस प्रकार पहले की वही तुक होती है जो ग़ज़ल की पहली पंक्ति की, प्रथानुसार जिसके दो मिसरों की आपस में तुक मिलनी चाहिए। दूसरे छन्द तथा बाद के छन्दों में, पहले तीन मिसरों की ग़ज़ल की पंक्ति के पहले मिसरे से तुक मिलती है, पंक्ति जो छन्द में चौथी हो जाती है; और पाँचवें मिसरे की तुक वही होती है, यहाँ तक कि मुख़म्मस के अंत तक, जो पहले छन्द की होती है, यह तुक वही होती है जो ग़ज़ल की।

'मुस्तज़ाद', अर्थात् 'और जोड़ना'। ऐसा उस ग़ज़ल को कहते हैं जिसकी हर एक पंक्ति में एक या अनेक शब्द जोड़े जाते हैं जिसके बिना या सहित कविता पढ़ी जा सकती है।[1] इस रचना से एतराज़ (incidence) या हशो (filling up) नामक अलंकारों का विकास हुआ है, और जो, रुचपूर्ण व्यक्तियों की प्रशंसा प्राप्त करने के लिए वह होना चाहिए जिसे 'हशो मलीह' (beautiful filling-up) कहते हैं।[2]

'मौलूद'। यह शब्द हमारे 'noëls' (क्रिस्मस-संबंधी) नामक गीतों की तरह है। वास्तव में यह मुहम्मद के जन्म के सम्मान में भजन है।

'रिसाला'। इस शब्द का ठीक-ठीक अर्थ है 'पत्र', जिसका प्रयोग पद्य या गद्य में छोटी-सी उपदेशात्मक पुस्तक के लिए होता है, और जिसे

---

[1] श्री द सैसी (M. de Sacy) ने उदाहरण के लिए फ़ारसी की एक सुन्दर रुबाई दी है ('ज़ूर्नाँ दै सावाँ', Journal des Savant, जनवरी, १८२७)। वली की रचनाओं में अनेक मिलते हैं, मेरे संस्करण के पृ० ११३ और ११४।

[2] 'Rhet. des nat. mus.' (मुसलमान जातियों का काव्य-शास्त्र) पर मेरा तीसरा लेख देखिए, पृ० १३०।

हम 'किताब' शब्द के विपरीत एक 'छोटी-सी किताब' कह सकते हैं। 'किताब' का अर्थ है एक 'लंबी-चौड़ी पुस्तक', और जो हिन्दुई 'पोथी' के समानार्थक है, जब कि 'रिसाला' एक प्रकार से 'माल' या 'माला' के समान है।[१]

'रुबाई', अथवा चार चरणों का छन्द, एक विशेष गत में लिखित छोटी-सी कविता, जिसमें चार मिसरे होते हैं जिनमें से पहले दो और चौथे की आपस में तुक मिलती है। उसे 'दो-बैती' यानी 'दो पद्य'[२] भी कहते हैं; इसी कविता के एक प्रकार को 'रुबाई क़िता आमेज़', यानी 'क़िता-मिश्रित रुबाई', कहते हैं।

'रेख़्ता', मिश्रित। यह उर्दू कविता को दिया जाने वाला नाम है, और फलतः इस बोली में लिखी जाने वाली हर प्रकार की कविता का, तथा विशेषतः ग़ज़ल का। जैसा कि मैंने बहुत पीछे कहा है, अपनी कविताओं के एक भाग के लिए, कबीर ने भी इस शब्द का प्रयोग अवश्य किया है।

'वासोख़्त', कविता जिसे 'सोज़' भी कहते हैं।

'शिकार-नामा', यानी 'शिकार की पुस्तक'। शिकार के आनन्द, या उचित रूप में एक सम्राट् के किसी विशेष शिकार का वर्णन करने वाली मसनवी को यह नाम दिया जाता है।

'सलाम', अभिवादन, अली के संबंध में ग़ज़ल या स्तुति, और इसी प्रकार किसी व्यक्ति की प्रशंसा में लिखित हर प्रकार की कविता।

'सरोद' यानी गीत, गाना।

'साक़ी-नामा' यानी 'साक़ी की पुस्तक'। यह मसनवी की भाँति तुक युक्त लगभग चालीस पंक्तियों की, और शराब की प्रशंसा में, एक प्रकार का डिथिरैंब (Dithyramb, यूनान के सुरा-देव बैकूस Bacchus के

---

१ उदाहरण के लिए, 'भक्त-माल'—संतों पर पुस्तक—में।

२ ग्लैड्विन (Gladwin), 'डिसर्टेशन' (Dissertation, दावा), पृ० ८०

सम्मान में या इसी अर्थ में लिखित कविता) है। कवि सामान्यतः साक़ी को संबोधित करता है; और जैसा कि ग़ज़ल में होता है, अर्थ प्रायः आध्यात्मिक होता है। वास्तव में, रहस्यवादी रचयिताओं में, शराब का अर्थ होता है, ईश्वर-प्रेम; मैख़ाना, दिव्य विभूति का मन्दिर ; शराब बेचने वाला, गुरु ; अंत में दयालु साक़ी स्वयं ईश्वर की मूर्ति है।

'सोज़'। यह शब्द, जिसका शब्दार्थ है 'जलन', एक आवेगपूर्ण श्रृंगारी गीत के लिए प्रयुक्त होता है, जिसे 'वासोख़्त' भी कहते हैं। मर्सिया के छन्दों को 'सोज़' नाम दिया जाता है।

'हज़्लियात', मज़ाक। कभी-कभी मनोरंजक पंक्तियों की कविता को यह नाम दिया जाता है।

मेरा विचार है कि पीछे दी गईं दो तालिकाएँ हिन्दुई और हिन्दुस्तानी की, अर्थात् भारतवर्ष के एक बड़े भाग की आधुनिक भाषा की, और संस्कृत से उसे अलग करने वाली भाषा-पद्धति की, इस संक्रांति-कालीन भाषा-पद्धति की जिसकी लोकप्रिय कविताएँ भारत के मध्ययुग को आकर्षक बनाती हैं, और जिसके संबंध में 'सर्फ़-इ उर्दू' के रचयिता का हिन्दुस्तानी के बारे में यह कथन कि : 'यह चारुता और माधुर्य की खान है'

है लताफ़त में मैदन ख़ूबी
(फ़ारसी लिपि से)

और भी उपयुक्त शीर्षक के रूप में, लागू होता है, विभिन्न प्रकार की रचनाओं का काफ़ी ठीक ज्ञान करा सकती हैं।

द्वितीय संस्करण की पहली जिल्द (१८७०) से प्रस्तावना

इस रचना का प्रथम संस्करण, जो ग्रेट-ब्रिटेन और आयरलैंड की रॉयल एशियाटिक सोसायटी की अनुवाद-समिति के प्रकाशनों का एक भाग था, जिसका नंबर ५७ है, और जो इँगलैंड की सम्राज्ञी को उनकी आज्ञा लेकर समर्पित है, बहुत दिनों से समाप्त हो गया है। पहली जिल्द १८३९ में प्रकाशित हुई थी, और क्योंकि दूसरी जिल्द १८४६ तक प्रकाशित न हो सकी, उस समय तक मेरे पास बहुत-सी नई सूचनाओं का संग्रह हो गया था जिससे मैंने एक अतिरिक्त जिल्द प्रकाशित करने की सोची जिसकी घोषणा मैंने उस समय की थी। समय बीतता गया और सूचनाएँ इकट्ठी होती गईं। भारत के आधुनिक साहित्य के प्रेमियों ने बहुत दिनों से एक नया संस्करण प्रकाशित करने के लिए मेरा ध्यान आकृष्ट कर रखा था, और अंत में, विशेषतः एक प्रिय और घनिष्ठ भाई के प्रोत्साहन से, मैंने उसे प्रकाशित करने का निश्चय किया है।

भूमिका में हिन्दुई और हिन्दुस्तानी साहित्य के निर्माण और विकास की ऐतिहासिक रूपरेखा दे देने के बाद, उसकी रचना करने वाले लेखकों की श्रेणियों और उनकी रचनाओं के प्रकारों की ओर संकेत करने के बाद, मैंने अपनी सूचनाओं के मूल उद्गमों का उल्लेख किया है; किन्तु मुझे खेद है कि मैं एक तज़्किरा का प्रयोग नहीं कर सका जो मुझे भूमिका के छप जाने के बाद, प्राप्त हुआ था, और महिला

लेखिकाओं से संबंधित होने के कारण वह जितना रोचक है उतना ही अद्भुत है। मेरा मतलब मेरठ के रईस, हकीम फ़सीह उद्दीन रंज कृत 'बहारिस्तान-इ नाज़'—नाज़ का बाग—से है, जिन्होंने उसकी एक प्रति मेरे पास भेजने की कृपा की। न मैं लखनऊ के मुंशी फ़िदा अली ऐश द्वारा दिए गए रचयिताओं संबंधी संक्षिप्त सूचनाओं सहित, 'वासोख़्त' (wâcokht) नामक तिहत्तर कविताओं के दो जिल्दों में एक बड़े संग्रह का उल्लेख कर सका हूँ—संग्रह जो वास्तव में एक विशेष तज़्किरा भी है, और जिसके अस्तित्व का ज्ञान मुझे केवल २७ जुलाई, १८६७ के 'अवध अख़बार' द्वारा प्राप्त हुआ था।

हाल ही में एक मुसलमान विद्वान्[1] ने एक हिन्दुस्तानी पत्रिका[2] में उर्दू का निर्माण इस ढंग से प्रस्तुत किया है जो मेरी भूमिका में अन्य मूल उद्गमों के आधार पर दिए गए से कुछ भिन्न है। उनका कहना है : "ईसवी सन् के ११९१ तक हिन्दुस्तान में राजाओं का शासन था ; उस समय भाषा या भाखा (हिन्दुई या हिन्दी) बोली जाती थी, और संस्कृत लिखित और विद्वानों की भाषा थी। ११९३ में शिहाबुद्दीन ग़ोरी ने भारत के समस्त राजाओं के महाराजा पृथीराज को बन्दी बनाया, और इस प्रकार हिन्दुओं का शासन समाप्त हो गया। १२०६ में, शिहाबुद्दीन का ग़ुलाम, कुतुबुद्दीन ऐबक मुसलमान बादशाहों में सबसे पहले था जो दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। तब, क्योंकि इस बादशाह की सेना और दिल्ली के पुराने निवासी एक ही जगह रहते थे, निरंतर इकट्ठे होते थे और हर घड़ी संपर्क में आते थे, अनेक फ़ारसी, तुर्की तथा अन्य शब्दों के मिश्रण से भाषा का रूप बदलने लगा। १३२५ में, तुग़लक शाह के समय में, दिल्ली के अमीर ख़ुसरो ने इस नवोत्पन्न भाषा में अब तक प्रयुक्त होने वाले एक छोटे-से व्याकरण का निर्माण किया।[3] उन्होंने फिर 'पहेलियाँ',

[1] मुंशी जमालुद्दीन

[2] २४ नवम्बर, १८६८ का 'अवध अख़बार', पृ० ७२२

[3] 'ख़ालिक बारी'

'मुकरियाँ', 'अनमल (Anmal)'[१] और 'दोहरे' लिखे जो अब तक बहुत प्रसिद्ध हैं।

"तो यह नई भाषा अन्य अनेक भाषाओं की मिश्रण थी, क्योंकि उर्दू (पड़ाव), सैनिक शिविर, में सब तरह के लोग इकट्ठे होते थे, और उसी से उसने अपना नाम ग्रहण किया। किन्तु १७१८ के वर्ष तक उसका कोई मूल्य नहीं था, क्योंकि उस समय तक साहित्यिक रचनाओं के लिए उपयुक्त समझी जाने की अपेक्षा वह बाज़ार में समझी जाने वाली अधिक मानी जाती थी, लोग फ़ारसी, जो दरबारी भाषा थी, में उसी प्रकार लिखते रहे, और भाषा में लोकप्रिय कविताओं की रचना तक सीमित रहे। किन्तु, १७१६ में, दिल्ली के सिंहासन पर बैठ जाने पर मुहम्मद शाह ने उर्दू को प्रचलित करने की उत्कट इच्छा का अनुभव किया, और स्वयं उसे पूर्ण करने और उसकी कुछ अभिव्यंजनाओं के बदलने में संलग्न हुआ। उसके शासन के द्वितीय वर्ष में दक्खिन के वली ने उर्दू में एक दीवान लिखा, और उनके एक शिष्य, हातिम, ने भी कुछ पद्य लिखे। फिर उन्होंने अपने पैंतीस शिष्य बनाए, जिनमें से कुछ प्रसिद्ध हो गए हैं। वह प्रायः कहा करते थे : 'मैंने हिन्दी का प्रयोग रोक दिया है, और उसका स्थान उर्दू को दिया है, ताकि लोगों द्वारा प्रयुक्त होने पर वह तुरंत शिष्ट लोगों को रुचिकर प्रतीत हो।' तबसे यह भाषा दिन-पर-दिन अधिक शुद्ध और परिमार्जित होती गई है, और एक बहुत बड़ी हद तक पूर्ण हो गई है।"

अंत में एक और विद्वान् मुसलमान का अपनी ओर से हिन्दी और उर्दू के संबंध में कथन इस प्रकार है :[२]

"हिन्दी (मध्य युग के) भारतवर्ष की पुरानी भाषा है और अनेक लेखकों द्वारा उसका साहित्य समृद्ध हुआ है...

१ 'विविध'। अन्य शब्दों की व्याख्या भूमिका में दी गई है।

२ सैयद अब्दुल्ला की 'सिंहासन बत्तीसी' के संस्करण की भूमिका

"विजयी मुसलमानों के उस पर अपनी वर्णमाला लाद देने से उर्दू अरबी, फ़ारसी और कुछ तुर्की शब्दों के रंग से रंगी हुई वही भाषा है। वह न केवल अदालतों और मुसलमान परिवारों की ही भाषा हो गई है, किन्तु तमाम कुलीन हिन्दुओं की और उन लोगों की जिन्होंने शिक्षा प्राप्त की है, जब कि हिन्दी अपने सरल से सरल रूप में ब्रह्मा के उपासकों की अति निम्न श्रेणियों तक सीमित है..."

पहले संस्करण की भाँति, अपना कार्य सरल बनाने की दृष्टि से, प्रत्येक विशेष लेखक के संबंध में लिखने के लिए और साथ ही एक प्रकार का कोष बनाने के लिए मैंने अब की बार भी अकारादिक्रम का आश्रय ग्रहण किया है; किन्तु पहले संस्करण में जो उद्धरण और विश्लेषण अलग दिए गए थे वे इस बार मिला दिए गए हैं, केवल उन उद्धरणों को अब बहुत छोटा कर दिया गया है। इसी प्रकार मैंने 'प्रेमसागर' से कुछ नहीं दिया, जो तब से होलिंग्स (Hollings) और ऐड० बी० ईस्टविक (Ed.B. Eastwick) द्वारा पूर्णतः अँगरेज़ी में अनूदित हो चुका है। मैंने अब अफ़सोस द्वारा भारत के प्रान्तों का काव्यात्मक वर्णन भी नहीं दिया, जिसका १८४७ में एन० एल० बेनमोहेल (N. L. Benmohel) द्वारा 'Ten sections of a description of India' शीर्षक के अन्तर्गत अँगरेज़ी में अनुवाद हो जाने के बाद कोई महत्त्व नहीं रह गया; न तुलसी-दास कृत 'रामायण' का आठवाँ कांड---वाल्मीकि कृत संस्कृत काव्य, जिसमें समान कथा और समान घटनाएँ हैं—क्योंकि प्रथम संस्करण के बाद इटैलियन और फ्रांसीसी में उसका अनुवाद हो चुका है। अंत में मैंने कुछ अन्य अंशों को अनावश्यक समझ कर उनमें काट-छाँट कर दी है। किन्तु जीवनी और ग्रन्थों के भाग की दृष्टि से यह संस्करण पहले संस्करण से बहुत बड़ा है, क्योंकि इसमें प्रत्येक में छः सौ से अधिक पृष्ठों की तीन जिल्दें हैं।

मैंने कथित लेखकों, विशेषतः जिन्होंने कविताएँ लिखी हैं, का उल्लेख काव्योपनाम या और भी स्पष्ट रूप में तख़ल्लुस शीर्षक के अंतर्गत किया है,

क्योंकि मुसलमानों और हिन्दुओं के असली नामों में बहुत कम अंतर होता है; किंतु क्योंकि इन लेखकों का उल्लेख प्रायः उनके दूसरे नामों के अंतर्गत हुआ है, इसलिए लेखकों की तालिका में न केवल तख़ल्लुसों का उल्लेख हुआ है, वरन् तख़ल्लुस के संदर्भ सहित अन्य नामों का भी।

मैंने फ़ारसी और देवनागरी अक्षरों का प्रयोग छोड़ दिया है, किन्तु, जहाँ तक संभव हो सका है, दीर्घ स्वर पर स्वरित उच्चारण-चिन्ह (Circumflex accent) लगा कर और aïn प्रकट करने के लिए उसके आगे या पीछे आने वाले स्वर से पहले या बाद को अक्षर-लोप-चिन्ह (Apostrophe) लगा कर, पूर्वी शब्दों के हिज्जे नियमित रूप से किए हैं। फ़ुटनोटों में मैंने भारतीय शब्दों को I, अरबी और फ़ारसी शब्दों को A या P से प्रकट किया है, और जब आवश्यकता प्रतीत हुई है तो मैंने शब्दों के हिज्जे निश्चित कर दिए हैं।

तीसरी जिल्द के अन्त में, विषय के अनुसार विभाजित, उन रचनाओं की सूची है जो ऐसे भारतवासियों द्वारा लिखित हैं जिनके संबंध में 'जीवनी' में विचार नहीं हो सका, और हिन्दी तथा उर्दू के उन पत्रों की सूची है जो निकल रहे हैं या निकल चुके हैं और जिनका निकलना मैं जानता हूँ; अंत में लेखकों और रचनाओं की, जिल्द और पृष्ठों के संदर्भ सहित, एक तालिका है। यूरोपियनों द्वारा या उनकी अध्यक्षता में हिन्दुस्तानी में लिखित ईसाई धार्मिक रचनाओं की भी एक सूची देने की मेरी इच्छा थी, किन्तु मुझे प्रतीत हुआ कि ये सूचियाँ मेरी आयोजना के बाहर हैं, और ख़ास तौर से इसलिए भी मैंने अपनी इच्छा से उन्हें नहीं दिया कि उनसे इस जिल्द का आकार बहुत बढ़ जाता।

द्वितीय संस्करण की पहली जिल्द से

भूमिका

जब भारत में संस्कृत का चलन हुआ, तो देश की भाषाओं का व्यवहार बन्द नहीं हो गया था। उत्तर की भाँति दक्षिण में, संस्कृत सामान्य भाषा कभी न हो सकी। वास्तव में हम हिन्दुओं की नाट्य-रचनाओं में उसे केवल उच्च श्रेणी के व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त पाते हैं, और स्त्रियाँ तथा साधारण व्यक्ति 'संस्कृत' (जिसका संस्कार किया गया हो) के विपरीत 'प्राकृत' (बिगड़ हुई) कही जाने वाली ग्रामीण बोलियाँ बोलते हैं। ये बोलियाँ केवल विद्वानों की और पवित्र भाषा समझी जाने वाली संस्कृत को बिल्कुल ही हटा देना नहीं चाहतीं।

उत्तर और उत्तर-पश्चिम प्रान्त में जिस भाषा का विकास हुआ है, जो केवल 'भाषा' या 'भाखा' (सामान्य भाषा) नाम से पुकारी जाती है, वह 'हिन्दुई' (हिन्दुओं की भाषा) या 'हिन्दी' (भारतीय भाषा) के विशेष नाम से प्रचलित है।[1]

---

[1] फ़ारसी और अरबी शब्दों के मिश्रण बिना हिन्दी 'ठेठ' या 'खड़ी बोली' (शुद्ध भाषा) कही जाती है ; ब्रज प्रदेश की विशेष बोली 'ब्रज भाखा' कही जाती है, जो आधुनिक बोलियों में से प्राचीन हिन्दुई के सबसे अधिक निकट है ; और 'पूर्बी भाखा' उसी बोली का एक रूप है जो दिल्ली के पूर्व (पूरब) में बोली जाती है। इस अत्यन्त रोचक विषय पर जे० बीम्स की विद्वत्तापूर्ण रचना 'Notes on the Bhoj puri dialect of hindi', जर्नल रॉयल एशियाटिक सोसायटी, सितम्बर, १८६८, में विस्तार देखिए।

आठवीं शताब्दी के प्रारंभ से मुसलमानों ने भारतवर्ष पर विजय प्राप्त करते हुए आक्रमण किया ; १००० ईसवी सन् के लगभग, महमूद ग़ज़नी को हर जगह उज्ज्वल सफलताएँ मिलीं, और उस समय से नगरों में भारतीय भाषा में परिवर्तन उपस्थित हुआ । चार शताब्दी बाद, मुग़ल जाति का तैमूर हिन्दुस्तान आया, दिल्ली का शासक बना, और निश्चित रूप से १५०५ में बाबर द्वारा स्थापित शक्तिशाली साम्राज्य की नींव डाली । तब हिन्दी ने अपने को फ़ारसी के भण्डार से भरा, जो स्वयं उस समय तक अरब विजेताओं और उनके धर्म द्वारा प्रचलित अनेक अरबी शब्दों से मिश्रित हो चुकी थी । सेना का बाज़ार नगरों में स्थापित हुआ, और उसे तातारी नाम 'उर्दू' मिला, जिसका ठीक-ठीक अर्थ है फ़ौज' और 'शिविर' । हिन्दू-मुसलमानों की यह नई बोली प्रधानतः वहीं बोली जाती थी ; साथ ही 'उर्दू की भाषा' (ज़बान-इ उर्दू) या केवल 'उर्दू' नाम मिला । इसी समय के लगभग, भारत के दक्षिण में, उन मुसलमान वंशों के अंतर्गत जो नर्मदा के दक्षिण में क्रमागत रूप में निर्मित विभिन्न साम्राज्यों का शासन करते थे, एक उसी प्रकार की भाषा-संबंधी घटना घटित हुई ; और वहाँ हिन्दू-मुसलमानों की भाषा ने एक विशेष नाम 'दक्खिनी' (दक्षिण की) ग्रहण किया । मध्ययुगीन फ्रांस की 'उइ' (oil) और 'ओक' (oc) की भाँति, इन दोनों बोलियों का प्रचार भारत में हो गया है, एक का उत्तर में, दूसरी का दक्षिण में, जहाँ-जहाँ मुसलमानों ने अपना राज्य विस्तृत किया । तो भी पुरानी हिन्दी का प्रयोग अब भी गाँवों में, उत्तर के और उत्तर-पश्चिम के प्रान्तों के हिन्दुओं में, होता है ; किन्तु यद्यपि शब्दों के चुनाव में हिन्दी और उर्दू एक दूसरे से भिन्न हैं, वे वास्तव में, उचित बात तो यह है, कि अपनी-अपनी वाक्य-रचना-पद्धति के अंतर्गत आंशिक दृष्टि से विभिन्न तत्वों से निर्मित, एक ही भाषा हैं, भाषा जिसे यूरोपियनों ने सामान्य नाम 'हिन्दुस्तानी' दिया है, जिसके अंतर्गत वे हिन्दुई और हिन्दी, उर्दू और दक्खिनी को शामिल करते हैं ; किन्तु यह नाम भारतवासियों ने स्वीकार नहीं किया, क्योंकि वे

देवनागरी, या अधिकतर नागरी [1] में लिखित हिन्दू बोली को 'हिन्दी' शब्द से, और फ़ारसी अक्षरों में लिखित, मुसलमानी बोली को, 'उर्दू' नाम से अलग-अलग करना अधिक पसंद करते हैं। अब तो स्वयं यूरोपियन बड़ी खुशी से इन दो नामों का प्रयोग करते हैं।

जब तक मुसलमानी राज्य जारी रहा, फ़ारसी अक्षरों में लिखित उर्दू समस्त भारत में स्वीकार कर ली गई थी, यद्यपि, न केवल अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के लिए, वरन् अदालतों और सरकारी दफ़्तरों के लिए भी, राज्य की सरकारी भाषा फ़ारसी थी। बहुत दिनों तक अँगरेज़ी सरकार ने इसी नीति का पालन किया, किन्तु भारत में इस विदेशी भाषा के प्रयोग के फलस्वरूप उत्पन्न कठिनाइयों का अनुभव कर, उन्होंने १८३१ में, लोगों के हित के लिए, विभिन्न प्रान्तों की सामान्य भाषाओं को स्थान दिया, और स्वभावतः उर्दू उत्तर तथा उत्तर-पश्चिम प्रान्तों के लिए अपना ली गई। यह सुन्दर कार्य सबको पसन्द आया, और अगले तीस वर्षों में इस व्यवस्था को पूर्ण सफलता मिली है तथा कोई शिकायत सुनने में नहीं आई; किन्तु इन पिछले वर्षों में भारत में प्राचीन जातियों से संबंधित वही आंदोलन उठ खड़ा हुआ है जिसने यरोप को आन्दोलित कर रखा है, अब मुसलमानों के अधीन न होने के कारण हिन्दुओं में एक प्रतिक्रिया उत्पन्न हो गई है, अपने हाथ में शक्ति न ले सकने के बाद, वे कम-से-कम मुसलमानों की दासता के समय की अरुचिकर बातें दूर कर देना और स्वय उर्दू को ही अवरुद्ध कर देना चाहते हैं, अथवा केवल उचित रूप में रखते हुए फ़ारसी अक्षरों को जिसमें वह लिखी जाती है, जिन्हें वे मुसमलनानों की छाप समझते हैं। अपनी इस प्रतिक्रियावादी अजीब बात के पक्ष में वे जो तर्क प्रस्तुत करते

[1] या 'कैथी नागरी'—कायथों (मुंशियों) की लिखावट—अर्थात् घसीट देवनागरी, जो पढ़ने में 'शिकस्ता' से भी अधिक कठिन है। 'शिकस्ता' भारत में साधारण प्रयोग में लाए जाने वाले फ़ारसी अक्षर हैं जिनके संबंध में उत्तर के 'नस्तालीक' और दक्षिण के 'नस्ख़ी' में भेद करना आवश्यक है।

हैं वे बिल्कुल स्वीकार करने योग्य नहीं हैं। बिना इस बात की ओर ध्यान दिए हुए कि जब कि हिंदी जिसे वे राष्ट्रीयता की संकीर्ण भावना से प्रेरित हो पुनर्जीवित करना चाहते हैं, अब साहित्यिक दृष्टि से लगभग लिखी ही नहीं जाती, जो हर एक गाँव में, वस्तुतः प्रदेश के लोगों की तरह, बदल जाती है, जब कि उर्दू का सुन्दर काव्यात्मक रचनाओं द्वारा रूप स्थिर हो चुका है, वे कहते हैं कि देश की (अर्थात् गाँवों की) भाषा हिन्दी है, न कि उर्दू। हिन्दुओं को फ़ारसी अक्षरों के संबंध में आपत्ति है और वे नागरी पसन्द करते हैं; किन्तु बात बिल्कुल उल्टी है, और वह पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण से अस्पष्ट हो ही जानी चाहिए इसलिए मैं सुन्दर देवनागरी अक्षर नहीं कहता, किन्तु फ़ारसी अक्षरों, साथ ही शिकस्ता के मुक़ाबले में भद्दी घसीट नागरी पढ़ना अधिक कठिन है। मुसलमानों ने साहसपूर्वक यह आक्रमण सहन किया है और, मेरा विचार है, अपने विरोधियों को सफलतापूर्वक सख्त उत्तर दिया है। स्पष्टतः यह जातिगत और धर्मगत विरोध है, यद्यपि दोनों में से कोई यह बात स्वीकार करने के लिए राज़ी नहीं है। यह बहुदेववाद का एकेश्वरवाद के विरुद्ध, वेदों का बाइबिल जिसके अन्तर्गत मुसलमान आ जाते हैं, के विरुद्ध संघर्ष है। मैं नहीं जानता कि अँगरेज़ सरकार हिन्दुओं के सामने झुक जायगी, अथवा जिन मुसलमानों के शासन की वह उत्तराधिकारिणी है उनकी बोली (dialecte) को सुरक्षित रखेगी।[१] अँगरेज़ी, अर्थात् लेटिन (या रोमन जैसा कि उसे वास्तव में कहा जाता है) लिपि को लादते समय यदि वह यह समस्या हल करने का निश्चय नहीं करती, तो साहित्यिक दृष्टिकोण से यह अत्यन्त दुःखद बात होगी।

किन्तु इन बोलियों के, विशेषतः लिखावट द्वारा प्रकट होने वाले, विरोध का, वास्तव में मेरे विषय से बहुत कम संबंध है, क्योंकि उसके

---

[१] मेरे पिछले 'दिस्कुर' (भाषणों) में इस प्रश्न तथा उसके द्वारा उठे वाद-विवाद के संबंध में अनेक विचित्र बातों का स्पष्टीकरण है।

अंतर्गत विभिन्न बोलियाँ आ जाती हैं जिनके लिए मेरी रचना के शीर्षक के लिए प्रयुक्त दो नामों से एक का व्यवहार हो सकता है।

पहले तो, बोलचाल की भाषा के रूप में, हिन्दुस्तानी को समस्त एशिया में कोमलता और विशुद्धता की दृष्टि से जो ख्याति प्राप्त है वह अन्य किसी को नहीं है।[१] फ़ारसी की एक कहावत कही जाती है जिसके अनुसार मुसलमान अरबी को पूर्वी मुसलमानों की भाषाओं के आधार और अत्यधिक पूर्ण भाषा के रूप में, तुर्की को कला और सरल साहित्य की भाषा के रूप में, और फ़ारसी को काव्य, इतिहास, उच्च स्तर के पत्र-व्यवहार की भाषा के रूप में मानते हैं। किन्तु जिस भाषा ने समाज की सामान्य परिस्थितियों में अन्य तीनों के गुण ग्रहण किए हैं वह हिन्दुस्तानी है, जो बोलचाल की भाषा और व्यावहारिक प्रयोग के, जिनके साथ उसका विशेष सम्बन्ध स्थापित किया जाता है, रूप में उनसे बहुत-कुछ मिलती-जुलती है।[२] वह वास्तव में भारत की सबसे अधिक अभिव्यंजना-शक्ति-सम्पन्न और सबसे अधिक शिष्ट प्रचलित भाषा है, यहाँ तक कि उसके सामान्य प्रयोग का कारण जानना अत्यधिक लाभदायक है।[3] वह अपने आप दिन भर में एक नवीन महत्त्व ग्रहण कर लेती है। दफ़्तरों और अदालतों में तो उसने फ़ारसी का स्थान ग्रहण कर ही लिया है; निस्सन्देह वह शीघ्र ही राजनीतिक पत्र-व्यवहार में भी उसका स्थान ग्रहण कर लेगी। और जबसे वह उत्तर तथा उत्तर-पश्चिम के प्रान्तों में फ़ारसी के स्थान पर समितियों और अदालतों, तथा साथ ही दफ़्तरों की भाषा हो गई है, उसने एक नवीन महत्त्व ग्रहण कर लिया है।

लिखित भाषा के रूप में, प्रसिद्ध भारतीयविद्याविशारद विल्सन,

---

१ देखिए जो कुछ दिल्ली के अम्मन ने इसके संबंध में कहा है, मेरी 'रुदीमाँ' में उद्धृत, (प्रथम संस्करण का) पृ० ८०।

२ सेडन, 'ऐड्रेस ऑन दि लैंग्वेज ऐंड लिट्रेचर ऑव एशिया', पृ० १२

3 सात करोड़ से भी अधिक के लगभग भारतीय ऐसे हैं जिनकी मातृभाषा हिन्दुस्तानी है।

जिनके शब्द ज्यों-के-त्यों मैंने इस लेख के लिए ग्रहण किए हैं, के साथ मैं कह सकता हूँ : 'हिन्दी की बोलियों का एक साहित्य है जो उनकी विशेषता है, और जो अत्यधिक रोचक है'; और यह रोचकता केवल काव्य-गत ही नहीं, ऐतिहासिक और दार्शनिक भी है हम पहले हिन्दुस्तानी के ऐतिहासिक महत्त्व की परीक्षा करेंगे। हिन्दुई में, जो हिन्दुस्तान की रोमांस की भाषा भी कही जा सकती है, जिसे मैं भारत का मध्ययुग कह सकता हूँ उससे संबंधित महत्त्वपूर्ण पद्यात्मक विवरण हैं। उनके महत्त्व का अनुमान बारहवीं शताब्दी में लिखित चन्द के काव्य, जिससे कर्नल टॉड ने 'ऐनल्स ऑव राजस्थान'[१] की सामग्री ली, और सत्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ में लिखित लाल कवि कृत बुन्देलों का इतिहास रचना से, जिससे मेजर पॉगसन (Pogson) ने हमें परिचित कराया था, लगाया जा सकता है। यदि यूरोपीय अब तक ऐसी बहुत कम रचनाओं से परिचित रहे हैं, तो इसका यह तात्पर्य नहीं कि वे और हैं ही नहीं। प्रसिद्ध अँगरेज़ विद्वान् जिसे मैंने अभी उद्धृत किया है हमें विश्वास दिलाता है कि इस प्रकार की अनेक रचनाएँ राजपूताने[२] में भरी पड़ी हैं। केवल एक उत्साही यात्री उनकी प्रतियाँ प्राप्त कर सकता है।

हिन्दुई और हिन्दुस्तानी में जीवनी सम्बन्धी कुछ रोचक रचनाएँ भी मिलती हैं। १६ वीं शताब्दी के अंत में लिखित, अत्यधिक प्रसिद्ध हिन्दू सन्तों की एक प्रकार की जीवनी 'भक्तमाल' प्रधान है। कम प्राचीन जीवनियाँ अत्यधिक हैं, जैसा कि आगे देखा जायगा।

जहाँ तक दार्शनिक महत्त्व से सम्बन्ध है, यह उसकी विशेषता है और यह विशेषता हिन्दुस्तानी को एक बहुत बड़ी हद तक उन्नत आत्माओं द्वारा दिया गया अपनापन प्रदान करती है। वह भारतवर्ष के धार्मिक सुधारों

[१] इस लेखक तथा उसकी प्रसिद्ध कविता के संबंध में मैंने 'रुदीमाँ द लाँग ऐंदुई' की भूमिका और अपने १८६८ के भाषण में जो कुछ कहा उसे देखिए, पृ० ४६ और ५०

[२] 'मैकेन्ज़ो कैटैलौग', पहली जिल्द, पृ० ५२ (lij)

की भाषा है। जिस प्रकार यूरोप के ईसाई सुधारकों ने अपने मतों और धार्मिक उपदेशों के समर्थन के लिए जीवित भाषाएँ ग्रहण कीं; उसी प्रकार, भारत में, हिन्दू और मुसलमान संप्रदायों के गुरुओं ने अपने सिद्धांतों के प्रचार के लिए सामान्यतः हिन्दुस्तानी का प्रयोग किया है। ऐसे गुरुओं में कबीर, नानक, दादू, बीरभान, बख्तावर, और अंत में अभी हाल के मुसलमान सुधारकों में, अहमद नामक एक सैयद हैं। न केवल उनकी रचनाएँ ही हिन्दुस्तानी में हैं, वरन् उनके अनुयायी जो प्रार्थना करते हैं, वे जो भजन गाते हैं, वे भी उसी भाषा में हैं।

अंत में, हिन्दुस्तानी साहित्य का एक काव्यात्मक महत्व है, जो न तो किसी दूसरी भाषा से हीन है, और न जो वास्तव में कम है। सच तो यह है कि प्रत्येक साहित्य में एक अपनापन रहता है जो उसे आकर्षण-पूर्ण बनाता है, प्रत्येक पुष्प की भाँति जिसमें, एक फ़ारसी कवि के कथनानुसार, अलग-अलग रंगो बू रहती है।[1] भारतवर्ष वैसे भी कविता का प्रसिद्ध और प्राचीन देश है; यहाँ सब कुछ पद्य में है—कथाएँ, इतिहास, नैतिक रचनाएँ, कोष, यहाँ तक कि रुपए की गाथा भी।[2] किन्तु जिस विशेषता का मैं उल्लेख कर रहा हूँ वह केवल कर्ण-सुखद शब्दों के सुन्दर सामंजस्य में, अलंकृत पंक्तियों के कम या अधिक अनुरूप क्रम में ही नहीं है; उसमें कुछ अधिक वास्तविकता है, यहाँ तक कि प्रकृति और भूमि सम्बन्धी उपयोगी विवरण भी उसी में हैं, जिनसे कम या ग़लत समझे जाने वाले शब्द-समूह की व्याख्या प्रस्तुत करने वाले मानव-जाति सम्बन्धी विस्तार ज्ञात होते हैं। मैं इतना और कहूँगा कि हिन्दुस्तानी

---

१ इस विचार का अन्वय अफ़सोस ने भी अपने 'आराइश-इ-महफ़िल' में इस प्रकार किया है: 'हर एक फूल का रंगो आलम जुदा होता है, और लुत्फ़ से कोई जर्रा ख़ाली नहीं है।'

२ दे० 'आईन-इ-अकबरी' और मार्सडेन (Marsden) द्वारा 'न्यूमिस्मैटा ओरिएंटालिआ' (Numismata Orientalia) शीर्षक रचना।

कविता धर्म और उच्च दर्शन के सर्वोत्कृष्ट सिद्धान्तों के प्रचलित करने में विशेषतः प्रयुक्त हुई है। वास्तव में, उर्दू कविता का कोई संग्रह खोल लीजिए, और आपको उसमें मनुष्य और ईश्वर के मिलन-सम्बन्धी विविध रूपकों के अंतर्गत वे ही बातें मिलेंगी। सर्वत्र भ्रमर और कमल, बुलबुल और गुलाब, परवाना और शमा मिलेंगे।

हिन्दुस्तानी साहित्य में जो अत्यधिक प्रचुर हैं, वे दीवान, या ग़ज़ल-संग्रह, समान गति की एक प्रकार की कविता (ode) और विशेषतः दक्खिनी में, पद्यात्मक कथाएँ हैं। इन्हीं चीज़ों का फ़ारसी और तुर्की में स्थान है और इन तीनों साहित्यों में अनेक बातें समान हैं। हिन्दुस्तानी में अनेक अत्यन्त रोचक लोकप्रिय गीत भी हैं, और यही भाषा है जिसका वर्तमान भारत के नाटकों में बहुत सामान्य रूप से प्रयोग होता है।

निस्संदेह यहाँ हिन्दुस्तानी रचयिताओं द्वारा व्यवहृत उर्दू और हिन्दी के विभिन्न प्रकारों के संबंध में कुछ विस्तार की मुझसे आशा की जाती है।

हिन्दुई में केवल पद्यात्मक रचनाओं के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता। सामान्यतः चार-चार शब्दांशों (Syllable) के ये छन्द दो लययुक्त चरणों में विभाजित रहते हैं। किन्तु साधारण गद्य, या लययुक्त गद्य, में भी रचनाएँ हैं, जैसे हिन्दुस्तानी में, किन्तु अधिकतर प्रायः पद्यों से मिश्रित जो सामान्यतः उद्धरणों के रूप में रहते हैं।

यदि हम, श्री गोरेसिओ (Gorresio) द्वारा 'रामायण' के अपने सुन्दर संस्करण की भूमिका में उल्लिखित, संस्कृत विभाजन का अनुगमन करें, तो हिन्दी-रचनाएँ चार भागों में विभाजित की जा सकती हैं।

१. 'आख्यान', कहानी, क़िस्सा। इनसे वे कविताएँ समझी जानी चाहिए जिनमें लोकप्रिय परंपराओं से संबंधित विषय रहते हैं, और कथाएँ पद्यात्मक, कभी-कभी, फ़ारसी अक्षरों में लिखित, छंदों के रूप में, रहता है, यद्यपि लय मसनवियों की भाँति हर एक पद्य में बदलती जाती है।

२. 'आदि काव्य', अथवा प्राचीन काव्य। उससे विशेषतः 'रामायण' समझा जाता है।

३. 'इतिहास', गाथा, वर्णन। ऐतिहासिक-पौराणिक परंपराओं में ऐसे अनेक हैं, जैसे 'महाभारत' तथा पद्यात्मक इतिहास।

४. अंत में 'काव्य', किसी प्रकार की काव्यात्मक रचना। इस वर्गगत नाम से, जो पूर्वी मुसलमानों के नज़्म के समान है, हिन्दुई की वे सभी छोटी-छोटी कविताएँ समझी जाती हैं जिनकी मैं शीघ्र ही समीक्षा करूँगा।

तीसरे भाग में पद्य-मिश्रित गद्य की कहानियाँ रखी जानी चाहिए, विशेषतः कहानियों और नैतिक कथाओं के संग्रह, जैसे, 'तोता कहानी' (एक तोते की कहानियाँ), 'सिंहासन-बत्तीसी' (जादुई सिंहासन) ; 'बैताल-पचीसी' (बैताल की कहानी), आदि।

राजाओं को सत्य बताने के लिए, पूर्व में, जहाँ उनकी इच्छा ही सब कुछ होती है, उसका खण्डन करना एक कठिन कार्य है। इसी बात पर कवि-दार्शनिक सादी का कहना है कि यदि सम्राट् भरी दुपहरी को रात बताए तो चाँद-तारे देखना समझ लेना चाहिए। तब उस समय इन कोमल कानों तक सत्य की आवाज़ पहुँचाने के लिए कल्पित कथाओं का आश्रय ग्रहण किया जाता है। इसी दृष्टि से नैतिक कथाओं की उत्पत्ति हुई, जिनसे बिना किसी ख़तरे के अत्याचारियों को शिक्षा दी जा सकती है, जिससे वे कभी-कभी लाभान्वित हुए हैं। देखिए फ़ारस के उस राजा को जिसने अपने वज़ीर से, जो पशुओं की बोली सुन कर नाराज़ होता था, पूछा कि दो उल्लू, जो उसने साथ-साथ देखे थे, आपस में क्या बातचीत करते हैं। निर्भीक दार्शनिक ने उत्तर दिया, 'वे कहते हैं कि वे आप के राज्य पर मुग्ध हो गए हैं; क्योंकि वे आप के अत्याचारी शासन में प्रतिदिन उत्पन्न होने वाले खँडहरों में अपनी इच्छा के अनुसार शरण ले सकते हैं।' वास्तव में हम देखते हैं कि पूर्वी कथाओं में राजनीति सर्वोच्च स्थान

ग्रहण किए हुए हैं, और उनका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग है। भारतीय कहानियों और नैतिक कथाओं के खास-खास संग्रहों के ज्ञान से इस बात की परीक्षा की जा सकती है। उनमें कथाओं के अत्यन्त प्रवाहपूर्ण रूपों के बीच में बुद्धि की भाषा मिलती है; क्योंकि, जैसा कि एक उर्दू कवि ने कहा है, 'केवल शारीरिक सौन्दर्य ही हृदय नहीं हरता, लुभा लेने वाली मधुर बातों में और भी अधिक आकर्षण होता है।'

पद्य में प्रधान हिन्दुई रचनाओं के नाम, अकारादिक्रम के अनुसार इस समय इस प्रकार हैं :

'अभङ्ग', एक प्रकार की एक चरण विशेष में रचित गीति-कविता जिसकी पंक्तियों में, अँगरेज़ी की भाँति, शब्दों के स्वराघात का नियम रहता है, न कि शब्दांशों की संख्या (दीर्घ या ह्रस्व) का, जैसा संस्कृत, ग्रीक और लेटिन में रहता है। इस कविता का प्रयोग विशेषतः मराठी में होता है।

'आल्हा', कविता जिसका नाम उसके जन्मदाता से लिया गया है।[1]

'कड़खा', लड़ने वालों में उत्साह भरने के लिए राजपूतों में व्यवहृत युद्ध-गान। उसमें शौर्य की प्रशंसा की जाती है, और प्राचीन वीरों के महान् कृत्यों का यशगान किया जाता है। पेशेवर गाने वालों को 'कड़खैत' या 'ढाढ़ी' कहते हैं जो ये गाने सुनाते हैं।

'कबित' या 'कबिता', चार पंक्तियों की छोटी कविता।

'कहर्वा', 'मलार', जिसके बारे में (आगे) बताया जायगा, के रूप की भाँति कविता। वास्तव में यह एक नृत्य का नाम है जिसमें पुरुष स्त्रियों के कपड़े पहनते हैं, और स्त्रियाँ पुरुषों के; और फलतः इस नृत्य के साथ वाले गाने को यह नाम दिया गया है।

---

[1] शेक्सपियर (Shak.), 'डिक्शनरी हिन्दुस्तानी ऐंड इँगलिश'

'कीर्तन', रागों (संगीत शैलियों) में बँधा गान।

'कुण्डल्या' या 'कुण्डर्या', कविता या कहिए छन्द जिसका एक ही शब्द से प्रारंभ और अंत होता है।[1]

'गान', वर्गीय नाम जिससे गान का हरएक प्रकार प्रकट किया जाता है।

'गाली', यह शब्द भी जिसका ठीक-ठीक अर्थ है 'अपमान', विवाहों और उत्सव के अवसर पर गाए जाने वाले कुछ अश्लील गीतों का नाम है।

'गीत', गीतों, गानों, प्रेम-गीतों आदि का वर्गीय नाम;

'गुजरी', एक रागिनी, और एक गौण संगीत-रूप-संबंधी गाने का नाम।

'चतुरङ्ग', चार भागों की कविता जो चार विभिन्न प्रकार से गाई जाती हैं : 'ख़ियाल', 'तराना',[2] 'सरगम'[3] और 'तिरवत'[4] (tirwat)।

'चरण'—पैर। चौपाई के आधे या दोहे के चौथाई भाग को दिया गया नाम है। यह बहुत आगे उल्लिखित 'पद' का समानार्थवाची है।

'चरणाकुल-छन्द', अर्थात् विभिन्न पंक्तियों में कविता। 'महाभारत' के हिन्दुई रूपान्तर में उसके उदाहरण मिलते हैं।

'चुटकुला', केवल दो तुकों का दिल खुश करने वाला खियाल।

'चौपाई', तुकान्तयुक्त चार अर्द्धालियों या दो पंक्तियों की कविता। किन्तु, तुलसी कृत 'रामायण' में, इस शीर्षक की कविताओं में नौ पंक्तियाँ हैं।

---

[1] दे०, कोलब्रुक, 'एशियाटिक रिसर्चैज', x, ४१७

[2] आगे चलकर हिन्दुस्तानी काव्यों की सूची में इस शब्द की व्याख्या देखिए।

[3] इस शब्द का ठीक-ठीक अर्थ है gamme (गम्म्), और जिससे शेष व्युत्पत्ति मालूम हो जाती है।

[4] इस अंतिम तान और गीत पर देखिए विलर्ड, 'ए ट्रिटाइज ऑन दि म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान', पृ० ६२।

'छन्द', छः पंक्तियों में रचित कविता । तुलसी कृत 'रामायण' में उनकी एक बहुत बड़ी संख्या मिलती है । लाहौर में उसका बहुत प्रयोग होता है ।

'छप्पै', या छः वाली, एक साथ लिखे गए 'अष्टपई' (aschtpaï) नामक शब्दांशों से निर्मित छः चरणों की कविता, जिसमें तीन छन्द बनते हैं । यह उस चरण से प्रारंभ होता है जिससे कविता का अन्त भी होता है ।

'जगत बर्णन', शब्दशः संसार, पृथ्वी का वर्णन । यह हिन्दुई की एक वर्णनात्मक कविता है जिसके शीर्षक से विषय का पता चलता है ।

'जत' [यति], होली का, इसी नाम के संगीत-रूप से संबंधित, एक गीत ।

'जयकरी-छन्द', अथवा विजय का गीत, एक प्रकार की कविता जिसके उदाहरण मेरी 'हिन्दुई भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त' (Rudiments de la langue hindoui) के बाद मेरे द्वारा प्रकाशित 'महाभारत' के अंश में मिलेंगे ।

'झूल्ना', अथवा झूला झूलना, झूले का गीत, वैसा ही जैसा हिण्डोला है । अन्य के अतिरिक्त वे कबीर की रचनाओं में हैं । एक उदाहरण, पाठ और अनुवाद, गिलक्राइस्ट कृत 'ऑरिएंटल लिंग्विस्ट', पृ० १५७, में है ।

'टप्पा', इसी नाम के संगीत रूप में गाई गई छोटी शृंगारिक कविता । उसमें अन्तरा अन्त में दुबारा आने वाले प्रथम चरणार्द्ध से भिन्न होता है । गिलक्राइस्ट ने इस कविता को अँगरेज़ी नाम 'glee' ठीक ही दिया है, जिसका अर्थ टेक वाला गाना है । पंजाब के लोकप्रिय गीतों में ये विशेष रूप से मिलते हैं, जिनमें हिन्दुई के 'कौ' और हिन्दुस्तानी के 'का' के स्थान पर 'दौ' या 'दा' संबंध कारक का प्रयोग अपनी विशेषता है ।[1]

[1] दे०, मेरी 'Rudiments de la langue hindoui' (हिन्दुई भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त), नोट ३, पृ० ६, और नोट २, पृ० ११ ।

'ठुम्री', थोड़ी संख्या में चरणार्द्धों वाले हिन्दुई के कुछ लोकप्रिय गीतों का नाम। ज़नानों या रनिवासों में उनका विशेषतः प्रयोग होता है।

'डोमरा', नाचने वालों की जाति, जो इसे गाती है, के आधार पर इस प्रकार के नाम की कविता। उसमें पहले एक चरण होता है, फिर दो अधिक लंबे चरणों का एक पद्य, और अन्त में एक अंतिम पंक्ति जो कविता का प्रथम चरण होती है।

'तुक' का ठीक-ठीक अर्थ है एक चरणार्द्ध (hémistiche)। यह मुसलमानों की काव्य-रचनाओं का पृथक् चरण फ़र्द है।

'दादरा', विशेषतः बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड में प्रयुक्त और स्त्रियों के मुख से कहलाया जाने वाला शृंगारपूर्ण गीत।

'दीपचन्दी', एक ख़ास तरह का गीत, जो होली के समय पर ही गाया जाता है।

'दोहा' या 'दोहा' (distique)। यह मुसलमानी कविताओं का 'बैत' है, अर्थात् दो चरणों से बनने वाला दोहा पद्य।

'धम्माल', गीत जो भारतीय आनंदोत्सव-पर्व, जब कि यह सुना जाता है, के नाम के आधार पर 'होली' या 'होरी' भी कहा जाता है।

'धुर्पद', सामान्यतः एक ही लय के पाँच चरणों में रचित छोटी कविता। वे सब प्रकार के विषयों पर हैं, किन्तु विशेषतः वीर-विषयों पर। इस कविता के जन्मदाता, जिसे वे स्वयं गाते थे, ग्वालियर के शासक राजा मान थे।[1]

'पखान', यह शब्द, जिसका अर्थ है 'पत्थर', एक छोटी-सी शृंगारपूर्ण कविता के लिए प्रयुक्त होता है जिसमें एक ही अक्षर से शुरू होने वाले कुछ वाक्यांशों में किसी स्त्री का वर्णन किया जाता है।[2]

[1] विलर्ड (Willard), 'ऑन दि म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान', पृ० १०७

[2] देखिए, सर गोर आउज़ले (Sir Gore Ouseley), 'बायोग्रैफ़ीकल नोटिसेज ऑव पर्शियन पोइट्स' (फ़ारसी कवियों के जीवनी-संबंधी विवरण), पृ० २४४।

'पद'। इस शब्द का ठीक-ठीक अर्थ है 'पैर', जिसका प्रयोग चौपाई के आधे और 'दोहे' के चौथाई भाग के लिए होता है, एक छन्द और फलतः एक गान, एक गीत।

'पहेली', गूढ़ प्रश्न।

'पाल्ना'। इस शब्द का अर्थ है जिसमें बच्चे झुलाए जाते हैं, जो उन गानों को प्रकट करने के लिए भी प्रयुक्त होता है जो बच्चों को झुलाते समय गाए जाते हैं।

'प्रबन्ध', प्राचीन हिन्दुई गान।

'प्रभाती', एक रागिनी और साधुओं में प्रयुक्त एक कविता का नाम। बीरभान की कविताओं में प्रभातियाँ मिलती हैं।

'बधावा', चार चरणार्द्धों की कविता, जिसका पहला कविता के प्रारंभ और अंत में दुहराया जाता है। यह बधाई का गीत है, जो बच्चों के जन्म, विवाह-संस्कार, आदि के समय सुना जाता है। उसे 'मुबारक बाद' भी कहते हैं, किन्तु यह दूसरा शब्द मुसलमानी है।

'बर्वा', या 'बर्वी', इसी नाम के संगीत-रूप-सम्बन्धी दो चरण की कविता। उसका 'खियाल' नामक प्रकार से संबंध है। उसका एक उदाहरण 'सभा विलास' में पाया जाता है, पृ० २३।

'बसंत', एक राग या संगीत रूप और एक विशेष प्रकार की कविता का नाम जो इस राग में गाई जाती है। गिलक्राइस्ट[1] और विलर्ड (Willard)[2] ने, सरल व्याख्या सहित, समस्त रागों (प्रधान रूपों) और रागिनियों (गौण रूपों) के नाम दिए हैं। उन्हें जानना और भी आवश्यक है क्योंकि वे विभिन्न रूपों में गाई जाने वाली कविताओं के प्रायः शीर्षक रहते हैं। किन्तु मैंने यहाँ लिखित कविता में अत्यधिक प्रयुक्त होने वाले का उल्लेख किया है।

---

१ 'ग्रैमर हिन्दुस्तानी' (Gram. Hind.), २६७ तथा बाद के पृष्ठ

२ 'ऑन दि म्यूजिक ऑव हिन्दुस्तान', ४९ तथा बाद के पृष्ठ

'भक्त मार्ग', शब्दशः, भक्तों का रास्ता, कृष्ण-संबंधी भजन के एक विशेष प्रकार का नाम ।[1]

'भठ्याल', मुसलमानों के 'मरसिया' के अनुकरण पर एक प्रकार का हिन्दुई विलाप।

'भोजङ्ग', या 'भुजङ्ग', कविता जिसे टॉड[2] ने 'lengthened serpentine couplet' कहा है।

'मङ्गल' या 'मङ्गलाचार', उत्सवों और खुशियों के समय गाई जाने वाली छोटी कविता। बधावे का, विवाह का गीत।

'मलार', एक रागिनी, और वर्षा ऋतु, जो भारत में प्रेम का समय भी है, की एक छोटी वर्णनात्मक कविता का नाम।

'मुक्री', एक प्रकार की पहेली जिसमें एक स्त्री के मुख से दो अर्थ वाला शब्द कहलाया जाता है जिसे वह कहती एक अर्थ में है और उसके साथ बातचीत करने वाला उसे समझता दूसरे अर्थ में है।[3]

'रमैनी', सारगर्भित कविता। इस शीर्षक की कविताओं की एक बहुत बड़ी संख्या कबीर की काव्य-रचनाओं में पाई जाती है।

'रसादिक', अर्थात् रसों का संकेत। यह चार पंक्तियों की एक छोटी श्रृंगारिक कविता है; यह शीर्षक बहुत-से लोकप्रिय गीतों का होता है।

'राग', हिन्दुओं के प्रधान संगीत-रूपों और मुसलमानों की ग़ज़ल से मिलती-जुलती एक कविता का नाम, और जिसे 'राग पद'—राग संबंधी कविता—भी कहते हैं। अन्य के अतिरिक्त सूरदास में उसके उदाहरण मिलते हैं।

---

[1] ब्राउटन, 'पॉप्युलर पोयट्री ऑव दि हिन्दूज़', पृ० ७८

[2] 'एशियाटिक जर्नल', अक्तूबर १८४०, पृ० १२९

[3] मेरी 'रुदीमाँ द ल लाँग ऐंदूस्तानी' (हिन्दुस्तानी भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त) के प्रथम संस्करण की भूमिका में उसका एक उदाहरण देखिए, पृ० २३।

'राग-सागर' – रागों का समुद्र—एक प्रकार की संगीत-रचना (Rondeau) को कहते हैं जिसका प्रत्येक छन्द एक विभिन्न राग में गाया जा सकता है, और 'राग-माला' —रागों की माला—चित्रित किए ज़ाने वाले रूपकों सहित विभिन्न रागों से सम्बन्धित छन्दों के संग्रह को।

'राम पद', चरणार्द्धों के अनुसार १५-१५ शब्दांशों का छंद, राम के सम्मान में, जैसा कि शीर्षक से प्रकट होता है।

'रास', कृष्ण-लीला का वर्णन करने वाला गान होने से यह नाम दिया गया है।

'रेखतस', कबीर की कविताएँ, जिनका नाम, हिन्दुस्तानी कविताओं के लिए प्रयुक्त, फ़ारसी शब्द रेखत:—मिश्रित—से लिया गया है।

'रोला-छन्द'। बाईस लंबी पंक्तियों की, इस नाम की कविता से, 'महाभारत' के हिन्दुई रूपान्तर में, 'शकुन्तला' का उपाख्यान प्रारम्भ होता है।

'विष्नु पद', विकृत रूप में 'बिषन पद', केवल इस बात को छोड़ कर कि इसका विषय सदैव विष्णु से सम्बन्धित रहता है, यह 'डोमरा' की तरह कविता है। कहा जाता है, इसके जन्मदाता सूरदास थे। मथुरा में इसका ख़ास तौर से व्यवहार होता है।

'शब्द' या 'शब्दी', कबीर की कुछ कविताओं का ख़ास नाम।

'सङ्गीत', नृत्य के साथ का गाना।

'सखी', और बहुवचन में 'सखयां', कबीर की कुछ कविताओं का विशेष नाम। कृष्ण और गोपियों के प्रेम से संबंधित एक गीत को 'सखी सम्बन्ध' कहते हैं।

'समय', कबीर के भजनों का एक दूसरा विशेष नाम।

'साद्रा', ब्रज और ग्वालियर में व्यवहृत गीत, और उसकी तरह जिसे 'कड़खा' कहते हैं।

'सोरठ',[1] एक रागिनी और एक विशेष छन्द की छोटी हिन्दुई-कविता का नाम।

'सोह्ला', (Sohlâ)। यह शब्द, जिसका अर्थ 'उत्सव' है, उत्सवों और ख़ुशियों, और ख़ास तौर से विवाहों में गाई जाने वाली कविताओं को प्रकट करने के लिए भी होता है। विलर्ड (Willard) ने हिन्दुस्तान के संगीत पर अपनी रोचक रचना में इस गीत का उल्लेख किया है, पृ० ६३।

'स्तुति', प्रशंसा का गीत।

'हिण्डोल'—escarpolette (झूला), इस विषय का वर्णनात्मक गीत, जिसे भारतीय नारियाँ अपनी सहेलियों को झुलाते समय गाती हैं।

'होली' या 'होरी'। यह एक भारतीय उत्सव है जिसका उल्लेख मेरे 'भारत के लोकप्रिय उत्सवों का विवरण'[2] में देखा जा सकता है। यही नाम उन गीतों को भी दिया जाता है जो इस समय सुने जाते हैं—गाने जिसका एक सुन्दर उदाहरण पहली जिल्द, पृ० ५४६ में है। 'होली' नाम का गीत प्रायः केवल दो पंक्तियों का होता है, जिसमें से अंतिम पंक्ति उसी चरणार्द्ध से समाप्त होती है जिससे कविता प्रारंभ होती है। लोकप्रिय गीतों में उसके उदाहरण मिलेंगे।

अब, यदि ब्राह्मणकालीन भारत को छोड़ दिया जाय, और मुसलमान-कालीन भारत की ओर अपना ध्यान दिया जाय तो मुसलमान काव्य-शास्त्रियों के अनुसार,[3] सर्वप्रथम हम हिन्दुस्तानी काव्य-रचनाओं, उर्दू और दक्खिनी दोनों, को सात प्रधान भागों में विभाजित कर सकते हैं।

---

[1] यह शब्द संस्कृत 'सौराष्ट्र' (Surate) से निकला है, जो उस प्रदेश का नाम है जहाँ इसी नाम के गीत का प्रयोग होता है।

२ 'ज़ुर्नाल एसियातीक', वर्ष १८३४

[3] इस विभाजन का, जो 'हमासा' का है, विस्तार डब्ल्यू० जोन्स कृत 'Poëseos Asiaticae commentarii' में मिलता है।

१. वीर कविता (अलूहमासा) ।
२. शोक कविताएँ (अलूमरासी) ।[1]
३. नीति और उपदेश की कविताएँ (अलूअदब वनूनसोहत) ।
४. शृंगारिक कविता (अलूनसीब) ।
५. प्रशंसा और यशगान की कविताएँ (अलूसना व अलूमदीह) ।
६. व्यंग्य (अलूहिजा) ।
७. वर्णनात्मक कविताएँ (अलूसिफ़ात) ।

पहले भाग में कुछ क़सीदे,[2] और विशेष रूप से बड़ी ऐतेहासिक कविताएँ जिनका नाम 'नामा'—पुस्तक[3] —और 'क़िस्सा'—या पद्यात्मक कथा है, रखी जानी चाहिए। उन्हीं में वास्तव में कहे जाने वाले इतिहास रखे जा सकते हैं जिनके काव्यात्मक गद्य में अनेक पद्य मिले रहते हैं। पूर्वी कल्पना से सुसज्जित यही शेष इतिहास हैं जिनसे निस्संदेह ऐतिहासिक कथाओं का जन्म हुआ (जो) एक प्रकार की रचना है (जिसे) हमने पूर्व से लिया है।[4] इन पिछली रचनाओं के प्रेम-सम्बन्धी विषयों की संख्या अंत में थोड़े-से क़िस्सों तक रह जाती है जिनमें से अनेक अरबों, तुर्कों, फ़ारस-निवासियों और भारतीय मुसलमानों में प्रचलित हैं। सिकन्दर महान् के कारनामे, ख़ुसरो और शीरीं, यूसुफ़ और ज़ुलेख़ा, मजनूँ और लैला का प्रेम ऐसे ही क़िस्से हैं। अनेक फ़ारसी कवियों ने, पाँच मसनवियों[5]

---

[1] अलूमरासी, मरसिया शब्द का, जिसकी व्याख्या और आगे की जायगी, 'अल्' सहित, अरबी बहुवचन है।

[2] इस नाम की विशेष प्रकार की कविता की व्याख्या मैं आगे करूँगा।

[3] केवल एक प्रधान रचना उद्धृत करने के लिए, 'शाहनामा' ऐसी ही रचना है।

[4] प्रसिद्ध साहित्यिकों ने इस प्रकार की कथाओं का यह कह कर विरोध किया है कि 'ऐतिहासिक कथा' शब्द में ही विरोधी विचार है, किन्तु उन्होंने यह नहीं सोचा कि अनेक प्रसिद्ध कथाएँ केवल नाममात्र के लिए ऐतिहासिक कथाएँ हैं।

[5] इस शब्द का अर्थ मैं आगे बताऊँगा।

का संग्रह तैयार करने की भाँति, पाँच और साथ ही सात विभिन्न क़िस्सों को विकसित करने की चेष्टा की है जिनके संग्रह को उन्होंने 'ख़म्सः', 'पाँच' या 'हफ़्त', सात, शीर्षक दिए हैं। उदाहरण के लिए निज़ामी,[1] .ख़ुसरो, और हातिफ़ी (Hâtifî) के 'ख़म्स', जामी का 'हफ़्त', आदि।

पूर्व में वीरतापूर्ण कथाएँ भी मिलती हैं; जैसे अरबों में इस प्रकार का अन्तर (Antar) का प्रसिद्ध इतिहास है, जिसमें हमारी प्राचीन वीर-कथाओं की भाँति, मरे हुए व्यक्ति, उखड़े हुए वृक्ष, केवल एक व्यक्ति द्वारा नष्ट की गई सेनाएँ मिलती हैं। हिन्दुस्तानी में 'क़िस्सा-इ अमीर हमज़ा', 'ख़ाविर-नामा' आदि की गणना वीर-कथाओं में की जा सकती है।

इस पहले भाग में ही अनेकानेक पूर्वी कहानियों का उल्लेख किया जाना चाहिए : 'एक हज़ार-एक रातें', जिसके हिन्दुस्तानी में अनुवाद हैं; 'ख़िरद अफ़रोज़', 'मुफ़रः उल्क़ुलूब' (Mufarrah ulculûb) आदि।

दूसरे भाग में भारतीय मुसलमानों में अत्यन्त प्रचलित काव्य, 'मर्सिये' या हसन, हुसेन और उनके साथियों की याद में विलाप, रखे जाने चाहिए।

तीसरे में 'पंदनामे' या शिक्षा की पुस्तकें, रखी जाती हैं, जो सारा (Sirach) के पुत्र, ईसा की धर्म-संबंधी पुस्तक की भाँति शिक्षाप्रद कविताएं हैं; 'अख़लाक', या आचार, पद्यात्मक उद्धरणों से मिश्रित, गद्य में नैतिकता-संबंधी ग्रन्थ हैं, जैसे 'गुलिस्ताँ' और उसके अनुकरण पर बनाए गए ग्रन्थ : उदाहरण के लिए 'सैर-इ इशरत', जिसका उल्लेख मैंने सालिह पर लेख में किया है।

चौथे में केवल वास्तव में शृंगारिक कही जाने वाली कविताएँ ही नहीं, किन्तु समस्त रहस्यवादी ग़ज़लों को रखना चाहिए जिनमें दिव्य प्रेम

[1] निज़ामी के 'ख़म्सः' में है—'मख़ज़न उल्असरार', '.ख़ुसरो ओ शीरीं', 'हफ़्त पैकर', 'लैला-मजनूँ', और 'सिकन्दर-नामा'।

प्राय: अत्यन्त लौकिक रूप में प्रकट किया जाता है, जिनमें आध्यात्मिक और प्राय: भद्दे तरीके से प्रकट की गई और कभी-कभी अश्लील रूप में इन्द्रिय-संबंधी बातों का अकथनीय मिश्रण रहता है।[१] इन कवियों का संबंध सामान्यत: सूफ़ियों के, जिनके सिद्धान्त वास्तव में वही हैं जो जोगियों द्वारा माने जाने वाले भारतीय सर्वदेववाद के हैं, मुसलमानी दार्शनिक संप्रदाय से रहता है। इन पुस्तकों में ईश्वर और मनुष्य, भौतिक वस्तुओं की निस्सारता, और आध्यात्मिक वस्तुओं की वास्तविकता पर जो कुछ प्रशंसनीय है उसे समझने के लिए एक क्षण उनकी घातक प्रवृत्तियों को भूल जाना आवश्यक है।

पाँचवें में वे रखी जानी चाहिए जिनमें ईश्वर-प्रार्थना जो दीवानों और बहुत-सी मुसलमानी रचनाओं के प्रारम्भ में रहती है, मुहम्मद और प्राय: उनके बाद के इमामों की प्रशंसा करने वाली कविताएँ, और अंत में वे कविताएँ जिनमें कवि द्वारा शासन करने वाले सम्राट् या अपने आश्रयदाता का यशगान रहता है। पिछली रचनाओं में प्राय: अतिशयोक्ति से काम लिया गया है। अन्य अनेक बातों की तरह हिन्दुस्तानी कवियों ने इस बात में भी फ़ारसी वालों का पूर्ण अनुकरण किया है। सेल्यूकिड (Seljoukides) और अताबेक (Atabeks) वंश के दर्प-पूर्ण शांहशाह थे जिनके अंतर्गत कृपा ही के भूखे कवियों ने इन शाहंशाहों की तारीफ़ों के पुल बाँध दिए, अपनी रची कविताओं में आवश्यकता से अधिक अतिशयोक्तियों का प्रयोग

---

[१] एक बात ध्यान देने योग्य है, कि फ़ारस और भारत के अत्यन्त प्रसिद्ध मुसलमान रचयिताओं, जिन्हें संत व्यक्ति समझा जाता है, जैसे, हाफ़िज़, सादी, जुरत, कमाल, आदि लगभग सभी ने अश्लील कविताएँ लिखी हैं। मुसलमानों के बारे में वही कहा जा सकता है जो संत पॉल ने मूर्तिपूजकों के बारे में कहा है: 'Professing themselves to be wise, they become fools... wherefore God gave...upto uncleanness through the lusts... to dishonour their own bodies between themselves'. (Epistle to the Romans...पॉल की पत्री रोमकों के नाम 1, 22. 24)

करने लगे जिनसे विषय संकीर्ण और जी उबा देने वाले हो गए।[1] कुछ तो ऐसी प्रशंसा करने में कोई संकोच नहीं करते जो न केवल चापलूसी की, वरन् कुत्सित रुचि और उसी प्रकार बुद्धि की सीमा का उल्लंघन कर जाती है। अपने-अपने चरित-नायकों का चित्र प्रस्तुत करने के लिए दृश्यमान् जगत से ही इन कवियों की कल्पना को यथेष्ट बल नहीं मिलता, वे आध्यात्मिक जगत् में भी विचरण करने लगते हैं। इस प्रकार, उदाहरण के लिए, उनके शाहंशाह की इच्छा पर प्रकृति की सब शक्तियाँ निर्भर रहती हैं। वही सूर्य और चन्द्र का मार्ग निर्धारित करती है। सब कुछ उनकी आज्ञा के वशीभूत है। स्वयं भाग्य उनकी इच्छा का दास है।[2]

मुसलमानी रचनाओं के छठे भाग में व्यंग्य आते हैं। दुनिया के सब देशों में आलोचक, व्यंग्य ने सब बाधाओं को पार कर प्रकाश पाया है। परीक्षा करना, तुलना करना, वास्तव में यह मानवी प्रकृति का अत्यन्त सुन्दर विशेषाधिकार है। अथवा क्योंकि मनुष्य के सब कार्य अपूर्णता पर

---

[1] गेटे (Goethe), Ost. West, Divan (पूर्वी पश्चिमो दीवान)

[2] वैसे भी क्लैसीकल लेखकों में ऐसी अतिशयोक्तियाँ पाई जाती हैं। क्या वर्जिल ने अपने 'Géorgiques' के प्रारंभ में सीज़र को देवताओं का स्वामी नहीं बताया? क्या उसने टेथिस (Téthys) की पुत्री को स्त्री रूप में नहीं दिया? क्या इस बात की इच्छा प्रकट नहीं की कि उसके सिंहासन को स्थान प्रदान करने के लिए स्कौरपियन (राशिचक्र का प्रतीक-अनु०) का तारा-मडंल आदरपूर्वक मार्ग से हट जाय।

मध्ययुगीन शृंगारी कवि (troubadours) इसी अतिशयोक्ति में डूबे हुए हैं; वे समस्त प्रकृति को अपनी नायिका की अनुचरी बना देते हैं और ल फ़ौतेन (la Fontaine) ने अपनी सरलता के साथ कभी-कभी चतुराई की बात कह दी है:—

तीन प्रकार के व्यक्तियों की जितनी अधिक प्रशंसा की जाय थोड़ी है—अपना ईश्वर, अपनी प्रेयसी और अपना राजा।

आधारित हैं, उन्हें आलोचक से कोई नहीं बचा सकता। कभी कभी अत्यन्त साधारण आत्माएँ महानों के प्रति यह व्यवहार न्यायपूर्वक कर सकती हैं। यद्यपि कोई इलियड की रचना न कर सकता हो, तब भी होरेस (Horace) के अनुसार यह पाया जाता है कि :

Quandoque bonus dormitat Homerus.

उसी प्रकार राज्य के प्रसिद्ध व्यक्तियों द्वारा की गई ग़लतियाँ, उनका स्थान ग्रहण कर लेने की भावना के बिना, देखी जा सकती हैं। दुर्भाग्यवश आलोचक की ओर प्रवृत्ति प्रायः द्वेष से, ईर्ष्या से तथा अन्य कुत्सित आवेगों से उत्पन्न होती है। जो कुछ भी हो, यूरोप की भाँति पूर्व में व्यंग्य प्रचलित है; एशिया का बड़े से बड़ा अत्याचारी इन बाणों से नहीं बचा। जैसा कि ज्ञात है, दो शताब्दी पूर्व, तुर्क कवि उवैसी (Uweïci) ने कुस्तुन्तुनिया की जनता के सामने तुर्क शासकों के पतन पर अपनी व्यंग्य-वर्षा की थी, व्यंग्य जिसमें उसने सम्राट् से अपमानजनक विशेष दोषों से सजीव प्रश्न किए थे, जिसमें उसने अन्य बातों के अतिरिक्त बड़े वज़ीर के स्थान पर बहुत दिनों से पशुओं को भरे रखने की शिकायत की है।[1] और न केवल प्रशंसनीय व्यक्तियों ने, ख़ास हालतों में, अनिवार्य परिस्थितियों में व्यंग्य लिखे हैं ; किन्तु कवियों ने, जैसा कि यूरोप में, इस प्रकार के प्रति अपनी रुचि प्रकट की है, जिसमें उन्होंने अपनी व्यंग्य-शक्ति प्रकट की है ; और, यह ख़ास बात है, कि सामान्यत: लेखकों ने व्यंग्य और यशगान एक साथ किया है; क्योंकि वास्तव में यदि किसी को बुरी बातें अरुचिकर प्रतीत होती हैं, तो अच्छी बातों के प्रति उत्साह भी रहता है ;

---

[1]. यह व्यंग्य डीत्ज़ (Dietz) द्वारा जर्मन में अनूदित हुआ है, और उसके कुछ अंश कारदोन (Cardone) कृत 'मेलाँज द लितेरत्यूर ओरिएँ' (Mèlanges de littérature orient, पूर्वी साहित्य का विविध-संग्रह) की जि० २ में फ्रेंच में अनूदित हुए हैं। श्री द सैसी (de Sacy) का 'मैगासाँ आँसीक्लोपेदी (Magasin encycl. मैगासाँ विश्वकोष), जि० ६, १८११ में एक लेख भी देखिए।

यदि हमें कुछ लोगों के दोषों पर आश्चर्य होता है, तो दूसरों के अच्छे गुणों से उत्साह होता है। फ़ारसी के अत्यन्त प्रसिद्ध व्यंग्यकार, अनवरी (Anwarî), को इस प्रकार दूसरे क्षणों में यशगान करते हुए भी देखते हैं। भारतवर्ष में भी यही बात है : अत्यन्त प्रसिद्ध व्यंग्यकार कवियों ने, जिनके व्यंग्यों में अतिशयोक्तियाँ मिलती हैं, यशगान भी किया है; किन्तु व्यंग्यों में यशगान की अपेक्षा उनका अच्छा रूप मिलता है। उनके व्यंग्यों में अधिक मौलिकता पाई जाती है, और स्वयं उनके देशवासी उन्हें उनके यशगान से अच्छा समझते हैं। यह सच है कि हिन्दुस्तानी कवियों ने व्यंग्य सफलतापूर्वक लिखे हैं। उनमें व्यंग्य की परिधि उत्तरोत्तर विस्तृत होती जाती है। उन्होंने पहले व्यक्तियों को, फिर संस्थाओं को, फिर अन्त में उन चीज़ों को जो मनुष्य-इच्छा पर निर्भर नहीं रहतीं अपना निशाना बनाया है। यहाँ तक कि उन्होंने स्वयं प्रकृति की[1] उसके भयंकर और डरावने रूप में आलोचना की है। इसी प्रकार उन्होंने गर्मी के विरुद्ध, जाड़े के विरुद्ध,[2] बाढ़ों के विरुद्ध, और साथ ही अत्यन्त भयंकर और अत्यन्त घृणित बीमारियों पर व्यंग्य लिखे हैं। हम कह सकते हैं कि आधुनिक भारत के व्यंग्यों के अधिकांश भाग का विषय यही बातें हैं। तो भी पूर्व में सर्वप्रथम, घरेलू जीवन के रीति-रस्मों पर व्यंग्य प्रारंभ करने में हिन्दुस्तानी कवियों की विशेषता है।[3] किन्तु इन व्यंग्यों में अधिकतर

---

[1] इसी तरह कभी-कभी परमात्मा की भी। रोमनों में भी जुवेनल (Juvénal) ने, बड़े आदमियों द्वारा अपनी शक्ति के दुरुपयोग का बुद्धिमानी के साथ विरोध करते हुए, भाग्य की गलतियों के विरुद्ध, अर्थात् ईश्वर, जो बुराई से अच्छाई पैदा करता है, के रहस्यों के विरुद्ध आवाज़ उठाते हुए समाप्त किया।

२ काइम (क़ियामउद्दीन) पर लेख देखिए।

3 अरबी, तुर्की और फ़ारसी, जो हिन्दुस्तानी सहित पूर्वी मुसलमानों की चार प्रधान भाषाएँ हैं, के साहित्यों में भी व्यंग्य मिलते हैं; किन्तु उनमें हिन्दुस्तानी व्यंग्यों की खास विशेषता नहीं है। 'हमासा' (Hamâca) में व्यंग्य,'अल्हिजा',संबंधी तीन पुस्तकें हैं; अन्य के अतिरिक्त एक काहिली पर है; एक दूसरी स्त्रियों के

एक कठिनाई है, वह यह कि उनका ऐसे विषयों से संबंध है जिनका केवल स्थानीय या परिस्थितिजन्य महत्त्व है, और जो अश्लीलता द्वारा दूषित और छोटी-छोटी बातों द्वारा विकृत हैं, जो, सौदा और जुरत जैसे अत्यन्त प्रसिद्ध कवियों में भी, अत्यन्त साधारण हैं; मैं भी अपने अवतरणों में उन्हें थोड़ी संख्या में, और वह भी काट-छाँट कर, दे सका हूँ। मुझे स्पष्टतः अत्यन्त प्रसिद्ध व्यंग्य छोड़ देने पड़े हैं, ऐसे जिन्होंने अपने रचयिताओं को अत्यधिक ख्याति प्रदान की,[१] और जिनका भारत की प्रधान रचनाओं के रूप में उल्लेख होता है, जिनमें सदाचारों से संबंधित जो कुछ है उसके बारे में शिथिलता पाई जाती है।

किसी ने ठीक कहा है कि प्रहसन (Comédie) केवल कम व्यक्तिगत और अधिक अस्पष्ट व्यंग्य है। आधुनिक भारतवासी निंदा के इस साधन से विहीन नहीं हैं। यदि वे वास्तविक नाटकों, जिनके संस्कृत में सुन्दर उदाहरण हैं, से परिचित नहीं हैं, तो उनके पास एक प्रकार के प्रहसन हैं जिन्हें बड़े मेलों में बाज़ीगार[२] खेलते हैं और जिनमें कभी-कभी राजनीतिक संकेत रहते हैं। उत्तर भारत के बड़े नगरों में इस प्रकार के अभिनेता पाए जाते हैं जो काफ़ी चतुर होते हैं। कभी-कभी इन कलाकारों का एक समुदाय

विरुद्ध, तीसरा पुरुषों के विरुद्ध है; किन्तु वे एक प्रकार से छोटी हास्योत्पादक कविताएँ हैं। फ़ारसी में व्यंग्य कम संख्या में है किन्तु वे एक प्रकार से व्यक्तियों के प्रति अपशब्द हैं। महमूद के विरुद्ध फ़िरदौसी का प्रसिद्ध व्यंग्य ऐसा ही है।

१ उदाहरण के लिए मैंने घोड़े पर, उसकी चमकने की आदत के विरुद्ध लिखे गए, सौदा कृत व्यंग्य का अनुवाद नहीं दिया, यद्यपि वही बात भारतवर्ष में बहुत अच्छी समझी जाती है, और ख़ास तौर से मीर द्वारा जो स्वयं एक अच्छे लेखक होने के साथ-साथ अच्छी पहिचान भी रखते थे।

२ या अभिनेता। बाज़ीगार नटों की क़ौम के होते हैं, और सामान्यतः मुसलमान हैं। कभी-कभी ये आवारा लोग होते हैं जिनका किसी धर्म से संबंध नहीं होता, और इसीलिए हिन्दुओं के साथ ब्रह्मा की पूजा, और मुसलमानों के साथ मुहम्मद का आदर करते हुए बताए जाते हैं।

देशी अश्वारोहियों के अस्थायी सेनादल के साथ रहता है। जब कभी किसी रईस नवाब को अपने मनोरंजन की आवश्यकता पड़ती है, या जब वह अपने अतिथि को ख़ुश करना चाहता है तो वह उन्हें पैसा देता है। प्रधान मुसलमानी त्यौहारों, ख़ास तौर से इस्लाम धर्म के सबसे बड़े धार्मिक कृत्य बक़राईद या ईदुज्ज़ुहा, के अवसर पर वे बुलाए जाते हैं। उनके प्रदर्शन इटली के पुराने मूक अभिनयों से बहुत मिलते-जुलते हैं, जिनमें कुछ अभिनेता अपना रूप बनाते हैं और हमें समाज की कहावतें देते हैं। विभिन्न व्यक्तियों में कथोपकथन, यद्यपि कभी-कभी भद्दा रहता है, आध्यात्मिक और चुभता हुआ रहता है। वह श्लेष शब्दों के साथ खिलवाड़, अनुप्रास और दो अर्थ वाली अभिव्यंजनाओं से पूर्ण रहता है—सौन्दर्य-शैली जिसका हिन्दुस्तानी में अद्भुत प्राचुर्य है और जो उसकी अत्यधिक समृद्धि और विभिन्न उद्गमों से लिए गए शब्दों-समूह से निर्मित होने के कारण अन्य सभी भाषाओं की अपेक्षा संभवतः अधिक उचित है। जैसा कि मैंने कहा, ये तुरंत बनाए गए अंश प्रायः राजनीतिक संकेतों से पूर्ण रहते हैं। वास्तव में अभिनेता अँगरेज़ों और उनकी रीति-रस्मों का मज़ाक बनाते हैं, विशेषतः नवयुवक सिविलियनों का जो प्रायः दर्शकों में रहते हैं।[1] यह सत्य

---

[1] उदाहरणार्थ, इन रचनाओं में से एक का विषय इस प्रकार है। दृश्य में एक कचहरी दिखाई गई है जिसमें यूरोपियन मजिस्ट्रेट बैठे हुए हैं। अभिनेताओं में से एक, गोल टोप सहित अँगरेज़ी वेशभूषा में, सीटी बजाते और अपने बूटों में चाबुक मारते हुए सामने आता है। तब किसी अपराध का दोषी क़ैदी लाया जाता है; किन्तु जज, क्योंकि वह एक नवयुवती भारतीय महिला, जो गवाह प्रतीत होती है, के साथ व्यस्त रहता है, ध्यान नहीं देता। जब कि गवाहियाँ सुनी जा रही हैं, वह कनखियों से देखे बिना, और इशारे किए बिना, बिना किसी अन्य बात की ओर ध्यान दिए हुए, नहीं रहता, और बाद के परिणाम के प्रति उदासीन प्रतीत होता है। अंत में जज का ख़िदमतगार आता है, जो अपने मालिक के पास जाकर, और हाथ जोड़कर, आदरपूर्वक और विनम्रता के साथ, धीमे स्वर में उससे कहता है: 'साहिब, टिफ़िन तैयार है'। तुरन्त जज जाने के लिए उठ खड़ा होता है। अदालत के कर्मचारी उससे पूछते हैं कि क़ैदी

है कि चित्रण बहुत बोझिल रहता है और रीति-रस्म बहुत बढ़ा कर दिखाए जाते हैं, जब कि वे अधिकतर ख़ाली यूरोपियन दृश्य तक रहते हैं; किन्तु अंत में वे विविधता से संपन्न रहते हैं और पात्रों के चरित्र में कौशल रहता है। इस प्रकार के अभिनयों से पहले सामान्यतः नाच और इस संबंध में उत्तर में 'कलावन्त' और मध्य भारत में 'भाट', 'चारण' और 'बरदाई' कहे जाने वाले गायकों द्वारा गाए जाने वाले हिन्दुस्तानी गाने रहते हैं।[1]

का क्या होगा। नवयुवक सिविलियन, कमरे से बाहर जाते समय, एड़ी के बल घूमते हुए चिल्लाकर कहता है, 'गॉडैम (Goddam), फाँसी।'

ऊपर जो कुछ कहा गया है वह 'एशियाटिक जर्नल' (नई सीरीज़, जि० २२, पृ० ३७) में पढ़ने को मिलता है। बेवन (Bevan) ने भी एक हास्य-रूपक या प्रहसन का उल्लेख किया है ('Thirty years in India', भारत में तीस वर्ष, जि० १ पृ० ४७) जो उन्होंने मद्रास में देखा था, और जिसका विषय एक यूरोपियन का भारत में आना, और अपने दुभाषिए की चालाकियों का अनुभव करना है। अपनी यात्रा करते समय हैबर (Héber) एक उत्सव का उल्लेख करते हैं जिसमें उनकी स्त्री भी थी, और जहाँ तीन प्रकार के मनोरंजन थे—संगीत, नृत्य और नाटक। वीकी (Viiki) नामक एक प्रसिद्ध भारतीय गायिका ने उस समय, अन्य के अतिरिक्त, अनेक हिन्दुस्तानी गाने गाए थे। मेरे माननीय मित्र स्वर्गीय जनरल सर विलियम ब्लैकबर्न (William Blackburne) ने भी दक्खिन में हिन्दुस्तानी रचनाओं का अभिनय देखने की निश्चित बात कही है।

[1] कुछ वर्ष पूर्व, कलकत्ते में एक रईस बाबू का निजी थिएटर था, जो 'शाम-बाजार' नामक हिस्से में स्थित उसके घर में था। भद्दी भाषा में लिखी गई रचनाएँ हिन्दू स्त्री या पुरुष अभिनेताओं द्वारा खेली जाती थीं। देशी गवैए, जो लगभग सभी ब्राह्मण होते थे, वाद्य-संगीत (औरकैस्ट्रा) प्रस्तुत करते थे, और अपने राष्ट्रीय गाने 'सितार', 'सारंगी', 'पखवाज़' आदि नामक बाजों पर बजाते थे। अभिनय ईश्वर की प्रार्थना से आरंभ होता था, तब एक प्रस्तावना के गान द्वारा रचना का विषय बताया जाता था। अंत में नाटक का अभिनय होता था। ये अभिनय

अंत में वर्णनात्मक कविताओं के सातवें भाग में ऋतुओं, महीनों, फूलों, मृगया आदि से संबंधित अनेक कविताएँ रखी जाती हैं जिनमें से कुछेक इस जिल्द में दिए गए अवतरणों में मिलेंगी।

मैं यहाँ बता देना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तानी छंद-शास्त्र (उरूज़) के नियम, कुछ थोड़े से अंतर के साथ, वही हैं जो अरबी-फ़ारसी के हैं, जिनकी व्याख्या मैंने एक विशेष विवरण (Mémoire) में की है।[१] उर्दू और दक्खिनी की सब कविताएँ तुकपूर्ण होती हैं; किन्तु जब पंक्ति के अंत में एक या अनेक शब्दों की पुनरावृत्ति होती है तो तुक पूर्ववर्ती शब्द में रहता है। तुक को 'क़ाफ़िया', और दुहराए गए शब्दों को 'रदीफ़' कहते हैं।[२]

अपने तज़्किरा के अंत में मीर तक़ी ने रेख़ता या विशेषतः हिन्दुस्तानी कविता के विषय पर जो कहा है वह इस प्रकार है :

'रेख़ता (मिश्रित) पद्य लिखने की कई विधियाँ हैं : १. एक मिसरा फ़ारसी और एक हिन्दी[३] में लिखा जा सकता है, जैसा ख़ुसरो ने अपने एक परिचित क़िता (quita) में किया है। २. इसका उल्टा, पहला मिसरा हिन्दी में, और दूसरा फ़ारसी में, भी लिखा जा सकता है, जैसा मीर मुईज़ुद्दीन

बँगला में, जो बंगाल के हिन्दुओं द्वारा प्रयुक्त विशेष भाषा है, होते थे। ('एशियाटिक जर्नल', जि० १९, नई सीरीज़, पृ० ४५२, as. int.)

१ 'ज़र्नाल एसियातीक' (Journal Asiatique), १८३२

२ 'Rhètorique des peuples musulmans' (मुसलमान जातियों का काव्यशास्त्र) पर मेरा चौथा लेख देखिए, भाग २३।

३ यह अनिश्चित शब्द, जिसका ठीक-ठीक अर्थ 'भारतीय' है, हिन्दुस्तानी के लिए प्रयुक्त होता है, तथा विशेषतः, जैसा कि मैंने अपनी 'Rudiments de la langue hindoui' (हिन्दुई भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त) की भूमिका में बताया है, हिन्दुओं को देवनागरी अक्षरों में लिखित आधुनिक बोली (dialecte) के लिए।

मुसवी (Mîr Muizzuddîn Mucawî) ने किया है ।[1] ३. केवल शब्दों का, वह भी फ़ारसी क्रियाओं का प्रयोग किया जा सकता है[2] ; किन्तु यह शैली सुरुचिपूर्ण नहीं समझी जाती, 'क़बीह' । ४. फ़ारसी संयुक्त शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है, किन्तु उनका प्रयोग सोच-समझ कर, और केवल उसी समय जब कि वह हिन्दी भाषा की प्रतिभा के अनुकूल हो, करना चाहिए, जैसे उदाहरणार्थ गुफ़्त व गोई, 'बातचीत' । ५. 'इल्हाम' (il-hâm) नामक शैली में लिखा जा सकता है। यह प्रकार पुराने कवियों द्वारा बहुत पसन्द किया जाता है ; किन्तु वास्तव में उसका प्रयोग केवल कोमलता और संयम के साथ होता है। उसमें ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है जिसके दो अर्थ होते हैं, एक बहुत अधिक प्रयुक्त (क़रीब) और दूसरा कम प्रयुक्त (बईद) और कम प्रयुक्त अर्थ में उन्हें इस प्रयोग में लाना कि पाठक चक्कर में पड़ जाय ।[3] ६. एक प्रकार का मध्यम मार्ग ग्रहण किया

---

[1] एक अरबी के मिसरे में और एक हिन्दुस्तानी के मिसरे में रचित पद्य भी पाए जाते हैं । उसका एक उदाहरण मैंने अपने छंदों के विवरण(Mémoire sur le métrique) में उद्धृत किया है । ऐसे मिश्रितों के उदाहरण फ़्रांसीसी में मिलते हैं ; अन्य के अतिरिक्त पानार (Panard) की रचनाओं में पाए जाते हैं । फ़ारसी में भी ऐसे पद्य पाए जाते हैं जिनका एक मिसरा अरबी में, और दूसरा फ़ारसी में है । उन्हें 'मुलम्मा' कहते हैं । देखिए, ग्लैडविन, 'Dissertation on the Rhetorics etc. of the Persians' (फ़ारस वालों के काव्यशास्त्र आदि पर दावा) ।

[2] संभवतः लेखक कुछ ऐसे पद्यों का उल्लेख करना चाहता है जो इस समय फ़ारसी और हिन्दी में हैं ; चियब्रेरा (Chiabrera) के लैटिन-इटैलियन दो चरणों वाले छंद के लगभग समान, जिसे मेरे पुराने साथी श्री यूसेब द सल (M. Eusèbe de Salles), ने मेरी पहली जिल्द पर एक विद्वत्तापूर्ण लेख में उद्धृत किया है :

In mare irato, in subita procella
Invoco te, nostra benigna stella .

[3] 'इलहाम' नामक अलंकार पर, देखिए, 'Rhétorique des nations

जा सकता है, जिसे 'अन्दाज़' कहते हैं। इस प्रकार में, जिसे मीर ने स्वयं अपने लिए चुना है, तजनीस (Alliteration), तरसी' (Symmetry), तशबीह (Similitude), सफ़ाई गुफ़्तगू (Belle diction), फ़साहत (Eloquence), बलागत (Elocution), अदा-बन्दी (Description), ख़ियाल (Imagination) आदि का प्रयोग अवश्य होना चाहिए। मीर का कहना है कि काव्य-कला के जो विशेषज्ञ हैं वे मैंने जो कुछ कहा है उसे पसन्द करेंगे। मैंने गवारों के लिए नहीं लिखा; क्योंकि मैं जानता हूँ कि बातचीत का क्षेत्र व्यापक है, और मत विभिन्न होते हैं।'

जहाँ तक गद्य से संबंध है, उसके तीन प्रकार हैं: १. वह जो 'मुरज्जज़' या काव्यात्मक गद्य (Poetic prose) कहा जाता है, जिसमें बिना तुक के लय होती है; २. जिसे 'मुसज्जा' या विकृत रूप में 'सजा' कहते हैं[1]; ३. जिसे 'आरी' कहते हैं, जिसमें न तो तुक होती है और न छन्द। अन्तिम दो का सबसे अधिक प्रयोग होता है; कभी कभी ये दोनों मिला दिए जाते हैं। 'नज़्म' के, जो कविता के लिए प्रयुक्त सामान्य शब्द है, विपरीत गद्य को 'नस्र' कहते हैं। गद्य सामान्य हो तुकयुक्त हो, अधिकतर सामान्यत: पद्यों-सहित होता है, तथा जो प्राय: उद्धरण होते हैं।

अब मैं, जैसा कि मैंने हिन्दुई के संबंध में किया है, निम्नलिखित अकारादिक्रम में हिन्दुस्तानी रचनाओं के विभिन्न प्रकारों के नामों पर विचार करता हूँ।

'इंशा' अर्थात्, 'उत्पत्ति'। यह हमारे पत्र-संबंधी रिसाले से बहुत-कुछ मिलता-जुलता पत्रों की भाँति लिखी गई चीज़ों का संग्रह है। अनेक

---

musulmanes.' (मुसलमान जातियों का काव्य-शास्त्र) पर मेरा तीसरा लेख, पृ० ९७।

[1] इस तुक-युक्त गद्य के तीन प्रकारों की गणना की जाती है। इस संबंध में 'Rhétorique des nations musulmanes' (मुसलमान जातियों का काव्य-शास्त्र) पर मेरा चौथा लेख देखिए, भाग २२।

लेखकों ने इस प्रकार की रचना का अभ्यास किया है, और गद्य और पद्य दोनों में ही रूपकालंकार के लिए अपनी अनियंत्रित रुचि प्रकट की है। मुझे यह कहने की आवश्यकता नहीं कि उसमें मौलिक, और विशेषतः उद्धृत पद्यों का बाहुल्य रहता है।

'क़सीदा'। इस कविता में, जिसमें प्रशंसा (मुदा), या व्यंग्य (हजो) रहता है, एक ही तुक में बारह से अधिक (सामान्यतः सौ) पंक्तियाँ रहती हैं, अपवाद स्वरूप पहली है, जिसके दो 'मिसरों' का तुक आपस में अवश्य मिलना चाहिए, और जिसे 'मुसर्रा' अर्थात्, तुक मिलने वाले दो 'मिसरे', और 'मतला' कहते हैं। अंत, जिसे 'मक़्ता' कहते हैं, में लेखक का उपनाम अवश्य आना चाहिए।

'क़िता', 'टुकड़ा', अर्थात् चार मिसरों, या दो पंक्तियों में रचित छन्द जिसके केवल अंतिम दो मिसरों की तुक मिलती है। पद्य मिश्रित गद्य-रचनाओं में प्रायः उनका प्रयोग होता है। 'क़िता' के एक छन्द को 'क़िता-बन्द' कहते हैं।

'क़ौल' एक प्रकार का गीत, 'आइने अकबरी' के अनुसार, जिसका व्यवहार विशेषतः दिल्ली में होता है।[१]

'ख़याल', विकृत रूप में 'ख़ियाल', और हिन्दुई में 'ख्याल'।[२] हिन्दू और मुसलमान टेक वाली कुछ छोटी कविताओं को यह नाम देते हैं, जिनमें से अनेक लोकप्रिय गाने बन गई हैं, जिन्हें गिलक्राइस्ट ने अँगरेज़ी नाम 'Catch' दिया है। इन कविताओं का विषय प्रायः श्रृंगारात्मक, या कम-से-कम भावुकतापूर्ण रहता है। वे किसी स्त्री के मुँह से कहलाई जाती

---

[१] जि० २, पृ० ४५९

[२] सोचने की बात है, कि यद्यपि आधुनिक भारतीयों में यह शब्द चिर-परिचित अरबी शब्द का एक रूप माना जाता है, और जिसका अर्थ है 'विचार', वह संस्कृत 'खेलि'—भजन, गीत—का रूपान्तर है।

हैं, और उनकी भाषा अत्यन्त कृत्रिम होती है। इस विशेष गाने के आविष्कारक जौनपुर के सुल्तान हुसेन शर्की बताए जाते हैं।[1]

'ग़ज़ल' एक प्रकार की गीति-कविता (ode) है जो रूप में क़सीदा के समान है, केवल अंतर है तो यही कि यह बहुत छोटी होती है, बारह पंक्तियों से अधिक नहीं होनी चाहिए। पिछली (पंक्ति) जिसे 'शाह बैत', या शाही पद्य, कहते हैं, में, कसीदा की भाँति, लिखने वाले का तख़ल्लुस आना चाहिए।

कभी-कभी गज़ल में विशेष श्लेष शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार पहले पद्य के दो मिसरों का और आगे आने वाले पद्यों के अंतिम का समान रूप से या समान शब्दों से प्रारंभ और अंत हो सकता है; यह चीज़ वही है जिसे 'बाज़गश्त' कहते हैं।[2]

'चीस्तान', पद्य और गद्य में पहेली।

'ज़तलियत'। मीर जाफ़र ज़तली, जिन्होंने इन्हें अपना नाम दिया, की कविताओं की तरह रची गईं कविताओं को इस प्रकार कहा जाता है, अर्थात् आधी फ़ारसी और आधी हिन्दुस्तानी।

'ज़िक्री'—'बयान', गाना जिसका विषय गंभीर और नैतिक रहता है। गुजरात में इसका जन्म हुआ, और क़ाज़ी महमूद द्वारा हिन्दुस्तान में प्रचलित हुआ।[3]

'तकरीत' (Tacrît), अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा से भरी कविता को दिया गया नाम।

---

[1] विलर्ड (Willard), 'म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान' (हिन्दुस्तान का संगीत), पृ० ८८

[2] वली की गज़ल जो 'दिल-रुबा' शब्दों से प्रारंभ होती है, और जो मेरे संस्करण के पृ० २३ पर है, उसका एक उदाहरण प्रस्तुत करती है, साथ ही वह जो 'सब चमन' शब्दों से प्रारंभ होती है, और जो २६ पर पढ़ी जा सकती है।

[3] विलर्ड (Willard), 'म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान', पृ० ९३

'तज़्किरा'—'संस्मरण' या जीवनी। जिस प्रकार फ़ारसी में उसी प्रकार हिन्दुस्तानी में, इस शीर्षक की अनेक रचनाएँ हैं, और जिनमें कवियों के सम्बन्ध में, उनकी रचनाओं से उद्धरणों सहित, सूचनाएँ रहती हैं।

'तज़्मीन'—'सन्निवेश करना'। इस प्रकार का नाम उन पद्यों को दिया जाता है जो किसी दूसरी कविता का विकास प्रस्तुत करते हैं। उनमें परिचित पंक्तियों के साथ नई पंक्तियाँ रहती हैं। अपनी ख़ास ग़ज़लों में से एक पर सौदा ने लिखा है, और ताबाँ ने हाफ़िज़ की एक ग़ज़ल पर।

'तराना' या 'तलाना'। यह शब्द, जिसका अर्थ है 'स्वर का मिलाना,' 'रुबाई' में एक गीत, विशेषतः दिल्ली में प्रयुक्त, के लिए आता है। इन गीतों के बनाने वालों को 'तराना-परदाज़' 'गीत बनाने वाले' कहते हैं।

'तश्बीब'। यह शब्द, जिसका अर्थ है 'युवावस्था और सौन्दर्य का वर्णन', एक शृंगारिक कविता का द्योतक है जिसे मुसलमान काव्य-शास्त्री प्रधान काव्य-रचनाओं में स्थान देते हैं।

'तारीख़'—'इतिहास'। इस प्रकार का नाम काल-चक्र-संबंधी पद्य को दिया जाता है, जिसमें, एक मिसरा या एक पंक्ति के, एक या कुछ शब्दों के अक्षरों की संख्यावाची शक्ति के आधार पर, किसी घटना की तिथि निर्धारित की जाती है। यह आवश्यक है कि कविता और काल-चक्र का उल्लिखित घटना से संबंध हो। ये कविताएँ प्रायः इमारतों और कब्रों पर खोदे गए लेखों का काम देती हैं, और सामान्यतः उन रचनाओं के अंत में आती हैं जिनकी ये तिथि भी बताती हैं। 'तारीख़' से कालक्रमानुसार वृतान्त, इतिहास, सामान्य इतिहास या एक विशेष इतिहास-संबंधी सब बड़े ग्रन्थ भी समझे जाते हैं।

'दीवान'। पंक्तियों के अंतिम वर्ण के अनुसार क्रम से रखी गई ग़ज़लों के संग्रह को भी कहते हैं, और फलतः एक ही लेखक की कविताओं का संग्रह। किन्तु इस अंतिम अर्थ में ख़ास तौर से 'कुल्लियात' अथवा पूर्ण, शब्द का प्रयोग होता है।

भारतीय मुसलमानों के साहित्य में ग़ज़लों के संग्रह सबसे अधिक प्रचलित हैं। लोग एक या दो ग़ज़ल लिखते हैं, तत्पश्चात् कुछ और; अंत में जब उनकी संख्या काफ़ी हो जाती है, तो दीवान के रूप में संकलित कर दी जाती हैं, उसकी प्रतियाँ उतारी जाती हैं, और अपने मित्रों में बाँट दी जाती हैं। कुछ कवियों ने तो कई दीवान तैयार किए हैं; उदाहरणार्थ मीर तक़ी ने छः लिखे हैं। दुर्भाग्यवश उनमें लगभग हमेशा एक से विचार रहते हैं, और कभी-कभी भाषा भी एक सी रहती है; साथ ही, कई सौ कविताओं के दीवान में नए विचार प्रस्तुत करने वाली या मौलिक रूप में लिखी गई कविताएँ ढूँढ़ना कठिन हो जाता है।

'ना' त'—प्रशंसा—कविताओं में विनय को दिया जाने वाला नाम, अर्थात् ईश्वर, मुहम्मद, और कभी-कभी ख़लीफ़ाओं और इमामों की स्तुतियाँ जिनसे मुसलमान अपने ग्रन्थ प्रारंभ करते हैं।

'निस्बतें'—संबंध। इस प्रकार का नाम एक विशेष प्रकार की रचना को दिया जाता है जिसमें कुछ ऐसे वाक्यांश होते हैं जिनका आपस में कोई सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता, और जिनकी व्याख्या के लिए बातचीत करने वाले को संबोधित करना पड़ता है जिसका उत्तर एक साथ विभिन्न प्रश्नों के सम्बन्ध में लागू होता है।

'नुक्ता'—'बिन्दु', 'सुन्दर शब्द', एक प्रकार का हरम का गाना।[1]

'फ़र्द'—एक—जैसा कि इसके नाम से प्रकट होता है, एक स्फुट छन्द है, अर्थात् दो चरणों द्वारा निर्मित 'बैत'। 'दीवानों' के अन्त में प्रायः कुछ 'फ़र्द' रखे जाते हैं, और उस समय उन्हें सामान्य शीर्षक 'फ़रीदियात' दिया जाता है।

'बन्द' का ठीक-ठीक अर्थ है 'छन्द': जैसे 'हफ़्त बन्द' में सात छन्द होते हैं। 'तर्जी बन्द' अथवा 'टेकयुक्त छन्द', उस कविता को कहते हैं

---

[1] विलर्ड (Willard), 'म्यूज़िक ऑव हिन्दुस्तान', पृ० ९३

जिसमें विभिन्न तुक वाले, पाँच से ग्यारह पंक्तियों तक के, छन्द होते हैं, जिनमें से हर एक के अंत में कविता से बाहर की एक ख़ास पंक्ति[१] दुहराई जाती है, किंतु जिसके अर्थ का छन्द के साथ साम्य होता है, चाहे वह बिना पंक्तियों के अपने में पूर्ण ही हो। उसमें पाँच से कम और बारह से अधिक छन्द तो होने ही नहीं चाहिए।[२] 'तरकीब बन्द'—क्रमयुक्त छन्द, उस रचना को कहते हैं जिसके छन्दों की अंतिम पंक्तियाँ बदल जाती हैं। यह सामान्यतः प्रशंसात्मक कविता होती है[3]; कभी-कभी प्रत्येक छन्द के अंत में आने वाली स्फुट पंक्तियों के जोड़ देने से एक ग़ज़ल बन सकती है। इस कविता के अंतिम छन्द में, साथ ही पिछली के में, कवि अपना तख़ल्लुस अवश्य देता है। इस संबंध में सौदा ने, फ़िद्वी पर अपने व्यंग्य में, कहा है कि कवियों को पंक्तियों में अपना तख़ल्लुस तो अवश्य रखना चाहिए, किंतु असली नाम कभी नहीं।

'बयाज़', या संग्रह-पुस्तक (album)। यह विभिन्न रचनाओं के पद्यों का संग्रह होता है। आयताकार संग्रह-पुस्तक (album) को जिसमें दूसरों तथा ख़ास मित्र-बांधवों के पद्य रहते हैं विशेष रूप से 'सफ़ीना' कहा जाता है। अरबी के विद्वान् मार्सेल के श्री वरसी (M. Varsy) ने मुझे निश्चित रूप से बताया है कि मिश्र (ईजिप्ट) में इस शब्द का यही अर्थ है, और वास्तव में एक बक्स में बन्द आयताकार संग्रह-पुस्तक का द्योतक है।

---

[१] इसका एक उदाहरण कमाल पर लेख में मिलेगा।

[२] न्यूबोल्ड (Newbold), 'Essay on the metrical compositions of the Persians' (फ़ारस वालों की छन्दोबद्ध रचनाओं पर निबन्ध)।

[3] इस प्रकार का एक उदाहरण मीर तक़ी की रचनाओं में पाया जाता है, कलकत्ते का संस्करण, पृ० ८७५, जिसका हर एक छन्द बदल जाता है। कमाल ने अपने तज़्किरा में हसन की एक कविता उद्धृत की है, जिसकी रचना १७ बन्दों या चार पंक्तियों के छन्दों में हुई है, जिनमें से पहली तीन उर्दू में और अंतिम फ़ारसी में, एक विशेष तुक में, है।

'बैत'। यह शब्द[1] 'शेर' का समानार्थवाची है, और एक सामान्य पद्य का द्योतक है; किन्तु उसका एक अधिक विशेष अर्थ भी है, और जिसे कभी-कभी दो अलग-अलग पंक्तियों वाला छन्द कहते हैं, क्योंकि उसमें दो 'मिसरा' होते हैं। वह हिन्दुई के 'दोहा' या 'दोहरा' के समान है।

'मध' (Madh)—प्रशंसा—प्रशंसात्मक कविता जिसका यह विशेष शीर्षक है।

'मन्क़बा', प्रशंसा। यह वह शीर्षक है जो किसी व्यक्ति की प्रशंसा में लिखी गई कुछ कविताओं को दिया जाता है।

'मर्सिया', épicède 'शोक', अथवा ठीक-ठीक विलाप' गीत, मुसलमान शहीदों के संबंध में साधारणतः चार पंक्तियों के पचास छन्दों में रचित काव्य।[2] ये विलाप गीत अकेले व्यक्ति द्वारा गाए जाते हैं जिसे उस हालत में 'बाज़ू'—बाँह—कहते हैं; किन्तु टेक जो हर एक छन्द के अंत में आती है मिलकर गाई जाती है, और जिसे 'जवाबी'—उत्तर—कहा जाता है। निर्मित गीतों को 'ईदी' (îdî)—त्योहारी—सामान्य नाम दिया जाता है और वे मुसलमानी तथा हिन्दुओं के त्योहारों के अवसरों पर गाए जाते हैं।[3]

---

१ 'बैत' का ठीक-ठीक अर्थ है 'ख़ेमा', और फलतः 'घर', और उसी से एक ख़ेमे के दो द्वार हैं जिन्हें 'मिसरा' कहते हैं, इस प्रकार पद्य में इसी नाम के दो मिसरे होते हैं।

२ इन विलाप गीतों पर विस्तार मेरी 'Mémoire sur la religion musulmane dans l' Inde' (भारत में मुसलमानी धर्म का विवरण) में, और विद्वान् मठधारी बरत्राँ (Bertrand) द्वारा अनूदित ' Séances de Haïdari' (हैदरी से भेंट) में देखिए।

३ इसका एक उदाहरण एच० एस० रीड (Reid) कृत 'रिपोर्ट ऑन इन्डिजेनस ऐजूकेशन' (देशी शिक्षा पर रिपोर्ट) में पाया जाता है, आगरा, १८५२, पृ० ३७।

'मसनवी' । अरबी में जिन पद्यों को 'मुज़्दविज' कहते हैं उन्हें फ़ारसी और हिन्दुस्तानी में इस प्रकार पुकारा जाता है । ये दोनों शब्द 'मिसरों' के जोड़ों से सार्थक होते हैं, और वे पद्यों की उस शृंखला का द्योतन करते हैं जिनके दो मिसरों की आपस में तुक मिलती है, और जिसकी तुक प्रत्येक पद्य में बदलती है, या कम-से-कम बदल सकती है ।[1] इस रूप में 'वअज़' या 'पन्दनामे', उपदेशात्मक कविताएँ, किसी भी प्रकार की सब लम्बी कविताएँ और पद्यात्मक वर्णन लिखे जाते हैं । उन्हें प्रायः खण्डों या परिच्छेदों में बाँटा जाता है जिन्हें 'बाब'—दरवाज़ा, या 'फ़स्ल'-भाग कहते हैं । पिछला शब्द हिन्दुई-कविताओं के 'कांड' की तरह है ।

'मुअम्मा'—पहेली, विशेष प्रकार की छोटी कविता ।[2]

'मुबारक-बाद' । बधाई और प्रशंसा संबंधी काव्य को यह नाम दिया जाता है । हिन्दुई में 'बधावा' के समानार्थवाची के रूप में उसका प्रयोग होता है ।

'मुक़त्तात' (Mucatta'at)—कटा हुआ—अत्यन्त छोटी पंक्तियों की छोटी कविता ।

'मुसम्मत', अर्थात् 'फिर से जोड़ना' । इस प्रकार उस कविता को कहा जाता है जिसके छन्दों में से हर एक भिन्न-तुकान्त होता है, किन्तु जिनके अंत में एक ऐसा मिसरा आता है जिसकी तुक अलग-अलग रूप में मिल जाती है, और जो क्रम पूरी कविता के लिए चलता है । उसमें प्रति छन्द में तीन, चार, पाँच, छः, सात, आठ और दस मिसरे होते हैं, और जो फलतः 'मुसल्लस', 'मुरब्बा', 'मुख़म्मस', 'मुसद्दस', 'मुसब्बा', 'मुसम्मन' और 'मुअशर' कहे जाते हैं । 'मुख़म्मस' का बहुत प्रयोग होता है ।

---

[1] ये 'léonins' नामक लेटिन पद्यों की तरह हैं । अँगरेज़ी उपासना-पद्धति में इसी प्रकार के बहुत हैं ।

[2] 'गुलदस्ता-इ निशात' में इस प्रकार की पहेलियाँ बहुत बड़ी संख्या में मिलती हैं, पृ० ४४४ ।

कभी-कभी किसी दूसरे लेखक की गज़ल के आधार पर इस कविता की रचना की जाती है। उस समय छन्द के पाँच मिमरों में से अंतिम दो मिसरे गज़ल की हर पंक्ति के होते हैं। इस प्रकार पहले की वही तुक होती है जो गज़ल की पहली पंक्ति की, प्रथानुसार जिसके दो मिसरों की आपस में तुक मिलनी चाहिए। दूसरे छन्द तथा बाद के छन्दों में, पहले तीन मिसरों की गज़ल की पंक्ति के पहले मिसरे से तुक मिलती है, पंक्ति जो छन्द में चौथी हो जाती है; और पाँचवें मिसरे की तुक वही होती है, यहाँ तक कि मुख़म्मस के अंत तक, जो पहले छन्द की होती है, यह तुक वही होती है जो गज़ल की।

'मुस्तज़ाद', अर्थात् 'और जोड़ना'। ऐसा उस गज़ल को कहते हैं जिसकी हर एक पंक्ति में एक या अनेक शब्द जोड़े जाते हैं जिसके बिना या सहित कविता पढ़ी जा सकती है।[1] इस रचना से एतराज़ (incidence) या हशो (filling up) नामक अलंकारों का विकास हुआ है, और जो, रुचिपूर्ण व्यक्तियों की प्रशंसा प्राप्त करने के लिए वह होना चाहिए जिसे 'हशो मलीह' (beautiful filling-up) कहते हैं।[2]

'मौलूद'। यह शब्द हमारे 'noëls' (क्रिस्मस-संबंधी) नामक गीतों की तरह है। वास्तव में यह मुहम्मद के जन्म के सम्मान में भजन है।

'रिसाला'। इस शब्द का ठीक-ठीक अर्थ है 'पत्र', जिसका प्रयोग पद्य या गद्य में छोटी-सी उपदेशात्मक पुस्तक के लिए होता है, और जिसे हम 'किताब' शब्द के विपरीत एक 'छोटी-सी किताब' कह सकते हैं।

---

१ श्री द सैसी (M. de Sacy) ने उदाहरण के लिए फ़ारसी की एक सुन्दर रुबाई दी है ('ज़ूर्नाल दे सावाँ', Journal des Savant, जनवरी, १८२७)। वली की रचनाओं मे अनेक मिलते हैं, मेरे संस्करण के पृ० ११३ और ११४।

२ 'Rhet. des nat. mus.' (मुसलमान जातियों का काव्य-शास्त्र) पर मेरा तीसरा लेख देखिए, पृ० १३०।

'किताब' का अर्थ है एक 'लंबी-चौड़ी पुस्तक', और जो हिन्दुई 'पोथी' के समानार्थक है।[1]

'रुबाई', अथवा चार चरणों का छन्द, एक विशेष गत में लिखित छोटी-सी कविता, जिसमें चार मिसरे होते हैं जिनमें से पहले दो और चौथे की आपस में तुक मिलती है। उसे 'दो-बैती' यानी 'दो पद्य'[2] भी कहते हैं; इसी कविता के एक प्रकार को 'रुबाई क़िता आमेज़', यानी 'क़िता-मिश्रित रुबाई', कहते हैं।

'रेख़्ता', मिश्रित। यह उर्दू कविता को दिया जाने वाला नाम है, और फलतः इस बोली में लिखी जाने वाली हर प्रकार की कविता का, तथा विशेषतः गज़ल का। जैसा कि मैंने बहुत पीछे कहा है, अपनी कविताओं के एक भाग के लिए, कबीर ने भी इस शब्द का प्रयोग अवश्य किया है।

'लुग्ज़' (Lugz)—पहेली।[3]

'वासोख़्त', यह कविता, जिसे 'सोज़' भी कहते हैं, गज़ल के मूलाधार की भाँति, किन्तु रूप की दृष्टि से भिन्न, है, क्योंकि इसमें तीन पंक्तियों के बीस से तीस तक छन्द होते हैं। पंक्तियों में पहली दो की तुक आपस में मिलती है और अंतिम की अपने से ही (चरणार्द्ध के अनुसार)।

'शिकार-नामा', यानी 'शिकार की पुस्तक'। शिकार के आनन्द, या उचित रूप में एक सम्राट् के किसी विशेष शिकार का वर्णन करने वाली मसनवी को यह नाम दिया जाता है।

'सलाम', अभिवादन, अली के संबंध में ग़ज़ल या स्तुति, और इसी प्रकार किसी व्यक्ति की प्रशंसा में लिखित हर प्रकार की कविता।

'सरोद' यानी गीत, गाना।

---

[1] उदाहरण के लिए, 'भक्त-माल'—संतों पर पुस्तक—में।

[2] ग्लैड्विन (Gladwin), 'डिसर्टेशन' (Dissertation, दावा), पृ० ८०

[3] यह शब्द, जो अरबी है, स्वर्गीय हैमर-पर्ग्स्टॉल (Hammer-Purgstall) द्वारा इस प्रकार अनूदित है।

'साक़ी-नामा' यानी 'साक़ी की पुस्तक'। यह मसनवी की भाँति तुक-युक्त लगभग चालीस पंक्तियों की, और शराब की प्रशंसा में, एक प्रकार का डिथिरैंब (Dithyramb, यूनान के सुरा-देव बैकूस Bacchus के सम्मान में या इसी अर्थ में लिखित कविता) है। कवि सामान्यतः साक़ी को संबोधित करता है; और जैसा कि गज़ल में होता है, अर्थ प्रायः आध्यात्मिक होता है। वास्तव में, रहस्यवादी रचयिताओं में, शराब का अर्थ होता है, ईश्वर-प्रेम; मैख़ाना, दिव्य विभूति का मन्दिर ; शराब बेचने वाला, गुरु ; अंत में दयालु साक़ी स्वयं ईश्वर की मूर्ति है।

'साल-गिरा' — वर्ष का वापिस आना — अर्थात् जन्म-दिन, इस अवसर के लिए बधाई-सम्बन्धी रचना।

'सोज़'। यह शब्द, जिसका शब्दार्थ है 'जलन', एक आवेगपूर्ण शृंगारी गीत के लिए प्रयुक्त होता है, जिसे 'वासोख़्त' भी कहते हैं। मर्सिया के छन्दों को 'सोज़' नाम दिया जाता है।

'हज़्लियात', मज़ाक। कभी-कभी मनोरंजक पंक्तियों की कविता को यह नाम दिया जाता है।

मेरा विचार है कि पीछे दी गई दो तालिकाएँ हिन्दुई और हिन्दुस्तानी की, अर्थात् भारतवर्ष के एक बड़े भाग की आधुनिक भाषा की, और संस्कृत से उसे अलग करने वाली भाषा-पद्धति की, उस संक्रांति-कालीन भाषा-पद्धति की जिसकी लोकप्रिय कविताएँ भारत के मध्ययुग को आकर्षक बनाती हैं, और जिसके संबंध में 'सर्फ़-इ उर्दू' के रचयिता का हिन्दुस्तानी के बारे में यह कथन कि : 'यह चारुता और माधुर्य की खान है' और भी उपयुक्त शीर्षक के रूप में, लागू होता है, विभिन्न प्रकार की रचनाओं का काफ़ी ठीक ज्ञान करा सकती हैं।

मुझे यह कहना पड़ता है कि हिन्दुस्तानी साहित्य का बहुत बड़ा भाग फ़ारसी, संस्कृति और अरबी से अनूदित है ; किन्तु ये अनुवाद प्रायः

महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि वे मूल के कठिन और संदिग्ध अंशों की व्याख्या करने के साधन सिद्ध हो सकते हैं ; प्रसिद्ध हिन्दू लेखक कुलपति ने इन शब्दों में, जिन्हें मैंने अपने 'रुदीमाँ द ल लाँग ऐंदुई' से लिए हैं, अपने विचार प्रकट किए हैं : 'यदि संस्कृत काव्य हिन्दी में रूपान्तरित कर दिया जाता तो वास्तविक अर्थ और भी अच्छी तरह से समझ में आ सकता था ।' कभी कभी ये अनुवाद ही हैं जो दुर्भाग्यवश खोई हुई मूल रचनाओं के स्थान पर काम आते हैं ।[1] जहाँ तक फ़ारसी से अनूदित कही जाने वाली कथाओं से सम्बन्ध है, वे वास्तविक अनुवाद होने के स्थान पर अनुकरण मात्र हैं और परिचित कथाएँ ही नए ढंग से प्रस्तुत की गई हैं ; अथवा एक सुन्दर अनुकरण हैं, जो कभी-कभी मूल की अपेक्षा अच्छी रहती हैं; उनकी रोचकता में कोई कमी नहीं होती ।[2] इसके अतिरिक्त मेरे विचार से हिन्दुस्तानी रचनाएँ फ़ारसी की रचनाओं, प्रायः जिनकी विशेषता अत्यधिक अतिशयोक्ति रहती है, से अधिक स्वाभाविक होती हैं ।

यूरोप में लगभग अज्ञात इसी साहित्य का विवरण मैं प्रस्तुत करना चाहता हूँ। मेरी इच्छा उसे समृद्ध बनाने वाले और विद्वानों का ध्यान आकृष्ट करने वाले सभी प्रकार के पद्य और गद्य-ग्रन्थों की ओर संकेत करने की है । इसके लिए मैंने अनेक हिन्दुस्तानी-ग्रन्थों का अध्ययन किया है , और उससे भी अधिक सरसरी निगाह से देखे हैं । जहाँ तक हो सका है मैंने अधिक से अधिक हस्तलिखित ग्रन्थ प्राप्त करने की चेष्टा की है ; सार्वजनिक और निजी पुस्तकालयों के हिन्दुस्तानी भण्डारों से परिचित होने के लिए मैं दो बार इँगलैंड गया हूँ, और मुझे यह बात ख़ास तौर से कहनी है

१ उदाहरण के लिए, जैसा, मेरा विचार है, 'बैताल पच्चीसी' तथा अन्य अनेक रचनाओं का हाल है।

२ विला ने 'तारीख़-इ- शेर शाही' के संबंध में जो कहा है वही अन्य सभी अनुवादों के संबंध में कहा जा सकता है : 'अपने तौर पर इसकी फ़ारसी चाहे जितनी पूर्ण हो , मैं भी अंत में इसे पूर्ण बना सका हूँ ।'

कि मुझे संग्रह बहुत अच्छे मिले, और सहायता अत्यन्त उदार मिली। हिन्दुस्तानी के हस्तलिखित ग्रन्थों का जो सबसे अच्छा संग्रह मुझे मिल सका, वह ईस्ट इंडिया हाउस के पुस्तकालय का है, और इस पुस्तकालय में विशेषतः लीडन (Leyden) संग्रह इस प्रकार का सर्वोत्तम संग्रह है। डॉ० लीडन फ़ोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दुस्तानी के परीक्षक थे; उन्होंने इस भाषा का काफ़ी अध्ययन किया था। वास्तव में जो हिन्दुस्तानी की जिल्दें उन्होंने तैयार की हैं उसमें इतने अन्य अनेक प्राच्यविद्याविशारदों ने सहयोग प्रदान किया है, कि साहित्यिक जनता को देने के लिए उन्होंने मुझे जितने की आज्ञा प्रदान की थी उससे भी अधिक विवरण मैं प्रस्तुत कर सकता हूँ। मैंने मौलिक जीवनियों और संग्रहों को, जिन्हें सामान्यतः 'तज़्किरा' – संस्मरण—कहा जाता है, विशेष रूप से देखा है। निम्नलिखित के कारण, संभवतः मुझे अत्यधिक महत्वहीन कवियों का उल्लेख करने के लिए दोषी ठहराया जायगा, किन्तु मैंने उन सबके सम्बन्ध में जिनका उल्लेख किया गया है, एक लेख देने का, चाहे थोड़े-से शब्दों का ही क्यों न हो, निश्चय किया है।

अस्तु, यहाँ उन ग्रन्थों के उल्लेख के साथ-साथ जिन्हें मैं देखने में समर्थ हो सका हूँ उस प्रकार के ग्रंथों की अकारादिक्रम से सूची दी जाती है जिन्हें मैं जानता हूँ। इन ग्रंथों तथा उनके रचयिताओं के संबन्ध में प्रस्तुत रचना के 'जीवनी और ग्रन्थ' सम्बन्धी भाग में विस्तार से बातें मिलेंगी।

१. 'अयार उश्शु' अरा' – कवियों की कसौटी—ख़ूब चन्द ज़ुका कृत। उन्होंने यह ग्रन्थ अपने आश्रयदाता मीर नासिरुद्दीन नासिर, साधारणतः ज्ञात मीर कल्लू, की इच्छानुसार, १२४७ (१८३१-३२), अथवा १२०८ (१७९३-९४) से १२४७ (१८३१-३२) तक, लिखा था, क्योंकि ग्रन्थकार ने तेरह वर्ष तक परिश्रम करने का उल्लेख किया है। ज़ुका की मृत्यु १८४६ में हुई, क्योंकि डॉ० स्प्रेंगर ने ऐसा उनके पौत्रों के मुँह से सुना था।

.ज़ुका का 'तज़्किरा' उन अनेक तज़्किरों में से है जिन्हें मैं अप्रत्यक्ष रूप से जानता हूँ। वह फ़ारसी में लिखा हुआ है और उसमें रचनाओं के अंशों सहित लगभग पन्द्रह सौ कवियों की जीवनियाँ हैं। जो हस्त-लिखित प्रति डॉ० स्प्रेंगर के पास थी उसमें १५-१५ पंक्तियों के लगभग एक हज़ार अठपेजी पृष्ठ हैं। इस प्राच्यविद्याविशारद के विचार से यह तज़्किरा बिना किसी आलोचना के लिखा गया है और उसमें पुनरुक्तियाँ और अशुद्धियाँ भरी हुई हैं। किन्तु उसमें बहुत-सी बातें लेने योग्य हैं, और यह दुःख की बात है कि उसकी कोई प्रति यूरोप में नहीं है।

२. 'न्तिख़ाब-इ दवावीन अथवा ख़ुलासा दीवानहा', अत्यन्त प्रसिद्ध उर्दू कवियों के 'चुने हुए दीवान', दिल्ली के सहबायी (इमाम बख्श) कृत। यद्यपि यह ग्रन्थ वास्तव में संग्रह-ग्रन्थ नहीं है, तो भी क्योंकि उर्दू में लिखित संक्षिप्त जीवनियों के बाद काव्य-उद्धरण दिए गए हैं, इसलिए उसे एक प्रकार का 'तज़्किरा' माना जा सकता है।

३. 'उमदत उलमुन्तख़ब'—चुनी हुई बातों का खंभ, (मुहम्मद ख़ाँ) सरवर कृत, बारह सौ कवियों की संग्रह-जीवनी, उस प्रकार की मौलिक रचनाओं में से जो बहुत उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

४. 'कबि (कवि) बचन सुधा'—कवियों की बातों का अमृत, बाबू हरि चन्द्र द्वारा कलकत्ते से मासिक रूप में प्रकाशित हिन्दी संग्रह।

५. 'कवि चरित्र—कवियों का इतिहास, जनार्धन द्वारा मराठी में लिखित, किन्तु उसमें हिन्दी कवियों से सम्बन्धित सूचनाएँ भी हैं।

६. 'कवि प्रकाश'—कवि का प्रकटीकरण, जो अपने शीर्षक के अनुसार हिन्दी का तज़्किरा होना चाहिए।

७. 'काव्य संग्रह'—हिन्दी अथवा 'ब्रज-भाखा' कविताओं का संग्रह, बम्बई के, हीरा चन्द द्वारा।

८. 'गुलज़ार-इ इब्राहीम'—इब्राहीम (अली) की गुलाब की क्यारी,

रचनाओं से उद्धरणों सहित तीन सौ उर्दू कवियों से सम्बन्धित सूचनाएँ। यह उन 'तज़्किरों' में से है जो मेरे बहुत काम आया है।

९. 'गुलज़ार-इ मज़ामीन'—महत्त्वपूर्ण बातों की गुलाब की क्यारी; तपिश (जान) कृत। यह रचना, जो इस प्रसिद्ध रचयिता की अज्ञात कविताओं के अतिरिक्त कुछ नहीं है, साथ ही एक प्रकार का 'तज़्करा' भी है, क्योंकि रचयिता ने भूमिका में उर्दू कविता और उसका निर्माण करने वाले लेखकों की रूपरेखा दी है।

१०. 'गुल्दस्ता-इ नाज़्नीनान'—नाज़्नियों का फूलों का गुच्छा, अनेक रचनाओं के सामयिक रचयिता, मौलवी करीमुद्दीन द्वारा। उसमें हिन्दुस्तानी के अत्यधिक प्रसिद्ध रचयिताओं की रचनाओं से उनके चुने हुए छन्दों का संग्रह है।

११. 'गुलदस्ता-इ निशात'—ख़ुशी का फूलों का गुच्छा, मुज़्तर कृत। यह 'तज़्किरा' जिसका अधिकतर मैंने प्रस्तुत रचना के लिए प्रयोग किया है, हिन्दुस्तान में फ़ारसी में लिखने वाले कवियों के उद्धरणों से निर्मित एक प्रकार का व्यावहारिक काव्यशास्त्र, और, विषयानुसार विभाजित, हिन्दुस्तानी कविताओं और पद्यों का काफ़ी बड़ा संग्रह है।

१२. 'गुलदस्ता-इ हैदरी'—हैदरी का फूलों का गुच्छा ; इस रचना में, जो अपने रचयिता (मुहम्मद हैदर-बख़्श हैदरी) के नाम से ज्ञात है, क़िस्सों और एक दीवान के अतिरिक्त, हिन्दुस्तानी कवियों से संबंधित एक 'तज़्किरा' है।

१३. 'गुलशन-इ हिंद'—भारत का बाग़, दिल्ली के लुत्फ़ (अली) कृत। हिन्दुस्तानी में लिखित, इस 'तज़्किरा' में साठ कवियों से संबन्धित सूचनाएँ हैं, और मेरी प्रस्तुत रचना के लिए वह बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है।

१४. 'गुलशन बे-ख़ार'—बिना काँटों का बाग, शेफ़्ता (मुहम्मद मुस्तफ़ा) कृत, में जिसकी १८४५ में प्रकाशित होने से पहले ही एक प्रति मुझे मिल गई थी, छः सौ विभिन्न हिन्दुस्तानी कवियों पर, उनकी रचनाओं से

उद्धरणों सहित, फ़ारसी में लिखित सूचनाएँ हैं। इस द्वितीय संस्करण के परिवर्द्धन के लिए मैंने इस तज़्किरे से बहुत-कुछ लिया है।

१५. 'गुलशन-इ बे-ख़िज़ाँ'—बिना ख़िजाँ का बाग़, बातीं (ग़ुलाम कुतुबुद्दीन) कृत 'तज़्किरा' का केवल थोड़ा-सा अनुवाद है।

१६. 'गुलिस्तान-इ मसर्रत'—ख़ुशी का बाग़, काव्य-संग्रह ('Selections from poets'), दिल्ली के मुस्तफ़ा ख़ाँ कृत, जो अपने नाम के आधार पर पुकारे जाने वाले 'मतबा-इ मुस्तफ़ाई' छापेख़ाने के संचलाक हैं। यह उन छापेख़ानों में से है जहाँ से अनेक हिन्दुस्तानी रचनाएँ निकली हैं।

१७. 'गुलिस्तान-इ सुख़न'—पूर्वोल्लिखित के समान शीर्षक वाला दूसरा 'तज़्किरा', दिल्ली के राजघराने के शहज़ादे साबिर (क़ादिर बख़्श) कृत।

१८. 'गुलिस्तान-इ सुख़न'—वाकपटुता का बाग़, मुब्तला और (काज़म) कृत।

१९. 'गुलिस्तान-इ हिन्द'—भारत का बाग़, ऊपर उल्लिखित करीमुद्दीन कृत; सुभाषितों, क़िस्सों आदि का, 'गुलशन'—बाग़—नाम के आठ अध्यायों में विभाजित, संग्रह, जिनमें से आठवाँ चुने हुए छन्दों का संग्रह है, जो वास्तव में कण्ठस्थ करने योग्य है।

२०. 'चमन बेनज़ीर'—अद्वितीय बाग़—अथवा 'मजमा' उल्अश'-आर'—कविताओं का संग्रह। ये दो शीर्षक एक ही रचना के दो संस्करणों के हैं, दोनों १२६५ (१८४८-४९) और १२६६ (१८४९-५०) में बम्बई से प्रकाशित; पहला मुहम्मद हुसेन द्वारा, और दूसरा मुहम्मद इब्राहीम द्वारा, जो, मेरे विचार से वही हैं जिन्होंने, १८२४ में मद्रास से मुद्रित, 'अनवार-इ सुहेली' का दक्खिनी में अनुवाद किया है। इस ग्रन्थ में एक सौ सतासी विभिन्न हिन्दुस्तानी कवियों के उद्धरणों के २४९ पृष्ठ हैं।

२१. 'तबक़ात उश्शु' अरा'—कवियों की श्रेणियाँ, शौक़ (क़ुदरतुल्ला) कृत। यह रचना कभी-कभी केवल 'तज़्किरा-इ हिन्दी'—हिन्दुस्तानी का विवरण—शीर्षक से पुकारी जाती है।

२२. 'तबक़ात उश्शु' अरा', करीमुद्दीन कृत। १८४८ में दिल्ली से प्रका-

शित इस 'तज़्किरा' को, जिसे 'तज़्किरा-इ शु' अरा-इ हिन्दी' – हिन्दुस्तानी कवियों का विवरण—भी कहा जाता है मेरे 'इस्त्वार द ल लितेरत्यूर ऐंदुई ऐ ऐदूस्तानी' के प्रथम संस्करण से अनूदित कहा गया है; किन्तु यह एक बिल्कुल भिन्न रचना है। मेरा जो कुछ लिया गया है वह आजकल बिहार शिक्षा-विभाग के इन्सपेक्टर श्री एफ़० फ़ालन (Fallon) द्वारा लिखित रूप में मुसलमान विद्वान् को दिया गया है।

२३. 'तबक़ात-इ सुख़न'—वाक्पटुता की श्रेणियाँ, मेरठ के इश्क़ (गुलाम मुहीउद्दीन) कृत। इस 'तज़्किरा' में, जिसे मैं प्राप्त नहीं कर सका, सौ रेख़्ता कवियों से संबंधित सूचनाएँ हैं।

२४. 'तज़्किरा-इ अख़्तर' (वाजिद अली), कहा जाता है फ़ारसी और हिन्दुस्तानी कवियों से संबंधित पाँच हज़ार सूचनाओं का बृहत् जीवनी-ग्रन्थ है। रचयिता अवध के अंतिम बादशाह के अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं है, जिसकी अनेक रचनाएँ मेरे पुस्तकालय में हैं, किन्तु यही नहीं है।

२५. 'तज़्किरा-इ आज़ुर्द' (सदरुद्दीन), शेफ़्त द्वारा उल्लिखित।

२६. 'तज़्किरा-इ आशिक़' (महदी अली), दिल्ली के।

२७. 'तज़्किरा-इ इमाम-बख़्श', कश्मीर के, मसहफ़ी द्वारा उल्लिखित, जो इस जीवनी-ग्रन्थ द्वारा आक्रमण किए जाने की शिकायत करते हैं।

२८. 'तज़्किरा-इ इश्क़ी' (रहमतुल्ला)। मैंने स्प्रेंगर (Sprenger) के 'कैटैलौग ऑव दि लाइब्रेरीज़ ऑव दि किंग ऑव अवध' के माध्यम द्वारा उसका अप्रत्यक्ष रूप से प्रयोग किया है। स्प्रेंगर के पास जे० बी० इलियट की प्रति थी जिनके यहाँ हिन्दुस्तानी हस्तलिखित प्रतियों का सुन्दर संग्रह है।

२९. 'तज़्किरा-इ ख़ाकसार' (मुहम्मद यार), शोरिश द्वारा उल्लिखित।

३०. 'तज़्किरा-इ गुरदेज़ी' (फ़तह अली हुसेनी), उन जीवनी-ग्रंथों में से है जिससे मैंने अत्यधिक सहायता ली है।

३१. 'तज़्किरा-इ जहाँदार' (जवान-बख़्त), जिसका अनुकरण ३, २६ और (४१ को छोड़कर) नीचे वालों में किया गया प्रतीत होता है।

३२. 'तज़्किरा-इ ज़ौक' (मुहम्मद इब्राहीम), स्वयं एक प्रसिद्ध कवि ।

३३. 'तज़्किरा-इ तिर्मिज़ी' (मुम्मद अली), 'गुलज़ार-इ इब्राहीम' में उल्लिखित ।

३४. 'तज़्किरा-इ नासिर' (स' आदत ख़ाँ), लखनऊ के ।

३५. 'तज़्किरा-इ मज़मून' (या 'मज़लूप') (इमामुद्दीन) ।

३६. 'तज़्किरा-इ मसहफ़ी' (गुलाम-इ हमदानी) । यह, जिसका संबंध पाँच सौ हिन्दुस्तानी कवियों से है, उनमें से है जिसका मैंने प्रस्तुत रचना के लिए अत्यधिक प्रयोग किया है ।

३७. 'तज़्किरा-इ महमूद' (हाफ़िज़), समकालीन लेखक ।

३८. 'तज़्किरा-इ शोरिश (गुलाम हुसेन) । इस 'तज़्किरा' के बारे में वही बात है जो इश्क़ी के 'तज़्किरा' के बारे में ।

३९. 'तज़्किरा-इ शौक' (हसन) ।

४०. 'तज़्किरा-इ सौदा' (रफ़ी' उद्दीन) । मुझे खेद है कि अठारहवीं शताब्दी के अत्यन्त प्रसिद्ध उर्दू कवियों से संबंधित यह रचना नहीं देख सका ।

४१. 'तज़्किरा-इ हसन', 'सिहरुल बयान' का प्रसिद्ध रचयिता. प्रायः सरवर तथा अन्य रचयिताओं द्वारा उल्लिखित, किन्तु जिसे मैं नहीं जानता ।

४२. 'तज़्किरात उन्निसा', (प्रसिद्ध) महिलाओं का विवरण, करीमुद्दीन कृत ।

४३. 'तज़्किरात उल्कामिलीन'—पूर्णों का विवरण, बाबू चन्द कृत ।

४४. तीन सौ उर्दू कवियों के साठ हज़ार छन्दों का मकबूल-इ नबी का संग्रह । दुर्भाग्यवश इस संग्रह का उल्लेख मैंने केवल स्मरण रखने के लिए किया है, क्योंकि हस्तलिखित प्रति अग्नि की ज्वालाओं का शिकार बन चुकी है ।

४५. 'दीवान-इ जहाँ'—(भारतीय) दुनिया का दीवान—अथवा रचयिता के नाम से, 'जहाँ का', यद्यपि हिन्दू ने उसे उर्दू में लिखा है। यह 'तज़्किरा' उनमें से एक है जिनका मैंने इस इतिहास के लिए प्रयोग किया है।

'दीवान-इ-जहाँ' जीवनी की अपेक्षा संग्रह अधिक है, पाँच सौ के लगभग जो लेखक उसमें दिए गए हैं उनके संबंध में सूचनाएँ बहुत संक्षिप्त हैं और इसके विपरीत उद्धरण बहुत विस्तृत हैं।

४६. 'दूल्हा राम' ने अपनी साधुता के लिए प्रसिद्ध व्यक्तियों की प्रशंसा में अनेक छन्द लिखे हैं, जिनमें से बहुत-से हिन्दी काव्य के रचयिता हैं।

४७. 'निकात उश्शु' अरा', मीर (मुहम्मद तक़ी) कृत। उर्दू कवियों के 'तज़्किरों' में सबसे अधिक प्राचीन, यह रचना अठारहवीं शताब्दी उत्तरार्द्ध के सबसे अधिक प्रसिद्ध लेखकों में से एक के द्वारा लिखी गई है, और जिसका, उसकी रचनाओं से उद्धरणों सहित, ब्योरेवार विवरण मैं अपनी रचना के जीवनी और ग्रंथ-सूची भाग में दूँगा।

४८. 'नौ रतन'—नौ बहुमूल्य पत्थर। यह शीर्षक, जिसका इसी नाम के कंगन, पृथ्वी के नौ खण्ड, और विक्रमाजीत की राज-सभा के इस नाम के नौ प्रधान कवियों से संबंध है, मुहम्मद बख़्श द्वारा लिखित हिन्दुस्तानी संग्रह का है।

४९. 'वार्ता' या 'वार्ता', वल्लभ और उनके प्रथम शिष्यों के संबंध में, जो निस्संदेह, वल्लभ की तरह, हिन्दी की धार्मिक कविताओं के रचयिता थे, वार्ताओं का संग्रह।

५०. 'भक्त चरित्र'—भक्तों की गाथा—अर्थात् हिन्दू संतों की, जो सामान्यतः धार्मिक भजनों और गीतों के रचयिता हैं, जैसे १४ वीं शताब्दी के हिन्दी कवि और कई रचनाओं के रचयिता, उद्धव चिद्घन (Ughava Chiddhan)।

५१. 'भक्त माल'—भक्तों की माला—अथवा 'संत चरित्र' (वैष्णव संप्रदाय के हिन्दू संतों का इतिहास), पहली रचना की भाँति।

'भक्त माल' के कई संकलन हैं; किन्तु इन विभिन्न संकलनों में मूल 'छप्पय' नामक छंद हैं, जो एक प्रकार की छोटी-सी कविता है जिसका उल्लेख मैंने ऊपर हिन्दुई और हिन्दुस्तानी रचनाओं के प्रधान प्रकारों की पहली सूची में किया है। यहाँ ये छन्द वैष्णव संतों के संबंध में हिन्दुई या पुरानी हिन्दी में लोकप्रिय धार्मिक भजनों या गीतों के रूप में हैं, जो अत्यन्त प्रसिद्ध हैं और जो नाभा जी की देन हैं। उन्हें नारायण-दास ने सुधारा और पहले कृष्ण-दास ने, फिर बहुत बाद को प्रिया-दास ने विकसित किया।

इस इतिहास के प्रथम संस्करण के प्रकाशन के समय, मैं केवल कृष्ण-दास का संकलन देख सका था। अब मैंने प्रिया-दास वाला भी देख लिया है, जिसकी एक हस्तलिखित प्रति, मेरे विचार से यूरोप में अद्भुत, मेरे पास है।

५२. 'मख़ज़न-इ निकात'—सुभाषितों का ख़ज़ाना, अथवा 'निकात उश्शु' अरा'—सुभाषित, अर्थात् कवियों के सुन्दर वचन, काइम (क़ियामुद्दीन) कृत। 'तबक़ात'—श्रेणियाँ—नामक तीन भागों में विभाजित, और फलतः, इसी प्रकार की एक अन्य रचना की तरह जिसका उल्लेख मैं आगे करूँगा, 'तबक़ात-इ शु' अरा'—कवियों की श्रेणियाँ—शीर्षक भी ग्रहण करने वाले, इस 'तज़्किरा' से मुझे नई बातें ज्ञात हुई हैं।

५३. 'मजमुआ उल्इन्तिख़ाब'—संक्षिप्त संग्रह, संग्रहों में से संग्रह, कमाल (फ़क़ीर शाह मुहम्मद) कृत। प्रस्तुत द्वितीय संस्करण के लिए अट्ठा-वन नए लेख इस रचना से लिए गए हैं जिनमें से अनेक रोचकता से पूर्ण हैं। दुर्भाग्यवश जिस हस्तलिखित प्रति का मैं उपयोग कर सका हूँ वह सुन्दर नस्तालीक में होते हुए भी बड़ी बुरी तरह से लिखी गई है; संग्रह भाग के लिए वह विशेषतः अनुपयोगी सिद्ध हुई।

५४. 'मजमुआ-इ नग्ज़'—सुन्दर संग्रह, दिल्ली के, कासिम (सैयद अबुल कासिम) कृत। प्रस्तुत नवीन संस्करण के परिवर्द्धन के लिए इस तज़्किरा

से सहायता ली गई है। अन्य मूल तज़्किरों की अपेक्षा इस जीवनी में एक विशेषता यह है कि कासिम ने रचयिताओं के नाम अव्यवस्थित ढंग से नहीं रखे, वरन् उन्होंने समान नाम वालों को एक साथ रखा है, उनकी संख्या बताई है और उनका व्यवस्थित ढंग से उल्लेख किया है। सरवर और शेफ़्ता की अपेक्षा कासिम के लेख संख्या में कम, किन्तु अधिक विकसित, हैं, और उनमें ऐसी बातें और उद्धरण हैं जो अन्य में नहीं पाए जाते।

५५. 'मजमुआ-इ वासोख़्त'—वासोख़्तों का संग्रह, विभिन्न कवियों की इस प्रकार की इक्कीस कविताओं का संग्रह, जो ६८ फ़ोलिओ पृष्ठों की, १२६१ (१८४६) में लखनऊ से मुद्रित, छोटी-सी जिल्द है, और जिसके मार्जिन पर पाठ दिया हुआ है।

५६. 'मजालिस रंगीन'—सुन्दर मजलिसें अथवा रंगीन (रचयिता का नाम) की मजलिस; सामयिक कविता और उसके रचयिताओं की आलोचनात्मक समीक्षा।

५७. 'मसर्रत अफ़ज़ा'—ख़ुशी की वृद्धि, इलाहाबाद के अबुलहसन कृत। स्वर्गीय नाथ कृत इस तज़्किरे की एक व्याख्या मेरे पास थी। ब्लैंड (Bland) ने कृपा कर सर डब्ल्यू० आउज़्ले (Ouseley) की हस्तलिखित प्रति के आधार पर मेरे लिए एक प्रति तैयार करा दी थी और जो आजकल ऑक्सफ़र्ड में है।

५८. 'मुअर उश्शु' अरा'—कवियों का उत्साह। यह प्राचीन तथा आधुनिक रचयिताओं की काव्य-रचनाओं का संग्रह है, जो कमर (मुंशी कमर उद्दीन गुलाब ख़ाँ) द्वारा, आगरे से महीने में दो बार प्रकाशित होता है।

५९. 'मुख़्तसर अहवाल मुसन्निफ़ान हिन्दी के तज़्किरों का'—हिन्दी जीवनियों से संबंधित संक्षिप्त सूचनाएँ : 'रिसाला दर बाब-इ तज़्किरों का' शीर्षक भी है। 'जीवनियों संबंधी पत्र', दिल्ली के ज़ुकाउल्लाह कृत। यह छोटी-सी रचना मेरी 'ओत्यूर ऐंदूस्तानी ऐ ल्यूर ऊवरज़' (हिन्दुस्तानी के ग्रंथकार और उनकी रचनाएँ) का अनुवाद मात्र है।

६०. 'राग कल्प द्रुम'— रागों अथवा संगीत शैलियो का भाग्यशाली वृक्ष, कृष्णानन्द व्यास-देव, उनके द्वारा प्रकाशित संग्रह के कारण, उपनाम 'राग सागर' ('रागों का समुद्र'), कृत लगभग १८०० चौपेजी पृष्ठों की जिल्द में हिन्दी के लोकप्रिय गीतों का बृहत् संग्रह ।

६१. 'गौज़त उश्शु' अरा'—कवियों का बाग, वलीम (मुहम्मद हुसेन) कृत, हिन्दुस्तानी कवियों पर कविता, 'तज़्किरा' के रूप में ली जा सकती है ।

६२. 'सभा विलास'—सभा का आनन्द, हिन्दी कविताओं का संग्रह, पंडित धर्म नारायण कृत, जिनका तख़ल्लुस ज़मीर है ।

६३. 'सरापा सुख़न'—पूर्ण वाक्पटुता, लखनऊ के, मुहसिन कृत, विषय के अनुसार क्रम में रखे गए सात सौ हिन्दुस्तानी कवियों के चुने हुए अशों का, उनके रचयिताओं से संबंधित संक्षिप्त सूचनाओं सहित, संग्रह । प्रस्तुत द्वितीय संस्करण के लिए यह रचना बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है ।

६४. 'सर्व-इ आज़ाद'—आज़ाद देवदार (साइप्रेस), अर्थात् आज़ाद का देवदार, इस 'तज़्किरा' का उल्लेख अबुलहसन ने अपने 'मसर्रत अफ़्ज़ा' में किया है, जिसे उर्दू कवियों से संबंधित अनुमान किया जाता है, हालाँ कि एन० ब्लैंड (Bland) ने उसका फ़ारसी कवियों के तज़्किरों' में उल्लेख किया है । दोनों अनुमान मान्य हैं : ऐसे भारतीय कवि हैं जिन्होंने प्रायः फ़ारसी में लिखा है, और ऐसे भी हैं जिन्होंने हिन्दुस्तानी में लिखा है; आज़ाद स्वयं हिन्दुस्तानी के कवि थे और अत्यन्त प्रसिद्ध कवि थे । इससे मेरी बात का समर्थन होता है, क्योंकि आज़ाद 'ख़ज़ान इ आमीर'—भरापूरा ख़जाना—शीर्षक विशेषतः फ़ारसी कवियों के एक दूसरे 'तज़्किरा' के रचयिता हैं ।

६५. 'सुजान चरित्र'—सज्जनों का विवरण, कवि सूदन कृत, दो सौ से अधिक हिन्दुई कवियों की एक प्रकार की जीवनी ।

६६. 'सुहुफ़-इ इब्राहीम'—इब्राहीम के पृष्ठ, यह शीर्षक रचयिता, ख़लील,

के असली नाम के आधार पर रखा गया है, जिनके संबंध में इस इतिहास में लिखे गए लेख में सूचनाएँ मिलेंगीं।

जिन्हें वास्तव में सूचीपत्र कहा जाता है उनसे मुझे ग्रंथ-सूची भाग के लिए बहुत बड़ी सहायता प्राप्त हुई है। इस रूप में, लखनऊ के आल-इ अहमद नामक सज्जन के फ़ारसी और हिन्दुस्तानी हस्तलिखित ग्रंथों के बहुमूल्य संग्रह के हस्तलिखित और १२११ (१७९६-९७) में प्रतिलिपि किए गए, सूचीपत्र के एक भाग से विशेषतः सहायता ली है[1]; बंगाल की एशियाटिक सोसायटी के फ़ारसी अक्षरों वाले सूचीपत्र और देवनागरी अक्षरों वाले सूचीपत्र से; और संग्रह-भाग के लिए मैंने अँगरेज़ी विद्वानों की देन, इस दृष्टि से दो महत्वपूर्ण संग्रहों से लाभ उठाया है। पहला है, स्वर्गीय कर्नल ब्राउटन कृत 'सेलेक्शन्स फ्रॉम दि पॉप्यूलर पोयट्री ऑव दि हिन्दूज़', जिसमें उनसठ लोकप्रिय भारतीय गीतों के उदाहरण हैं, और इसलिए हमें अनेक प्राचीन कवियों का परिचय प्राप्त होता है। दूसरा जिसमें कई रचनाओं के रचयिता, हिन्दुस्तानी के प्रसिद्ध लेखक, तारिणी-चरण मित्र, का सहयोग था, मेरे लिए उपयोगी सिद्ध होने वाले संग्रहों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। उसमें, अन्य बातों के अतिरिक्त, 'भक्तमाल' से लंबे उद्धरण, कबीर कृत 'रेख़ते', तुलसी कृत 'रामायण' का एक काण्ड, 'हितोपदेश' के उर्दू रूपान्तर से उद्धरण, जवाँ कृत 'सकुन्तला' की कथा, अंत में तीन सौ अड़तालीस छोटी-छोटी कविताएँ हैं जिनमें से अनेक लोकप्रिय गान बन गई हैं।

दुर्भाग्यवश ये तज़्किरे बहुत कम सन्तोषजनक रूप में लिखे गए हैं। उनमें

---

[1]–इस सूचीपत्र की एक प्रति, जो उनकी अपनी थी, प्रोफ़ेसर डी० फ़ोर्ब्स ने कृपापूर्वक मुझे दी थी और जो बाद को रॉयल एशियाटिक सोसायटी को दे दी गई। एक दूसरी प्रति सर गोर आउज़्ले की हस्तलिखित पोथियों में था; जैसा कि मुझे स्वर्गीय नैथैनियल ब्लैंड से ज्ञात हुआ है, कि बरहर (Barhara) के एक निवासी ने १२११ (१७९६-९७) में, एक दूसरी प्रति के रूप में, उसकी प्रतिलिपि की है।

प्रायः उल्लिखित कवियों के नाम और उनकी प्रतिभा के उदाहरण-स्वरूप उनकी रचनाओं से कुछ पद्य उद्धत किए हुए मिलते हैं। अत्यधिक विस्तृत सूचनाओं में, उनकी जन्म-तिथि प्रायः कभी नहीं मिलती, मृत्यु-तिथि, और व्यक्तिगत जीवन से संबंधित विस्तार मुश्किल से मिलते हैं। उनकी रचनाओं के संबंध में भी लगभग कुछ नहीं कहा गया, इसी प्रकार उनके शीर्षकों के बारे में; हमारी समझ में यह कठिनाई से आता है कि इन कवियों ने अपने अस्थायी पद्यों का संग्रह 'दीवान' में किया है, और इस बात का संकेत केवल इसलिए प्राप्त होता है क्योंकि जिन कवियों ने एक या कई ऐसे संग्रह प्रकाशित किए हैं वे 'दीवान के रचयिता' कहे जाते हैं, जो शीर्षक उन्हें अन्य लेखकों से अलग करता है, और जो 'महाकवि' का समानार्थ-वाची प्रतीत होता है। इन तज़्किरों का ख़ास उपयोग यह है कि जिन कवियों की रचनाएँ यूरोप में अज्ञात हैं उनके उनमें अनेक अवतरण मिल जाते हैं। मूल जीवनी-लेखकों में से मीर एक ऐसे हैं जो उद्धृत पद्यों के संबंध में कभी-कभी अपना निर्णय देते हैं; वे दूसरों से ली गई बातें और कुछ हद तक अनुपयुक्त और त्रुटिपूर्ण प्रतीत होने वाली अभिव्यंजनाएँ चुनते हैं, और जिस कवि के अवतरण वे उद्धृत करते हैं, उनमें किस तरह होना चाहिए था प्रायः यह बताते हैं। इसके अतिरिक्त, यदि विश्वास किया जाय तो, ख़ास तौर से उर्दू कवियों से संबंधित जीवनियों में उनका जीवनी-ग्रंथ सबसे अधिक प्राचीन है।[1]

मौलिक जीवनियाँ जो मेरे ग्रंथ का मूलाधार हैं सब 'तख़ल्लसों'[2] या 'काव्योपनामों' के अकारादिक्रम से रखी गई हैं। मैंने यही पद्धति ग्रहण की है, यद्यपि शुरू में मेरा विचार काल-क्रम ग्रहण करने का था: और मैं यह बात छिपाना नहीं चाहता कि, यह क्रम अधिक अच्छा रहता,

---

[1] 'निकात उश्शु' अरा' की भूमिका

[2] इस शब्द का जो अरबी है, शाब्दिक अर्थ 'प्रयोग' है क्योंकि कवि उसका अपनी कल्पना के अनुसार अपने लिए प्रयोग करते हैं।

या कम-से-कम जो शीर्षक मैंने अपने ग्रन्थ को दिया है उसके अधिक उपयुक्त होता ; किन्तु मेरे पास अपूर्ण सूचनाएँ होने के कारण उसे ग्रहण करना कठिन ही था। वास्तव में, जब मैं उसके संबंध में कहना चाहता हूँ, मौलिक जीवनियाँ हमें यह नहीं बतातीं कि उल्लिखित कवियों ने किस काल में लिखा ; और यद्यपि उनमें प्रायः काफ़ी अवतरण दिए गए हैं, तो भी उनसे शैली के संबंध में बहुत अधिक विचार नहीं किया जा सकता, क्योंकि प्रतिलिपि करते समय उनमें ऐसे पाठ संबंधी परिवर्तन हो गए हैं जो उन्हें आधुनिक रूप प्रदान कर देते हैं, चाहे कभी-कभी वे प्राचीन ही हों। जहाँ तक हिंदुई लेखकों से संबंध है, उनकी भी अधिकांश रचनाओं की निर्माण-तिथियाँ निश्चित नहीं हैं। यदि मैंने काल-क्रम वाली पद्धति ग्रहण की होती, तो अनेक विभाग स्थापित करने पड़ते : पहले में मैं उन लेखकों को रखता जिनका काल अच्छी तरह ज्ञात है ; दूसरे में उनको जिनका काल सन्देहात्मक है ; अंत में, तीसरे में, उन्हें जिनका काल अज्ञात है। यही विभाजन उन रचनाओं के लिए करना पड़ता जिन्हें इस ग्रंथ के प्रधान अंश में स्थान नहीं मिल सका। अपना कार्य सरल बनाने और पाठक की सहूलियत दोनों ही दृष्टियों से मुझे यह पद्धति, यद्यपि वह अधिक बुद्धि-संगत थी, स्वेच्छा से छोड़ने के लिए बाध्य होना पड़ा।

तो भी इस विभाजन की रूपरेखा इस प्रकार है :

सबसे पहले हिन्दू कवि हैं[1] ; और ग्यारहवीं शताब्दी से[2] मुसलमान कवि मसूद-इ साद (Mac' ûd-i Sa' ad), जिनके संबंध में नैथैनियल ब्लैंड(Nath. Bland) ने १८५३ में 'ज़ूर्ना एसियातीक' में अत्यन्त रोचक

[1] यह निश्चित करना कठिन है कि हिन्दी के सबसे अधिक प्राचीन कवि किस समय हुए। तो भी मैंने 'अमर शतक' द्वारा ज्ञात संस्कृत कवि, शंकर आचार्य का उल्लेख किया है जो नवीं शताब्दी में रहते थे और जिन्होंने कुछ हिन्दी कविताएँ लिखी प्रतीत होती हैं।

[2] १०८० के लगभग

बातें लिखी हैं ; तत्पश्चात्, बारहवीं शताब्दी में चंद, जो राजपूतों के होमर कहे जाते हैं, और पीपा, जिनकी कविताएँ सिक्खों के 'आदि ग्रन्थ' में हैं ; तेरहवीं शताब्दी में[1], सादी, जिन्होंने कुछ कविताएँ उर्दू बोली में लिखना पसन्द किया ; बैजू बावर (Bāwar), प्रसिद्ध कवि और गवैया; और, चौदहवीं शताब्दी में, दिल्ली के, खुसरो, और हैदराबाद के, नूरी।

निस्सन्देह, और ऐसे हिन्दुस्तानी लेखक हैं जो इन्हीं शताब्दियों या उनसे पहले रहते थे। मध्य भारत के पुस्तकालयों में निश्चित रूप से ऐसे प्राचीन हिन्दी ग्रन्थ हैं जो अज्ञात हैं; और, हर हालत में, ऐसे बहुत-से लोकप्रिय गीत हैं जो हिन्दी भाषा के विकास के प्रारंभिक युग तक जाते हैं।

पन्द्रहवीं शताब्दी में आधुनिक संप्रदायों के प्राचीनतम संस्थापक दिखाई पड़ते हैं जिन्होंने भक्ति-पद्धति सम्बन्धी भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग किया है, और जिन्होंने इस बोली में धार्मिक भजनों और नैतिक कविताओं का सृजन किया है। उनमें विशेष हैं कबीर, जिन्होंने साहस-पूर्वक संस्कृत के प्रयोग का विरोध किया ; उनके शिष्य स्रुतगोपाल दास, 'सुख निधान'[2] के संकलनकर्ता और धरम-दास, 'अमर माल'[3] के रच-यिता ; नानक और भागो-दास, जो अत्यधिक प्रसिद्ध हैं और जिनके बारे में अन्यत्र मैंने जो कुछ कहा है उसकी पुनरावृत्ति करना नहीं चाहता[4] ; पश्चिमी हिन्दुस्तानी में लिखित एक 'भगवत' (Bhagavat) के संकलनकर्ता, लालच, आदि।

---

[1] १२५० के लगभग

[2] इस रचना के संबंध में, इस इतिहास के जीवनी और ग्रन्थ-सूची भाग में, कबीर पर लेख देखिए।

[3] मेरी 'रुदीमाँ द ल लाँग ऐंदुई' (हिन्दुई भाषा के प्राथमिक सिद्धांत) की भूमिका देखिए, पृ० ५।

[4] 'रुदीमाँ द ल लाँग ऐंदुई' की भूमिका तथा इस रचना में।

सोलहवीं शताब्दी में, हिन्दुओं में, सुख-देव हैं, जिनके सम्बन्ध में जीवनीकार प्रिया-दास ने एक विशेष लेख दिया है। नाभाजी, जीवनी-सम्बन्धी कविताओं के रचयिता जो 'भक्त माल' का मूल पाठ हैं; वल्लभ और दादू, प्रसिद्ध सांप्रदायिक गुरु और कवि; बिहारी 'सत-सई'[1] के प्रसिद्ध रचयिता; गंगा-दास, विद्वान् काव्य शास्त्री, तथा अन्य अनेक।

उत्तरी भारत के मुसलमान लेखकों में, अन्य के अतिरिक्त, हैं, अकबर के मंत्री, अबुलफ़ज़ल और रोशनियों या जलालियों (प्रकाशितों) के संप्रदाय के गुरु, बायज़ीद अंसारी।

दक्खिन के लेखकों में हैं :

अफ़ज़ल (मुहम्मद), जिनके संबंध में जीवनीकार कमाल का कथन है : 'उनकी शैली परिमार्जित नहीं है, क्योंकि जिस युग में उन्होंने लिखा, उस समय रेख़्ता कविता का अधिक प्रचार नहीं था, और उन्हें दक्खिनी में लिखने के लिए बाध्य होना पड़ा था'; गोलकुंडा के बादशाह, मुहम्मद कुली कुतुबशाह, जिन्होंने १५८२ से १६११ तक राज्य किया, और जिनके उत्तराधिकारी, अब्दुल्ला कुतुबशाह हुए, जिन्होंने हिन्दुस्तानी साहित्य को विशेष रूप से प्रोत्साहन प्रदान किया।

सत्रहवीं शताब्दी के लिए—युग जिसमें, विशेषतः दक्खिन में, वास्तविक उर्दू कविता का, निश्चित सिद्धान्तों के अंतर्गत सृजन प्रारंभ हुआ—हिन्दी कवियों में, मैं सूर-दास, तुलसी-दास, और केशव-दास, आधुनिक भारतवासियों के प्रिय तीन कवियों, का उल्लेख करना चाहता हूँ, जिनके संबंध में कहा गया है : 'सूर-दास सूर्य हैं; तुलसी, शशि; केशव-दास, उडुगन; अन्य कवि खद्योत हैं जो इधर-उधर चमकते फिरते हैं।'[2]

---

[1] इन विभिन्न व्यक्तियों के संबंध में, वही रचनाएँ देखिए।

[2] इस महत्त्वपूर्ण उद्धरण का पाठ देखिए, मेरी 'रुदीमाँ द ल लाँग ऐंदुई' का पृ० ८।

उर्दू कवियों में हैं हातिम, जिनका उल्लेख मैं कर ही चुका हूँ ; आज़ाद (फ़क़ीरुल्लाह), जो, यद्यपि हैदराबाद के निवासी थे, दिल्ली में रहते थे और जहाँ उन्होंने अपनी कविता के कारण ख्याति प्राप्त की ; जीवाँ (मुहम्मद), अनेक धार्मिक ग्रन्थों के रचयिता, आदि।

दक्खिनी कवियों में हैं : वली, जिनका दूसरा नाम 'बाबा-इ रेख़्ता'— रेख़्ता कविता के जनक—है ; शाह गुलशन, उनके उस्ताद ; अहमद, गुज़रात के ; तानाशाह ; शाही, बगनगर के, और मिर्ज़ा अबुलकासिम, इस शहज़ादे के कर्मचारी ; आबरी या इब्न निशाती, 'फूलबन' के रचयिता ; गोवास या गोवासी, तूती कहानी से संबंधित एक कविता के रचयिता ; मुहक्किक (Muhacquic), दक्खिन के अत्यधिक प्राचीन कवियों में से एक जिन्होंने ऐसी रेख़्ता में लिखा जो हिन्दुस्तान की रेख़्ता से बहुत मिलती है ; रसमी, 'ख़ाविर नामा' के रचयिता, अजीज़ (मुहम्मद), तथा अन्य अनेक।

अठारहवीं शताब्दी के उन हिन्दुस्तानी कवियों का उल्लेख करने से बहुत विस्तार हो जायगा जिन्होंने अपने सामयिकों में नाम कमाया। मेरे लिए हिन्दी के लेखकों में इनका उल्लेख करना यथेष्ट है: गंगा पति, हिन्दुओं के विभिन्न दार्शनिक सिद्धांतों से संबंधित एक प्रबंध के रचयिता ; बीरभान, 'साध' या 'पवित्र' नामक प्रसिद्ध संप्रदाय के संस्थापक और उच्चकोटि की धार्मिक कविताओं के रचयिता ; राम-चरण, अपना नाम लगे हुए एक संप्रदाय के संस्थापक और पवित्र भजनों के रचयिता ; शिव नारायण, एक और संप्रदाय-संस्थापक, हिन्दी छन्दों में ग्यारह ग्रन्थों के रचयिता, जो 'श्री गणेशायनमा ।'—के रूप में गणेश की स्तुति से प्रारंभ होने के स्थान पर इन शब्दों से प्रारंभ होते हैं : 'सन्त सरन'—सन्तों की शरण।

उर्दू कवियों में मैं अपने को सौदा,[१] मीर और हसन—पिछली

[१] विशेष रूप से सौदा को हिन्दुस्तानी काव्य का बादशाह, 'मलिक उश्शु' अरा-इ रेख़्ता', भी कहा जाता है।

शताब्दी के अत्यधिक प्रसिद्ध तीन कवि, जुरत, आरज़ू, दर्द, यक़ीन, फ़िगाँ, दिल्ली के अमजद, बनारस के अमीनुद्दीन, गाज़ीपुर के आशिक के उल्लेख तक सीमित रखूँगा; और दक्खिनी लेखकों में, हैदर शाह, उपनाम 'मर्सिया-गो'—मर्सियों का गाने वाला—का, क्योंकि उन्होंने अपने रचे हुए मर्सिये गाए। अन्य के अतिरिक्त, कविताओं का वह क्रम उनकी देन है जो वली कृत दीवान की कविताओं का विकास प्रस्तुत करता है। इन कविताओं के, जिन्हें 'मुख़म्मस' कहते हैं, हर एक बैत, या दोहरे चरण, के साथ तीन और चरण जुड़े हुए हैं, और जो इस प्रकार एक भिन्न छन्द बन जाते हैं। अबजदी एक दूसरे उल्लेखनीय दक्खिनी लेखक हैं; वे एक ऐसे छोटे-से पद्य-बद्ध सर्व-संग्रह[1] (encyclopédie) के रचयिता हैं जिसमें कई अध्याय, हरएक भिन्न छन्द में, हैं, जिनका अध्याय के शीर्षक द्वारा परिचय देने का ध्यान लेखक ने रखा है। औरंगाबाद के, सिराज की मृत्यु १७५४ के लगभग हुई; दक्खिन के अत्यन्त प्रसिद्ध कवियों में से, सूरत के, उज़्लत की मृत्यु ११६५ (१७५१ – ५२) में हुई, उन्हें भी यहाँ स्थान मिलना चाहिए।

अंत में उन्नीसवीं शताब्दी के और सामयिक अत्यन्त प्रसिद्ध भारतीय लेखकों में से हिन्दी के हैं: बख्तावर, जिन्होंने जैन सिद्धांतों की पद्य में व्याख्या की है, जीवनी-लेखक दूल्हा राम और रामसनेहियों के गुरु की धार्मिक परंपरा में उनके उत्तराधिकारी छत्र-दास।

उर्दू में, सभायी और करीम ने हमें १८५२ में मृत्यु को प्राप्त प्रचुर और सुन्दर कवि दिल्ली के मूमिन, जिनके दीवान को उन्होंने 'अद्वितीय' कहा है; १८४२ या ४३ में मृत्यु को प्राप्त, नसीर, और, १८४७ में मृत्यु को प्राप्त, आतश, जिनमें से हर एक का दीवान लोकप्रिय हो गया है; 'शाहनामा' के एक पद्य-बद्ध संक्षिप्त अनुवाद के रचयिता, मूल चद,

---

[1] 'तुहफ़ा लिस्सबियान'—बच्चों का उपहार

ममनून, अत्यन्त प्रसिद्ध सामयिक लेखकों में से एक, तथा अन्य अनेक के नाम दिए हैं जिनका उल्लेख मैंने अपने प्रारंभिक भाषणों में किया है।

दक्खिनी में, मैं अपने को हैदराबाद के कमाल, और मद्रास के, मुस्तान के उल्लेख तक सीमित रखना चाहता हूँ।

मूल जीवनी-लेखकों ने जिस ढंग से उल्लिखित कवियों के बारे में कहा है यदि हम वास्तव में उसकी ओर ध्यान दें तो वे हमें बड़ी सरलतापूर्वक तीन प्रकार के मिलेंगे : वे कवि जिनका केवल उल्लेख कर दिया गया है, वे जिनका उस रूप में उल्लेख हुआ है जिसे मैं आदरपूर्वक कहूँगा, और वे जिनका अत्यन्त आदरपूर्वक उल्लेख हुआ है, इस भीड़भाड़ में मुझे सामान्य अभिव्यंजनाएँ प्रदान करते हैं। पहले भाग में मैं उन लेखकों को समझता हूँ जिनके सबंध में कोई विस्तार नहीं दिया गया, कभी-कभी उनके नाम और उनके जन्म-स्थान, और उनकी कविता के एक उद्धरण का उल्लेख हुआ है। ये वे लोग हैं जो ग़ज़लों की केवल एक ऐसी संख्या के रचयिता हैं जो दीवान में संग्रहीत करने के लिए यथेष्ट नहीं हैं, अथवा जिनकी ऐसी अन्य कविताएं हैं जो किसी विशेष शीर्षक से ज्ञात नहीं हैं। दूसरे में, मैं उन लेखकों को रखता हूँ जो, विषय के अनुसार, 'दीवान' या 'कुल्लियात' नामक कविताओं के किसी संग्रह के रचयिता हैं। अंत में तीसरे भाग में, यदि हिन्दी में ग्रन्थ हैं तो लगभग सदैव सस्कृत में, यदि वे उर्दू या दक्खिनी में हैं तो फ़ारसी और साथ ही अरबी में, विशेष शीर्षकों वाले पद्य, या गद्य-ग्रंथों के रचयिता आते हैं।

मूल जीवनी-लेखक प्रायः, और कभी-कभी मैंने उनके उदाहरण दिए हैं, उर्दू लेखकों द्वारा रचित फ़ारसी रचनाओं का भी उल्लेख कर देते हैं, और यह जान कर किसी को कोई आश्चर्य न होना चाहिए कि बहुत-से हिन्दुस्तानी कवियों ने फ़ारसी कविताओं की, और साथ ही इस पिछली भाषा में ग्रंथों की रचना की, इस सिलसिले में याद रखिए कि रंगीन

(Racine), ब्वालो (Boileau), तथा चौदहवें लुई के समय के अत्यधिक प्रसिद्ध कवियों में से अधिकांश अपनी शिक्षा अच्छी नहीं समझते थे यदि वे अपनी कविताओं में लेटिन के कुछ अंश न रख पाते थे। रोम में लेटिन कविताओं के साथ-साथ ग्रीक कविताएँ रची जाती थीं, जिसके कारण जो दोनों क्लैसिकल भाषाओं में लिखते थे वे 'utriusque linguae scriptores' कहे जाते थे। जिस भारतीय प्रथा का मैंने उल्लेख किया है उसमें एक बात और पैदा हो गई है: वह यह है कि वे लेखक जो रचना की इस प्रवीणता के लिए उत्साहित हुए हैं, हिन्दुस्तानी या फ़ारसी में लिखने के अनुसार, दो विभिन्न काव्योपनाम या 'तख़ल्लुस' धारण करते हैं।

अब हमें इन लेखकों के वर्ग निर्धारित कर लेने चाहिए। सर्वप्रथम स्थापित होने वाली विभिन्नता, जो अत्यन्त स्वाभाविक प्रतीत होती है, उन्हें हिन्दुओं और मुसलमानों में अलग-अलग करना है, तो भी ऐसा करते समय यह देखने को मिलेगा कि किसी भी मुसलमान ने हिन्दुई या हिन्दी बोली में नहीं लिखा, जब कि बहुत-से हिन्दुओं ने चाहे उर्दू, चाहे दक्खिनी में लिखा है; साथ ही उन्होंने बहुत पहले से फ़ारसी में लिखा था, जैसा कि सैयद अहमद ने भी उस उद्धरण में कहा है जो मैंने उनके 'आसार उस्सानादीद' से दिया है।[1] किन्तु जब कि मेरे द्वारा उल्लिखित तीन हज़ार भारतीय लेखकों में से दो हज़ार दो सौ से अधिक मुसलमान लेखक हैं; तो हिन्दू लेखक आठ सौ हैं, और इन पिछलों में से भी केवल दो सौ पचास के लगभग हैं जिन्होंने हिन्दी में लिखा है। वास्तव में, इस वर्ग के सभी लेखकों को जान लेना कठिन है, क्योंकि हिन्दी कवियों के तज़्किरों का अभाव है, और इस प्रकार एक बहुत बड़ी संख्या हमें अज्ञात है, जब कि उर्दू लेखकों के बारे में यह बात नहीं है, जिनकी मूल जीवनियों में कम-से-कम नाम देने का ध्यान तो रखा गया है। विशेषतः पंजाब, कश्मीर, राजपूताना और उत्तर-पश्चिम प्रान्तों (अँगरेज़ी सरकार की

[1] यह उद्धरण 'लै ओत्यूर ऐंदूस्तानी' (हिन्दुस्तानी ग्रन्थकार) में देखिए, ४ तथा बाद के पृष्ठ।

राजधानी, कलकत्ते की दृष्टि से ऐसा नाम है) के प्राचीन प्रदेशों, दिल्ली, आगरा, ब्रज और बनारस के हिन्दू हैं, जिन्होंने हिन्दी में लिखा है।

जहाँ तक दक्खिनी, निश्चित रूप से यही कहे जाने वाले, कवियों से संबंध है, वे दो सौ नहीं हैं; इस प्रकार मेरे द्वारा उल्लिखित कवियों में से बहुत बड़ी संख्या ने वास्तविक उर्दू बोली में लिखा है, जो सबसे अधिक शुद्ध हिन्दुस्तानी समझी जाती है।

यदि हम इन कवियों के नगरों के नामों की ओर ध्यान दें, तो हमें वे मिलेंगे जहाँ ये दो मुसलमानी बोलियाँ न केवल प्रयुक्त होती हैं वरन् जहाँ उनकी अत्यधिक वृद्धि हुई है। दक्खिनी के लिए हैं: सूरत, बंबई, मद्रास, हैदराबाद, श्रीरंगपट्टम, गोलकुण्डा; उर्दू के लिए: दिल्ली, आगरा, लाहौर, मेरठ, लखनऊ, बनारस, कानपुर, मिर्ज़ापुर, फ़ैज़ाबाद, इलाहाबाद और कलकत्ता, जहाँ, हिन्दुस्तानी प्रादेशिक रूप में भी बोली जाती है।

अम्मन, जो हिन्दुस्तानी के प्रथम गद्य-लेखक समझे जाते हैं, ने कलकत्ते में लिखा, और उन्होंने इस विषय पर, 'बाग़ ओ बहार' की भूमिका में कहा है:

'मैंने अपने से भी उर्दू भाषा का प्रयोग किया है, और मैंने बंगाल को हिन्दुस्तान में परिवर्तित कर दिया है।'

केवल नाम द्वारा मुसलमान या हिन्दू लेखक को पहिचान लेना सरल है, और साथ ही कवियों के नामों पर विचार करना बड़ा अच्छा अध्ययन होगा। मैंने अन्यत्र [१] मुसलमान नामों और उपाधियों पर विचार किया है; मैं अपने को केवल भारतवर्ष के मुसलमानों द्वारा गृहीत छः विभिन्न नामों, उपनामों या उपाधियों, जिनमें से अनेक दो-दो या तीन-तीन, के उल्लेख तक सीमित रखूँगा, अर्थात् 'आलम' या मुसलमान सन्तों के नामों, 'लक़ब', एक प्रकार का सम्मान-सूचक उपनाम, जैसे 'ग़ुलाम अकबर'—ईश्वर का दास, 'इमदाद अली'—अली की कृपा; 'कुन्यात' (Kunyat) वंश या पितृकुल बताने वाले उपनाम, जैसे 'अबू तालिब' तालिब का पिता, 'इब्न हिशाम'

[१] 'मेम्वार सूर लै नौं ऐ तीत्र मुसलमाँ' (मुसलमानी नामों और उपाधियों का विवरण)

(Hischam) हिशम का बेटा; 'निस्बत', देश या उत्पत्ति बताने वाले उपनाम, जैसे 'लाहौरी' — लाहौर का, 'कनौजी'—कनौज का; 'ख़िताब', पद या जातीयता सूचक उपनाम, जैसे ख़ाँ, मिर्ज़ा आदि, और अंत में काव्योपनाम या 'तख़ल्लुस', का जो सामान्यतः एक अरबी या फ़ारसी, न कि भारतीय, संज्ञा या विशेषण होता है।

मुसलमान रचयिताओं द्वारा धारण किए जाने वाले इस्लामी संतों के नामों के स्थान पर, हिन्दू अपने देवताओं या उपदेवताओं के नाम ग्रहण करते हैं। उदाहरणार्थ, मुसलमान नाम रखते हैं मुहम्मद, अली, इब्राहीम, हसन, हुसैन, आदि ; हिन्दू, हर, नारायण, राम, लक्ष्मण, गोपी-नाथ, गोकुल-नाथ, काशीनाथ,[1] आदि।

मुसलमानों के 'अब्दुल अली'—सर्वोच्च का दास, 'ग़ुलाम मुहम्मद' —मुहम्मद का दास, 'अली मर्दान'[2]—अली का आदमी, आदि सम्मान-सूचक उपनाम हिन्दुओं के 'शिव-दास'—शिव का दास, 'कृष्ण-दास', 'माधो-दास' और 'केशव-दास'—कृष्ण का दास, 'नन्द-दास' — नन्द का दास, 'हलधर-दास'—हल धारण करने वाले अर्थात् बल का दास, 'सूर-दास'—सूर्य का दास, के अनुरूप हैं।

और हिन्दू केवल अपने देवताओं के ही दास नहीं हैं, वरन् पवित्र नगरों, और दिव्य नदियों तथा पौधों के भी दास हैं।

इस प्रकार, हमें 'गंगा-दास'—गंगा का दास, 'तुलसी-दास'—तुलसी (ocimum sanctum) का दास, 'अग्र-दास'—आगरे का दास, काशी-दास'—बनारस का दास, 'मथुरा-दास'—मथुरा का दास, 'द्वारिका-दास' — अलौकिक रूप में कृष्ण द्वारा स्थापित नगर का दास, मिलते हैं।

---

१ अंतिम तीन नाम कृष्ण के नाम हैं।

२ इस नाम, जो भारत के एक प्रसिद्ध व्यक्ति का है, का ठीक-ठीक अर्थ है 'अली के लोग', क्योंकि 'मर्दान', 'मर्द'—आदमी का बहुवचन है ; किन्तु भारतवर्ष में कभी कभी बहुवचन एकवचन का रूप धारण कर लेता है', जैसा कि मैं अपने 'मेम्वार सूर लै नौं ऐ तीत्र मुसलमाँ' में उल्लेख कर चुका हूं।

'महबूब अली'—अली का प्रिय, 'महबूब हुसेन'—हुसेन का प्रिय आदि उपाधियाँ, 'श्रीलाल'—श्री या लक्ष्मी का प्रिय, 'हरबंस लाल'—शिव की जाति का प्रिय, के अनुरूप हैं।

'अता उल्लाह'—ईश्वर का दिया हुआ, 'अता मुहम्मद'—मुहम्मद का दिया हुआ, ''अली बख़्श'—अली का दिया हुआ, मुसलमान उपाधियाँ हिन्दू उपाधियों 'भगवान्-दत्त'—भगवान् का दिया हुआ, 'राम-प्रसाद'—राम का दिया हुआ, 'शिव-प्रसाद'—शिव का दिया हुआ, 'काली-प्रसाद'—दुर्गा का दिया हुआ, के अनुरूप हैं।

मुसलमान उपाधियों 'असद' (Açad) और 'शेर'—सिंह की तुलना में हिंदू उपाधि 'सिंह' है, जिसका वही अर्थ है।

जहाँ तक 'ख़िताब' नामक उपाधि से संबंध है, हिन्दुओं की विभिन्न जातियों की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं।

इस प्रकार ब्राह्मणों को 'शर्मा',[1] 'चौबे', 'तिवारी', 'दुबे', पांडे', 'शास्त्री'[2] की उपाधियाँ दी जाती हैं; क्षत्रियों, राजपूतों और सिक्खों को 'ठाकुर', 'राइ', (Râé), 'सिंह' की; वैश्यों, व्यापारियों या महाजनों को 'साह' या 'सेठ' और 'लाला' की; शिक्षितों को 'पंडित' और 'सेन' की; वैद्यों को 'मिश्र'[3] की।

हिन्दू फ़क़ीर 'गुरु', 'भगत', 'गोसाईं'' या 'साईं' और सिक्ख फ़क़ीर 'भाई'—भ्राता[4] कहे जाते हैं।

हिन्दुओं के अनुकरण पर, भारत के मुसलमान चार वर्गों में विभाजित हैं: सैयद, शेख़, मुग़ल और पठान। पहले मुहम्मद के वंशज हैं; दूसरे, मूलतः अरब, वे हैं जो इस्लाम स्वीकार करने वालों को इस नाम से पुकारने

---

[1] यह शब्द, जिसका अर्थ है 'प्रसन्न', 'हितोपदेश' के रचयिता के नाम का एक भाग था।

[2] अर्थात् 'कट्टर', शास्त्र मानने वाला।

[3] मुसलमान अपने चिकित्सकों को 'हकीम'—डाक्टर, कहते हैं।

[4] हिन्दुस्तानी कवियों में एक 'भाई' गुर-दास है और एक 'भाई' नन्द लाल।

में बाधा नहीं डालते ; मुग़लों से मूलतः फ़ारस के, और पठानों से अफ़गान समझा जाता है।

सैयदों को 'अमीर' के स्थान पर, 'मीर' उपाधि दी जाती है ; शेख़ों की कोई विशेष उपाधि नहीं है। मुग़ल अपने नाम से पहले 'मिर्ज़ा',[1] या बाद में 'बेग' उपाधि लगाते हैं ; उन्हें 'आग़ा' या 'ख़्वाजा' भी कहते हैं ; और पठान 'ख़ाँ' कहे जाते हैं। मुसलमान फ़क़ीरों को 'शाह', 'सूफ़ी' या 'पीर' की उपाधियाँ मिलती हैं। उनके चिकित्सकों को 'मौला' या 'मुल्ला' कहते हैं। स्त्रियों को 'ख़ानम', 'बेगम', 'ख़ातून', 'साहिबा' या 'साहिब', 'बी' या 'बीबी'।

'श्री' और 'देव' हिन्दुओं की आदर-सूचक उपाधियाँ हैं ; पहली का ठीक-ठीक अर्थ है 'संत', और दूसरी का 'देवता'। 'श्री' नामों से पहले और 'देव' बाद में रखी जाती है। इन उपाधियों का प्रयोग नगरों, पर्वतों, नदियों, आदि के नाम के साथ भी होता है।[2] प्राचीन समय में गौल लोग (Gauls) नगरों, वनों, पर्वतों के साथ 'दिवुस' (divus) या 'दिव' (diva) उपाधियाँ लगाते थे। यह एक भारतीय प्रथा थी, जो, केल्ट भाषा और केल्ट जाति के पुरोहितों के धर्म (druidique) की उत्पत्ति के साथ-साथ, गङ्गा के किनारे से म्यूज़ (Meuse), मार्न (Marne) और सैन (Seine) के किनारों पर यहाँ आया। हमारे समय में, रूसी लोग अब तक अपने देश को 'Sainte Russie' (संत रूस) कहते हैं।

---

[1] फ़ारसी में, 'मिर्ज़ा' उपाधि, जिसका अर्थ है 'अमीर का पुत्र,' नाम के बाद लगाने से शहज़ादा होने की सूचना देती है ; किन्तु नाम के पहले, यह एक सामान्य उपाधि है जो अन्य के अतिरिक्त शिक्षितों को दी जाती है।

[2] इस रूप में, मुसलमान 'हज़रत' शब्द का प्रयोग करते हैं। वे इस प्रकार कहते हैं : 'हज़रत दिल्ली', 'हज़रत आगरा'।

भारतवर्ष के नरेश, आजकल भी, अपने राज्य के सबसे अधिक प्रसिद्ध, या अधिक कृपापात्र, कवियों को, या तो मुसलमान उपाधि 'सैयद उश्शु' अरा'—कवियों का सिरताज, या 'मलिक उश्शु' अरा'—कवियों का बादशाह, या हिन्दू उपाधि 'कबेश्वर'—कवियों का सिरताज, 'बर कवि'—श्रेष्ठ कवि, आदि प्रदान करते हैं।

जिन हिन्दुओं ने उर्दू में लिखा है उन्होंने 'तख़ल्लुस' ग्रहण करने की मुसलमानी प्रथा स्वीकार की है, और क्योंकि ये काल्पनिक उपनाम सामान्यतः फ़ारसी से लिए जाते हैं, जो भारतवर्ष के मुसलमानों की साहित्यिक भाषा है, दोनों धर्मों के कवियों द्वारा समान तख़ल्लुस ग्रहण किये जा सकते हैं, और, फलतः, जब ये रचयिता केवल उपनामों से पुकारे जाते हैं, यह जानना कठिन हो जाता है कि वे हिन्दू हैं या मुसलमान।

लेखकों में, मुसलमान हो गए कुछ हिन्दू मिलते हैं, किन्तु कोई मुसलमान ऐसा नहीं मिलता जिसने हिन्दू धर्म स्वीकार कर लिया हो, जब तक कि वह किसी उग्र सुधारवादी संप्रदाय में प्रवेश न करे, उदाहरणार्थ जैसे सिक्खों का, जो अपना धर्म स्वीकार करने वाले मुसलमानों को 'मज़हबी' कहते हैं। वास्तव में मुसलमान से हिन्दू होने में अवनति करना है, जब कि हिन्दू से मुसलमान होना स्पष्टतः उन्नति करना है, क्योंकि ईश्वर की एकता और भविष्य जीवन में विश्वास उसका आधार है। इसके अतिरिक्त भारत के मुसलमानों में विवेक प्रवेश नहीं कर पाया; वे अब भी अपने धर्म के लिए अत्यन्त उत्साही हैं, यद्यपि व्यवहार में वह हिन्दू धर्म द्वारा विकृत ही हो गया हो, और वे प्रतिदिन लोगों को मुसलमान बनाते हैं। इस प्रकार हम हिन्दू कवियों को इस्लाम धर्म स्वीकार करते हुए, संसार से विरक्ति धारण करते और अपनी कविताओं में ईश्वर की एकता गाते हुए देखते हैं। अन्य के अतिरिक्त मुज़्तर (लाला कुँवर सेन) ऐसे ही हैं जिन्होंने सुन्दर हिन्दुस्तानी कविताओं में उस बात का अधिक प्रचार किया है जिसे मुसलमान 'हुसेन का आत्म-बलिदान' कहते हैं।

हिन्दुस्तानी लेखकों में हमें कुछ हिन्दू ऐसे भी मिलते हैं जिन्होंने ईसाई मत स्वीकार कर लिया है, और साथ ही, अत्यन्त असाधारण और कम सुनी जाने वाली बात कि, कुछ मुसलमान ईसाई हो गए हैं। जीवनी-लेखक शेफ़्त (Schefta) ने मुसलमान से ईसाई होने वाले शौकत उपनाम के एक उर्दू कवि का उल्लेख करते समय जो कहा है वह इस प्रकार है :

'कहा जाता है कि शौकत, बनारस में, एक यूरोपियन के अत्यन्त घनिष्ठ मित्र थे. और जिसके कहने मे इस्लाम धर्म छोड़कर वे ईसाई हो गए। ईश्वर ऐसे दुर्भाग्य से बचाए! फलतः उन्होंने अपना नाम 'मुनीफ़ अली'—अली द्वारा उत्साहित, के स्थान पर बदल कर 'मुनीफ़ मसीह'—ईसा द्वारा उत्साहित, रख लिया है।'

ऐसी हालत में, नाम का परिवर्तन प्रायः हमेशा हो जाता है। एक और हिन्दुस्तानी कवि ने, जिसका नाम 'फ़ैज़ मुहम्मद'—मुहम्मद की कृपा, था, ईसाई होने पर अपना 'लकब' 'फ़ैज़ मसीह'—मसीह की कृपा रख लिया।

किन्तु प्रारंभिक ईसाइयों में इस बात का अनुकरण होते हुए भी, ईसाई बने हिन्दू मूर्तिपूजकों जैसा अर्थ रखने पर भी अपने नाम सुरक्षित रखते थे। हमारे अत्यधिक प्रसिद्ध सामयिकों में यही करने वाले बाबू गमेन्द्र मोहन टैगोर हैं, जिनका मैंने, अपने १८६८ के प्रारभ के भाषण में, उल्लेख किया है, जिन्हें ईसाई धर्म स्वीकार करने का मूल्य, अपने मूर्तिपूजक रह गए पिता की ओर से, मिला उत्तराधिकार का अपहरण।

मूल तज़्किरों में ऐसे हिन्दुस्तानी कवियों में कुछ मूलतः यहूदियों का उल्लेख मिलता है जो मुसलमान हो गए थे। ऐसे हैं मेरठ के जमाल (अली), जो लगभग साठ वर्ष की अवस्था में हैदराबाद में रहते थे; दिल्ली के जवाँ (मुहिब्बउल्लाह), रोज़गार से चिकित्सक, कविता की दृष्टि से इश्क के शिष्य; और एक संग्रह के रचयिता, मुश्ताक।

यद्यपि पारसी सामान्य गुजराती में और कभी फ़ारसी में लिखते हैं, उनमें ऐसे भी हैं जिन्होंने हिन्दुस्तानी का प्रयोग किया है, और इस प्रकार, मेरे ग्रन्थ में उल्लिखित रचयिताओं में, बम्बई के, बोमनगी दोसबजी मिलेंगे ।

उन्हीं जीवनी-लेखकों ने भारतीय कवियों में कुछ यूरोपियन ईसाइयों, कम-से-कम उनसे उत्पन्न, का उल्लेख किया है । उदाहरण के लिए यूरोपियन (फ़िरंगी) सोम्ब्र[1] (Sombre) और, सरधना (Sirdhana) की रानी, प्रसिद्ध बेगम समरू, उपनाम 'ज़ीनत उन्निसा'—स्त्रियों का आभूषण, के पुत्र, जो साहिब नाम से ज्ञात हैं , क्योंकि यही उनका तख़ल्लुस है, जब कि उनकी प्रधान आदरसूचक उपाधि 'ज़फ़र-याब'—विजयी—है । वे दिलसोज़ के शिष्य थे, और उन्होंने कुछ उर्दू कविताओं की रचना की जो सफल हुई थीं । उन्होंने, दिल्ली में, अपने घर पर साहित्यिक गोष्ठियाँ की थीं जिनमें इस राजधानी के प्रधान कवियों, तथा, अन्य के अतिरिक्त, सरवर, जिनके कारण हमें यह बात विस्तार से मालूम हुई है, ने सहायता प्रदान की । कहा जाता है, वे, पूर्वी लोगों में अत्यन्त समादृत कला, ख़ुशनवीसी में, चित्रकला में और संगीत में निपुण थे । वे १८२७ में, पूर्ण यौवनावस्था में मृत्यु को प्राप्त हुए ।

उनके बपतिस्मा के नाम से बलथज़र (Balthazar), और तख़ल्लुस से असीर—दास—नामक एक मित्र थे, जिन्होंने भी सफलतापूर्वक हिन्दुस्तानी कविता की रचना की । सरवर का कथन है कि वे फ़िरंगी और ईसाई (नसरानी) थे, और उनकी कविताओं में, जिनके उन्होंने उदाहरण भी दिए हैं, मौलिकता का अभाव नहीं है ।

सरधना (Sirdhana) के छोटे-से दरबार में, उसी समय में, एक तीसरे हिन्दुस्तानी के यूरोपियन कवि, और उस पर भी फ़्रांसीसी, थे, जिन्हें लोग 'फ़रस' या 'फ़्रांसू', अर्थात् फ़्रांस का निवासी, कहते थे । लोग

[1] समरू ?—अनु०

उन्हें औगस्ट (Auguste) या औगस्टिन (Augustin) का पुत्र और सरधना की रानी का कर्मचारी बताते थे। वे सुन्दर कविताओं के रचयिता हैं, और, साहिब की भाँति, दिल्ली के प्रसिद्ध कवि, दिलसोज़ के शिष्य।

हिन्दुस्तानी के एक और सामयिक, ईसाई और अँगरेज़, कवि का उल्लेख किया जाता है, जिसका मूल जीवनी-लेखक[1] ने उल्लेख करते हुए 'जरिज बंस शोर', अर्थात्, संभवतः, जॉर्ज बर्न्स शोर, नाम लिया है—जीवनी-लेखक द्वारा कुल का नाम 'तख़ल्लुस'—शोरगुल—के रूप में समझ लिया गया है।

अंत में हिन्दुस्तानी के कवियों में दिल्ली के निवासी दो अँगरेज़ों का उल्लेख किया जाता है, 'स्फ़ान', अर्थात् निस्संदेह 'स्टीफ़ेन' या 'स्टीवेन्स', जो १८०० तक जीवित थे, और 'जॉन टॄमस', अर्थात् 'जॉन टेम्स', जिनका नाम 'खाँ साहब' भी था, सामयिक कवि। ये कवि संभवतः वर्ण-संकर (half cast) थे।

स्वयं मुझे हिन्दुस्तानी के एक इसी श्रेणी के कवि का नाम ज्ञात है, सरधना की रानी, के दत्तक पुत्र, स्वर्गीय डाइस सोंब्र, जिनका मैं उल्लेख कर रहा हूँ, जिस व्यक्ति का नाम प्रायः, अपने अधिकारों से वंचित होने के कारण, जिसके विरुद्ध वे उसे फिर से प्राप्त करने में लगे हुए हैं, अँगरेज़ी पत्रों में आता रहता है। डाइस सोंब्र एक खास सरलता के साथ हिन्दुस्तानी कविताओं की रचना कर लेते थे, और बड़े अच्छे ढंग से उनका पाठ कर लेते थे।

हिन्दुस्तानी के ऐसे कवि का उल्लेख किया जाता है जो हब्शी था और जिसका नाम सीदी[2] हामिद बिस्मिल था। बिशप ग्रेग्वार (Grégoire)

[1] करीम

[2] यह उपाधि, जो सैयदों का अफ्रीकी उच्चारण है, भारत में केवल हब्शी उत्पत्ति के मुसलमानों को दी जाती है।

द्वारा अपने 'लितेरत्यूर दै नैग्र' (हबशियों का साहित्य) में दी गई प्रसिद्ध हबशियों की सूची में यह नाम जोड़ देना चाहिए। प्रस्तुत हबशी कवि पटना का निवासी, और प्रतीत होता है, दास, था। वह इस शताब्दी के प्रारंभ में जीवित था।[1]

हिन्दी के लगभग सब लेखक हिन्दुओं के नवीन संप्रदायों से संबंध रखते हैं, अर्थात् जैनों, कबीर-पंथियों, सिक्खों और सब प्रकार के वैष्णवों से; इन संप्रदायों के, जैसे अत्यधिक प्रसिद्ध वैसे ही कम-से-कम ज्ञात, गुरु भी हिन्दी-कवि हैं; वे हैं: रामानन्द, वल्लभ, दर्यादास, 'गीत गोविंद' शीर्षक प्रसिद्ध संस्कृत कविता के रचयिता जयदेव, दादू, बीरभान, बाबा लाल, राम-चरण, शिव-नारायण आदि।

केवल बहुत थोड़े शैव हैं जिन्होंने हिन्दी में लिखा हो। अधिकतर वे पुरानी पद्धति के साथ-साथ पुरानी भाषा के प्रति आसक्ति रखते हैं।

जहाँ तक मुसलमानों से संबंध है वे, भारत में, कर्म की दृष्टि से सुन्नियों अर्थात् 'परंपरावादी' और शियों अर्थात् 'पृथक् होने वालों', में विभक्त हैं। प्रायः सुन्नियों की कैथोलिकों और शियों की प्रोटेस्टेंटों से तुलना की जाती है[2], क्योंकि इन बाद वालों ने 'सुन्न' या 'मुहम्मद के कार्यों से संबंधित परंपरा' को अस्वीकार कर दिया था, और उन सब ने 'हदीस', अर्थात् 'परंपरानुसार मुहम्मद द्वारा कहे बताए गए शब्दों' को स्वीकार कर लिया था। किन्तु, शार्दाँ (Chardin) ने, जो वास्तव में, प्रोटेस्टेंट थे, उसे उल्टा कर दिया है, संभवतः शिया संप्रदाय के वाह्याडंबरों के कारण।

संस्थापक के नाम के आधार पर, सैयद-अहमदी नामक, मतभेद वाले भी हैं। वे भारत के वाहबी हैं और कभी-कभी इसी प्रकार पुकारे

---

१ इश्क़ा के आधार पर स्प्रेंगर ('कैटैलौग,' जि० पहली, पृ० २१५)।

२ मैं उन लोगों में से एक हूँ जिन्होंने मेरे 'मेम्वार सूर औं शापित्र आँकोनू दु कुरान' (कुरान के एक अज्ञात परिच्छेद का विवरण) में यह तुलना की है। 'जूर्ना एसियातीक', १८४२।

जाते हैं। हिन्दुस्तानी के कई लेखक इस संप्रदाय से संबंध रखते हैं ; ऐसे हैं : हाजी अब्दुल्ला, हाजी इस्माईल, तथा अन्य कई जिनका मैं अवसरानुकूल उल्लेख करूँगा।

हिन्दुस्तानी के लेखकों में मुसलमान दार्शनिकों या सूफ़ियों की, जिनमें अनेक प्रसिद्ध सन्त हैं ; भिक्षुक कवियों की, जो न केवल स्वेच्छा से बने या फ़क़ीर हैं, वरन् सचमुच भिक्षुक हैं, जो बाज़ार में, अलग-अलग काग़ज़ों पर, अपनी रचनाओं में से कविताएँ, बेचने आते हैं, एक बहुत बड़ी संख्या बराबर पाई जाती है। दिल्ली के मकारिम (मिर्ज़ा) और कमतरीन (मियाँ) उपनाम पीर-खाँ [1] ऐसे ही थे, जो, 'उर्दू मुअल्ला'[2] में, दो पैसा (दस साँतीम[3] के लगभग) प्रति कविता के हिसाब से, अलग-अलग काग़ज़ों पर अपनी गज़लें बेचने स्वयं आते थे।

इन भिक्षुक कवियों के साथ-साथ हमें मिलते हैं पेशेवर कवि, अर्थात् वे साहित्यिक व्यक्ति जो केवल काव्य-रचना में लगे रहते हैं, फिर सब वर्गों के शौकिया कवि, और इसी प्रकार निम्न वर्ग के लोगों में, और अंत में बादशाह कवियों की एक अच्छी संख्या मिलती है जिनकी कविताओं के बारे में कहा जाता है : 'बादशाहों की बातें बातों में बादशाह होती हैं।' [4] इस प्रकार के कवि हैं, गोलकुण्डा के जिन तीन बादशाहों का मैं उल्लेख कर चुका हूँ उनके अतिरिक्त, बीजापुर का बादशाह, इब्राहीम आदिल शाह, मैसूर का राजा, अभागा टीपू, मुग़ल सम्राट् शाह आलम द्वितीय, अकबर द्वितीय और बहादुर शाह द्वितीय,

---

[1] उनकी मृत्यु ११६८ (१७५४-५५) में हुई। जहाँ तक उनकी आलीशान उपाधि 'ख़ाँ' से संबंध है, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, भारत में वह पठानों या अफ़गानों को दी जाती है, और वास्तव में हमारा कवि अफ़ग़ान था।

[2] पीछे दिखाया जा चुका है कि दिल्ली का बाज़ार इसी नाम से समझना चाहिए।

[3] फ़्रांसीसी सिक्के फ़्रेंक का सौवाँ हिस्सा—अनु०

[4] हिन्दुस्तानी की प्रारंभिक गति पर १८५१ का भाषण।

अवध के नवाब और बादशाह आसफ़ुद्दौला, ग़ाजी उद्दीन हैदर और वाजिद अली।

अंत में हिन्दुस्तानी के कवि समुदाय में से महिला कवयित्रियाँ अलग की जा सकती हैं, जिनमें से कई का मैंने एक विशेष लेख में उल्लेख किया है[1]। जिनका मैंने उल्लेख नहीं किया उनमें से, मैं शहज़ादी ख़ाला[2] अर्थात् माँ की बहन का उल्लेख कर सकता हूँ। वास्तव में उनका यह तख़ल्लुस है, क्योंकि उनके भतीजे, फ़र्रुख़ाबाद के नवाब इमाद उलमुल्क, के हरम में वे इसी सुपरिचित नाम से पुकारी जाती हैं; किन्तु उनका आदरसूचक उपनाम या 'ख़िताब' था 'बद्र उन्निसा'—स्त्रियों में पूर्ण चन्द्र, अर्थात् स्त्रियों में बहुत असाधारण।[3]

मैं, साहिब तख़ल्लुस से ज्ञात, तथा 'जी साहिब' या 'साहिब जी'—श्रीमती महिला—का प्रचलित नाम धारण करने वाली, अम्त उल फ़ातिमा बेगम का भी उल्लेख करूँगा, जो विशेषतः अपनी गजलों के कारण, उर्दू लेखकों में प्रसिद्ध हैं। वे अत्यन्त प्रसिद्ध कवि, मूनिम (Munim) की, जो शेफ़्त, उन जीवनी-लेखकों में से एक जिनसे मैंने अत्यधिक सहायता ली है, तथा अन्य कई लेखकों के भी उस्ताद थे, शिष्या हैं। वे बारी-बारी से दिल्ली और लखनऊ में रही हैं, और मुज़ो उल्लाह ख़ाँ कृत 'कौल-इ गमीं' (Caul-i-gamîn)—कोमल बात—शीर्षक एक मसनवी का विषय हैं।

एक और महिला कवयित्री, हिन्दू नाम होने पर भी संभवतः मुसलमान, चंपा हैं, जिनका नाम michelia champaka के सुन्दर फूल

---

[1] 'लै फ़म पोएत द लिंद' (भारत की महिला कवयित्रियाँ), 'रेव्यू द लौरिऐंत' की मई, १८५४ की संख्या।

[2] यह अरबी का शब्द है और अर्थ है—'माँ की बहिन'। वह 'ख़ाल'—माँ का भाई, मामा—का स्त्रीलिंग है।

[3] इश्क़ी, स्प्रेंगर द्वारा उद्धृत।

का नाम है। वे नवाब हुसम उद्दौला के हरम में थीं, और कासिम ने उन्हें उर्दू कवियों में रखा है।

एक फ़रह (Farh)—खुशी—फ़रह-बख़्श—खुशी की दी हुई—नामक एक नर्तकी का उदाहरण भी मिलता है जिसने हिन्दुस्तानी में काव्य-रचना की। शेफ़्त ने ज़िया—चमक—नामक एक और नर्तकी का उल्लेख किया है; और इश्की ने गंचीं (Ganchîn) नामक एक तीसरी का।

एक चौथी नर्तकी ने, हिन्दुस्तानी के कवियों की भाँति, पूर्वोल्लिखितों से बहुत अधिक ख्याति प्राप्त करली है, वह है फ़र्रुखाबाद की जाना (मीर यार अली जान साहिब), किन्तु जो ख़ास तौर से लखनऊ में रही, जहाँ उसे साहित्यिक सफलता प्राप्त हुई। बचपन से ही उसने संगीत और साहित्य का अभ्यास किया, और वह फ़ारसी समझ लेती है। हिन्दुस्तानी में कविता की ओर उसकी विशेष रुचि है और जीवन-लेखक करीम उसे अपनी उस्तादिन समझते हैं, और उन्होंने अपनी ख़ास कविताओं के संबंध में उससे परामर्श किया। उसने, १२६२ (१८४६) में, लखनऊ से एक दीवान या अपनी कविताओं का संग्रह प्रकाशित किया है जिसे काफ़ी सफलता प्राप्त हुई है और जो ज़नानों की विशेष शैली में लिखा गया है; उस समय उसकी अवस्था छत्तीस वर्ष के लगभग थी।

मुझे अभी एक हिन्दू महिला कवयित्री, नारनौल की, रामजी, उपनाम 'नज़ाकत'—सुकुमारता—जिसकी आश्चर्यजनक प्रतिभा और अलौकिक सौंदर्य के संबंध में मूल जीवनी-ग्रंथों में अतिशयोक्तिपूर्ण वाक्य भरे पड़े हैं, और जो १८४८ तक जीवित थी; तस्वीर, जिस नाम का अर्थ है 'चित्र', अर्थात् एक चित्र की भाँति सुन्दर; सुरैया—सप्तर्षि-मंडल ; यास—déses poir—तथा इस ग्रंथ में उल्लिखित अन्य अनेक का और उल्लेख करना है।

उपर्युक्त संक्षिप्त रूपरेखा से मेरी रचना के मुख्यांश के विषयों की एक झलक मिलती है जिसके लिए मैं विद्वानों की कृपा का आकांक्षी हूँ,

और विशेषतः संस्कृत के उन उत्साहियों की जो सामान्य भाषाओं से, बिना यह बात ध्यान में रखे हुए कि वे ही अवसर आने पर साहित्यिक भाषाएँ बन जाती हैं, और हर हालत में, वे ही सभ्यता का वाहन और वर्तमान को भविष्य से जोड़ने वाली शृंखला हैं, घृणा करते हैं।

———

द्वितीय संस्करण की तीसरी जिल्द (१८७१) से

विज्ञप्ति

दो महासरों के समय अनुपस्थित रहने के बाद मैं पेरिस लौटा; महासरों के समय नृशंस अत्याचारियों का शासन था जिन्होंने, तिरंगे झंडे में, अन्य दो रंगों से घिरे हुए, हमारे बादशाहों के सफ़ेद झंडे के स्थान पर लाल झंडा स्थापित किया है, जो, प्रतीत होता है, अंत में पहले द्वारा हटा दिया जायगा, और ऐसे स्मारकों के, जिन पर फ़्रांस को गर्व हो सकता है, और असंख्य व्यक्तिगत जायदादों के नष्ट या विकृत करने में ही संतोष न कर जिन्होंने बेगुनाह और संभ्रान्त व्यक्तियों का वध करने में नीचता प्रदर्शित की है, विशेषतः हमारे प्रसिद्ध आर्च-बिशप दरबॉय (Darboy), मधुर वक्ता अबे दगेरी (Abbé Deguerry), विद्वान् सभापति बौंज़ाँ (Bonjean) का, जो सब मेरी तरह, नए संप्रदाय द्वारा अन्यायपूर्वक निन्दित, फ़्रांस के पुराने चर्च से संबंधित थे, मैं कह रहा था, पेरिस लौटने पर, इस रचना की तीसरी और अंतिम जिल्द जिसमें, मानव जातियों में छठा स्थान रखने वाली आधुनिक भारतीय जाति के साहित्यिक इतिहास का अधिकांश है, की दस महीने तक मजबूरन बन्द कर दी गई छपाई को फिर से शुरू करने के लिए उत्सुक रहा हूँ।

लेखकों की तालिका उसी समय छप चुकी थी जब कि जीवनी-संग्रह

[1] द्वितीय संस्करण की दूसरी जिल्द में कोई भूमिका नहीं है।

'नुस्ख़ा-इ दिलकुशा' का द्वितीय भाग मुझे प्राप्त हुआ था जिसके प्रथम भाग का विश्लेषण मैंने इस जिल्द के ३५३ तथा बाद के पृष्ठों में किया है। अपनी विद्वत्तापूर्ण कृतियों के लिए अन्य के अतिरिक्त भारतवासियों में प्रचलित अंतिम संस्कारों के संबंध में खोज के लिए, मथुरा के प्राचीन प्रस्तर-लेखों की व्याख्या के लिए, बंगाल आदि के पुस्तकालयों के संस्कृत हस्तलिखित-ग्रंथों के संबंध में सूचनाओं के लिए, प्रसिद्ध बाबू राजेन्द्रलाल मित्र यह हस्तलिखित ग्रंथों वाला भाग मुझे भेजने के लिए राज़ी थे, किन्तु उनके ग्रंथ-लेखक पिता की मृत्यु से उसकी छपाई रुक जाने के कारण, बाबू ने उसे जारी रखना उचित नहीं समझा। इस भाग में तीन सौ तेरह रचयितायों पर विचार किया गया है, जिससे मुद्रित ग्रन्थ की भूमिका में घोषित सात सौ, जिनमें से तेईस कवयित्रियाँ हैं, पूरे हो जाते हैं।

जिनका उल्लेख इस इतिहास में नहीं हुआ उनकी सूची, फ़ारसी वर्णमाल के क्रमानुसार, इस प्रकार है :

(५५ उर्दू-कवियों और १७ उर्दू-कवयित्रियों के नामों की सूची—अनु०)

मैं 'पूना' (Pûna) के शम्ल (Schamla) कृत 'बाग़-इ बहार' जिसे लेखक ने 'फ़साना सहर'—फ़साने का सहर—के नाम से भी पुकारा है, के मंगल-वाक्यों में से कुछ पद्यों के अनुवाद से इसे समाप्त करता हूँ :

×   ×   (अनुवाद)   ×   ×

पेरिस, १५ अक्टूबर, १८७१

अंगद[1]

सिक्खों के तीसरे गुरु और 'तीहन' (Tîhan) नामक एक विशेष सिक्ख संप्रदाय के संस्थापक। उनकी कुछ धार्मिक कविताएँ हैं जो 'आदि ग्रंथ' में हैं।

अजोमयर (Ajomayara)

जैपुर की बोली में लिखित 'गीत'[2] के हिन्दू लेखक। वॉर्ड ने इस ग्रंथ का उल्लेख अपनी 'हिस्ट्री ऐंड लिट्रेचर ऑव दि हिन्दूज़'[3] (हिंदुओं का इतिहास और साहित्य) में किया है। उन्होंने कनौजी बोली में लिखित एक और गीत का उल्लेख किया है, किन्तु उसके रचयिता का नाम नहीं दिया।

अज़ीम-बख़्श[4]

आगरा कॉलेज के विद्यार्थी, ने लिखी हैं :

१. एक 'Logarism' शीर्षक रचना, आगरा में छपी ;

---

[1] यह शब्द एक वानर, बलि, के पुत्र का नाम है, जो 'रामायण' की कथा में भाग लेता है।

[2] यह गीत शायद 'गीत अर्थ' न हो जिसकी एक हस्तलिखित प्रति स्वर्गीय जनरल हैरियट (Harriot) के पास थी ? यह दूसरी रचना, जो गद्य और उर्दू बोली में है, पांडवों और कौरवों का इतिहास प्रतीत होती है।

[3] जि० २, पृ० ४८१ (४८)

[4] 'बड़े (ईश्वर) की देन'

२. श्री बील (Beale) और मन्नूलाल की सहकारिता में हिन्दी में 'हिन्दी सिलेबस' ("Syllabus of Natural Philosophy"), आगरा।

अग्र-दास[१]

एक वैस्नव (या वैष्णव) संत हैं जो संस्कृत में लिखित 'भक्त माल' के प्रथम मूल पाठ के, जिसका अनुवाद और अनुकरण, विकास और परिवर्द्धन, हिन्दी और उर्दू में, अनेक रचयिताओं द्वारा हो चुका है,[२] निर्माता प्रतीत होते हैं, जिससे उसका हिन्दुई में लिखा जाना नहीं रुकता—जो अत्यधिक संभव बात है। इसके अतिरिक्त कृष्ण-दास के 'भक्त माल' में उनका उल्लेख इस प्रकार है :

छप्पय

श्री अग्रदास हरि भजन बिन काल वृथा नहिं बित्तयो।
सदाचार ज्यों संत प्रीति जैसे करि आये।
सेवा सुमिरण सावधान चरण राघव चित लाये।
प्रसिद्ध बाग सों प्रीति सुरुथ कृत करत निरंतर।
रसना निर्मल नाम मनो वर्षत धाराधर।
श्री कृष्णदास कृपा करी भक्तदत्त मन बच क्रम करि अटल दियो।
श्री अग्रदास हरि भजन बिन काल वृथा नहिं बित्तयो।

टीका

नाभा जी[3] ने कहा है : 'श्री अग्रदास हरि भजन बिन काल वृथा नहिं बित्तयो।'

---

[१] हि० 'अग्र (Agra) नगर का सेवक'

[२] नाभा जी, प्रियादास, लाल जी, गमानी लाल और तुलसी-राम पर लेख देखिए।

[3] 'भक्तमाल' की आधारभूत पंक्तियों के रचयिता, और जो, ऐसा प्रतीत होता है, प्रत्येक छप्पय की प्रथम और अंतिम पंक्तियाँ हैं। छप्पय की अन्य पंक्तियाँ, जैसा कि पिछले पाठ और पृथ्वीराज पर छप्पय से प्रमाणित होता है, कृष्ण-दास कृत हैं।

प्रश्न—क्या कोई कह सकता है कि मनुष्य के जीवन का समय भौतिक कार्यों में व्यतीत होने से व्यर्थ जाता है, क्योंकि शास्त्रों का कथन है कि परिवार को संतुष्ट रखना और खाना खिलाना उत्तम कार्य है ?

उत्तर—हरि की भक्ति में जो समय व्यतीत होता है, केवल वही मूल्यवान है। अन्य सब कार्य व्यर्थ हैं।

'दरशन काज महाराज मान सिंह[1] आयो छायो बाग माहिं बैठे द्वार द्वारपाल हैं। झारि कै पतौवा गये बाहिर लै डारिबे को देखी भीर भार रहे बैठि ये रसाल हैं। आये देखि नाभाजू ने उठि शाष्टांग करी भरी जल आखैं चले अंशुवनि जाल हैं। राजा मग चाहि हारि आनि कै निहारे नैन जानी आप जाती भये दासनि दयाल हैं।'[2]

अभय[3] राम

संभवत: ये वही अभय सिंह हैं जो मारवाड़ के राजा के कृपापात्र हैं, कहा जाता है जिनकी रचनाएं जितनी काव्यात्मक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं उतनी ही ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्व की हैं,[4] और जिनके लोकप्रचलित गीत हैं ?

---

[1] अम्बेर के राजा जिन्होंने १५६२ से १६१५ तक राज्य किया। (प्रिन्सेप, 'यूसफुल टेबिल्स', II, ११२)

[2] यह अंश तथा मूल छप्पय नवल किशोर प्रेस, लखनऊ से १८८३ (प्रथम संस्करण) में मुद्रित नाभादास कृत 'भक्तमाल' से लिया गया है। तासी द्वारा दिए अनुवाद और इस अंश का आशय लगभग समान है। तासी द्वारा दिए गए अनुवाद में और कोई अधिक बात नहीं है।—अनु०

[3] भा० 'बिना भय के'

[4] टॉड, 'एशियाटिक जर्नल', अक्तूबर, १८४०, पृ० १२६

अभिमन्यु[१]

एक हिन्दी-लेखक हैं जिनका मैं केवल नाम दे सकता हूँ।

अमर सिंह[२]

'अमर विनोद'—(रोगों पर) अमर का क्रियात्मक मत—हिन्दी में लिखित और संस्कृत से अनूदित रोगों के निदान और चिकित्सा पर पुस्तक के रचयिता हैं। मेरठ १८६५, २४-२४ पंक्तियों वाले ८८ अठपेजी पृष्ठ।[3]

अमराव सिंह[४] (राव)

'राग माला'—रागों का संग्रह—के रचयिता हैं, १८६४ में मेरठ से मुद्रित।

अमीर चंद

रचयिता हैं:

१, 'लक्ष्मी स्वयंवर'—लक्ष्मी का विवाह —के, मुद्रित रचना;

२. 'रुक्मिणी स्वयंवर'—रुक्मिणी का विवाह—के ;

३. 'द्रौपदी स्वयंवर'—द्रौपदी का विवाह—के ;

४. 'सुभद्रा स्वयंवर'—सुभद्रा के विवाह—के[५] ;

---

[१] भा० 'अति प्रतिष्ठित'

[२] भा० 'जो न मरे'

[३] क्या यह वही पुस्तक तो नहीं है जिसका शीर्षक 'रामविनोद' है, १८६५ में आगरे से प्रकाशित, ४२ पृ० (जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ४२) ?

[४] भा० 'छोटा राजा'

[५] इन चार पुस्तकों का जेंकर (Zenker) ने अपने 'बिबलिओथेका ऑरिएंटालिस' (Bibliotheca Orientalis) में उल्लेख किया है।

क्या ये और 'अमृत राजा', औरंगाबाद के ब्राह्मण, हिन्दुस्तानी में लिखित निम्न रचनाओं के रचयिता, एक ही तो नहीं हैं :

१. 'दामा जी पन्त की रसद'—दामा जी का सच्चा इतिहास ;
२. 'सुक चरित्र'—तोते की कहानी ;
३. 'ध्रुव चरित्र'—ध्रुव तारे का इतिहास ;
४. 'सुदामा चरित्र'—सुदामा की कथा ;
५. 'द्रौपदी वस्त्र हरण'—द्रौपदी के वस्त्रों का हरा जाना ;
६. 'मार्कण्डेय वर चूर्णिका'—मार्कण्डेय पुराण के अनेक चुने हुए अंश ;
७. 'रामचन्द्र वर्णन वर'—राम का श्रेष्ठ चित्रण ;
८. 'शिवदास वर्ण'—शिवदास की प्रशंसा;
९. 'गणपति वर्ण'—गणेश की प्रशंसा ;
१०. 'दूर्वास यात्रा'—दूर की यात्रा ।

अम्बर-दास[1]

'आरसी झगड़ा'—आरसी का झगड़ा—शीर्षक एक हिन्दी कविता, कृष्ण और एक गोपी के बीच शृंगारपूर्ण वार्तालाप, के रचयिता हैं; १८६८ में आगरे से प्रकाशित, आठ अठपेजी पृष्ठ ।

अम्मर दास[2]

सिक्खों के तीसरे गुरु और स्वयं 'भल्ला' (Bhallah) नामक विशेष सिक्ख संप्रदाय के संस्थापक, हिन्दी कविताओं, जो 'आदि ग्रंथ' में हैं, के रचयिता हैं । जे० डी० कनिंघम कृत 'सिक्खों का इतिहास', पृ०३८६ में उनकी कविताओं में से, उनमें प्रकट किए

[1] भा० 'आकाश का दास'

[2] भा० संभवतः 'अमरदास—देवता का दास' के लिए

गए सुंदर भावों के लिए प्रसिद्ध, कुछ का अनुवाद पाया जाता है। उनमें से सती पर दो इस प्रकार हैं:

'सच्ची सती वह नहीं है जो अग्नि की ज्वाला में नष्ट हो जाती है, हे नानक[1] ! सच्ची वह है जो शोक में मरती है।

'जो स्त्री अपने पति से प्रेम करती है वह उसके बाद जीवित न रहने के लिए अग्नि-ज्वालाओं के प्रति अपने को समर्पित कर देती है। आह! यदि उसके विचार उसे ईश्वर तक उठा देते हैं, तो उसका कष्ट मधुर हो जाता है।'

अर्जुन[2] मल (गुरु)

सिक्खों के पाँचवें गुरु और नानक[3] के चौथे उत्तराधिकारी, बड़े चौपेजी लगभग १३०० पृष्ठों के 'आदि ग्रंथ' नामक वृहत् संग्रह, जो नानक और उनके उत्तराधिकारियों की धार्मिक कविताओं का संग्रह है, के निर्माता हैं। उसमें भगत या संत अथवा केवल भाट या कवि, कहे जाने वाले भाट या कवियों की कविताएँ संग्रहीत हैं। संस्कृत[4] में लिखे गए कुछ अंशों को छोड़कर, वे सब उत्तर की हिन्दी में लिखी गई हैं।[5] ग्रंथ की विषय-सूची का विस्तृत विवरण इस प्रकार है :[6]

---

१ इस विस्मयादिबोधक चिह्न के बाद, गजलों में जैसा पाया जाता है, ऐसा प्रतीत होता है, कि ये पंक्तियाँ नानक की हैं।

२ इन्द्र के पुत्र और कृष्ण के मित्र तीसरे पाण्डव का नाम

३ उनका विस्तृत विवरण जे० डा० कनिंघम कृत 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस' (सिक्खों का इतिहास) में देखिए।

४ जे० डो० कनिंघम, 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस', पृ० ३६८

५ भारतवासियों ने नानक की बोली (भाषा) में लाहौर के दक्षिण-पूर्व के प्रदेश की प्रान्तीयता पाई है, किन्तु अर्जुन की बोली (भाषा) अधिक शुद्ध है।

६ वैसे तो मैं अपनी 'रुदीमाँ ऐंदुई' (हिन्दी के प्राथमिक सिद्धांत) में उसके संबंध में काफ़ी कह चुका हूँ, किन्तु जे० डा० कनिंघम कृत 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस' के आधार पर मैं कुछ और निश्चित बातें यहाँ दे रहा हूँ।

१. जप-जी' या 'गुरु मंत्र', अर्थात् दीक्षा-संबंधी प्रार्थना। वह नानक की देन है और उसमें पौरी (Paurî) नामक चालीस श्लोक हैं। वह नानक और उनके शिष्य अंगद में एक प्रकार का संवाद है।

२. 'सोडर रैन रास'[१]—सिक्खों की संध्याकालीन प्रार्थना। नानक उसके रचयिता हैं किन्तु राम-दास, अर्जुन और कहा जाता है, स्वयं गुरु गोबिंद ने उसमें कुछ अंश जोड़े हैं।

३. 'कीरित सोहिल',[२] सोने जाने से पहले की जाने वाली दूसरी प्रार्थना, उसी प्रकार नानक की देन है और जिसमें राम-दास, अर्जुन और स्वयं गोबिंद द्वारा जोड़े गए अंश हैं।

४. चौथा भाग, जो 'आदि ग्रंथ' का सबसे अधिक विस्तृत भाग है, गुरुओं और भगतों द्वारा रचित इकतीस भागों में विभाजित है। उनके शीर्षक इस प्रकार हैं :

(१) सिरी राग (२) मझ (Majh) (३) गौरी (४) आसा (Assa) (५) गूजरी (६) देव गंधारी (७) विहागरा (८) वाडहंस (Wad Hans) (९) सोरठ या सोर्त (Sort) (१०) धनाश्री (११) जैत श्री (१२) टोडी (१३) बैराडी (Baïrarî) (१४) तैलंग (१५) सोधी (१६) बिलावल (१७) गौड (१८) रामकली (१९) नट नारायण (२०) माली गौरा (२१) मारू (२२) तोखारी (Tokhârî) (२३) केदार (२४) भैरों (२५) बसन्त (२६) सारंग (२७) मल्हार

---

[१] सोडर एक विशेष प्रकार की पद्य-रचना का नाम है। 'रैन' का अर्थ 'रात' और 'रास' नाम कृष्ण की लीला को दिया जाता है।

[२] 'कीरित' (कीर्ति से) का अर्थ 'प्रशंसा', और 'सोहिल' —प्रसन्नता का गाना।

(२८) कौड़ा (Kaurâ) (२९) कल्यान (३०) प्रभाती (३१) जै जैवंती।

पूर्वोक्त नामों वाले अंशों के एक भाग के गुरु रचयिताओं के नाम इस समय ये हैं :

(१) नानक (२) अंगद (३) अम्मरदास (४) राम-दास (५) अर्जुन (६) तेग़बहादुर (७) गोविंद, किन्तु केवल संशोधनों के लिए।

वैष्णव, भगत या अन्य व्यक्ति जिनकी रचनाएँ 'ग्रन्थ' में हैं, निम्नलिखित हैं :

(१) कबीर (२) त्रिलोचन (३) बेनी (Behnî) (४) रावदास या रैदास (५) नामदेव (६) धन्ना (७) शेख़ फ़रीद (८) जयदेव (९) भीकन (१०) सेन (११) पीपा (१२) सदना (१३) रामानंद (१४) परमानंद (१५) सूरदास (१६) मीराबाई (१७) बलवन्त (Balwand) (१८) सत्त (Sutta) (१९) सुन्दरदास।

५. 'भोग'—आनन्द। यह 'आदि ग्रंथ' का पूरक भाग है। उसमें नानक और अर्जुन (जिनकी कुछ संस्कृत में हैं, और अर्जुन की एक कविता अमृतसर नगर की बोली में है), कबीर, शेख़ फ़रीद, तथा अन्य सुधारकों की, और उनके अतिरिक्त नौ भाटों या वैष्णव कवियों की, जिन्होंने नवीन सिद्धान्त ग्रहण कर लिए थे, कुछ कविताएँ हैं। वे (नौ) हैं :

(१) भीखा, अम्मरदास के शिष्य (२) कल्ल (Kall), रामदास के शिष्य (३) कल्ल सुहार (Suhâr) (४) जालप (Jâlup), अर्जुन के शिष्य (५) सल्ल (Sall), अर्जुन के दूसरे शिष्य (६) नल्ल (Nall) (७) मथुरा (८) बल्ल (Ball) (९) कीरित।

कनिंघम, 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्ख्स', को ये नाम काल्पनिक प्रतीत होते हैं; उनका कथन है कि 'गुरु विलास' में इन कवियों में से केवल आठ का उल्लेख है, और बल्ल को छोड़ कर इन आठों के नाम भी बिल्कुल भिन्न हैं।

६. 'भोग का बानी'—आनंद की बात अर्थात् 'ग्रन्थ' का निश्चित उपसंहार या अंत। उसमें केवल सात पृष्ठ हैं, जिनमें हैं: (१) पहली स्त्री या बाँदी का भजन, 'श्लोक मेहिल (Meihl) पैहला'; (२) नानक का मल्हार राजा को उपदेश; (३) 'रतन-माला'-(सच्चे भक्त की) रत्नों की माला, नानक कृत; और (४) 'हक़ीकत', अर्थात् लंका के राजा शिवनब (Sivnab) की कथा—गोविंद के समकालीन भाई भन्न (Bhannu) कृत 'पोथी प्राण सिंहली' के अनुकरण पर।

अली[1] (मौलवी)

'ज्ञान दीपक'—ज्ञान का प्रकाश—के संपादक हैं पत्र जो १८४६ में कलकत्ते से हिन्दी, बँगला, फ़ारसी और अँगरेज़ी में निकलता था।

आनंद[2]

लोकप्रिय गीतों के रचयिता हैं जिनमें से अनेक डब्ल्यू० प्राइस द्वारा 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' में प्रकाश में लाए गए हैं। ब्राउटन ने उसका एक रसादिक उद्धृत किया है, उनके 'सेले-क्शन्स ऑव हिन्दू पोयट्री' का पृ० ७०।

---

१ अ० 'उठा हुआ, उच्च आदि'। यह शब्द यहाँ ع ل और ى से तश्दीद के साथ लिखा गया है। इसी हिज्जे के साथ वह मुहम्मद के चचेरे भाई और दामाद का व्यक्तिवाचक नाम भी है।

२ भा० मेरा विचार है 'आनंदकंद'—आनंद की जड़—के लिए, अर्थात् 'विष्णु'

आनंद सरस्वती[1]

निम्नलिखित हिन्दुई रचनाओं के निर्माता हैं, जिनके संबंध में दुर्भाग्यवश मेरे पास कोई सूचना नहीं है :

१. 'नाटकदीप'—नाटक का प्रकाश ;
२. 'नृसिंह तापिनी'—विष्णु (नृसिंह) की भक्ति ;
३. 'पद्मनी'—कमल का फूल (एक प्रसिद्ध नायिका का नाम)

इशरत (पंडित भोलानाथ)

का, जो चौबे कहे जाते हैं, इश्की ने हिन्दुस्तानी कवियों में उल्लेख किया है । पद्यों के अतिरिक्त उनकी रचनाएँ हैं :

× × × ×

२. 'बैताल पचीसी' नाम से ज्ञात पच्चीस सर्गों का हिन्दी पद्यों (दोहों, कवित्तों और चौपाइयों) में संपादन, जिनका उन्होंने शीर्षक 'बिक्रम बिलास' (विक्रम विलास) रखा है, मुद्रित, सुन्दर चित्रों सहित ।

उद्धवचिद्घन (Udghavachiddhan)

'कवि चरित्र' में उल्लिखित हिन्दी कवि, १२५० शक-संवत् (१३२८) में जीवित थे । उनकी देन हैं :

१. 'भक्त चरित्र' - भक्तों की कथा ;
२. 'गोरकुम्भारा चरित्र' (Gorakumbhârâ)—गोरकुम्भारा की कथा ;
३. 'द्रौपदी धावा'—द्रौपदी का धावा ।

---

[1] भा० 'आनद' शब्द का संस्कृत उच्चारण

उम्मेद सिंह

महाराज होल्कर के गुरु—(उर्दू में गीता)—उसका एक और अनुवाद है, संभवतः उम्मेद सिंह कृत, जो पं० मुकुद राम द्वारा लिखित (? संपादित-अनु०) लाहौर के वैज्ञानिक पत्र 'ज्ञान प्रदायिनी पत्रिका' में है।

अंत में रेवरेंड जे० लौंग के 'डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग', कलकत्ते का, १८६७, में हिन्दी में 'भगवत् गीता' का उल्लेख है।

एकनाथ स्वामी

ऋग्वैदिक कर्म करने वाले एक ब्राह्मण थे, जिन्होंने इतनी अधिक ख्याति प्राप्त कर ली थी कि लोग उन्हें 'भागवत' (दिव्य) नाम से पुकारते थे।

उनका जन्म ज्ञानदेव और नामदेव के समय के लगभग हुआ था; वे शक संवत १४६५ (१४१७) में जीवित थे, और उनकी मृत्यु १५४६ (१४६८) में हुई।

उनके पिता का नाम सूर्याजी,, माता का रुक्मिनी और पितामह का चक्रपाणि था।

उनकी कविताएँ विभिन्न प्रकार की और रचनाएँ निम्नलिखित हैं :

१. 'चतुश्लोकी भागवत' पर टीका
२. 'रुक्मिणी स्वयंवर'—रुक्मिणी का विवाह
३. 'शिव लीलामृत'—शिव की लीलाएँ
४. 'राम गीता'—राम का गीत
५. 'आनन्द लहरी'—आनन्द की लहर
६. 'एकनाथी रामायण'—स्वयं उन्हीं की लिखी हुई रामायण

७. 'हस्तामलका टीका'—शंकराचार्य कृत 'हस्तामलका' पर टीका
८. 'भावार्त रामायण'—वाल्मीकि कृत रामयण पर टीका
९. 'स्वात्म सुख'—आन्तरिक सुख

ओंकार[1] भट्ट (श्री पंडित)

सीहोर (Sehore) के रहने वाले, मालवा के एक प्रधान और अत्यधिक विद्वान् ज्योतिषी हैं जो अपने देशवासियों को ठीक-ठीक ज्योतिष-सिद्धान्त, जिसके बारे में उन्हें (देशवासियों को) सही धारणा बहुत कम है, समझाने के उद्देश्य से लिखे गए एक ग्रंथ के रचयिता हैं। 'भूगोल सर्व' शीर्षक यह रचना वास्तव में सूभा जी बापू द्वारा मराठी में[2] पौराणिक ज्योतिषिक सिद्धान्त, 'सिद्धान्त' और कोपरनिकस, पर लिखित 'सिद्धान्त शिरोमणि प्रकाश' शीर्षक पुस्तक का स्वतंत्र अनुवाद है। ये दोनों रचनाएँ कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में हैं। इस पिछली पुस्तक के संबंध में स्वर्गीय मेक नाटन (Mac Naghten) द्वारा कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी को प्रेषित एक पत्र में, भिलसा में गवर्नर-जनरल के एजेंट, श्री विल्किन्सन, का मत इस प्रकार है :

'यह रचना कठोर से कठोर आलोचक की कसौटी पर कसी जा सकती है : वह दार्शनिक विचारों से पूर्ण है। क्योंकि विभिन्न देशों में पैदा हुई चीज़ों की आपस में एक-दूसरे को आवश्यकता पड़ती है, ग्रन्थकार ने उससे यह निष्कर्ष निकाला है कि ईश्वर व्यक्तिगत हित पर आधारित स्नेह के बंधन के व्यापार में प्राणियों को बाँधना चाहता था। इसलिए उसका विचार है कि हिन्दुओं द्वारा

---

[1] भा० 'ईश्वर का रहस्यपूर्ण नाम'

[2] यह रचना छप चुकी है। दे०, 'जर्नल ऑव दि एशियाटिक सोसायटी ऑव कैलकटा', जि० ६, पृ० ४०२

विदेश-यात्रा पर लगाया गया प्रतिबंध प्रकृति के विरुद्ध है। उसने ज्योतिषिक भविष्यवाणियों पर आक्रमण किया है, और ईश्वर की दया तथा उदारता की ओर ध्यान दिलाया है, जो आश्चर्य-जनक रूप में भविष्य की रक्षा करता है, और जो हमारे कामों में एक निश्चित आशावादिता से सदैव हमारा पोषण करता है। उसने हिन्दुओं में भूगोल या ग्रह-विज्ञान-संबंधी अनेक प्रचलित भद्दी भूलों में से किसी को भी बिना उसका पूर्ण तथा संतोषजनक रूप में खण्डन किए बिना नहीं छोड़ा।'

जैसा कि ज्ञात हो जाता है कि यह 'सिद्धान्त' और कोपरनिकस की तुलना में पौराणिक ज्योतिषिक सिद्धान्त का हिन्दी में खण्डन है। उसका अँगरेज़ी में शीर्षक है : A Comparison of the Puranic and Sidhantic Systems of astronomy with that of Copernicus; अठपेजी, आगरा, १८४१।

कनार दास[१]

बुन्देलखण्ड के लेखक, जिनकी देन 'स्नेह लीला' है—रचना जिसका उल्लेख वॉर्ड ने अपनी 'ए व्यू ऑव दि हिस्ट्री, एट्सीटेरा, ऑव दि हिन्दूज़'[२] शीर्षक विद्वत्तापूर्ण और महत्त्वपूर्ण कृति में किया है। यह उत्तर-पश्चिम प्रदेश के देशी स्कूलों में पढ़ाए जाने के लिए प्रकाशित हिन्दी गद्य में एक कथा है।

इसी शीर्षक की एक छोटी कविता है, और जो सात कविताओं के एक संग्रह का भाग है, जिसकी पहली कविता 'सूर्य पुराण'—

---

[१] संभवतः कणाद दास, (अर्थात्) वैशेषिक नामक दार्शनिक प्रणाली के जन्मदाता कणाद के दास या शिष्य

[२] जि० २, पृ० ४८१

सूर्य का पुराण, शीर्षक है और जो १७८६ शक संवत् (१८६४) में आगरे से छपा है।

कबीर[१]

जिन्हें अबुल फ़ज़ल ने एकेश्वरवादी (L' unitaire) कहा है, एक प्रसिद्ध सुधारक, और अत्यन्त प्राचीन हिन्दी के लेखकों में से भी हैं और जिस भाषा में उन्होंने हमें महत्त्वपूर्ण रचनाएँ दी हैं। इस प्रसिद्ध व्यक्ति के संबंध में (हिन्दुई के आदरणीय ग्रन्थ) 'भक्तमाल' में जो पौराणिक लेख मिलता है वह सर्व प्रथम यहाँ दिया जाता है :

छप्पय[२]

कबीर कानि राखी नहीं बर्णाश्रम षट दरशनी ॥[३]
भक्ति बिमुख जो धर्म सो अधर्म करि गायो।
योग यज्ञ ब्रतदान भजन बिन तुच्छ दिखायो ॥
हिंदू तुरक[४] प्रमान रमैनी सबदी साखी।[५]

---

[१] प्राय:, कबीर ह्रस्व 'इ' के साथ, किन्तु विकृत रूप में लिखा मिलता है, किन्तु स्पष्टत: यह अरबी भाषा का एक विशेषण शब्द है जिसका अर्थ है 'बड़ा', और जो नाम अल्लाह को, जो सबसे बड़ा है, दिया जाता है। कबीर अपने को कबीर-दास भी कहते हैं, जो अरबी-भारतीय मिश्रित शब्द है, जिसका अर्थ है 'ईश्वर का दास'।

[२] कबीर की प्रशंसा में यह एक लोकप्रिय कविता, एक प्रकार का भजन है। इस कवित को 'मूल' नाम से कहा जाता है, और जो नाभा जी की रचना बताई जाती है। इसके विस्तार का लेख 'टीका' नाम से पुकारा जाता है। मैं यहाँ जो अनुवाद दे रहा हूँ वह कृष्ण-दास रचित है।

[३] यह सब जानते हैं कि हिन्दुओं में छ: दार्शनिक पद्धतियाँ हैं, और जिनकी अनेक ग्रन्थों में व्याख्या हुई है।

[४] मूल में मुसलमानों को 'तुर्क' कहा गया है, जैसा कि यूरोप में साधारण बोल-चाल की भाषा में कहा जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह नाम भारतवर्ष में सामान्यत: प्रचलित है। फ़िदवी के विरुद्ध व्यंग्य में सौदा ने एक बनिए की स्त्री के मुख से भी यही शब्द कहलाया है।

[५] कबीर द्वारा रचित कविताओं के विशेष नाम।

पक्षपात नाहिं बचन सबहि के हित की भाषी ॥
आरूढ़ दशा ह्वै जगत पर मुख देखी नाहिन भनी ।
कबीर कानि राखो नहीं बर्णाश्रम षट दरशनी ॥

टीका

एक ब्राह्मण अपने गुरु रामानन्द[1] के समीप बैठा था। गुरु और ब्राह्मण में प्रायः लंबी बातचीत हुआ करती थी। एक बाल-विधवा[2] ने ब्राह्मण से उस सन्त के दर्शन कराने की प्रार्थना की। एक दिन वह उसे वहाँ ले गया। उन्हें देखते ही उसने साष्टांग दंडवत किया। गुरु ने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा : "तेरे गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न होगा।—किन्तु, ब्राह्मण ने कहा कि यह तो बाल-विधवा है। गुरु ने कहा, कोई बात नहीं, मेरा वचन व्यर्थ नहीं जायगा। उसके एक पुत्र होगा; किन्तु इसका गर्भ कोई जान न सकेगा, और इसकी बदनामी न होगी। इसका पुत्र मानवता की रक्षा करेगा।"

रामानन्द के वचनानुसार वह स्त्री गर्भवती हुई। दस महीने समाप्त हो जाने पर उसके पुत्र उत्पन्न हुआ, किन्तु उसने अपना पुत्र एक तालाब की लहरों में फेंक दिया। एक अली नामक जुलाहे ने इस बच्चे को पाया, और उसे उठा लिया। यह बच्चा कबीर थे। बाद को एक आकाश-वाणी उन्हें सुनाई दी, जिसने उनसे कहा : "रामानन्द के शिष्य बनो, तिलक लगाओ, और उनके संत संप्रदाय का चिह्न धारण करो।" कबीर ने

---

[1] इस प्रसिद्ध व्यक्ति के संबध में एच० एच० विल्सन द्वारा हिन्दुओं के संप्रदायों पर लिखा गया विवरण (Memoir) देखिए, 'एशियाटिक रिसर्चेज' की जिल्द १७।

[2] ये दो शब्द भारत में भली भाँति साथ-साथ चलते हैं; क्योंकि वहाँ प्रायः बच्चों का विवाह हो जाता है, जिनमें वय: संधि से पूर्व सहवास नहीं होता।

यथाशक्ति रामानन्द का शिष्य बनने की चेष्टा की; किन्तु गुरु ने मलेच्छ[1] का मुँह देखना पसंद न किया।

एक समय, रात्रि के बिल्कुल समाप्त होने से पूर्व कबीर उस घाट की सीढ़ियों पर जाकर लेट गए जहाँ रामानन्द स्नान करने आते थे। स्वामी[2] आए, और संयोगवश उनका खड़ाऊँ[3] कबीर के सिर में लग गया। कबीर काँपते हुए उठे; किन्तु स्वामी ने उनसे कहा: "राम, राम शब्द जपो।" कबीर ने वैसा ही किया, प्रणाम किया, और वापिस चले आए। सुबह होने पर वे उठे, माथे पर रामानन्दी तिलक लगाया, उसी संप्रदाय की गले में कंठी पहनी और अपने दरवाज़े पर आए। उनकी माता ने उनसे पूछा कि क्या तुम पागल हो गए हो। उन्होंने उत्तर दिया: "मैं स्वामी रामानन्द का शिष्य हो गया हूँ।"

सब लोगों को आश्चर्य हुआ और स्वामी के दरवाजे पर शोर मचाते हुए गए। इस पर आश्चर्य-चकित हो उन्होंने कबीर को बुला भेजा। एक पर्दे के पीछे बैठे हुए, उन्होंने उनसे पूछा कि क्या वे वास्तव में उनके शिष्य हैं। "कबीर ने उत्तर दिया, महाराज राम-नाम[4] के अतिरिक्त भी क्या और कोई मंत्र है—रामानन्द ने कहा, यह सर्वोत्तम दीक्षा-शब्द है।—कबीर ने फिर कहा, महाराज क्या यह मंत्र दीक्षा पाने वाले के कान में नहीं पढ़ा जाता? फिर आपने तो मेरे सिर पर चरण रख कर यह मंत्र दिया।"

---

[1] अर्थात् एक जंगली का, एक व्यक्ति का जो हिन्दू नहीं है। वास्तव में अली ने कबीर को मुसलमान धर्म में ऊपर उठाया।

[2] शब्द जो गुरु के समान है; यह एक आदरसूचक उपाधि है जो विद्वानों और साधु-संतों को दी जाती है।

[3] चार टाँगों का एक प्रकार का लकड़ी का भारी जूता, जो एक छोटी मेज़ से मिलता-जुलता है। ब्राह्मण यह जूता घर से बाहर पहिनते हैं; भारत के कुछ कैथोलिक मिशनरी इसका प्रयोग करते हैं।

[4] संप्रदाय का दीक्षा-शब्द

इन शब्दों के सुनते ही रामानन्द ने पर्दा हटा दिया, और कबीर को हृदय से लगा लिया।

इसी बीच में ईश्वर-प्रेम से ओत-प्रोत हो कबीर कपड़े बुनते और उन्हें बेचने ले जाते, किन्तु इससे उनके धार्मिक जीवन में कोई विघ्न न पड़ता था। एक दिन जब वे कपड़े का एक टुकड़ा बाजार ले गए, स्वयं विष्णु (भगवत) ने वैष्णव[1] रूप में उनसे भिक्षा माँगी। कबीर उन्हें टुकड़े का आधा भाग देने लगे, किन्तु एक बने हुए भिखारी की भाँति उन्होंने उनसे कहा कि आधा मेरे किसी काम का नहीं, तो कबीर ने पूरा टुकड़ा दे दिया; और झिड़कियाँ सुनने के डर से वे अपने घर वापिस न आए, किन्तु बाज़ार में लेट रहे। उधर उनके घर वालों ने बिना कुछ खाए तीन दिन तक इन्तज़ार किया। इस बीच में, कबीर की सच्ची भक्ति जानकर, विष्णु ने (कबीर का) रूप धारण किया, और उनके घर एक बैल पर अनाज लाद कर ले गए। यह सब देखकर कबीर की माता ने चिल्ला कर कहा: "तो तू यह चुरा लाया है? यदि हाकिम को मालूम हो गया तो वह तुझे जेल में बन्द कर देगा।"

कबीर के घर सामान छोड़ कर विष्णु, उसी वैष्णव रूप में, बाज़ार लौट आए और कबीर को घर वापिस भेज दिया। उन्होंने अपने घर पर इतना सामान पाकर अपना रोज़गार छोड़ दिया और राम की भक्ति में पूर्णतः तल्लीन हो गए। इस बात पर ब्राह्मणों ने आकर कबीर को चारों तरफ़ से घेर लिया, और उनसे कहने लगे: "दुष्ट जुलाहे, तुझे इतनी दौलत मिल गई, किन्तु तूने हमें नहीं बुलाया; केवल तू वैष्णवों को ही

---

[1] एक विशेष संप्रदाय का अनुयायी, जिसकी विष्णु में, जिनसे यह शब्द बना है, अत्यधिक भक्ति होती है। इसके संबंध में विल्सन ने हिन्दुओं के संप्रदायों पर अपने विद्वत्तापूर्ण 'विवरण' (Memoir) में विस्तार से कहा है, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६ और १७। 'भक्तमाल' एक वैष्णव की देन है, और जिसमें हिन्दू धर्म की इस शाखा से संबंधित सब प्रसिद्ध व्यक्ति हैं।

खिलाता है।" कबीर ने उत्तर दिया मैं बाज़ार जाता हूँ, और तुम्हारे लिए कोई चीज़ लाऊँगा। तब कबीर भयभीत होते हुए बाज़ार गए और वहाँ पृथ्वी पर लेट रहे। ईश्वर ने कबीर के नए चिह्न धारण किए और वे इतना अधिक रुपया लेकर उनके घर गए कि उन्हें उसे एक बैल पर लादना पड़ा। उसे उन्होंने ब्राह्मणों में बाँट दिया; तत्पश्चात् कबीर को उसकी सूचना दे, उन्हें बाज़ार से घर भेज दिया; और कबीर भी अपने घर पहुँच कर उसे बाँटते रहे। इसी बीच में उनकी ख्याति नगर में फैल गई। उनके दरवाज़े पर लोगों की भीड़ लगातार जमा रहने लगी, यहाँ तक कि उन्हें अपने भक्ति-कार्य करने तक का समय न मिल पाता था।

जब सिकन्दर पादशाह[१] सिंहासन पर बैठा, तो सब ब्राह्मण कबीर की मानी जाने वाली माता के, जो मुसलमान थी, पास गए और उसे अपने साथ राज-दरबार में ले गए। वहाँ पहुँच कर यद्यपि दिन था, एक मशाल जला कर, वह सुलतान के सामने चिल्लाने लगी : "हुजूर आपके राज्य में अंधकार छाया हुआ है, क्योंकि मुसलमान हिन्दुओं की कंठी और तिलक धारण करते हैं, यह संकट है।" सुलतान ने कबीर को बुला भेजा और उन्हें उसके सामने पहुँचने में देर न लगी। लोगों ने उनसे कहा 'सलाम करो'। उन्होंने उत्तर दिया: "मैं तो राम को जानता हूँ, सलाम से मेरा क्या काम"। जब सुलतान ने ये अशिष्ट शब्द सुने तो उसने कबीर को उनके

---

[१] पादशाह, जो फ़ारसी शब्द है, की उपाधि मुसलमान सम्राटों को दी जाती है। सिकन्दर, जिसका उपनाम, उसकी जाति का नाम, 'लोदी' है, वास्तव में दिल्ली का, धर्म से मुसलमान, पठान राजा था।

[२] इन शब्दों का खेल समझने के लिए यह जानना आवश्यक है कि 'सलाम' अभिवादन के लिए मुसलमानों द्वारा प्रयुक्त होता है, और 'राम' (विष्णु के एक अवतार का नाम) इसी दृष्टि से हिन्दुओं द्वारा प्रयुक्त होता है। यह दूसरा शब्द, जो एक प्रकार से धर्म-संबंधी है, स्पेन के कैथोलिक अभिवादन के समान है : 'Ave, Maria'

पैर ज़ंजीर में बाँध कर गंगा में बहा देने की आज्ञा दी। ऐसा ही किया गया; किन्तु कबीर आश्चर्यजनक रूप में पानी से निकल आए। फिर उन्हें आग में डाला गया, यह भी व्यर्थ सिद्ध हुआ। उन्हें मार डालने के जितने भी साधन ग्रहण किए गए वे सब निरर्थक साबित हुए। उन्हें हाथी के पैरों के नीचे डाला गया। पशु उन्हें देखते ही चिंघाड़ा और भाग गया। तब राजा अपने हाथी से उतरा, और कबीर के पैरों पर गिर उनसे कहने लगा: "भगवत्, मेरी रक्षा करो। मैं आप को ज़मीन, गाँव जो आप चाहें दूंगा"। कबीर ने उसे उत्तर दिया: "मेरा धन राम है; इन सब नाशवान् वस्तुओं से क्या लाभ जिनके पीछे लोग अपने पुत्र, अपने पिता, अपने भाई से लड़कर मर जाते हैं!"

जब कबीर अपने घर लौटे तब सब साधुओं ने उन्हें प्रसन्न लौटते हुए पाया। इसके विपरीत जो उनके विरोधी थे वे अत्यन्त क्षुब्ध हुए, किन्तु कबीर को पीड़ित करने के लिए ब्राह्मणों ने जो कुछ साधन ग्रहण किए थे, वे सब असफल रहे। तब उन्होंने उनकी जाति में ही उनकी ख्याति बिगाड़ने की सोची। फलतः चार ब्राह्मणों ने मूँछ-दाढ़ी मुड़ाई, आस-पास के वैष्णवों को पत्र लिखे, और एक विशेष दिन उन्हें निमंत्रित किया। तदनुसार जब वैष्णवों का समुदाय इकट्ठा होने लगा, उनमें से एक ने कबीर से ही कबीर का घर माँगा, किन्तु कबीर चुपके से कहीं चले गए, और जाकर किसी स्थान में छिप रहे। तब राम कबीर के रूप में आवश्यक धन लेकर भोजन बाँटने गए। तीन दिन तक जो लोग उपस्थित थे उन सब को वे भोजन से सन्तुष्ट करते रहे, और अंत में वैष्णव का रूप धारण कर, कबीर को वापिस भेज अंतर्धान हो गए। कबीर ने अवसरानुकूल कार्य किया, सब वैष्णवों के साथ आदरपूर्ण व्यवहार कर उन्हें विदा किया।

एक दिन जब अप्सराएँ कबीर को डिगाने आईं, उन्होंने उन्हें ये पंक्तियाँ गाकर सुनाईं।

पद

तुम घर जावौ मेरी बहिना । यहाँ तिहारो लेना न देना राम बिना गोबिंद बिना बिष लागैं ये बैना । जगमगात पट भूषण सारी उर मोतिन के हार । इन्द्रलोक ते मोहन आई मोहिं करन भरतार । इन बात को छाँड़ि देहु री गोबिंद के गुन गावौ । तुलसी[१] माला क्यों नहीं पहिरो बेगि परम पद पावौ । इन्द्रलोक में टोट पर्‌यो है हमसों और न कोई । तुम तो हमें डिगावन आई जाहु देह की खोई । बहुते तपसी बाँधि बिगोये[२] कच्चे सूत के धागे । जो तुम यतन करो बहूतेरा जल में आगि न लागे । हो तो केवल हरि के शरणै तुम तौ झूठी माया । गुरु परताप साधु की संगति मैं जु परम पद पाया । नाम कबीर जाति जुलाहा गृह बन रहौं उदासी । जो तुम मान महत करि आई तो इक माइ दूजे मासी ।[3]

संक्षेप में अप्सराओं ने व्यर्थ ही हाव-भाव प्रकट किए, सफलता न मिल सकने पर उन्हें निराश होकर वापिस जाना पड़ा ।

जब कबीर मरणासन्न[४] थे, तो हिन्दुओं ने कहा कि उन्हें जलाना चाहिए ; मुसलमानों ने कहा कि दफ़नाना चाहिए । वे अपना कपड़ा ओढ़ कर सो गए (मृत्यु को प्राप्त हुए) । उनकी मृत्यु का समाचार सुन दोनों दल आपस में झगड़ने लगे । अंत में वे शव के पास गए और कफ़न

---

[१] Ocymum Sanctum, हिन्दुओं के घरों में पवित्र पौधा ।

[२] कबीर ने यहाँ जो कहा है उसके उदाहरण रूप में, स्वर्गीय शेज़ी (Chêzy) द्वारा अनूदित, 'l'Ermitage de Kandow' शीर्षक के अंतर्गत, संस्कृत का एक रोचक क़िस्सा देखिए, 'ज़ूर्ना एशियातीक' (Journal Asiatique), वर्ष १८२२ ।

[3] यह पद तासी से शब्दशः अनुवाद नहीं है, किन्तु 'भक्तमाल' की 'भक्ति रस बोधिनी टीका' (नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, १८८३ ई०) से लिया गया है । तासी द्वारा दिए गए पद के फ्रेंच अनुवाद और इस पद में कोई विशेष अंतर नहीं है । —अनुवादक

[४] 'शरीर छोड़ना' शब्द से ।

उठाया, किन्तु उन्होंने वहाँ शव के स्थान पर केवल फूल पाए। हिन्दुओं ने आधे फूल लेकर उन्हें जला दिया, और उस पर एक समाधि बनवा दी। मुसलमानों ने दूसरा आधा भाग लिया और उस पर कब्र बनवा दी।

वे एक साधारण जुलाहे[1] और रामानंद के बारह प्रधान शिष्यों में से थे, और जिन्होंने स्वतंत्र रूप से एक अत्यंत गम्भीर और अत्यंत बड़े सुधार का प्रचार किया। उनका नाम 'कबीर' केवल एक उपाधि है जिसका अर्थ 'सबसे बड़ा' है। लोग उन्हें 'ज्ञानी' नाम से भी पुकारते हैं। व्यक्तिवाचक नामों की अपेक्षा ये दो विभिन्न तख़ल्लुस हैं। कहने वाले के हिन्दू या मुसलमान होने के अनुसार यह व्यक्ति 'गुरु कबीर' या 'कबीर साहब' के नाम से पुकारा जाता था। यह ज्ञात है कि कबीर दोनों के द्वारा समादृत थे और दोनों उन्हें अपने-अपने मत का बताते थे। कहा जाता है उनकी मृत्यु के समय भी इन मत वालों में बड़ा झगड़ा हुआ, उनमें से एक (मत वाले) उनका शव दफ़नाना चाहते थे, और दूसरे जलाना। उस समय कबीर उनके बीच के प्रतीत होते थे, और उन्होंने उनसे अपने नश्वर शरीर को ढकने वाले कफ़न को हटा कर देखने के लिए कहा। उन्होंने वैसा ही किया, और केवल फूलों का एक ढेर पाया। बनारस का तत्कालीन शासक, बनार (Banâr) राजा, या वीरसिंह राजा, आधे फूल इस शहर में ले गया, जहाँ उन्हें जलाया गया, और 'कबीर चौरा' नामक समाधि में उनकी राख जमा कर दी गई। दूसरी ओर मुसलमान दल के नेता, बिजली खाँ पठान, ने गोरखपुर के समीप मगहर में, जहाँ वास्तव में कबीर मृत्यु को प्राप्त हुए, दूसरे आधे भाग पर कब्र

[1] मेरे पास एक मूल चित्र है जिसमें कबीर अपने जुलाहागोरी के कारखाने के सामने बैठे हुए चित्रित किए गए हैं : उनकी बाईं ओर उनका पुत्र कमाल, और दाईं ओर एक दूसरा काम करने वाला और शिष्य है जिसकी उपाधि 'हकीम' है।

बनवा दी। कबीर संप्रदाय के लोग या कबीर-पंथी समान रूप से इन दोनों स्थानों पर जाते हैं।

कबीर के वास्तविक जीवन-काल के सम्बन्ध में कुछ अनिश्चितता है। 'भक्तमाल' और उसकी टीका करने वाले प्रियादास, 'खुलासतुत्तावारीख़', और अंत में अबुलफ़ज़ल[1] के अनुसार, कबीर सिकन्दर लोदी, जिसका राजत्व-काल १४८८ से १५१६ ई० तक रहा, के समय में जीवित थे, और इस सुलतान से पहले ही अपने सिद्धान्त विकसित कर लिए थे। दूसरी ओर, रामानंद, जिनके कबीर शिष्य थे, चौदहवीं शताब्दी के लगभग अंत में रहते थे,[2] जिससे कनिंघम[3] द्वारा दी गई कबीर के उपदेशों की लगभग तिथि १४५० बहुत कुछ संभव प्रतीत होती है। किन्तु ब्यूकैनैन[4] ने १२७४ उनकी मृत्यु की निश्चित तिथि दी है – तिथि जो उन्होंने अत्यन्त बुद्धिमान और विश्वसनीय प्रतीत होने वाले, पटना के कबीरपंथी विवेकदास से ली। कबीरपंथियों की परम्परा के अनुसार उनका जन्म १२०५ संवत्, १०७० शक संवत् (११४८ ई०) में हुआ, मृत्यु १५०५ संवत्, १३७० शक संवत् (१४४८ ई०) में हुई, और उनकी आयु तीन सौ वर्ष की होनी चाहिए। उनका जन्म-स्थान, जो कबीर-काशी के नाम से प्रसिद्ध है, एक तीर्थ-स्थान है।

कबीर मूलतः मुसलमान थे[5]; रामानंद की भाँति उनके बारह

---

१ 'आईन अकबरी', जि० २, पृ० ३८

२ 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६, पृ० ५६

३ 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्ख्स', पृ० ३४

४ मौंटगोमरी मार्टिन, 'ईस्टर्न इंडिया', जि० २, पृ० ४८६

५ ग्रैहम, 'ऑन सूफ़ीज़्म', 'ट्रांज़ैक्शन ऑव एशियाटिक सोसायटी ऑव बॉम्बे' में, जि० १, पृ० १०४

शिष्य थे, जिनमें से धर्म-दास[1] का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वे अपने शिष्यों को 'साध' (पवित्र) कहते थे; उनकी इच्छा थी कि वे अपनी भक्ति के पूर्णत्व में समान हों।

गोरखपुर के समीप मगर या मगहर में कबीर की स्मृति में जो मुसलमानी स्मारक है वह नवाब फ़दी खाँ (Fadî khân) द्वारा बनवाया गया था, जो लगभग दो सौ वर्ष हुए, गोरखपुर का शासक था। यह स्मारक एक मुसलमान द्वारा रक्षित रहता है जिस कार्य से मिली आमदनी पीढ़ी दर पीढ़ी चलती है। अक्सर यहाँ अनेक यात्री आते हैं, जो स्पष्टतः कबीर की निधन-तिथि पर लगे मेले के अवसर पर, लगभग पाँच हज़ार हो जाते हैं। बनारस के हिन्दू स्मारक के संबंध में भी यही बात है।[2]

'बीजक' में पाई जाने वाली गोरखनाथ से कबीर की बात-चीत[3] ('गोष्ठी'), का, जिसका पाठ कैप्टेन डब्ल्यू० प्राइस कृत 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स', जि० पहली, १४० तथा बाद के पृष्ठ, में दिया गया है, मैं अनुवाद देना चाहता था; किन्तु मैंने उसे छोड़ दिया है, क्योंकि इस अंश पर न तो राजा विश्व-मित्र सिंह कृत 'टीका' और न कोई दूसरी चीज मिल सकी, जिसकी कबीर की इस क्लिष्ट शैली के लिए प्रायः आवश्यकता पड़ती है।

कबीर ने न केवल हिन्दी में लिखा ही, वरन् इस सामान्य भाषा के प्रयोग पर ज़ोर दिया, और उन्होंने संस्कृत तथा पंडितों की अन्य सब भाषाओं का विरोध किया।

---

[1] उन पर लेख देखिए।

[2] मांट्गोमरी मार्टिन, 'ईस्टर्न इंडिया', जि० २, पृ० ३६३ और ४६१

[3] यह विलसन द्वारा 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० १८६, में उद्धृत हुई है।

कबीर कृत कही जानेवाली रचनाएँ इतनी अधिक विविध प्रकार की और इतनी अधिक बड़ी-बड़ी हैं कि (वे) बिलकुल उन्हीं की नहीं कही जा सकतीं, और कुछ तो प्रत्यक्षतः आधुनिक हैं; किन्तु जो 'रमैनी' और 'शब्द' नाम से प्रचलित हैं उनमें से कई ऐसी हैं जिनकी प्राचीनता स्पष्ट है,[1] और जो पहली हैं (वे) सामान्यतः उर्दू रचनाएँ हैं। इतने पर भी उनकी प्रधान रचना-शैली समान है, किन्तु उनमें मुख्य भेद शब्दों के चयन की दृष्टि से है जिनमें से लगभग एक का भी फ़ारसी से संबंध नहीं है। श्री डब्ल्यू० प्राइस[2] ने, जिनकी रचना से मैंने इससे पहले का कुछ भाग लिया है, कबीर कृत 'रेख़तः' के ४३ पृष्ठों का केवल मूल भाषा में संकलन किया है, और जनरल हैरियट (Harriot) ने उनके 'विजक' के अवतरणों का। चुनार के सूबेदार रामसिंह की मित्रता के कारण मिली 'विजक'[3] की जो प्रति उनके पास थी वह उन्होंने अत्यन्त कृपापूर्वक मुझे दे दी है, और जो 'कैथी नागरी' नामक अक्षरों में बहुत अच्छी लिखी हुई है। श्री विल्सन के पास इसी रचना की एक और प्रति है, और नागरी अक्षरों में (लिखित) कबीर की कविताओं, जैसे 'रमैनी', 'रेखतः' आदि का एक संग्रह है। 'विजक' में तीन सौ पैंसठ 'साषी' या दोहा, एक सौ बारह शब्द' नामक पद्य, चौरासी 'रमैनी' नामक तथा अन्य अनेक कविताएँ हैं, (और) उसमें कुल १४६ चौपेजी पृष्ठ हैं।

---

[1] श्री विल्सन का कहना है ('एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६, पृ० ५८) कि इन संग्रहों में 'कहहि कबीर' शब्दों से, जो कुछ वास्तव में उनका है; 'कहैं कबीर' शब्दों से, जो कुछ उनका वाणियों का सार है; और 'कहिए दास कबीर' शब्दों से, जो कुछ उनके शिष्यों (दासों) में से किसी एक का है, भेद किया जाता है।

[2] 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स', भूमिका, पृ० ६

[3] विजक, यह बड़ा विजक है। छोटे विजक के लिए भागूदास पर लिखित छोटा-सा लेख देखिए, पहली जिल्द (मूल), पृ० ३२५ (द्वितीय संस्करण—अनुवादक)

कबीर की साखियों का 'बयाज़-इ साषी कबीर'[1] अर्थात् कबीर की साषियों का अल्बम शीर्षक से संग्रह किया गया है। सब कविताएँ सामान्य हिन्दी छन्दों दोहा, चौपाई, समई (Samaï) में लिखी गई हैं।

कबीर के नाम से कही जाने वाली सभी रचनाओं की सूची इस प्रकार है। ये सब बनारस के 'चौरा' नामक स्मारक में कबीर-पंथियों द्वारा सुरक्षित 'खास ग्रंथ' अर्थात् श्रेष्ठतम पुस्तक शीर्षक संग्रह में संग्रहीत हैं।

१. 'सुख निधान', अर्थात् सुख का घर। यह पुस्तक और सब दूसरी पुस्तकों की कुंजी है : इसमें स्पष्टता और सुबोधता का उत्तम गुण है। इसमें कबीर के वचन धर्म-दास के प्रति हैं, यद्यपि यह श्रुतगोपाल-दास नामक एक दूसरे शिष्य द्वारा लिखी प्रतीत होती है;

२. 'गोरखनाथ की गोष्ठी', कबीर का गोरखनाथ के साथ वाद-विवाद, अथवा 'गोरखनाथ की कथा' ;

३. 'कबीर पाँजी'—कबीर की पत्रिका ;

४. 'बलखी (बलख की) रमैनी'—बोध की कविता ;

५. 'रामानंद की गोष्ठी'। इस पुस्तक में कबीर का रामानन्द के साथ वाद-विवाद है ;

६. 'आनन्द राम सागर' या 'आनन्द सार' ;

७. 'शब्दावली' ;

८. 'मंगल', सौ छोटी कविताएँ; संभवतः बिल्व मंगल कृत 'मंगलाचरण' ;

---

[1] इस रचना की एक प्रति का उल्लेख फ़रजाद कुली की पुस्तकों की हस्तलिखित सूची में है, सूची जो वास्तव में रॉयल एशियाटिक सोसायटी की है।

९. 'वसन्त', इसी नाम के राग में लिखे गए सौ भजन ;

१० 'होली', भारतीय उत्सव के गान[1] 'होली' या 'होरी' नाम से दो सौ पद ;

११. 'रेखतः', सौ गीति-कविताएँ। इन तथा निम्नलिखित कविताओं का विषय सदैव नैतिक तथा धार्मिक रहता है ;

१२. 'झूलना', एक भिन्न शैली में पाँच सौ गीति-कविताएँ ;

१३ 'कहार', (Kahâra) एक दूसरी शैली में पाँच सौ गीति-कविताएँ ;

१४. 'हिंडोल', बारह दूसरी गीति-कविताएँ; संगीत-शैली की भी कही जाती हैं ;

१५ 'बारहमासा', बारह महीने, एक धार्मिक दृष्टिकोण के अंतर्गत, कबीर की प्रणाली के अनुसार ;

१६. 'चाँचर', बाईस की संख्या में ;

१७. 'चौंतीसा', संख्या में दो। इन अंशों में अपने धार्मिक महत्त्व के साथ नागरी वर्णमाला के चौंतीस अक्षरों का प्रतिपादन है ;

१८. 'अलिफ़-नामा', उसी तरह से प्रतिपादित फ़ारसी वर्णमाला क्योंकि सिक्ख-पाठ प्रायः फ़ारसी अक्षरों में लिखे जाते हैं ;

१९ 'रमैनी', सिद्धान्त तथा वाद-विवाद-संबन्धी छोटी कविताएँ। 'कबीरदास कृत रमैनी' शीर्षक के अंतर्गत उसका ३९७ पृष्ठों का एक संस्करण १८१८ में बनारस से प्रकाशित हुआ है ;

२०. 'साषी', संख्या में पाँच हज़ार। इनमें से हरएक का एक छंद है जिसकी रचना केवल दो पंक्तियों में हुई है। 'कवि वचन सुधा', अंक १० के दो पृष्ठों में साषियों के उद्धरण पाए जाते हैं।

---

[1] जमार पर लिखित लेख में इस प्रकार के एक गीत का अनुवाद देखिए।

२१. 'बिजक', छः सौ चौवन भागों में।

'आगम', 'बानी' आदि अनेक प्रकार के छंद भी हैं, जो उन लोगों के लिए जो इस संप्रदाय के सिद्धान्तों की थाह लेना चाहते हैं एक गंभीर अध्ययन क्रम प्रस्तुत करते हैं। कुछ साखी, शब्द और रेखतः कबीर-पंथियों को साधारणतः कण्ठ रहते हैं और वे उन्हें उपयुक्त अवसरों पर उद्धृत करते हैं। इन सब रचनाओं की शैली एक अकृत्रिम सरलता से विभूषित है, जो मोहित और प्रभावित करती है: उसमें एक शक्ति और एक विशेष रमणीयता है। लोगों का कहना है कि कबीर की कविताओं में चार विभिन्न अर्थ हैं: माया, आत्मा, मन और वेदों का सरल सिद्धान्त।[1]

कबीर की सभी रचनाओं में ईश्वर की एकता में दृढ़ विश्वास और मूर्तिपूजा के प्रति घृणा भाव व्याप्त है। ये बातें उन्होंने जितनी हिन्दुओं के सम्बन्ध में कही हैं उतनी ही मुसलमानों के सम्बन्ध में। उन्होंने उनमें पंडितों और शास्त्रों का जितना मज़ाक बनाया है उतना ही मुल्लाओं और क़ुरान का। सिक्ख संप्रदाय के संस्थापक नानक ने कबीर के सिद्धान्तों से ही अपने सिद्धान्त लिए; सिक्ख कबीर-पंथियों से मिलते भी बहुत हैं, केवल वे उनकी (कबीर-पंथियों की) अपेक्षा कट्टर कम होते हैं।

उधर पोलाँ द सैं-बार्थेलेमी (Paulin de Saint-Barthélemy) हमें बताते हैं कि कबीरपंथियों के, जिन्हें वे 'कबीरी' (Cabirii) और 'कबीरिस्ती' (Cabiristae) नामों से पुकारते हैं, धर्म के सारभूत सिद्धान्तों से सम्बन्धित, हिन्दुस्तानी भाषा में लिखित, निम्नलिखित दो रचनाएँ हैं:

१. 'सतनाम कबीर', रचना जिसका उल्लेख श्री विल्सन द्वारा

---

[1] एच० एच० विल्सन, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६, पृ० ६२

प्रस्तुत कबीर कृत कही जाने वाली रचनाओं की लम्बी सूची में भी, जिसे मैंने ऊपर उद्धृत किया है, नहीं है।

२. 'मूल पंसी' (Panci), अर्थात् मूल पुस्तक[1], रचना जिसकी एक हस्तलिखित प्रति, पी० मारकस अ तुम्बा (P. Marcus à Tumba) द्वारा इटैलियन भाषा में अनुवाद सहित, बोर्जिया (Borgia) संग्रह में पाई जाती है। अनुवाद 'मैं द लौरिएँत्' (Miens de l' Orient) की तीसरी जिल्द में प्रकाशित हुआ है। शायद यह १२५५ (१८३९-१८४०) में बरेली से मुद्रित 'मूल शांति' हो।[2]

पी० मारकस अ तुम्बा (P. Marcus à Tumba) का, पी० पोलाँ द सैं-बार्थेलेमी (P. Paulin de Saint-Barthélemy) द्वारा उद्धृत, इन संप्रदाय वालों के सम्बन्ध में जो कुछ कहना है वह जनरल हैरिअट (Harriot) द्वारा अपने 'मेम्वार सूर लै कबीर-पंथी'[3] (Memoire Sur les Kabirpanthi, कबीरपंथियों का विवरण) में दिए उनके (कबीरपंथियों के) सम्बन्ध में प्रकट किए गए विचार से साम्य रखता है। (हैरिअट ने) उसमें उन्हें विशुद्ध ईश्वरवादियों के रूप में चित्रित किया है। कबीर ब्राह्मण (धर्मावलंबी) भारत के लिए लगभग वैसे ही सुधारक थे जिस प्रकार बहुत दिनों बाद मुस्लिम भारत के लिए सैयद अहमद हुए। उन्होंने पूर्ण सुधार का उपदेश दिया और उनका प्रयास सफल भी हुआ, क्योंकि अपने सरल व्यवहार और सदाचरण के लिए प्रसिद्ध कबीरपंथी अब भी बंगाल, बिहार अवध और मालवा प्रान्तों में एक बहुत बड़ी संख्या में पाए जाते हैं।

---

[1] श्री विलसन का विचार है कि इसे 'मूलपंथी' पढ़ना चाहिए।

[2] जे० लौंग, 'डेसक्रिप्टिव कैटैलौग', १८६९, पृ० ३३

[3] 'जूर्नाँ एशियातीक' (Journal Asiatique), फ़रवरी, १८३२ का अंक

इस सुधारक की रचनाओं से, जरनल हैरिअट द्वारा अनूदित, कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :[1]

'भौतिक इच्छाओं से संवेष्टित आत्मा को कौन प्रभावित कर सकता है ?......कहो वह कौन सा देश है जो लोगों ने नहीं देखा, वह मूर्खता का है। वे कडुवा नमक खाते हैं, और वे बेचने जाते हैं कपूर।

एक पंक्ति का आधा हिस्सा ही बहुत है, यदि उस पर अच्छी तरह विचार किया जाय। पंडित की पोथियाँ, जिनका रात-दिन गान किया जाता है, हैं क्या ?

जिस प्रकार दूध उत्तम मक्खन देता है, उसी प्रकार कबीर की आधी पंक्ति चारों वेदों के बराबर है।

एक ओर लोग ईश्वर को 'हर' नाम से पुकारते हैं, दूसरी ओर 'अल्लाह' के नाम से : ध्यानपूर्वक तू अपने हृदय को टटोल, वहाँ तू हर एक चीज़ पायेगा......

एक क़ुरान पढ़ते हैं, दूसरे शास्त्र। ईश्वर की भावना से पूर्ण गुरु द्वारा शिक्षा लिए बिना, तुम जान बूझकर जीवन नष्ट करते हो। विचार कर और जो कुछ व्यर्थ है उसे उठाकर एक ओर रख दे, तब तुझे सच्चा दर्शनशास्त्र प्राप्त होगा।

माया को छोड़, और तू कोई कठिनाई न पावेगा...ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ ईश्वर न हो।

लोग एक झूठा नाम जानते और उसे मानते हैं, सत्य के रूप में। जब तारे चमकते हैं, सूर्य छिप जाता है। इसलिये जब आत्मा चिन्तन करती है, तो मिथ्या नष्ट हो जाता है।

---

[1] वही। कबीर की रचनाओं से लंबे उद्धरण प्रोफ़ेसर विल्सन द्वारा दिए गए हिन्दू संप्रदायों के विवरण (मेम्वायर) में भी मिलते हैं, 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १६।

यह शरीर कभी ज्ञान प्राप्त न करेगा : वह लोगों के पास है, उनके निकट है; वे उसे खोजते नहीं, वरन वे कहते हैं : वह दूर है। सब ओर से वे मिथ्या से परिपूर्ण हैं......

हे मूर्ख! इस मानव-शरीर, जिसमें चिन्ताएँ और बुरी तृष्णाएँ हैं, के मोह को जला डाल। प्रासाद बिना नींव के बना हुआ है; मैं कहता हूँ, बच, नहीं तो तू दब जायेगा।

क्या तू ब्राह्मणों की धोखाधड़ी की ओर ध्यान दे सकता है? बिना हर का ज्ञान प्राप्त किए, वे नाव गहरे में छोड़ देते हैं। ब्रह्म की भावना प्राप्त किए बिना क्या कोई ब्राह्मण हो सकता है?'

कबीर-दास[1]

'ज्ञान समाज'—ज्ञान की सभा, हिन्दी में शिक्षा-प्रद पाठ, फ़ारसी अक्षरों में, के रचयिता, लाहौर, १८६६, ७०० अठपेजी पृ।

करीम बख़्श[2] (मौलवी मुहम्मद)

ने प्रकाशित किए हैं :—

× (उर्दू में रचनाएँ) ×

६. 'दायरा इ इल्म' (१८४० संस्करण)······और उसे 'विद्या चक्र' शीर्षक के अंतर्गत, जो उर्दू शीर्षक का अनुवाद है, हिन्दी, नागरी अक्षरों, में प्रकाशित किया है।

× × ×

[1] भा० 'कबीर का दास'

[2] फ़ा० अ० 'दयावान् (ईश्वर) का दिया हुआ'

कर्ण या कर्णिधन

एक हिन्दू रचयिता हैं जिन्होंने राजा अभय सिंह के राजत्व-काल में और उसकी आज्ञा से राठौरों के पद्यात्मक इतिहास 'सूरज प्रकास' ('सूर्य प्रकाश')—सूर्य वंश का इतिहास—की रचना की। कर्ण कवि, अर्थात् कवि कर्ण,[1] राजनीति, युद्ध-विद्या और साहित्य में निपुण थे। वास्तव में उन्होंने अपने समय के गृह-युद्धों की समस्त घटनाओं में सम्मान सहित भाग लिया और कई अवसरों पर साहसपूर्वक युद्ध किया। उनकी रचना सात हज़ार पाँच सौ दोहों (distiques) में है। उसकी एक प्रति लंदन की रॉयल एशियाटिक सोसायटी में है, जो कर्नल टॉड की है और जिसकी उन्होंने १८२० में मूल से प्रतिलिपि कराई थी। यह मारवाड़ के अभय सिंह का इतिहास है, जिससे सामान्य इतिहास की एक झलक मिलती है। पूर्वी परंपरा के अनुसार कवि सृष्टि के प्रारंभ से लेकर सुमित्र तक के राठौरों के इतिहास का उल्लेख करते हुए आदि काल से प्रारंभ करता है। तत्पश्चात् कन्नौज के विजेता कामधुज या नयनपाल तक के विवरण का अभाव है। कवि राठौर शक्ति को जमाने वाले को मारवाड़ में लाने की जल्दी में है, और वह जयचंद की पराजय और मृत्यु को छोड़ देता है। वह उसके वंशजों का देर तक तथा अधिक वर्णन नहीं करता, यद्यपि उसने उन सबका उल्लेख किया है; वरन् वह प्रधान घटनाओं की ओर संकेत करते हुए अभय सिंह, जिसकी आज्ञा से उसने यह इतिहास लिखा, के पितामह, जसवंत सिंह के शासन-काल तक आ जाता है।

---

[1] टॉड, 'ऐनल्स ऑव राजपूताना', जि० २, पृ० ४

कर्मा बाई[1]

सिक्खों के 'शंभु ग्रंथ' में सम्मिलित धार्मिक कविताओं की रचयिता,[2] एक प्रसिद्ध महिला हैं।

कान्हा पाठक[3]

कण्डूर के एक अत्यन्त पवित्र ब्राह्मण हैं, जो शक संवत् १६०० (१६७८ ई०) में हुए, और जिन्होंने एक सौ बीस भागों में 'नामा पाठकी अश्वमेध'—नामा पाठकी द्वारा अश्व की बलि—की रचना की।

कालिदास[4]

एक हिन्दी लेखक हैं जिनके केवल नाम का मैं उल्लेख कर सकता हूँ। किन्तु इसी नाम के प्रसिद्ध संस्कृत कवि और इस लेखक के बीच गड़बड़ नहीं होनी चाहिए।

कालीचरण[5] (बाबू)

× (उर्दू रचनाएँ) ×

३. 'स्त्री धर्म संग्रह'—स्त्री के गुणों का संग्रह, ताराचंद द्वारा संस्कृत से अनूदित पुस्तक; रुहेलखण्ड १८६८, ८४ अठपेजी पृष्ठ ;

× × ×

---

[1] भा० 'देवी भाग्य'

[2] विल्सन, 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १७, पृ० २३८

[3] इन शब्दों में से पहला कृष्ण का नाम है, और दूसरा एक उपाधि है जो ब्राह्मणों को दी जाती है और जिसका अर्थ है 'पढ़ाने वाला' (प्रोफ़ेसर)।

[4] भा० 'देवी काली या दुर्गा का दास'

[5] भा० 'काली (दुर्गा) के पैर'

६. 'गणित सार'—गणित का सार तत्व, हिन्दी में, बरेली, १८६८, ४८ अठपेजी पृष्ठ।

काशी-दास[1]

मौंट्‌गोमरी मार्टिन द्वारा उल्लिखित हिन्दुई के कवि हैं। शायद ये वही काशी राम हों, जो दिसम्बर, १८४५ के 'कलकत्ता रिव्यू' के एक लेख में एक हिन्दी 'महाभारत' के रचयिता बताए गए हैं?

काशी-नाथ

(उर्दू के लेखक के रूप में उल्लेख)

× × ×

एक काशीनाथ 'भर्तृहरि राजा का चरित्र' शीर्षक हिन्दी काव्य के रचयिता हैं, जो १६२१ संवत् (१८६५) में आगरे से मुद्रित हुई है, २२ छोटे अठपेजी पृष्ठ। निस्संदेह यह वही रचना है जो मेरा विश्वास है लाहौर से ४० पृष्ठों में 'क़िस्सा-इ भर्तरी' के शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित हुई है।[2]

काशी-प्रसाद[3]

इश्रताबाद के निवासी हिन्दू, लक्ष्मीनारायण के पुत्र तथा देवी प्रसाद के प्रपौत्र हैं; उन्होंने पटना के दुर्गा प्रसाद के निरीक्षण में, जनवरी, १८६५ में लखनऊ से, ११-११ पंक्तियों के १८-पेजी बीस पृष्ठों में एक पद्यात्मक 'बारह मासा' प्रकाशित किया है।

---

१ भा० 'बनारस का दास'

२ जे० लौंग, 'डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग', १८६७, पृ० ६६

३ भा० 'बनारस का दिया हुआ'

किशन लाल[1] (मुंशी)

आगरे के 'ईजाद किशन' नामक छापेख़ाने के संचालक हैं, और उन्होंने, अन्य के अतिरिक्त, 'दायरा-इ-इल्म'—ज्ञान की परिधि (अर्थात् छोटा विश्वकोष) प्रकाशित किया है।

वे रचियता हैं :

१. 'भूगोल प्रकाश'—संसार की व्याख्या - के, भूगोल ; आगरा, १८६२, २४ अठपेजी पृष्ठ ;

२. 'भूगोल सार'—संसार का वर्णन-सार—के, १८ पृष्ठों का एक और भूगोल ; आगरा, १८६४, अठपेजी।

उन्होंने 'कैलास का मेला'[2]—(शिव के) स्वर्ग का मेला— का संपादन किया है ; ८ पृष्ठों की हिंदी कविता ; १८६८ में आगरे से मुद्रित।

कुंज[3] बिहारी लाल (पंडित)

रचयिता हैं :

१. श्री टाटे (Tate) की अँगरेज़ी रचना हिन्दी में अनूदित, किन्तु पेसटालाज्ज़ी (Pestalozzi) के सिद्धांतानुसार सरल किए हुए सुलभ बीजगणित'—सरल बीज गणित—के; इलाहाबाद, १८६८ ; द्वितीय संस्करण , १३६ अठपेजी पृष्ठ ;

२. 'रेखामितितत्व'—ज्यामिति के सिद्धान्त - के, श्री टाटे की अँगरेजी रचना से ही अनूदित, इलाहाबाद, १८६१ ; द्वितीय संस्करण, १३६ अठपेजी पृष्ठ ;

---

[1] भा० 'कृष्ण का प्रिय'

[2] आगरे के एक स्थान में इसी नाम का मेला लगता है।

[3] भा० 'बाग का कुंज'

३. 'त्रिकोणमित्र'—ट्रिगनोमैट्री—के, पहली रचनाओं की भाँति ही श्री टाटे से अनूदित; और 'लघु त्रिकोणमित्र'—छोटी ट्रिगनोमैट्री ; आगरा, १८५५ , ६८ अठपेजी पृष्ठ ;

४. 'कल विद्योदाहरण'—प्रकृति विज्ञान और मशीन संबन्धी अभ्यास—के ; उसी से अनूदित ;

५. 'बाल विद्यासार'—भौतिक शक्ति—विज्ञान का सार—के, श्री टी० बुकर (Buker) कृत 'Statics and dynamics' (वील्स-Weale's-सीरीज़) का अनुवाद;

६. 'खगोल बिनोद'—ग्रहों सम्बन्धी विनोद—के, रेवरेंड एल० टौमलिन्सन कृत 'Recreations in Astronomy' का हिन्दी अनुवाद ; आगरा , २२२ अठपेजी पृष्ठ, और रुड़की, १८५१, २२२ पृ० चित्रों सहित ;

७. 'बीजात्मक रेखागणित' के, हान (Hann) कृत 'Conic Sections' (वील्स सीरीज़) का अनुवाद ;

श्री एच० एस० रीड (Reid) की देशी शिक्षा पर रिपोर्ट में अंतिम तीन रचनाएँ प्रेस में बताई गई हैं ; आगरा, १८५४, पृ० १५२, १५३ ।

कुलपति[1] (मिश्र)

'रस रहस्य'—रस सम्बन्धी भीतरी बातें—और लोकप्रिय गीतों के रचयिता हिंदुई के एक कवि हैं ।

कृष्ण (या किशन) जायसी

अकबर की आज्ञा से किए गए उलुग़बेग कृत 'न्यू ऐस्ट्रौनौमिकल टेबिल्स' ('नवीन नक्षत्र तालिका') का हिन्दुई अनुवाद करने में

---

[1] भा० 'कुल का स्वामी'

अबुल फ़ज़्ल, फ़तह उल्लाह, गंगाधर, महेश और महानन्द के एक सहकारी।[1]

कृष्ण-दत्त[2] (पंडित)

आगरे के केन्द्रीय स्कूल में हिन्दी के सहायक प्रोफ़ेसर, रचयिता हैं :

१. 'बुद्धि फलोदय'—बुद्धि के फलों का प्रकटीकरण—के. हिन्दी कथा जिसमें उन्होंने एक अच्छे और एक बुरे नवयुवक को उनके अपने निजी चरित्र की दृष्टि से एक दूसरे के विरुद्ध रखा है। यह वही रचना है जिसका 'क़िस्सा-इ सुबुद्धि कुबुद्धि' शीर्षक के अन्तगर्त उर्दू में अनुवाद हुआ है। दोनों रूपान्तर उत्तर पश्चिम प्रदेश के देशी स्कूलों में पढ़ाए जाते हैं। 'बुद्धि फलोदय' का प्रथम संस्करण आगरे से हुआ है, १८६६, २० अठपेजी पृष्ठ ;

२. कृष्ण-दत्त पं वंशीधर की सहायता से एक मराठी पुस्तक से हिन्दी में अनूदित 'सत्य निरूपण'—सत्य पर निबन्ध—के रचयिता हैं ; आगरा, १८५५ ; द्वितीय संस्करण, आगरा, १८६०, ८० बड़े अठपेजी पृष्ठ ;

३. 'सिद्धि पदार्थ विज्ञान'[3] के रूपान्तर में वंशीधर और मोहन लाल को उन्होंने सहयोग प्रदान किया।

कृष्ण-दास[4] कवि

(वैष्णव संप्रदाय के प्रसिद्ध भक्तों की जीवनी) 'भक्तमाल' की

---

[1] अबुलफ़जल पर लेख देखिए।

[2] भा० 'कृष्ण द्वारा प्रदत्त', अर्थात् कृष्ण का दिया हुआ, जैसा कि हम लोग Dieudonné (Deodatus) कहते हैं।

[3] वंशीधर और मोहनलाल पर लेख देखिए।

[4] भा० 'कृष्ण का दास'

१७१३ में लिखित टीका[1] के रचयिता हैं और भारत में जिसका एक संस्करण १८५३ में प्रकाशित हुआ है। यह विश्वास किया जाता है कि उन्होंने पाठ शुद्ध किया।[2] ऐसा प्रतीत होता है कि कृष्णदास ने भागवत के दशम स्कंध ('श्री भागवत दशम स्कंध') के हिन्दुई रूपान्तर की रचना की जिसकी एक प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है।

मेरे विचार से ये वही कृष्ण-दास हैं जिन्होंने 'भ्रमर गीत'[3] या भँवरा के गीत (नामक) वॉर्ड[4] द्वारा बुंदेलखण्ड की बोली में लिखी बतलाई गई रचना का निर्माण किया। हिन्दुई में लिखी गई तथा 'प्रेम सागर' नामक कृष्ण की कथा में एक अध्याय है जिसका यही शीर्षक है। ऊधो, जिसका नाम मधुकर (भँवरा) भी है, का संदेश इस अध्याय का विषय है। कृष्ण उन्हें अपने विरह में पीड़ित गोपियों के पास भेजते हैं। उनमें से एक, संदेश-वाहक के नाम की ओर संकेत कर, फूल पर बैठी हुई मक्खी से प्रश्न करती है, और उसके लिए इस भाषा का प्रयोग करती है :

'हे मधुकर ! तुमने कृष्ण के चरण-कमलों का रस ग्रहण किया है, इसीलिए तुम मधुकर (मधु उत्पन्न करने वाले) कहाते हो।— क्योंकि तुम चतुराई के मित्र हो, कृष्ण ने तुम्हें अपना दूत चुना है। हमारे पैर छूते समय सँभले रहना; जान रखो कि हम भूली नहीं हैं

---

1 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६, पृ० ८

2 मुझे भय है कि कृष्णदास और प्रियादास में कुछ भ्रम न हो। प्रियादास के संबंध में आगे लेख है और वे भी 'भक्तमाल' की एक टीका और एक 'भागवत' के रचयिता हैं।

3 'भ्रमर गीत'—काली मक्खी का गीत, अथवा उत्तम रूप में कहने के लिए 'काली मक्खी से संबंधित'।

4 'हिन्दुओं का इतिहास आदि', जि० २, पृ० ४८१

कि तुम्हारे जैसे जो भी काले (या भूरे) रंग वाले हैं छली होते हैं। इसलिए यह न समझो कि हमारा अभिवादन कर तुम अच्छे लगने लगोगे। जैसे तुम बिना किसी के हुए एक फूल से दूसरे फूल पर जाते हो, उसी प्रकार वे भी सब वनिताओं के प्रति प्रेम का प्रमाण देते हैं और होते किसी के नहीं।'

कृष्ण-दास एक धार्मिक पुस्तक, 'प्रेम सत्व निरूपण'[1] के भी लेखक हैं। श्री विलूसन के संग्रह में देवनागरी अक्षरों में इस रचना की एक प्रति है।

ब्यूकैनैन[2] ने एक कृष्णदास, वैद्य, का उल्लेख किया है जो 'चैतन्य चरितामृत'—चैतन्य की कथा का अमृत—के रचयिता हैं, और जो यही कृष्णदास मालूम पड़ते हैं। यह रचना, जो प्राकृत की कही गई है, अर्थात् संभवत: हिन्दी की, एक वैष्णव सुधारक की कथा और उसके सिद्धान्तों से सम्बन्धित है। बँगला में भी एक इसी शीर्षक और इसी विषय की रचना है।[3]

चैतन्य, जिनका जन्म १४८४ में नादिया (Naddya) में हुआ था, अपने को कृष्ण भगवान् का अवतार कहते थे। उन्होंने एक प्रकार की क्रांति उत्पन्न की जिसने बँगाल की एक-चौथाई जन-संख्या को उनके संप्रदाय की ओर आकृष्ट किया। उन्होंने ब्राह्मणों के पुजारीपन, बलिदानों, वर्ण-भेद का विरोध किया और संस्कृत के स्थान पर सामान्य भाषा का प्रयोग किया। बँगला में लिखित पुस्तकों के रूप में इस संप्रदाय वालों का साहित्य प्रचुर मात्रा में है;

---

[1] 'प्रेम सत्व निरूप'। यदि, जैसा कि मेरा विचार है, यह अंतिम शब्द संज्ञा है। इस शीर्षक का मुझे अर्थ प्रतीत होता है 'प्रेम की श्रेष्ठता की खोज। क्या यह रचना २१०पृ० (मूल्य के-अनु०) पर उल्लिखित 'सत्य निरूपण' रचना ही तो नहीं है?

[2] मौंट्गोमरी मार्टिन, 'ईस्टर्न इंडिया', जि० २, पृ० ७५५

[3] जे० लौंग, 'डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग ऑव बंगाली बुक्स', पृ० १०२

उसकी सूची जे० लौंग के 'डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग' में मिलती है, पृ० ७० और १०० ।

कृष्ण राव

जो सागर में अँगरेज़ सरकार के स्कूलों के निरीक्षक और बाद में दमोह में प्रथम श्रेणी के मुंसिफ़ रह चुके हैं 'पॉलीग्लौट इंटर-लाइनर, बींग द फ़र्स्ट इन्स्ट्रक्टर इन इँगलिश, हिन्दुई, एट्सीटरा' शीर्षक एक रचना के रचयिता हैं, रचना जो १८३४ में कलकत्ते से प्रकाशित हुई है ।...... ('आईना इ अहले हिन्द' नामक उर्दू रचना)...... इसी लेखक ने कुछ हिन्दुस्तानी कविताएँ लिखी हैं जिनमें उसने 'मसरूर'[1] का तख़ल्लुस ग्रहण किया है । मन्नूलाल ने उनकी एक आध्यात्मिक ग़ज़ल उद्धृत की है जिसके मूल की एक अंतिम पंक्ति अत्यन्त सुन्दर है और जिसका अनुवाद यह है :

> 'ज़ुल्म मुझे अन्दर से उदास बना देता है, यद्यपि वाह्य रूप से मेरा उपनाम 'प्रसन्न' है ।'

कृष्ण लाल

संपादक हैं :

१. 'राधा जी की बारहमासी' – राधा के (क्रीड़ा के) बारह महीने—के, हिन्दी कविता; आगरा, संवत १६२१ (१८६५); छोटे बारहपेजी ८ पृष्ठ ;

२. 'रामचन्द्र की बारहमासी'—राम के (क्रीड़ा के) बारह महीने—के ; संभवतः एक दूसरे शीर्षक के अंतर्गत पहली जैसी रचना । इसके दो संस्करण हैं ।

---

[1] मसरूर—संतुष्ट

कृष्ण सिंह

'क्रिया कथा कौस्तुभ'[१] शीर्षक जैन नियमावली के जैन लेखक। यह रचना सं० १७८४ (१७२८ ईसवी सन्) में लिखी गई थी। श्री विल्सन के पास उसकी एक प्रति है।

कृष्णानंद[२]

रचयिता हैं :

१. 'राम रत्नावली'—राम के रत्नों की भेंट—राम से संबंधित कथाएँ ;

२. 'बृज बिलास' या 'ब्रज बिलास'—ब्रज के आनंद—के, कृष्ण से सम्बन्धित कथाएँ ; कलकत्ता और बनारस से मुद्रित हिन्दी रचनाएँ।[3]

केशव-दास[४]

(या केशव-स्वामी[५] और चंग-केशव-दास)

केशव-दास, या केशव्-दास, जो अधिक उचित है, हिन्दुई के

---

[१] 'क्रिया कथा कौस्तुभ'। इस शीर्षक का अर्थ 'धार्मिक क्रियाओं की कथा का रत्न' प्रतीत होता है।

[२] 'कृष्ण का आनंद'

[3] इन दोनों रचनाओं का 'जनरल कैटैलौग ऑव ऑरिएंटल वर्क्स' में उल्लेख हुआ है, जेंकर (Zenker) द्वारा अपने 'बिबलिओथेका ऑरिएंटालिस' (Bib iotheca Orientalis) में ग्रन्थों में उल्लिखित है।

[४] अर्थात् कृष्ण का दास; केशव से, जो कृष्ण के नामों में से एक है, 'सिर के सुन्दर बाल रखने वाला' का तात्पर्य है, (और दास से 'सेवा करने वाला')।

[५] इस प्रकार का नाम इसलिए है क्योंकि वे भारतीय ऑलिम्प (Olympe) के अर्द्ध-देवता, चंग-देव, के अवतार के रूप में माने जाते हैं।

ब्राह्मण जाति के एक प्रसिद्ध लेखक हैं जो सोलहवीं शताब्दी के अंत और सत्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ में, जहाँगीर और शाहजहाँ के राजत्व-काल में, विद्यमान थे। उन्होंने अपने पद्यों में अनेक प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है।[1] वे रचयिता हैं :

१ राम पर 'रामचन्द्रिका'[2] शीर्षक एक काव्य के। श्री विल्सन के अनुसार यह काव्य 'रामायण' का एक संक्षिप्त अनुवाद है, अर्थात् संभवतः वाल्मीकि की संस्कृत 'रामायण' का। उसमें उन्तालीस अध्याय हैं और वह संवत् १६५८ (१६०२ ई०) में लिखी गई थी। श्री रीड (Reid) ने उसे 'रामायण गीता' से भिन्न माना है;

२. 'कवि प्रिया' के, अर्थात् कवि के सुख, संस्कृत प्रणाली के अनुसार काव्य-रचना संबंधी शास्त्र पर सोलह पुस्तकों (अध्याय-अनु०) में एक प्रबंध है। यद्यपि उसकी रचना विक्रम संवत् १६५८ या १६०२ ई० में हुई होगी, तो भी, श्री विल्सन के अनुसार, वह एक सुनिश्चित तिथि के लिए प्राचीनतम हिन्दी ग्रंथों में से है। इसी भारतीयविद्याविशारद के पास अपने सुन्दर संग्रह में उसकी एक प्रति है; वह चौपेजी और नागराक्षरों में है। उसकी प्रतियाँ ब्रिटिश म्यूज़ियम, मैकेन्ज़ी संग्रह तथा अन्य स्थानों पर भी हैं;

३. हिन्दू काव्य-शास्त्र संबंधी काव्य-व्याख्या 'रसिक प्रिया' के, अर्थात् रसिक के सुख, या 'रस प्रिया'—अच्छे रस का प्रिय[3]— १५६२ ई० में लिखी गई थी;

४. वॉर्ड द्वारा अपने 'हिस्ट्री ऑव दि लिटरेचर ऑव दि

---

[1] दे० 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १०, पृ० ३६६; 'मैकेन्ज़ी कलेक्शन' जि० २, पृ० ११३; ब्राउटन, 'पॉप्यूलर हिन्दू पोइट्री', पृ० १४; और वार्ड, जि० २, पृ० ४८०

[2] रामचन्द्रिक Ramayade

[3] श्री मार्टिन, 'ईस्टर्न इंडिया', जि० १, पृ० १३१

हिन्दूज़,' जि० २, पृ० ४८० में उल्लिखित रचना 'विज्ञान या विज्ञान गीता',[1] अर्थात् विज्ञान का गीत, के;

५. 'एकादशी चा (का) चंत्र (छेत्र ?)'—शुक्ल पक्ष के ग्यारहवें दिन का छेत्र, के;[2]

६. चंग-देव कृत 'गोष्ठी'—समाज—पर 'भक्त लीलामृत'[3]—भक्तों की लीलाओं का अमृत—के;

७. 'जैमिनी भारत'—जैमिनी पर काव्य—के[4];

८. 'सतसई दोहा'—सतसई के दोहों[5]—के। यह अंतिम रचना संभवतः वही है जो कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है, और जिसे सूचीपत्र में 'सत-सती' अर्थात् विभिन्न विषयों पर सात सौ दोहरों (दोहों) का संग्रह, कहा गया है। किन्तु, मेरा विचार है, कि रचयिता को भूल से, केशव-दास के स्थान पर, केशव कहा गया है।

केशव्-दास या केशव-दास नामक एक सामयिक लेखक है जो ईसाई हो गया मालूम होता है और जो रामचन्द्र नामक एक और हिन्दू की सहकारिता में १८६७ से हिन्दुस्तानी में 'मवाइज़् उक़्बा' (Mawâ' iz ucba)—भविष्य के संसार के बारे में विचार—शीर्षक एक पाक्षिक पत्र निकालता है।

---

[1] विज्ञान गीत। वॉर्ड ने इस ग्रन्थ का उल्लेख अपने 'हिन्दुओं के साहित्य का इतिहास' (History of the literature of the Hindoos) में किया है, जि० २, पृ० ४८०।

[2] मैं इस अनुवाद की प्रामाणिकता के संबंध में निश्चित नहीं हूँ।

[3] प्रेम पर लेख में इसी शीर्षक की रचना देखिए।

[4] प्रसिद्ध हिन्दू सन्त, व्यास के शिष्य

[5] श्री मार्टिन, इनके ग्रन्थ का उल्लेख हो चुका है।

केशव-दास की ये रचनाएँ और भी अधिक ध्यान देने योग्य हैं, क्योंकि अपने मूलभूत महत्त्व के अतिरिक्त उनका भाषा विज्ञान की दृष्टि से महत्त्व इसलिए है कि वे देशी हिन्दी की प्राचीन रचनाओं और मुसलमानों की आधुनिक हिन्दुस्तानी रचनाओं के बीच की कड़ियाँ हैं।[1]

खुम्भ[2] राणा

अर्थात् राजा खुम्भ, अपनी पत्नी मीरा बाई[3] की भाँति, हिन्दी के पवित्र गीतों के रचयिता हैं। उनकी एक 'गीत गोविंद' पर 'टीका' भी है।[4]

ख़ुसरो

दिल्ली के ख्वाजा अबुलहसन ख़ुसरो[5] अथवा केवल अमीर ख़ुसरो, मुसलमान भारत के बहुत बड़े कवियों में से हैं। लोग उन्हें 'तूती-इ हिन्द'[6] के नाम से पुकारते हैं। उनके तुर्क नाम के पूर्वज चंगेज़ ख़ाँ के समय में मावरा उन्नहर (Mâwarâ unnahr) से भारतवर्ष आए थे। उनके पिता[7] दिल्ली के सुलतान, तुग़लक-शाह, के अत्यधिक कृपापात्र थे। वे (पिता) काफ़िरों (हिन्दुओं) के विरुद्ध युद्ध में मृत्यु को प्राप्त हुए। ख़ुसरो का जन्म १३ वीं

---

१ एच० एच्० विल्सन 'मैकेन्ज़ी कलेक्शन' की भूमिका, पृ० ५२ (lii)

२ भा० संभवतः 'खंभ' या 'खंबा' आदि के लिए।

३ इन पर लेख देखिए।

४ टॉड, 'ऐनल्स ऑव राजस्थान', जि० १, पृ० २८६

५ खुसरो (फ़ारसी लिपि में)

६ हम एक प्रकार से हिन्द की कोयल (rossignol) कहेंगे।

७ दौलतशाह ने उनका नाम अमीर मुहम्मद मेहतर, लाचीन (Lâchîn) के हज़ारा का नेता, बताया है। एक और जीवनी-लेखक ने उन्हें बल्ख़ के हज़ारा के सैफ़ुद्दीन लाचीन तुर्क के नाम से पुकारा है।

शताब्दी में, मूमीनाबाद (Mûmînâbâd) नामक एक गाँव में हुआ। वे अपने पिता के स्थान पर कार्य करने लगे। सुलतान मुहम्मद तुग़लकशाह के, जिनकी प्रशंसा में ख़ुसरो ने अनेक क़सीदे लिखे, वे अत्यन्त प्रिय पात्र थे। वे सात शाहंशाहों की सेवा में रहे और उनमें से कुछ के सहभोजी और मित्र हो गए थे। अपनी वृद्धावस्था में उनकी सादी से भेंट हुई।[१] कहा जाता है कि इस प्रसिद्ध फ़ारसी कवि ने हमारे चरित नायक से मिलने के लिए भारत-यात्रा की थी। ख़ुसरो ने (उस भेंट के) अंत में संसार से बिल्कुल विराग धारण कर लिया, और अपने को पूर्ण रूप से भक्ति और धार्मिक दानशीलता में लगा दिया। उन्होंने अपनी वे रचनाएँ नष्ट कर दीं जिनमें उन्होंने राजाओं तथा संसार के महान व्यक्तियों की प्रशस्तियों की भरमार कर दी थीं, ताकि केवल वे (रचनाएँ) बच रहें जिनका सम्बन्ध आत्मा से था (और) राजा तथा प्रजा जिसके समान रूप से वशवर्ती थे। वे वास्तव में एक सच्चे सूफ़ी हो गए, और उच्च कोटि की आध्यात्मिकता प्राप्त कर ली। उनकी रहस्यवादी कविताएँ अब भी प्रायः मुसलमान भक्तों द्वारा गाई जाती हैं। वे निज़ामुद्दीन औलिया[२] के, जो स्वयं प्रसिद्ध फ़रीद शाकरगंज[३] के शिष्य थे, आध्यात्मिक शिष्य हो गए थे। औलिया की मृत्यु से वे इतने दुःखी हुए कि वे ७१५ हिजरी (१३१५—१३१६) में कम अवस्था में मृत्य को प्राप्त हुए। वे अपने गुरु, फ़रीद और अन्य विचारकों की क़ब्रों के पास, दिल्ली के एक सुन्दर स्थान में, दफ़ना दिए गए।

---

१ यह कवि फ़ारसी लेखकों में अकेला, जिसने यूरोप में ख्याति प्राप्त की, १२९१ ईसवी सन् में मृत्यु को प्राप्त हुआ।

२ मेरा 'भारत में मुसलमान धर्म पर मेम्वर' (Mèmoire sur la religion musalmane dans l' Inde) देखिए, १०४ तथा बाद के पृष्ठ

३ उसी 'मेम्वार' को देखिए, १०० तथा बाद के पृष्ठ

कहा जाता है खुसरो ने फ़ारसी में निन्यानवे पुस्तकों की रचना की जितनी, गद्य में उतनी ही पद्य में, जिनमें लगभग पाँच हज़ार छंद हैं। अन्य रचनाओं के अतिरिक्त मुसलमानों की लोकप्रिय गाथाओं पर एक 'ख़मस' अर्थात् रोमन 'सैंक' (Cinq); दिल्ली के सुलतान, अलाउद्दीन, के उपलक्ष्य में एक कविता 'किरान-इ सदैन', और 'दिल्ली का इतिहास' उनकी देन हैं। उन्हें संगीत का भी अत्यन्त विस्तृत ज्ञान था। केवल अपने जीवन के अंत में उन्होंने कुछ हिन्दुस्तानी पद्यों की रचना की, किन्तु मीर तक़ी ने उनकी जीवनी में हमें बतलाया है कि इतने पर भी उनकी संख्या बहुत है। इन अंतिम रचनाओं में ऐसी रचनाएँ हैं जो इस रीति से लिखी गई हैं कि चाहे कोई उन्हें फ़ारसी में लिखा समझे अथवा हिन्दुस्तानी में लिखा समझे उनका हमेशा एक ही अर्थ निकलता है। मन्नूलाल[1] ने खुसरो द्वारा हिन्दुस्तानी में लिखित एक लम्बा मु.खम्मस उद्धृत किया है जिसके प्रत्येक छंद का पाँचवाँ चरणार्द्ध फ़ारसी में है। इस प्रसिद्ध व्यक्ति की एक ग़ज़ल का अनुवाद यहाँ दिया जाता है जो भारतवर्ष में एक लोकप्रिय गाना बन गई है। इसके मूल की जो विशेषता है वह यह है कि प्रत्येक पंक्ति का प्रथम चरणार्द्ध फ़ारसी में और दूसरा हिन्दुस्तानी में है। यह गाना, जैसा कि कोई सोच सकता है, एकाकी ज़नानों में गुनगुनाया जाता है :

'अपनी दुखियारी सजनी की दशा से बेसुध मत हो; मुझे अपने नैनों के दर्शन दे, मुझे अपने बैन सुना। हे मेरे प्रियतम! तेरे विरह में रहने की मुझ में शक्ति नहीं...मुझे अपने हृदय से लगा ले। बत्ती की तरह जो स्वयं जलती है[2]...इस चाँद के प्रति प्रेम के वशीभूत हो मैं निरंतर रोती हूँ। मेरी आँखों में नींद नहीं है, मेरे शरीर में चैन नहीं

---

१ 'गुलदस्ता-इ निशात', ४३७ तथा बाद के पृष्ठ

२ अथवा, एक पाठान्तर के अनुसार, 'काँपते हुए अणु' के समान।

है; क्योंकि वह स्वयं नहीं आता, किन्तु मुझे लिख कर सन्तुष्ट हो जाता है। विरह की रातें उसकी ज़ुल्फ़ों की तरह लम्बी हैं, और संयोग के दिन जीवन की भाँति छोटे। आह! रातें मुझे बुरी लगती हैं, हे मेरी सखियो, जब कि मैं अपने प्रियतम को नहीं देख पाती! यकायक, सैकड़ों छल-छन्दों के बाद, उसकी नज़र ने मेरे हृदय को सुख और शान्ति पहुँचाई है। क्या तुम में से कोई ऐसी नहीं है जो मेरे प्रियतम को मेरा संदेसा सुना सके? खुसरो, मैं क़यामत के दिन के मिलन की सौगन्ध खाती हूँ, क्योंकि मेरा न्याय छल है, हे मेरे प्रियतम, मैं उन शब्दों को न खोज पाऊँगी जिन्हें मैं तुमसे कहना चाहती हूँ।'

खुसरो का उपनाम 'तुर्कउल्लाह' है। उनका जन्म ६३१ (१२३३) में हुआ था। ऐसा प्रतीत होता है कि वे भारतवर्ष में पैदा नहीं हुए थे, वरन् चंगेज़ ख़ाँ के समय में उन्होंने यहाँ जीवन व्यतीत किया। 'आतश कदा' (Atasch Kada) तथा अन्य आधारों, उनकी क़ब्र पर खुदी मृत्यु-तिथि, आदि[१] के अनुसार उनकी मृत्यु ७२५ (१३२४-१३२५) में हुई, न कि ७१५ में। मेरे स्वर्गीय विद्वान् मित्र एफ़० फ़ॉकनर (F. Falconer) ने अमीन अहमद राज़ी कृत 'हफ़्त इक़लीम' (Haft iclîm)—सात जलवायु—अर्थात् संसार के भाग—शीर्षक फ़ारसी कवियों के जीवनी-ग्रन्थ में यह लिखा पाया है कि एक पुस्तक में ख़ुसरो ने अपने बारे में कहा है कि मेरे छन्दों की संख्या पाँच लाख से कम, किन्तु चार लाख से अधिक है।

ख़ुसरो ने कभी-कभी अपनी कविताओं में 'सुलतानी' उपनाम ग्रहण किया है।

ख़ुसरो की फ़ारसी रचनाओं में, द' हरबेलो (d' Herbelot)

---

[१] स्प्रेंगर, 'ए कैटेलौग ऑव दि लाइब्रेरीज़ ऑव दि किंग ऑव अवध', ४६५ तथा बाद के पृष्ठों में इस कवि के बारे में रोचक विस्तृत विवरण देखिए, और उसकी क़ब्र के बारे में, 'आसार उस्सनादीद' में, 'ज़ूर्ना एसियातीक' (एशियाटिक जर्नल), १८६०-१८६१

द्वारा उल्लिखित, 'दरिया-इ अबरार' का भी उल्लेख कर देना मेरा कर्त्तव्य है।

श्री ए० स्प्रेंगर (Sprenger) ने ख़ुसरो कृत या कम से कम उनके द्वारा रचित बताई गई कुछ भारतीय गूढ़ प्रश्न, 'पहेली', का पाठ और अनुवाद प्रकाशित किया है।[1] लखनऊ के तोपखाने में 'पहेली ख़ुसरो' शीर्षक एक हस्तलिखित प्रति दस या बारह छोटी जिल्दों में मिलती है जिनमें लगभग दो सौ पहेलियाँ हैं।

उनमें से दीपक पर एक इस प्रकार है :

'पंसारी का तेल, कुम्हार का बर्तन, हाथी की सूँड़, नवाब की पताका'

सैयद अहमद ख़ाँ के अपने 'आसार उस्सनादीद'[2] में कथनानुसार, हिन्दुस्तानी में एक विशेष प्रकार की रचनाएँ 'निस्बतें', भी उनकी (ख़ुसरो की) देन है, और जिसका एक उदाहरण इस प्रकार है जो मैंने स्वयं सैयद अहमद से लिया है :

प्रश्न : गोश्त क्यों न खाया ?
नर्तकी ने क्यों न गाया ?

उत्तर : कला न था { उसके पास टुकड़ा न था
अवसर ही नहीं आया }

प्रश्न : अनार क्यों न खाया ?
वज़ीर क्यों न बोला ?

उत्तर : दाना न था { उसके दाने न थे
क्या कहना चाहिए, यह वह न जानता था। }

प्रश्न : रोटी क्यों न खाई ?
जूता क्यों न पहिना ?

---

[1] 'जर्नल ऑव दि एशियाटिक सोसायटी ऑव बंगाल', संख्या vi (६); १८५२; और 'ए कैटैलौग ऑव दि लाइब्रेरीज़ ऑव दि किंग ऑव अवध' में, पृ० ६१६

[2] इसका अनुवाद 'जूर्नो एसियातीक' (१८६०-१८६१) में देखिए।

उत्तर : तला न था (तवा नहीं था
(जूते का तला नहीं था

उसी विद्वान् ने ख़ुसरो की 'ख़ालिक़ बारी'—सर्वोच्च उत्पन्न करने वाला—नाम से ज्ञात, क्योंकि इन्हीं शब्दों से रचना प्रारम्भ होती है, हिन्दुस्तानी, फ़ारसी और अरबी की पद्यबद्ध शब्दावली का भी उल्लेख किया है। श्री स्प्रेंगर (Sprenger) ने उसका एक उदाहरण दिया है और हमें बताया है कि उसकी रचना लगभग दो हज़ार छंदों में हुई है। यह रचना[1] अत्यन्त प्रसिद्ध है और उसके मेरठ, कानपुर, आगरा, लाहौर के अनेक संस्करण हैं। स्कूलों में वह काम में लाई जाती है।

उसी विद्वान् ने उस ग़ज़ल का पाठ दिया है (जो उद्धृत हो चुका है) जिसका मैंने अनुवाद किया है, किन्तु जिसमें कुछ अंतर है जो अनुवाद में आए बिना नहीं रहता।

ख़ुश-हाल[2] राय (राजा)

मुहम्मद शाह के राजत्व-काल में रहने वाले एक हिन्दू जो अपनी विद्वत्ता और अपने धन के कारण उच्च स्थान ग्रहण करते थे। उनकी अनेक हिन्दी कविताएँ इस बोली के ख़ास छंदों, जैसे, दोहरा, राग आदि, में लिखी गई हैं। दीवान या इन कविताओं का संग्रह हस्तलिखित रूप में कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में पाया जाता है, जो पहले फ़ोर्ट विलियम में था। ख़ुशहाल, दिल ख़ुश के, जिन्होंने उर्दू में लिखा है, किन्तु जो अपने पिता की बराबर

[1] आगरे में ११३४ (१७२१-१७२२) में यह लिखी कही गई है, अर्थात् स्पष्टतः प्रतिलिपि की गई।

[2] फ़ा० 'प्रसन्न', शब्दशः 'परिस्थिति की ख़ुशी'। ज़ुका (Zukâ) ने इस कवि का केवल संयोगवश उलेख किया है, 'दिलख़ुश' पर लेख।

प्रसिद्ध नहीं हैं, पिता हैं।[1] उनका 'राग सागर' में उल्लेख हुआ है, किन्तु उसमें उनका नाम केवल 'खुशाल' लिखा हुआ है।

गंग

गंगा[2] कवि ने १५५५ में काव्य-शास्त्र पर लिखा। श्री डब्ल्यू० प्राइस ने अपने 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स'[3] (हिन्दी और हिन्दुस्तानी संग्रह) शीर्षक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ की भूमिका में उनका हिन्दी के अत्यन्त प्रसिद्ध रचयिताओं में उल्लेख किया है।

गंगाधर[4]

उलुग़ बेग द्वारा फ़ारसी में लिखित 'न्यू ऐस्ट्रोनोमीकल टेबिल्स' के हिन्दुई अनुवाद में, जो अकबर की आज्ञा से किया गया था, अबुल फ़ज़ल तथा अन्य विद्वानों के सहायकों में से एक।

गंगापति[5]

संवत् १७७५ (१७१६ ई०) में लिखित 'विज्ञान-विलास', अर्थात् विज्ञान का मनोविनोद, शीर्षक रचना के रचयिता। यह हिन्दुओं के विभिन्न दार्शनिक सिद्धान्तों पर एक प्रबन्ध है; उसमें

---

[1] दिलखुश पर लिखा गया लेख देखिए।

[2] गंगा—देवी गंगा

[3] जिल्द १, पृ० १०

[4] गंगाधर, शिव का विशेषण अर्थात् वह जो गंगा, सागर धारण करता है। यह एक कथा की ओर संकेत करता है जिसके अनुसार गंगा पहले शिव के सिर पर रुकी, और जहाँ उनकी जटाओं में थोड़ी देर विश्राम किया।

[5] गंगापति अर्थात् गंगा का स्वामी। यह नाम प्रत्यक्षतः वरुण के अवतार शांतनु को दिया जाता है, जो हस्तिनापुर के राजा थे और जो गंगा के, जिससे पांडवों के पूर्वज भीष्म उत्पन्न हुए, पति थे।

वेदान्त का सिद्धान्त और रहस्यमय जीवन उपयुक्त बताया है। रचना गुरु और शिष्य के बीच एक वार्तालाप के रूप में लिखी गई है। इस रचना की एक प्रति मैकेन्ज़ी[१] संग्रह में है।

गज-राज[२]

हिन्दुई के एक लेखक जिनके संबंध में मैं कोई विवरण संग्रह नहीं कर सका।

गमानी (Gamani) लाल

कायस्थ जाति के हिन्दू, रोहतक के निवासी, १८६८ संवत (१८४२ ई०) में रचित 'भक्तमाल' के एक रूपान्तर के रचयिता और जिसका उल्लेख २१ मार्च, १८६७ के मेरठ के 'अखबार-इ आलम' में हुआ है।

गिरधर-दास[३]

रचयिता हैं :

१. कृष्ण की प्रशंसा में उनके चार गुणवाचक नामों द्वारा निर्मित आठ पंक्तियों के एक कबित्त के, जो ऊपर से नीचे पढ़ने पर एक अनुष्टुभ,[४] दोहा, सोरठा और मल्लिका के रूप में भी पढ़ा जा सकता है। इस छंद में, जो कलकत्ते से प्रकाशित हुआ है, शब्द अपने अर्थों द्वारा एक दूसरे से भिन्न हैं।

२. 'बलराम कथामृत'—बलराम की कथा का अमृत—शीर्षक बलराम संबंधी एक काव्य के, जिसे बाबू गोपाल चन्द्र ने दुहराया

---

[१] देखिए, जिल्द २, पृ० १०६

[२] भा० 'हाथियों का राजा'

[३] भा० 'गिरधर (कृष्ण) का दास'

[४] इसका यही नाम है, और साथ ही 'उदिध-बुन्ध' (Udidha Brindha), आठ-आठ अक्षरों की चार पंक्तियाँ, कुल बत्तीस अक्षरों की कविता।

है और जो २५७ पृष्ठों के लंबे आकार में १६१४ (१८६८) में उनके पुत्र बाबू हरिचन्द्र द्वारा प्रकाशित हुआ है।

गिरधर या गिरिधर[1] लाल या ज्यू[2] (महाराज)

एक प्रसिद्ध ब्राह्मण सन्त थे, 'भक्तमाल' में उनका इसी प्रकार उल्लेख है, और जो सत्रहवीं शताब्दी के आरंभ में जीवित थे।[3] वे राधा और कृष्ण की प्रशंसा में लोकप्रिय गीतों के रचयिता हैं, जिनमें कबित्त हैं, दोहे हैं और एक बघेलखंड की बोली में लिखित कुंडलिया है, जो स्वर्गीय श्री जे० रोमर (Romer) ने मेरे पास भेजी थी और जिसका अनुवाद मैं यहाँ देता हूँ :

'मेरा प्रियतम सोने की खोज में गया है; यहाँ से जाते समय वह इस देश को अपनी उपस्थिति से शून्य कर गया है।

उसे सोना मिल गया है और वह वापिस नहीं आया; मेरे बाल पक गए हैं, और अपनी सुन्दरता के विलीन हो जाने से मैं रोती हूँ।

मैं दुःखी अपने घर में बैठी हूँ, (अपने दुःख के कारण) सब लज्जा छोड़ चुकी हूँ, और वह वापिस नहीं आया।

गिरधर कवि कहते हैं; बिना राई और नमक के सब बेस्वाद है। जब जवानी बीत जायगी, तब सोना लाने से क्या लाभ।

जाना ही पड़ेगा; मैं यहाँ इंतज़ार में नहीं रुक सकती। बीस बार जाना भी अच्छा।

एक यह सेज, ये गहने और मेरा पान ! आह ! कौन है जो मेरे सिर के बाल सुलझाएगा ?'

ब्राउटन ने इस कवि का एक और लोकप्रिय गीत

---

[1] भा० वह 'जो पर्वत धारण करता है'। यह शब्द, जो कि कृष्ण के नामों में से एक है, वार्ड द्वारा, 'व्यू ऑन दि हिंदूज़', जि० २, पृ० ४८१ में, बँगला उच्चारण के आधार पर, 'गिरिधरी' लिखा गया है।

[2] आदरसूचक उपाधि 'जी' के दूसरे हिज्जे।

[3] गिलक्राइस्ट, 'हिन्दुस्तानी ग्रैमर', पृ० ३३५

दिया है,[१] और मैंने भी डब्ल्यू० प्राइस के पाठ के आधार पर अपने 'नोटस ऑन दि पॉप्युलर सौंग्स ऑव दि हिन्दूज़' के 'सौंग्स ऑव दि गोपीज़' परिच्छेद में एक 'पद' दिया है।

गिरिधर लाल एक 'श्री भागवत'[२] के रचयिता भी हैं जो मूल से उर्दू में अनूदित हो चुका है और ५८४ पृष्ठों में लाहौर से मुद्रित हुआ है। वे 'भागवत' की सर्वोत्तम टीका के रचयिता हैं, रचना जिसके एक संस्करण का उल्लेख बाबू हरिचन्द्र ने किया है; उन्होंने सूरदास के 'राग' पर भी एक टीका रची है जिसका प्रथम भाग उन्हीं बाबू साहब द्वारा २६ अठपेजी पृष्ठों में 'सूर शतक' के नाम से प्रकाशित हुआ है; बनारस, १८६६। 'कवि वचन सुधा', सं० ८ में उनकी रचना 'अमराग बाग' भी प्रकाशित हुई है; और १८६८ में पंजाब में प्रकाशित ग्रंथों की सूची में 'कृष्ण बलदेव' भी उन्हीं की बताई गई है,[३] जिसमें शायद ग़लती से गिरिधर-दास के स्थान पर गिरधर लिख दिया गया है। हर हालत में वह केवल १६-१६ पंक्तियों के ८ पृष्ठों में एक छोटी-सी कविता है।

गिर्धर[४]

गिलक्राइस्ट द्वारा अपनी 'हिन्दुस्तानी ग्रैमर' (व्याकरण), पृ० ३३५, में उल्लिखित हिन्दुई कवि। वे कवित्त और दोहा के रचयिता हैं। श्री रोमर (Romer) के पास एक हस्तलिखित ग्रन्थ है जिसमें इस कवि के उतने ही कवित्त और दोहे हैं जितने तुलसीदास, कबीर, आदि के।

ऐसा प्रतीत होता है कि यह वही लेखक है, जिसका 'गिरिधर'

---

१ 'पॉप्यूलर पोयट्री ओव दि हिन्दूज़', पृ० ८४

२ रामचन्द के अवतार पर, एक मूल नोट के आधार पर जो मेरे सामने है।

३ प्रथम अर्द्ध-वार्षिक का नंबर १७१।

४ गिर्धर, वह जो वाणी धारण करता है। इस कवि का उल्लेख मूल के द्वितीय संस्करण में नहीं है।—अनु०

नाम से वार्ड ने (अपने 'हिस्ट्री ऑव दि लिट्रेचर, एट्सीटरा ऑव दि हिन्दूज़', जि० २, पृ० ४८१) 'कुंडरिया' के रचयिता के रूपमें उल्लेख किया है, रचना जिसके विषय से मैं परिचित नहीं हूँ, किन्तु जो बघेलखण्ड की हिन्दुई बोली में लिखी गई है।

गुज़राती

शाह अली गुज़राती[१] दरवेश रचयिता हैं :

१. एक 'दोहरा' या 'दोहरे[२] शीर्षक रचना के, जो तसव्वुफ़, अध्यात्म,[३] पर हिन्दी कविताओं का संग्रह है।

२. एक 'सुन्दर सिंगार'[४] शीर्षक धारण करने वाली रचना के। यह दूसरी रचना भी, सी० स्टीवार्ट[५] के अनुसार, विभिन्न विषयों पर रचित हिन्दुस्तानी कविताओं का संग्रह है; किन्तु मेरा विचार है कि यह तो एक प्रकार का 'कोक शास्त्र' है जैसा कि एक और हिन्दी रचना यही शीर्षक धारण करती है और जिसका उल्लेख मैं सुन्दर-दास के विवरण में करूँगा। किन्तु हो सकता है यह एक कहानी हो और 'सुन्दर सिंगार' नायक का नाम हो; क्योंकि सर डब्ल्यू० आउज़ले (Sir W. Ouseley) के हस्तलिखित पोथियों के सूचीपत्र में नं० ६१३ पर एक 'क़िस्सा-इ सुन्दर सिंगार' शीर्षक जिल्द है। ईस्ट इंडिया हाउस[६] में अंतर्बेद की बोली, अर्थात् शुद्ध ब्रजभाषा,

---

१ और भी अच्छा 'गुजराती,' गुजरात का निवासी।

२ 'दोहरा' का बहुवचन 'दोहरे,' हिन्दी शब्द जो 'बैत' (पद्य) का समानार्थ-वाची है।

३ तसव्वुफ़ (फ़ारसी लिपि से)

४ 'सुंदर सिंगार'। स्टीवार्ट (Stewart) ने अपने 'कैटैलौग ऑव दि लाइब्रेरी ऑव टापू' (टापू के पुस्तकालय का सूचीपत्र), पृ० १८० में 'सिन्दुर सिकार' (Sindur Sikâr) के रूप में बिगाड़ कर लिखा है।

५ वही

६ लीडेन संग्रह (Fonds Leyden) नं०xxx

में लिखित 'सुन्दर सिंगार' नामक एक हस्तलिखित ग्रंथ सुरक्षित है, और मैं सर डब्ल्यू० आउज़्ले के सूचीपत्र में नं० ६२२ पर यही शीर्षक धारण किए हुए एक जिल्द पाता हूँ और जिसमें (उसके) नागरी और एक भाखा या हिन्दवी बोली में लिखे जाने का संकेत है। अथवा ये अंतिम दो जिल्दें, जो एक ही रचना की दो प्रतियाँ प्रतीत होती हैं शाह गुजराती की, जिसने दक्खिनी बोली में लिखा होगा, क्योंकि जैसा कि उसके नाम से संकेत प्रकट होता है, वह गुज़रात में उत्पन्न हुआ था, रचना से नितान्त भिन्न हों।

गुर-दास[1] बल्लभ (भाई)

एक सिक्ख लेखक हैं जिन्होंने नानक के धर्म पर सुन्दर कविताएँ लिखी हैं। इन कविताओं में से कुछ का अनुवाद मालकम कृत 'ऐसे ऑन दि सिक्खस', १५० तथा बाद के पृष्ठ, और कनिंघम कृत 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस', ५० तथा बाद के पृष्ठ, और ३८६ तथा बाद के पृष्ठ, में हैं।

इन कविताओं में गुर-दास ने नानक को व्यास और मुहम्मद का उत्तराधिकारी बताया है, और उन्हें संसार में पवित्रता और धार्मिकता स्थापित करने वाला, और झगड़े तथा विरोध उत्पन्न करने वाले विभिन्न धर्मों और संप्रदायों में धार्मिक एकता, विशेषतः हिन्दू धर्म और इस्लाम में एकता, उत्पन्न करने वाला बताया है।

गुलाब शंकर

बरेली की तत्त्व बोधिनी पत्रिका—बुद्धि के तत्त्व की पत्रिका—शीर्षक साप्ताहिक हिन्दी पत्रिका के संपादक हैं।

---

[1] भा० गुरु-दास—गुरु का दास—के स्थान पर गुर-दास। भाई गुर-दास का मतलब है 'गुर-दास जो भाई है।'

गोकुल[1] चन्द (बाबू)

श्री रघु-नाथ के पुत्र, १८६८ में बनारस से छपीं सभी निम्न-लिखित रचनाओं के संकलनकर्ता हैं :

१. 'जुगल किशोर विलास'—युवा कृष्ण की राधा के साथ क्रीड़ाएँ—,कृष्ण और राधा की क्रीड़ाओं का काव्यात्मक वर्णन, ५० अठपेजी पृष्ठ;

२. 'पद्माभरण'—लक्ष्मी का संतोष—,पद्माकर कृत, ४४ अठपेजी पृष्ठ ;

३. 'हास्यार्णव नाटक'—हँसी का समुद्र, नाटक—५२ अठपेजी पृष्ठ ;

४ 'भर्तृहरि तीनों शतक'—दोहों में भर्तृहरि के तीन शतक—, वे 'नीति मंजरी'—नीति का गुच्छा—,'श्रृंगार मंजरी'—प्रेम का गुच्छा—,'वैराग्य मंजरी'—तपस्या का गुच्छा—नाम से ज्ञात हैं, ५६ अठपेजी पृष्ठ ;

५. 'उपवन रहस्य'—उपवन में क्रीड़ाएँ—हिन्दी कविता, २४ अठपेजी पृष्ठ ;

६. 'षट्ऋतु वर्णन'—छः ऋतुओं का वर्णन—कवि सेनापति[2] द्वारा, १६ अठपेजी पृष्ठ ;

७. 'रघु-नाथ शतक'—रघुनाथ का शतक—रघु-नाथ द्वारा संग्रहीत हिन्दी दोहों का संग्रह, ३० अठपेजी पृष्ठ ।

जिन रचयिताओं के दोहे लिए गए हैं उनके नाम इस प्रकार हैं :

---

[1] भा० 'कृष्ण की जन्म-भूमि का नाम'

[2] इनसे संबंधित लेख देखिए ।

प्रेम सखी	हनुमान	प्रसन्न
राम गुलाम	पद्माकर	काशी-राम
रघु-नाथ	रस-रूप	वंशी
गोकुल-नाथ	दास	श्रीपति
सरदार	प्रेम	शंभु
राम नाथ	राम	देव
गणेश	बेनी	सेनापति
शंकर	चिन्तामणि	
मणिदेव	ममारख	

गोकुल-नाथ

काशी (बनारस) के गोकुलनाथ, बनारस के ही रघुनाथ कवि के पुत्र, काशी या बनारस के राजा श्री उदित नारायण की आज्ञा से 'महाभारत' और 'हरिवंश' के कुछ संक्षेप में भाषा या हिन्दुई में अनुवाद 'महाभारत दर्पण' और 'हरिवंश दर्पण' के रचयिता हैं। शुद्धता और सौन्दर्य इस अनुवाद की विशेषताएँ हैं; यह केवल थोड़ा संक्षेप इस विशेष अर्थ में है कि (इसमें) मूल के प्रायः इकट्ठे ही समानार्थवाची शब्दों तथा विशेषणों और व्यर्थ के पद्यों के अनुवाद की ओर ध्यान नहीं दिया गया। शेष में उसमें संस्कृत या फ़ारसी से हिन्दुस्तानी में किए गए अनुवादों में साधारणतः पाए जाने वाले दोष हैं। वे ये हैं कि उसमें मूल रचना की भाषा से उधार लिए गए अनेक शब्द और अभिव्यंजनाएँ हैं। यह आद्योपान्त पद्यों, किन्तु विभिन्न छंदों, में है। हिन्दुई में छपी अत्यन्त प्रसिद्ध (रचनाओं) में से एक, यह रचना लक्ष्मीनारायाण के प्रयत्नों से चौंपेजी चार बड़ी जिल्दों में प्रकाशित हो चुकी है। वह (शालिबाहन) संवत् १७५१, तदनुकूल १८२९ ईसवी सन्, में कलकत्ते से प्रकाशित हुई। इन चार जिल्दों में अठारह पर्व, या

'महाभारत'[1] और 'हरिवंश' के अंश, हैं। यह ज्ञात है कि 'महाभारत' में पाण्डव और कौरव कुमारों के, जो जन्म से चचेरे भाई और हस्तिनापुर के सिंहासन के लिए एक दूसरे के प्रतिद्वंद्वी थे, संघर्ष का अद्भुत विस्तार है। पिछले पहले वालों पर विजयी हुए और पहले वालों को कुछ समय के लिए छिप जाने पर बाध्य किया, जब कि उन्होंने पंजाब के एक शक्तिशाली राजकुमार से संधि स्थापित की और जब कि राज्य का एक भाग उन्हें दे दिया गया। बाद में पाण्डव इस भाग को जुए में हार गए, और उन्हें फिर निर्वासित होना पड़ा, जहाँ से वे शस्त्रों द्वारा अपने अधिकार की रक्षा करने के लिए प्रकट हुए। भारतवर्ष के तमाम राजकुमारों ने प्रतिद्वन्द्वी कुटुम्बियों में से एक या दूसरे का पक्ष लिया; कुरुक्षेत्र, आधुनिक थानेश्वर, में लगातार युद्ध हुए, आखिर में उनका अंत दुर्योधन और अन्य कौरव कुमारों की मृत्यु में और पांडव भाइयों में सबसे बड़े युधिष्ठिर के भारतवर्ष के चक्रवर्ती सम्राट् के रूप में उदय होने में हुआ।[2] 'हरिवंश' में कृष्ण की कथा है; श्री लाँग्लवा (M. Langlois) द्वारा वह संस्कृत से फ्रांसीसी में अनूदित और ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड की कमिटी ऑव ऑरिएंटल ट्रांसलेशन्स की अध्यक्षता में प्रकाशित हो चुका है।

'महाभारत' के और भी हिन्दुस्तानी अनुवाद हैं। जो मेरे जानने में आए हैं वे हैं : १. 'किताब-इ-महाभारत', जिसका एक भाग फ़रज़ाद कुली के पुस्तकालय में था; २. वह संपादन जिसका

---

[1] डा० फ़ोर्ब्स (उनके सूचीपत्र का नं० २५७) के पास 'सौप्तिक पर्व' शीर्षक दशम पर्व की एक हस्तलिखित प्रति है, ८६ फ़ोलिओ पृष्ठ, प्रत्येक पृष्ठ में १४ पंक्तियाँ।

[2] श्री आइशहॉफ़ (Eichhoff) की 'Poésie hèroïque des Indiens' (भारतीय वीर काव्य) शीर्षक रचना, पृ० २०, में 'महाभारत' का विश्लेषण पाया जाता है जिसका यहाँ मैंने एक संकेत मात्र दिया है।

केवल एक भाग सर डब्ल्यू० आउज़्ले के पास भी है;[1] ३. इसके अतिरिक्त सर डब्ल्यू० आउज़्ले की हस्तलिखित पोथियों में एक जिल्द है जिसमें संस्कृत और हिन्दुस्तानी में 'महाभारत' का एक अंश है; ४. पौलाँ द सैं-बारथेलेमी (Paulin de Saint-Barthèlemy) द्वारा उल्लिखित बोर्जिआ (Borgia) के राजकुमार की कई हस्तलिखित पोथियों में 'महाभारत' का एक अंश 'बालक[2] (कृष्ण) पुराण' के नाम से है। मूल हस्तलिखित पोथी के साथ पी० मारकस अ तुम्बा (P. Marcus à Tumba) कृत इटैलियन में अनुवाद जुड़ा हुआ है।

'प्रोसीडिंग्स ऑव दि वर्नाक्यूलर सोसायटी' (वर्नाक्यूलर सोसायटी का विवरण) पृ० १६ और ३२, में इस बात का उल्लेख हुआ है कि 'ऐब्सट्रैक्ट ऑव दि महाभारत' अँगरेज़ी शीर्षक के अंतर्गत एक संक्षिप्त 'महाभारत' दिल्ली से छपने को है। एच० फोश (Fauche) ने उसका पूर्ण अनुवाद करने का साहस किया है जो नौ जिल्दों में प्रकाशित है।

अकबर के मंत्री, अबुलफ़ज़ल, द्वारा बताए जाने वाले 'महाभारत' के फ़ारसी अनुवाद[3] के अतिरिक्त, हाल ही में नवाब

---

[1] यह हस्तलिखित पोथा उनके सूचीपत्र के नं० ६२३ के अंतर्गत है। उसमें लिखा है : फ़ोलियो (Folio) में, हिन्दुस्तान में शासन करने वाले एक सौ चौबीस राजाओं की सूची सहित, नागरी और फ़ारसी अक्षरों में, महाभारत के कुछ अंश। कुछ ऐसे पृष्ठ जुड़े हुए हैं जिनमें श्री जाँता (M. Gentil) के फ़ांसीसी हस्तलिखित ग्रंथ से लिया हुआ एक अजीब उद्धरण है।

[2] जिस ग्रन्थ से मैंने ये सूचनाएँ ली हैं उसमें गलती से 'बालग' (Bâlag) छपा हुआ है, Musei Borgiani Velitris codices manuscripti, etc, पृ० १३४

[3] इस अनुवाद के संबंध में देखिए, 'जर्नाल एसियातीक' (le Journal Asiatique) जि० ७, पृ० ११० में स्वर्गीय श्री शुल्ज़ (Schulz) द्वारा रोचक लेख।

महलदर खाँ नज़[1] (Mahaldar Khân Naza) की आज्ञानुसार महल में नक़ीब खाँ बिन अब्दुल्लतीफ़ द्वारा ११६७ हिजरी (१७८२—१७८३) में किया हुआ एक दूसरा (अनुवाद) है, और जो जानना आवश्यक है वह यह है कि नक़ीब ने अपनी रचना उस शाब्दिक व्याख्या के बाद की जो कई ब्राह्मणों ने संस्कृत पाठ से हिन्दुस्तानी में कर उसे दी। ग्रन्थ के अन्त में यह स्वयं उसी का कथन है।[2] कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के फ़ारसी हस्तलिखित ग्रंथों में हिन्दू बपास (l' Hindou Bapâs) कृत 'महाभारत' का एक तीसरा फ़ारसी अनुवाद है।

गोकुल-नाथ[3] जी (श्री गोसांई)

प्रसिद्ध हिन्दू, विट्ठलनाथ जी के पुत्र, वल्लभ के पौत्र और गोपीनाथ के पिता, ब्रजभाखा में लिखित, निम्नलिखित रचनाओं के रचयिता हैं :

१. 'वचनामृत'—उपदेशों का अमृत—, 'पुष्टि मार्ग'—आनंद का मार्ग—वा वल्लभ के सिद्धांत पर, जिनके सम्बन्ध में 'महाराजों के संप्रदाय (Sect of Maharajas) का इतिहास', पृ० ८२ तथा बाद के पृष्ठों में उद्धरण पाए जाते हैं, एक प्रकार की टीका।

२. 'रसभावना'—प्रेम की भक्ति—वल्लभ के सिद्धांत से सम्बन्धित रचना और जिसका भी एक उद्धरण—'महाराजों के संप्रदाय का इतिहास', पृ० ८२ तथा बाद के पृष्ठों, में पाया जाता है;

---

[1] स्ट्रेकर (Straker) का सूचीपत्र, पृ० ४०, नं० २६२

[2] देखिए अनुवाद का पृ० ७५ जिसे मेजर डा० प्राइस ने 'महाभारत' के अंतिम भाग (कृष्ण के अंतिम दिन) के फ़ारसी रूपान्तर से ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड की कमिटी ऑव ओरिएंटल ट्रांसलेशन्स द्वारा प्रकाशित 'मिसेलेनियस ट्रांसलेशन्स' (विविध अनुवाद) की पहली जिल्द में दिया है।

[3] भा० 'गोकुल का स्वामी', कृष्ण का एक नाम

३. 'जुगल किशोर विलास'—युवा कृष्ण की राधा के साथ क्रीड़ाएँ—गोकुलचंद पर लेख में उल्लिखित।

४. 'सरस रंग'—अच्छा स्वाद (रंग)।

५. उन्होंने अपने पिता विट्ठलनाथ जी, जिनका दूसरा नाम श्री गोसाईं जी महाराज है, के दो सौ बावन अनुयायियों के संक्षिप्त विवरण भी दिए हैं.—रचना जिसका एक उद्धरण पूर्वोल्लिखित रचना में पाया जाता है, पृ० ६२ तथा बाद के पृष्ठ।

गोपाल[१]

आगरे के प्रधान स्कूल के छात्र, आगरे से मुद्रित, चालीस हिन्दी दोहों में नीति वाक्यों के संग्रह, 'शिक्षा चातुर्य', के रचयिता हैं।

गोपाल चन्द्र (बाबू)

एक उच्चवंशीय हिन्दू, का जन्म जनवरी, १८३४ में हुआ था और मृत्यु मई, १८६१ में। इस थोड़े-से समय में उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना या संग्रह किया जिनकी एक सूची मुझे उनके सुयोग्य पुत्र, बाबू हरिचन्द्र, से प्राप्त हुई है जो उनमें से कुछ तो प्रकाशित कर चुके हैं और कुछ को प्रकाशित करने वाले हैं।

बारह वर्ष की अवस्था में उन्होंने हिन्दी कवित्तों में संस्कृत से वाल्मीकि कृत 'रामायण' और 'गर्ग संहिता' का अनुवाद किया।[२]

उनके द्वारा लिखित अन्य हिन्दी रचनाओं की सूची इस प्रकार है और जिसमें से पहली दस विष्णु के अवतारों से सम्बन्धित हैं:

'मत्स्य कथामृत'—मत्स्यावतार की सुधा ;

'कच्छ कथामृत'—कच्छपावतार की सुधा;

'बाराह कथामृत'—वाराहावतार की सुधा;

---

१ भा० 'गो पालक', कृष्ण का एक नाम

२ और भी देखिए, इस प्रसिद्ध हिन्दू के संबध में मैंने १८६८ के प्रारंभ के अपने भाषण (Discourse) में जो कुछ कहा है, पृ० ४८,४९।

'नृसिंह कथामृत'—नृसिंहावतार की सुधा ;
'वामन कथामृत'—वामनावतार की सुधा ;
'परशुराम कथामृत'—परशुरामावतार की सुधा ;
'राम कथामृत'—रामावतार की सुधा ;
'बलराम कथामृत'—बलरामावतार की सुधा ;
'बुद्ध कथामृत'—बुद्धावतार की सुधा ;
'कल्कि कथामृत'—कल्कि अवतार की सुधा ;
'नरासंध वध महाकाव्य'—नरासंध के वध पर महाकाव्य ;
'रसरत्नाकर'—रस का समुद्र ;
'विचित्र विलास'—भाँति भाँति के सुख;
'भारती भूषण'—भारती का शृंगार;
'नहुष या नहुख नाटक'—राजा नहुष का नाटक;
'भाखानीति'—हिन्दुई के बारे में नीति;
'एकादशी कथा; दोहे, चौपाई में'—दोहों और चौपाइयों में पक्ष के ग्यारहवें दिन की कथा;
'एकादशी कथा कीर्तन में'—कीर्तन द्वारा ग्यारहवें दिन की कथा ;
'अनेकार्थ'—विभिन्न अर्थ ;
'भाखा व्याकरण'—हिन्दुई का व्याकरण;
'जोगलीला'[1]—योग के काम;
'भगवद् गुणानुवाद कीर्तन'—भागवत की प्रशंसा संबंधी कीर्तन;
'होरी के कीर्तन धोमरी' (dhomri)—होरी की प्रशंसा में गाने ।[2]

गोपीचंद[3] (राजा)

राग-सागर में प्रकाशित हिन्दी लोकप्रिय गीतों के, और जे०

---

[1] एक धार्मिक काव्य है जो १० अठपेजा पृष्ठों में, संवत् १९१९ (१८६३) में आगरा से प्रकाशित हुआ है ।

[2] कवि के पुत्र द्वारा देवनागरी अक्षरों में प्रकाशित तेईस छंदों का छोटा-सा काव्य ।

[3] भा० 'गोपियों का चन्द्रमा', कृष्ण का नाम

रॉबसन द्वारा अपने 'सेलेक्शन ऑव ख़्याल्स और मारवाड़ी प्लेज़' में प्रकाशित एक ख़्याल के रचयिता हैं।

गोपी जन बल्लभ[1]

बाबू हरिचन्द्र द्वारा अपनी 'कविवचन सुधा' संख्या ७ में प्रकाशित और ग्रंथ-सूची में अपने पिता गोपालचंद्र की बताई गई, रचना, 'नहुष नाटक'—नहुष का नाटक—के रचयिता हैं।

गोपी-नाथ[2] (कवि)

श्री गोसाईं गोकुलनाथ जी[3] के पुत्र और रघु-नाथ के पौत्र, 'महाभारत दर्पण'—महाभारत का दर्पण—और 'हरिवंश दर्पण' —हरिवंश का दर्पण—शीर्षक 'महाभारत' और 'हरिवंश' (Harivansa)[4] के हिन्दुई रूपान्तर के छंदों में से एक भाग के रचयिता हैं।

दो खंडों को छोड़ कर पहली जिल्द बिलकुल गोकुल-नाथ कृत है; किन्तु अन्य जिल्दें अधिकांशतः गोपी-नाथ, और उनके शिष्य, मणि-देव, कृत हैं। वास्तव में गोकुल-नाथ ने ग्रंथ का आरंभ किया था और दूसरों ने उसे समाप्त किया।

गोबिंद[5] कवि

'कर्णाभरण'—कान का आभूषण—और 'भाषा भू भूषण' —हिन्दी में, पृथ्वी का भूषण—के रचयिता, हाशिये पर नोट्स

---

१ भा० 'गोपियों का प्रिय व्यक्ति', अर्थात् कृष्ण

२ भा० 'गोपियों का नाथ', अर्थात् कृष्ण

३ इन पर लेख देखिए।

४ बंगाल की एशियाटिक सोसायटी के संस्कृत-ग्रंथों की पुस्तक-सूची में यह इसी प्रकार दिया गया है।

५ भा० 'कृष्ण का एक नाम'

सहित, काव्यशास्त्र पर रचनाएँ, १८६६ में बनारस से मुद्रित, बाईस-बाईस पंक्तियों के २२ चौपेजी पृष्ठ।

गोबिन्द रघु-नाथ थत्ती (बाबू)

दो पत्रों के संपादक हैं जो बनारस के 'मतबा बनारस अख़बार' नामक छापखाने से मुद्रित होते हैं। उनमें से प्रसिद्ध पत्र 'बनारस अख़बार' शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित होता है जो हिन्दी तथा देवनागरी अक्षरों में लिखा जाता है। कहा जाता है कि नेपाल के राजा, जिनकी धर्मपत्नी बनारस में रहती है, इसकी आर्थिक सहायता करते हैं। इस पत्र के प्रत्येक अंक में संपादक न्यायशास्त्र के संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद देते हैं।

उसी छापेख़ाने से गोबिंद रघु-नाथ उर्दू में लिखा गया 'बनारस गज़ट' भी प्रकाशित करते हैं, जो प्रत्येक सोमवार को, दो कॉलमों में ८ पृष्ठों के कॉपीबुक के आकार के चौपेजी पृष्ठों में निकलता है। इन दोनों पत्रों में वे ईसाई धर्म-प्रचारकों के विरुद्ध हिन्दूधर्म का समर्थन और पादरियों द्वारा बनारस में स्थापित स्कूलों का विरोध करते हैं। छापे की दृष्टि से ये दोनों पत्र अच्छे निकलते हैं।

मई, १८५४ से ये बाबू साहब 'आफ़ताब-इ हिन्द'—भारत का सूर्य—शीर्षक उर्दू पत्र के संपादन में काशी-दास मित्र के उत्तराधिकारी भी हुए हैं।

फिर, जिस छापेख़ाने का हमने उल्लेख किया है, उसी से १८५० में प्रकाशित हुए हैं :

१. हिन्दी में, 'विचित्र नाटक' शीर्षक के अंतर्गत, सिक्खों का इतिहास, जिसका अनुवाद कैप्टेन जी० एम्० सिडन्स ने किया है[1];

२. 'शरण्य नीति—शरणागत को सलाह—शीर्षक एक ग्रन्थ;

[1] देखिए, 'जर्नल एशियाटिक सोसायटी ऑव बंगाल', १८५०, पृ० ५६३

३. एक और जिसका शीर्षक है 'समुद्र'—सागर—या 'सामुद्रिक'—सामुद्रिक शास्त्र—ग्रंथ वास्तव में इसी विषय पर है ("सामुद्रिक शास्त्र पर हिन्दी रचना");

४. 'जुग्त' या 'युक्त रामायण', हिन्दी पद्य में; अर्थात् 'रामायण का परिशिष्ट', संम्भवतः 'योग वाशिष्ठ का अनुवाद';[१]

५. 'हातिमताई' (हातिम के साहसिक कार्य), हिन्दी पद्य में, तथा अन्य अनेक ग्रन्थ।

गोरा कुंभर[२]

'कवि चरित्र' में उल्लिखित एक हिन्दी लेखक, और नाम-देव के समय में पंढरपुर में रहते थे।

गोविन्द सिंह

गुरु गोविन्द[3] सिंह अथवा गोविन्द स्वामी, १७०८ में मृत्यु को प्राप्त, सिक्खों के दसवें गुरु, 'दसवें[४] पादशाह की[५] ग्रन्थ',[६] या 'दशम पादशाह की ग्रंथ'[७] अर्थात् दसवें गुरु गोविन्द सिंह तथा अपने पूर्ववर्तियों की (जैसा कि कलकत्ते के एशियाटिक सोसायटी के जर्नल, १८३८, पृ० ७११, में कहा गया है) पुस्तक के रचयिता हैं। लोग इस रचना को केवल 'ग्रन्थ' भी कहते हैं, किन्तु यह शीर्षक

---

१ इसी रचना, या कम-से-कम इसी शीर्षक वाली एक रचना, के रचयिता बाबू जानकी प्रसाद बताए जाते हैं।

२ भा० 'सुन्दर पानी लाने वाला', अर्थात कृष्ण

3 'गायवाला', कृष्ण का नाम

४ ठीक-ठीक यह 'दसवीं' होना चाहिए क्योंकि 'दस' पूर्ण संख्या-वाचक है।

५ बोलचाल में 'का' कहते हैं, जैसा कि कनिंघम ने 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस', पृ० ३७२ में लिखा है, किन्तु यह एक व्याकरण-संबंधी भूल है, क्योंकि 'ग्रंथ' स्त्रीलिंग है।

६ 'दस पादशाह की ग्रन्थ' (फ़ारसी लिपि से)

७ दशम् पादशाह की ग्रंथ

नानक कृत 'आदि ग्रंथ' के लिए विशेषतः अधिक प्रयुक्त होता है। एक सूचीपत्र[1] में इस पिछली रचना की दो जिल्दें बताई गई हैं। पहली गुरु नानक, और दूसरी गुरु गोविन्द के नाम से संबंधित है। यह बड़ा ग्रंथ, क्योंकि उसमें एक हजार से भी अधिक चौपेजी पृष्ठ हैं, हिन्दुई पद्य में विभिन्न छन्दों में किन्तु, जैसा कि 'आदि ग्रंथ' में है, पंजाबी या गुरुमुखी अक्षरों में लिखा गया है। 'दसवें पादशाह की ग्रंथ' के सोलह खण्डों में से, छः, कम-से-कम उनके कुछ भाग, गोविन्द द्वारा लिखे गए हैं : कहा जाता है, अन्य गोविन्द के चार अनुयायियों, जिनमें से केवल श्याम और राम के नाम ज्ञात हैं, द्वारा बोले गए थे।[2]

प्रसंगवश मैं इस बात का भी उल्लेख कर देना चाहता हूँ कि अँगरेजों द्वारा पंजाब की विजय के बाद सिक्ख संप्रदाय का ह्रास होता हुआ प्रतीत होता है। पंजाबी अपनी प्रारंभिक दीक्षा को भूलते जा रहे हैं, और अन्य भारतवासियों की भाँति ब्राह्मण धर्मावलंबी हिन्दू रह जाते हैं। उनमें जो अधिक उत्साही हैं वे वाह्य और भीतरी सुधारों द्वारा जातीय वर्ग से अपने को पृथक् रखते हैं।

'दसवें पादशाह की ग्रन्थ' के निर्माण का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

१. 'जप जी', जैसा 'आदि ग्रन्थ' में है;

२. 'अकाल स्तुत'—अमरों की प्रशंसा, जिसे प्रातः पढ़ा जाता है ;

३. 'विचित्र नाटक', यह गोविन्द के वंश, उनके सुधारवादी

---

[1] सी० स्टीवार्ट (C. Stewart) द्वारा बेचे जाने वाला, पृ० १०८।

[2] सी० स्टीवार्ट द्वारा बेचे जाने वाले सूचीपत्र में, पृ० १०२, यह रचना दो जिल्दों में बताई गई है।

प्रचार और हिमालय के सामन्त और मुग़ल सम्राट् के साथ युद्धों का किंवदंतियों पर आधारित इतिहास है ;[1]

४. 'चण्डी चरित्र'—देवी चण्डी की कथा, जिसने आठ दैत्यों का संहार किया जिनके नामों का उल्लेख हुआ है ।[2] यह खण्ड संस्कृत से अनूदित है ;

५. 'चण्डी चरित्र' का एक और रूपान्तर ;

६. 'चण्डी की वार', चण्डी की कथा का परिशिष्ट भाग ;

७. 'ज्ञान प्रबोध'—बुद्धि की श्रेष्ठता, 'महाभारत' के अनुसार, प्राचीन राजाओं की ओर संकेत सहित, ईश्वर की प्रशंसा ।

८. 'चौपाइयाँ चौबीस अवतारों कियाँ'—चौबीस अवतारों पर लिखी गई चौपाइयाँ, श्याम कृत;[3]

९. 'महदी मीर' । यह शियाओं के बारहवें इमाम, महदी, का प्रश्न है जो इस संसार को छोड़ चुके हैं, किन्तु जो अब भी जीवित हैं और जो अंतिम दिन उठेंगे । यह जान लेना चाहिए कि सिक्ख तथा अन्य आधुनिक संप्रदाय वालों ने मुसलमानों के प्रति, अपने-अपने समुदाय की ओर आकृष्ट करने के लिए, कुछ उदारता प्रकट की है । कुछ संप्रदाय तो हैं ही ऐसे जो मिश्रित हैं, विशेषतः कबीर-पंथियों का ;

१०. 'ब्रह्म की अवतार'—ब्रह्मा के अवतार, इन अवतारों का

---

[1] इसका विस्तृत विश्लेषण कनिंघम कृत 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस', ३८८ तथा बाद के पृष्ठों, में पाया जाता है ।

[2] कनिंघम ने, 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस', पृ० ३७३ में ये नाम दिए हैं ।

[3] ब्राह्मणों के दस अवतारों के अतिरिक्त, सिक्ख लोग नवें और दसवें के बीच रखे गए चौदह की गणना और करते हैं, जिनमें से सिक्खों के सबसे बड़े संत सारंगी समुदाय के संस्थापक, अर्दन्त देव, एक हैं । अधिक देखिए कनिंघम कृत 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस', पृ० ३७४ ।

उल्लेख, जिनके बाद प्राचीन समय के आठ राजाओं का इतिहास है;[1]

११. 'रुद्र की अवतार'—शिव के अवतार;

१२. 'शस्त्र नाममाला'—हथियारों के नाम। मानव-जाति के वंशों के विवरण की दृष्टि से यह पुस्तक रोचक है;

१३. 'श्री मुख वाक् सवैया बत्तीस'—बत्तीस छन्दों में गुरु (गोविन्द) की वाणी। ये छन्द वेदों, पुराणों और क़ुरान के विरुद्ध लिखे गए हैं;

१४. 'हज़ार शब्द'—शब्द (नामक छन्द में) हज़ार पद्य, गोविन्द कृत, ईश्वर तथा गौण देवताओं की प्रशंसा;

१५. 'स्त्री चरित्र'—स्त्रियों का उल्लेख, अर्थात् श्याम कृत, स्त्रियों के चरित्र और गुणों पर चार सौ चार क़िस्से। यह 'दस वज़ीर' की भाँति एक विचित्र कथा है।

१६. 'हिकायत'—लघु कथाएँ। अन्य पुस्तकों की भाँति फ़ारसी में किन्तु गुरुमुखी अक्षरों में लिखित, ये बारह कथाएँ हैं। ये लघु कथाएँ जो गोविन्द द्वारा लिखित और दयासिंह तथा अन्य चार सिक्खों के माध्यम द्वारा औरंगजेब को संबोधित हैं।

दो पत्र भी, एक 'राहतनामा'—नियम का पत्र, और दूसरा 'तनख्वाहनामा'—क्षति पूर्ति का पत्र, गोविन्द कृत बताए जाते हैं। इनमें कुछ पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में प्रसिद्ध सम्मतियाँ दी गई हैं। इनके कुछ रोचक उद्धरण कनिंघम कृत 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस' (सिक्खों का इतिहास), ३६४ तथा बाद के पृष्ठों, में पाए जाते हैं।

ग्वाल[2] कवि

पद्माकर कृत 'गंगा लहरी'—गंगा की लहर—के क्रम में

---

[1] पीछे उद्धृत कनिंघम कृत रचना में इसके बारे में विस्तार सहित देखिए।

[2] भा० 'गाय वाला', संभवतः यहाँ कृष्ण के नाम के रूप में प्रयुक्त हुआ है।

प्रकाशित 'जमुना लहरी'—जमुना की लहर—के रचयिता हैं; बनारस, १८६५, २०-२० पंक्तियों ३६ अठपेजी पृष्ठ।

घनश्याम[1] राय (पंडित)

उर्दू से हिन्दी में 'डाक बिजली का प्रकाश'—बिजली की डाक पर प्रकाश डालने वाली रचना—के अनुवाद के रचयिता; इलाहाबाद, १८६०, चित्रों सहित ६२ बड़े अठपेजी पृष्ठ।

घासी राम (पंडित)

निम्नलिखित रचनाओं के रचयिता हैं:

१. 'भूगोल दीपिका'—भूगोल का दीपक—अँगरेज़ी से हिन्दी में अनूदित; बनारस, १८६०, ४८ चौपेजी पृष्ठ।

२. 'संक्षेप इँगलिस्तान इतिहास'—इँगलैंड का संक्षेप में इतिहास—लकड़ी पर खुदे नकशों और चित्रों सहित; ६५ अत्यन्त छोटे चौपेजी पृष्ठ; आगरा, १८६०।

चंग देव[2]

ने समस्त विज्ञानों और सब कलाओं के अध्ययन में अपना जीवन व्यतीत कर दिया और 'कवि चरित्र'[3] में उनका हिन्दी के लेखकों में उल्लेख हुआ है।

चंद[4] या कवि चंद और चन्दर भट्ट (चन्द्र[5] भट्ट)

हिन्दुई के अत्यन्त प्रसिद्ध इतिहास-लेखक और कवि, 'पृथ्वी राजा चरित्र' के रचयिता, अथवा दिल्ली के अन्तिम हिन्दू राजा,

---

१ भा० 'काला बादल', कृष्ण का एक नाम

२ भा० अच्छे देवता

३ 'केशव दास' लेख देखिए, 'चंग केशवदास' नाम भी है।

४ भा० चन्द्रमा

५ अर्थात् चन्द्र भाट

पृथ्वीराजा, का इतिहास। छंदों में लिखित इस रचना में जो भारत में प्रचलित परंपरा के अनुसार है, राजपूताना, और विशेषतः चन्द के समय, का इतिहास है, इतिहास जिसमें लेखक ने काफ़ी प्रमुख भाग लिया। यह निश्चित रूप से हिन्दी की अत्यन्त प्राचीन रचनाओं में से एक है। चंद पिथौरा या पृथ्वीराजा के यहाँ कवि थे जिसका उन्होंने अनेक राजपूत वंशों के साथ गुणगान किया है। अस्तु, वे १२ वीं शताब्दी के अन्त में विद्यमान थे। मेजर कोफ़ील्ड (Caufield) द्वारा प्रदत्त इस रचना की एक हस्तलिखित प्रति लंदन की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है, और एक प्रति मैकेन्ज़ी के हस्तलिखित पोथियों के संग्रह में थी।[१] रूसी भाषा के एक विद्वान्, रॉबर्ट लेन्त्ज़ (Robert Lenz) ने उसके एक अंश का अनुवाद किया था जिसे वे सेंट पीटर्सबर्ग से लौटने पर १८३६ में प्रकाशित कराने वाले थे; किन्तु इस नवयुवक विद्वान् की असामयिक मृत्यु ने प्राच्यविद्याविशारदों को इस रोचक ग्रन्थ से वंचित रखा। रॉयल एशियाटिक सोसायटी वाली हस्तलिखित प्रति पर एक फ़ारसी शीर्षक दिया हुआ है जिसका आशय है 'पृथूराज का इतिहास, पिंगल भाषा में (अर्थात् भारतीय छन्दों में), कवि चंद बरदाई द्वारा'।[२] स्वर्गीय जेम्स टॉड ने अपने राजस्थान के इतिहास के लिए इस काव्य-रचना से एक बड़ा अंश लिया।[3] उन्होंने उसके एक बड़े अंश का अनुवाद भी किया था; किन्तु मृत्यु हो जाने के कारण न तो वे अपना कार्य पूर्ण कर सके और न उसे प्रकाशित कर सके। वे केवल इस ऐतिहासिक काव्य-रचना के 'The Vow of Sangopta' अर्थात् 'संगोप्त का

---

१ 'मैकेन्ज़ी कलेक्शन', जि० २, पृ० ११५

२ 'तारीख़ पृथूराज बज़बान पिंगल तसनीफ़ कर्दा कब चन्द बरदाई' (फ़ारसी लिपि से)

3 देखिए, श्री द सैसी (M. de Sacy) कृत 'ज़ूर्ना दै सावाँ' (le Journal des Savants), १८३१, पृ० ७, और १८३२, पृ० ४२० में लेख।

प्रण' शीर्षक महत्त्वपूर्ण प्रसंग का अनुवाद प्रकाशित कर सके थे; किन्तु उन्होंने उसकी प्रतियाँ केवल कुछ मित्रों को ही दी थीं। 'एशियाटिक जर्नल' की नवीन माला की २५ वीं जिल्द में यह अनुवाद फिर से छपा है। इसके अतिरिक्त लेखक की काव्य-रचना के संबंध में उन्होंने जो कुछ कहा है, वह इस प्रकार है [1]:

"चंद की रचना जिस समय वह लिखी गई थी उस काल का एक सामान्य इतिहास है। पृथीराज के शौर्य से संबंधित उनहत्तर समयों के एक लाख छन्दों में राजस्थान के प्रत्येक राजवंश का उसके पूर्वजों सहित थोड़ा-थोड़ा वर्णन हुआ है। फलतः वे सभी जातियाँ जो अपने को राजपूत नाम की अधिकारिणी समझती हैं इस रचना को मुहाफ़िज़खानों में सुरक्षित रखती हैं।......पृथीराज के युद्धों, उसकी सन्धियाँ, उसके अनेक तथा शक्तिशाली सहायक राज्य, उनके महल और उनकी वंशावलियाँ चंद के उल्लेखों को इतिहास और भूगोल के लिए बहुमूल्य बनाती हैं, यद्यपि पौराणिक कथाओं, रीति-रस्मों आदि के लिए भी......।"

मेरे विचार से यह लेखक चंद्र या चंद्रभाट के नाम से भी उल्लिखित किया जाता है, और उसकी रचना 'पृथूराज राजसू'[2] अर्थात् पृथ्वीराजा का महान् यज्ञ, शीर्षक के अंतर्गत।

वॉर्ड ने अपने 'हिस्ट्री ऑव दि लिट्रेचर ऐंड दि माइथॉलोजी ऑव दि हिन्दूज़', जि० २, पृ० ४८२ में इस रचना को कन्नौज की हिंदी बोली में लिखा गया बताया है।

मेरे विचार से यह वही रचना है जिसका 'पृथीराजा भाषा' शीर्षक के अंतर्गत कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के मुखपत्र[3] में और उसी सोसायटी की पुस्तकों के सूचीपत्र में 'पृथी, अथवा

---

१ 'ऐनल्स ऐंड ऐंटिक्विटीज़ ऑव राजस्थान', जि० १, पृ० २५४

२ 'पृथूराज राजसू' (फ़ारसी लिपि से)

३ १८३५, पृ० ५५

बिआना (Biana)[1] के प्रथम राजा प्रथू राजा के शौर्य कृत्य' (Prithi, or the exploits of Prithu-raja, the first monarch of Biana) शीर्षक के अंतर्गत उल्लेख है।

यद्यपि यह वही हो, (किंतु) जो भाग कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में पाया जाता है उसका शीर्षक है 'प्रथीराज रासउ पद्मावती खण्ड।'

सबसे ऊपर और मेरी 'Rundiments hindouis' (रुदीमाँ ऐंदुई) की भूमिका में जो कुछ कहा गया है, उसमें मैं यह जोड़ना चाहता हूँ कि यह काव्य साठ सर्गों में रचा गया है और 'आईन अकबरी' में उसका प्रशंसा के साथ उल्लेख हुआ है। कर्नल टॉड ने लंदन की रॉयल एशियाटिक सोसायटी के 'Transactions' (विवरण) की पहली जिल्द में सर्वप्रथम कुछ उद्धरण दिए थे, और फिर, मेरा विचार है, उन्होंने १८२८ में पेरिस के 'ज़ूर्ना एसियातीक' (Journal Asiatique) में एक नोट प्रकाशित किया था। इस काव्य में एक हिंदू राजा का भारत के मुसलमान आक्रमणकारियों के विरुद्ध ज़बरदस्त संघर्ष का उल्लेख है। उसमें तत्संबंधी और प्रथ्वीराज के समकालीन विभिन्न उत्तर भारतीय नितान्त अज्ञात नरेशों के सम्बंध में भी विस्तृत वर्णन दिए गए हैं। संक्षेप में, बारहवीं शताब्दी के भारतवर्ष का वह पूर्ण चित्र है। दुर्भाग्यवश ये हस्तलिखित पोथियाँ, जो भारत में अत्यन्त दुष्प्राप्य और अत्यन्त क़ीमती हैं, एक दूसरे से बहुत भिन्न हैं। श्री एफ़० एस० ग्राउज़ (F. S. Growse) ने 'जर्नल ऑव दि एशियाटिक सोसायटी ऑव बंगाल', नं० CL, नवम्बर, तथा बाद की, में विस्तार से बनारसवाली हस्तलिखित पोथी की विषय-सूची दी है और प्रथम 'समय' का अनुवाद दिया है।

श्री एस० डब्ल्यू० फ़ालन (Fallon) की अजमेर में एक दिन एक ऊँट वाले से सहसा भेंट हुई जिसने उन्हें चन्द की कृति से लम्बे-

---

[1] सूबा आगरा का नगर

लम्बे उद्धरण सुनाए जो उसे कंठस्थ थे और जो उसने दूसरे भारत-वासियों से गाते हुए सुन रखे थे, क्योंकि वह पढ़ना नहीं जानता था। साथ ही वीरों के वीरता-पूर्ण कृत्यों—जिनका केन्द्र रजवाड़ा था, के वर्णन अब भी लोगों की स्मृति में ताज़ा हैं; क्योंकि वहाँ एक अशिक्षित और साधारण हैसियत का व्यक्ति है जो इस प्रसिद्ध राजपूत कविता को स्वाभाविक भावुकता के साथ बड़े जोश से गाता है, और वह भी एक कृत्रिम शैली में।

यद्यपि चंद की कविता हिन्दुई या पुरानी हिन्दी में लिखी गई थी, तो भी उसमें मिल गए कुछ फ़ारसी और अरबी शब्द मिलते हैं; ऐसे शब्द हैं 'आतश'—आग, 'मारूफ़'—प्रसिद्ध, 'शिताब' —तेज़, 'सरदार'—नेता, 'कोह'—पहाड़, आदि।

यह कहा जा चुका है कि राजपूतों की यह जातीय कविता कुछ भागों में भारत में प्रकाशित हो चुकी है[१]; किन्तु सबसे अधिक निश्चित जो बात है वह यह है कि यह कार्य अभी होने को था और हिन्दुई साहित्य का यह अभाव अंत में विद्वान् श्री बीम्स द्वारा पूर्ण होने को है।[२] हमारी यह प्रार्थना है कि यह शुभ कार्य सफलतापूर्वक समाप्त हो और ऐतिहासिक और भाषा-विज्ञान की दृष्टि से इतनी महत्वपूर्ण कविता के पूर्ण अनुवाद के साथ उनके इस कार्य का अंत हो।

कवि चंद की एक और रचना 'जयचंद्र प्रकाश' – जयचंद्र का इतिहास – है। पहली की तरह, यह भी कन्नौज की बोली में लिखी गई है, और साथ ही वॉर्ड द्वारा इसका उल्लेख भी हुआ है। स्वर्गीय सर एच० इलियट का विचार था कि चंद कृत 'जय चंद्र-प्रकाश' कोई स्वतंत्र रचना नहीं है, वरन् केवल 'पृथ्वीराज चरित्र'

---

१ 'जर्नल रॉयल एशियाटिक सोसायटी', १८५१, अगस्त अंक, पृ० १९२

२ इस विषय के संबंध में मैंने १८६८ के प्रारंभ के अपने 'Discourse (भाषण) में जो बातें कही हैं उन्हें देखिए, पृ० ४९ तथा बाद के पृष्ठ।

का 'कनौब्ज' या 'कन्नौज खंड' है, जिसका टॉड द्वारा एशियाटिक जर्नल' में 'The Vow of Sungopta' (संगोप्त की प्रतिज्ञा) शीर्षक के अंतगर्त अनुवाद हुआ है।

चतुर्भुज[1] अथवा चतुर्भुज दास[2] मिश्र[1]

रचयिता हैं;

१. 'मधु मालती कथा'—मधु (माधव) और मालती की कथा—शीर्षक हिंदुई पद्यों में एक कथा के। इन चरित्रों के प्रेम का एक रोचक हिंदू नाट्य-कृति में उल्लेख हुआ है। मेरे विचार से यह वही रचना है जिसकी विलमेट (Wilmet)[3] पुस्तकालय से आई हुई एक कैथी नागरी में लिखी हुई हस्तलिखित प्रति लीड (Leyde) के पुस्तकालय में है। ये नायक-नायिकाएँ वही हैं जिनका मनोहर और मदमलत (Manohar et Madmalat) नामों के अंतर्गत अन्य पद्यात्मक कथाओं में उल्लेख हुआ है जिनमें से प्रसिद्ध दक्खिनी कवि नसरती (Nusrati) कृत (रचना) का बहुत आगे उल्लेख हुआ है।

२. कृष्ण-कथा पर आधारित व्यासदेव कृत भागवत के दशम स्कंध के ब्रजभाखा रूपांतर के रचयिता। चतुर्भज मिश्र ने उसे दोहा और चौपाई में लिखा। इस कथा के सार से ही लल्लूलाल

---

[1] चतुर्भुज, जिसका अर्थ है चार भुजाएँ, विष्णु के नामों में से एक है। 'मिश्र' एक प्रकार की आदरसूचक उपाधि है जो व्यक्तिवाचक संज्ञाओं में जोड़ी जाती है। वास्तव में इस शब्द का अर्थ है 'हाथी'; यह 'सिंह', अर्थ शेर, के समानान्तर है, जो प्रायः व्यक्तिवाचक संज्ञाओं के बाद ही रखा जाता है।

[2] भा० 'विष्णु का दास'

[3] 'Catal. codicum or, Biblioth. Ac. reg. sc. leyd', पृ० २८१, १८६२

कृत 'प्रेमसागर' [1], जो कलकत्ते से छपा है, निर्मित है और जिसमें अनेक मालिक लंबे-लंबे शब्द सुरक्षित हैं। इस अंतिम रचना के संबंध में मैं लल्लू जी लाल पर लेख में कहूँगा।

चिंतामन या चिंतामनि[2]

ब्रजभाखा में गणित पर लिखे गए एक ग्रंथ के रचयिता हैं, और जिसकी नस्तालीक अक्षरों में एक हस्तलिखित प्रति (नं०६६) 'बीकत'[3] (Bîkat) शीर्षक के अंतर्गत केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के पुस्तकालय में पाई जाती है।

चिरंजीलाल (मुंशी)

देशी स्कूलों के निरीक्षण से सम्बद्ध, रचयिता है :

१. 'चिरंजीलाल इंशा' के...

२. 'धर्म सिंह का वृतांत' का हिन्दी से उर्दू में 'धर्मसिंह का क़िस्सा' शीर्षक के अंतर्गत अनुवाद के...

× × ×

५. 'शरी उत्तालीम'...यह रचना 'शाला पद्धति' के नाम से हिन्दी में प्रकाशित हुई है (देखिए, श्री लाल पर लेख)

× × ×

चुन्नालाल (पंडित)

शिवप्रसाद कृत 'भारत का इतिहास' में आए हुए कठिन शब्दों के उसी रचना के नाम के आधार पर 'इतिहास तिमिर नाशक प्रकाश'— 'तिमिर नाशक' को प्रकाशित करने वाला—शीर्षक कोष के रचयिता; मेरठ (Mirat), १८६७, ६२ अठपेजी पृष्ठ।

---

१ 'प्रेमसागर', पृ० १। देखिए इस विषय पर मैंने लल्लूजी लाल पर लेख में जो कुछ कहा है।

२ भा० 'एक काल्पनिक पत्थर का नाम' जिसका उल्लेख हो चुका है।

३ शायद 'गणित' शब्द भूल से ऐसा लिख गया है।

चोक-मेल (Choka-Mèla)

पंढरपुर के निवासी एक हिन्दी-लेखक हैं जो शिवाजी के राजत्व-काल में रहते थे। विठोबा के उपलक्ष्य में उन्होंने एक 'अभंग' की रचना की है और भक्तों के आनन्द के लिए एक अत्यधिक आध्यात्मिक ग्रन्थ की।

छगन[1]लाल (पंडित)

जिन्हें लोग 'ज्योतिषी' नाम से विभूषित करते हैं, संवत् १६२५ (१८४७ ई०) के वर्ष के लिए 'पंचांग' के रचयिता हैं जो 'सत्य संघ' (Association of Truth) के तत्वावधान में आगरे से प्रकाशित हुआ है।

इस नाम के अन्य अनेक भारतीय पंचांग हैं, जिनमें से एक इंदौर से १८४६ में प्रकाशित हुआ है और वह अत्यन्त बड़े-बड़े पाँच भागों में विभाजित है।

छत्र-दास[2]

रामसनेहियों के आध्यात्मिक गुरुओं में दूल्हाराम के उत्तराधिकारी, 'दूल्हाराम' लेख में जो कुछ कहा गया है उसके अतिरिक्त एक हजार शब्दों के रचयिता हैं, जिन्हें, कहा जाता है, उनकी इच्छा थी कि कोई न लिखे।

छत्री[3] सिंह

'विजय मुक्तावली'—विजय के मोतियों की माला—शीर्षक हिन्दी में एक संक्षिप्त 'महाभारत' के रचयिता हैं, २२४ अठपेजी पृष्ठों में प्रकाशित ; आगरा, १८६६।

---

[1] भा० 'राजा, स्वीकार करने वाला, विनम्र'

[2] भा० 'साधु के दास'

[3] भा० संभवतः 'क्षत्रिय' के स्थान पर

जगजीवन-दास[1]

यह सतनामी संप्रदाय के संस्थापक का नाम है। जन्म से वे क्षत्रिय थे। वे अवध में उत्पन्न हुए थे, और उनकी समाधि लखनऊ और अवध के बीच कटवा में अब भी है। जीवन भर वे गृहस्थ रहे। उन्होंने कई पुस्तिकाएँ लिखी हैं जो सब हिन्दी छन्दों में हैं।

पहली का शीर्षक 'प्रथम ग्रंथ' या पहली पुस्तक है। यह शिव और पार्वती के बीच वार्तालाप के रूप में एक पुस्तिका है।

दूसरी का शीर्षक 'ज्ञान प्रकाश' या ज्ञान की अभिव्यक्ति है। यह ईसवी सन् १७६१ में लिखी गई थी।

तीसरी का शीर्षक 'महाप्रलय' या महा विनाश है। श्री विल्सन[2] द्वारा परिचित कराया गया एक छोटा-सा उद्धरण यहाँ दिया जाता है :

> 'पावन पुरुष सब के बीच रहता है, किन्तु वह सब से दूर है। उसे किसी के प्रति मोह नहीं होता। वह जानता है कि वह जान सकता है, किन्तु वह खोज नहीं करता। वह न जाता है न आता है; वह न सीखता है न सिखाता है; वह न चिल्लाता है न आहें भरता है, किन्तु वह अपने से तर्क करता है। उसके लिए न सुख है न दुःख, न दया है न क्रोध, न मूर्ख है न विद्वान्; जगजीवन-दास एक ऐसे पूर्ण व्यक्ति को जानना चाहते हैं, जो मानव स्वभाव से पृथक् रहता है, और जो व्यर्थ की बातों में समय व्यतीत नहीं करता।'

जग-नाथ[3]

प्रथीराज के शत्रु, महोबे के राजा के यहाँ चारण, अकबर के

---

[1] जग्जीवंदास, 'ईश्वर (संसार का जीवन) का दास'

[2] 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १७, पृ० ३०४

[3] भा० 'संसार का राजा', विष्णु का एक नाम; जो इस नाम के अंतर्गत उड़ीसा की ओर एक प्रसिद्ध मंदिर में पूजे जाते हैं।

शासन-काल में, जो १५५२ से १६०५ तक रहा, जीवित थे। चंद ने जितनी उनकी काव्य-प्रतिभा की प्रशंसा की है, उतनी ही राजा के प्रति भक्ति की, जिनके लिए वे लड़ते-लड़ते मारे गए।[1]

ये वही कवि हैं जिनका 'राज-सागर' में 'जगन्नाथ'[2] नाम से उल्लेख हुआ है। इसका भी मतलब वही है जो जग-नाथ का।

जगरनाथ-प्रसाद

माखनलाल की सहकारिता में 'भागवत पुराण' के हिन्दी गद्य में अनुवाद के रचयिता हैं, जिसका नवल किशोर ने 'सुखसागर' शीर्षक के अन्तर्गत १८६४ में लखनऊ से द्वितीय संस्करण प्रकाशित किया है, ६०६ चौपेजी पृष्ठ।

जटमल या जट्मल[3]

धर्म सिंह के पुत्र, 'कबीश्वर' उपाधि धारण करते थे, और नज़ीरुद्दीन[4] के पुत्र, अली ख़ाँ पठान राजा के राजत्व-काल में, सत्रहवीं शताब्दी में मोरछत्तो[5] (Mortchhatto) में रहते थे। वे ईसवी सन् १६२४ में संबर (Sambar)[6] नगर में, सिंहल के राजा की पुत्री और चित्तौड़ के राजा, रत्नसेन, की पत्नी,

---

[1] टॉड, 'एशियाटिक जर्नल', अक्तूबर, १८४०

[2] भा० 'संसार के सार का दिया हुआ'

[3] भा० 'बंधे हुए बालों का जूड़ा'

[4] कवि के अनुसार, किन्तु यह किस सम्राट् का उल्लेख है, मैं नहीं कह सकता।

[5] 'जूर्ना एसिया०' (Journal Asiatique), १८५४, जनवरी अंक, में श्री पैवी (Th. Pavie) का विचार है कि यह नगर मालवा में हैमिल्टन द्वारा बताया गया Morkschudra है।

[6] या मालवा में, उज्जैन के निकट, सम्वर (Samwar)

पद्मावती, जिसे 'पद्मनी'—आदर्श स्त्री[1]—भी कहते हैं, की कथा पर लिखित एक हिन्दुई काव्य के रचयिता हैं। अनेक भारतीय ग्रंथकारों द्वारा प्रसिद्ध की गई इस कथा का मैं पीछे उल्लेखकर चुका हूँ। इसमें पद्मनी और उनकी सखियाँ जौहर नहीं करतीं; इसके बहुत विपरीत, उन्होंने मुसलमानी सेना के सेनापति को उल्लू बनाया, जिसके पास पद्मनी ने अपनी सखियों के साथ, सौ पालकियों में, ट्रॉय (Troy) के दूसरे घोड़े में जिसमें अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित तीन हज़ार राजपूत सैनिक छिपे हुए थे, आने का बहाना किया। शत्रु के शिविर में पहुँचते ही उन्होंने आश्चर्यचकित रह गए बिना बचाव के मुसलमानों पर आक्रमण कर दिया।

इसके अतिरिक्त श्री पैवी (Th. Pavie) ने इस काव्य का 'जूर्नो एसियातीक' (Journal Asiatique), १८५६ में अनुवाद दिया है, और अपने अनुवाद के साथ पाठ के बहुत-से अंश, विद्वत्तापूर्ण विचार सहित, दिए हैं।

जनार्दन[2] भट्ट (गोस्वामी)

वैद्यक पर पद्य-बद्ध रचना, 'वैद्य रत्न'—दवाइयों का रत्न—के रचयिता हैं, आगरे से मुद्रित, १८६४, २२-२२ पंक्तियों के अठपेजी ६२ पृष्ठ, जिसकी एक प्रति मेरे निजी संग्रह में है।

जनार्दन राम चन्द्र जी

यद्यपि इस लेखक ने मराठी में लिखा है, मैं उसका यहाँ इसलिए उल्लेख कर रहा हूँ. क्योंकि 'कवि चरित्र' कवियों की

[1] स्त्रियों, साथ ही पुरुषों, के चार वर्गों में विभाजन के अनुसार, जो इस काव्य में विस्तार सहित दिया गया है।

[2] भा० 'जो दुष्टों का दलन करते हैं और जिनसे वे मोक्ष प्राप्त करते हैं' विष्णु का एक नाम। वॉर्ड, 'दि माइथौलौजी ऑव दि हिन्दूज़', जि० ३, पृ० ६।

जीवनियाँ–शार्षक एक जीवनी-ग्रंथ उनकी देन है, जिसमें हिंदी-कवियों से सबंधित अनेक सूचनाएँ हैं।

ज़मीर (पं० नारायण दास)

(ये और पं० धर्म नारायण 'ज़मीर' एक ही व्यक्ति हैं बिशन नारायण के पुत्र—फ़ारसी उर्दू के प्रसिद्ध कवि और लेखक) :

× × ×

धर्म ने १८५१ में, उसी प्रेस (इंदौर में) से प्रकाशित की हैं :

१. 'भूगोल दर्पण'—शीर्षक के अंतर्गत हिंदी में एक भूगोल[1];

२. 'सभा बिलास'-सभा के आनंद शीर्षक हिंदी कवियों के चुने हुए अंशों का एक संग्रह ('Selections of hindee poets) जो संभवतः लाल की इसी शीर्षक की रचना का केवल नया संस्करण है;

३. 'बैताल पचीसी' आदि ।

जय चन्द्र[2]

जयपुर के जय चन्द्र विक्रम संवत १८६३ में जैन सिद्धान्तों पर संस्कृत और भाखा में लिखित एक रचना के लेखक हैं। इस रचना का नाम 'स्वामि कार्तिकेयानुप्रेत्ता' है। प्रोफ़ेसर श्री विल्सन के पास हिन्दी पुस्तकों के अपने बहुमूल्य संग्रह में उसकी एक प्रति है।

जयनारायण घोषाल[3]

कलकत्ते से प्रकाशित, 'काशी खण्ड'—काशी का प्रान्त—के पहले पैंतीस भागों के अनुवादक हैं। 'काशी खंड' 'स्कन्द पुराण'

---

[1] एक हिन्दी पुस्तक जिसका यही शीर्षक है कलकत्ते से १८४० में प्रकाशित हुई, १४६ बारहपेजी पृष्ठ, तथा १८४५ और १८४६ में भी, अठपेजी। यही रचना उर्दू में 'मिरातुल असालिम' (acâlim) शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित हुई है; कलकत्ता, १८३६, १८० बारहपेजी पृष्ठ।

[2] जय चन्द्र, जय का चन्द्र

[3] इस नाम का अर्थ प्रतीत होता है, 'घोष में उत्पन्न, विजयके नारायण (विष्णु)'।

से लिया गया बनारस (काशी) का इतिहास है और जो वास्तव में सौ भागों में हैं, जिनके शीर्षक ए० हैमिल्टन और एल० लैंग्ले (L. Langlès) द्वारा निर्मित 'कैटैलॉग ऑव दि संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्ट्स ऑव दि इंपीरियल लाइब्रेरी' ('राजकीय पुस्तकालय में संस्कृत हस्तलिखित पोथियों का सूचीपत्र') में पाए जाते हैं, ३३ तथा बाद के पृष्ठ।

जवाँ (काज़िम अली)

दिल्ली के मिर्ज़ा काजिम अली जवाँ[1] हिन्दुस्तानी के एक अत्यंत प्रसिद्ध लेखक हैं। ११९६ (१७८१—१७८२) में वे लखनऊ में रहते थे। १८०० में वे कर्नल स्कॉट के बुलाए जाने पर लखनऊ से कलकत्ते गए, और फ़ोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दुस्तानी के प्रोफ़ेसर डॉक्टर गिलक्राइस्ट के सहकारी के रूप में नियुक्त हुए।[2] बेनी नारायण के अनुसार वे १८१४ में कलकत्ते में जीवित थे, जहाँ उनके लड़कों अयाँ और मुमताज[3] ने भी, अपने पिता के अनुकरण पर, साहित्यिक जीवन में ख्याति प्राप्त की।

जवाँ लेखक हैं :

१. भारतवासियों की प्रिय कथा, 'शकुंतला', के आधार पर 'शकुंतला नाटक',[4] या शकुंतला का नाटक, शीर्षक के अंतर्गत एक उर्दू कहानी के। यह कहानी जो पहले ब्रज-भाखा में लिखी गई थी, कालिदास कृत नाटक के अनुकरण पर नहीं है; वरन् उसमें 'महाभारत' की कथा का अनुकरण किया गया है। १८०२ में वह, नागरी

---

१ जवान आदमी

२ दे०, दि 'हिन्दी रोमन ऑरथीपीग्रैफ़ीकल अल्टीमेटम', पृ० २५

३ दे० उनसे संबंधित लेख।

४ 'सकुन्तला नाटक' (फ़ारसी लिपि से)

अक्षरों में, चौपेजी पृष्ठों में,[1] कलकत्ते में छपी, और लातीनी अक्षरों में, १८०४ में, अठपेजी पृष्ठों में। डॉक्टर गिलक्राइस्ट ने उसका एक नवीन संस्करण, १८२६ में, लंदन से प्रकाशित किया; और फ़ारसी-भारतीय अक्षरों में वह डब्ल्यू० प्राइस कृत 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' में उद्धृत है, और जो आंशिक रूप में बंबई से बहमन जी दास भाई द्वारा प्रकाशित है।

×(अन्य सभी रचनाएँ उर्दू से संबंधित हैं)×

६. अंत में, 'सिंहासन बत्तीसी' का रूपान्तर उन्होंने लल्लू लाल के सहयोग में किया, और उन्होंने 'ख़िर्द अफ़रोज़' तथा सौदा की चुनी हुई कविताओं के संग्रह का संशोधन किया।

× × ×

(कविता तथा बारहमासा के कुछ अंश का उदाहरण, फ्रेंच में अनूदित)

जवाहर लाल (हकीम)

(हिन्दुस्तानी पत्र 'अख़बार उन्नवाह ओ नज़हत उलरवाह' के संपादक)...मेरा विश्वास है कि वह अब बन्द हो गया है और उसके स्थान पर जवाहर द्वारा प्रकाशित हिन्दी पत्र 'प्रजाहित' इटावा से निकलता है, जो उर्दू में 'मुहब्बत रिआया' शीर्षक के अंतर्गत, जो हिन्दी शीर्षक का अनुवाद है, और अँगरेज़ी में 'People's Friend' शीर्षक के अंतर्गत निकलता है। इस पत्र की बहुत बड़ी संख्या में प्रतियाँ निकलती हैं और वह 'मसादर उत्ता-लीम'—ज्ञान का उद्गम—छापेख़ाने में छपता है।

जवाहर सम्पादक हैं :

दिल्ली कॉलेज के विद्यार्थियों द्वारा 'पिनौक्स (Pinnock's)

---

[1] 'हिन्दी मैनुअल या कास्केट ऑव इंडिया' में। उसमें उसके केवल तीस पृष्ठ हैं।

ऐडीशन ऑव गोल्डस्मिथ' के 'हिस्ट्री ऑव इँगलैंड' (इँगलैंड का इतिहास) के विशेष शब्दों के कोष सहित, हिन्दी अनुवाद के भी, पृ० ७८० ।

× × ×

जहाँगीर-दास[१]

एक हिन्दी रचयिता हैं जिनके बारे में संयोगवश 'कवि चरित्र' के मोरोपंत संबंधी लेख में प्रश्न उठा है ।

जान (मिर्ज़ा)

ने पी० कारनेगी (Carnegy) और आर० मैंडर्सन (Manderson) कृत 'ऐलीमेंटरी ट्रिटाइज़ ऑन समरी स्यूट्स' का 'सरसरी के मुकदमों की पुस्तक' शीर्षक के अंतर्गत उर्दू से हिन्दी में अनवाद किया है; इलाहाबाद, १८५६, ४८ अठपेजी पृष्ठ ।

जानकी प्रसाद या परसाद[२] (बाबू)

बनारस से मुद्रित, 'जुक्त रामायण'—तरतीब दिया गया 'रामायण'[३]—शीर्षक एक रचना के रचयिता हैं ।

जानकी[४] बल्लभ (श्री)

१८६६ में बनारस से मुद्रित 'मानस शंकावली'—मन के संदेहों को दूर करना—शीर्षक हिन्दी काव्य के रचयिता हैं, २२-२२ पंक्तियों के अठपेजी ८८ पृष्ठ । ९६ पृष्ठों का उसका एक दूसरा संस्करण है ।

---

[१] फ़ा० भा० मिश्रित शब्द जिसका अर्थ है 'सुलतान जहाँगीर का दास'

[२] भा० 'सीता का दिया हुआ'

[२] तुलसी पर लेख देखिए

[४] भा० '(राम की) पत्नी, सीता'

जाना बेगम[1]

अथवा जाना बाई और वही जो राना बाई, नामदेव की पहले दासी, तत्पश्चात्, मेरा विश्वास है, उनकी स्त्री थीं, और जिन्होंने अपनी काव्य-प्रतिभा से ख्याति प्राप्त की। कविता के कारण वे उन नामदेव की शिष्या और धार्मिक सिद्धान्तों के कारण उनकी अनुगामिनी बनीं। 'राग', अर्थात भारतीय संगीत, पर उनकी एक रचना है जो हिन्दुस्तानी में लिखी हुई है और जिसकी एक प्रति सर डब्ल्यू० आउज़ले (Ouseley) के पास अपने संग्रह में है। उन्होंने वैष्णवों में व्यवहृत एक प्रकार के धार्मिक भजन, 'अभंग', की भी रचना की है।

ये शायद वही हैं जो गन्ना (Gannâ), अथवा जीना (या जैना Jainâ) हैं। हर हालत में, ये तीन स्त्रियाँ एक नहीं, वरन् संभवतः दो हैं। जीना और गन्ना में कोई भ्रम नहीं होना चाहिए; वे एक दूसरे से भिन्न दो व्यक्ति हैं।

जायसी (मलिक मुहम्मद)

जिन्हें जायसी-दास भी कहा जाता है जो उनके हिन्दू से इस्लाम धर्मानुयायी बनने की ओर संकेत करता प्रतीत होता है। जो कुछ भी हो, लंदन में हिन्दुस्तानी के प्रोफ़ेसर, सैयद अब्दुल्ला, उनके सीधे वंशज हैं। मलिक मुहम्मद जायसी[2] ने (यद्यपि मुसलमान थे) हिंदुई में कबित्त और दोहरों की रचना की है। उन्होंने उत्तर की

[1] शब्द 'जाना' संस्कृत 'जान' का स्त्रीलिंग है, अर्थ है 'जाना हुआ', और 'बेगम' 'बेग' का फ़ारसी-भारतीय स्त्रीलिंग है, आदरसूचक उपाधि।

[2] जायसी (फ़ारसी लिपि में) पैत्रिक नाम (कुलनाम) होना चाहिए। राजकीय पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी के एक नोट में कहा गया है कि लेखक जहें (Jahen) का रहने वाला था; किन्तु क्या यह लखनऊ के समीप का गाँव 'जायस' न होना चाहिए जहाँ कवि मसीह (मीर हाशिम अली) रहते थे, साथ ही जो बहुत दूर दिखाई नहीं देता ?

उर्दू या मुसलमानी हिन्दुस्तानी में भी लिखा है। कोलब्रुक ने 'डिसर्टेशन ऑन दि संस्कृत ऐंड प्राकृत लैंग्वेजेज़'[१] (संस्कृत और प्राकृत भाषाओं पर प्रबंध) में और डॉक्टर गिलक्राइस्ट ने अपने हिन्दुस्तानी व्याकरण[२] में उनका उल्लेख किया है। वे 'पद्मावती'[३] शीर्षक काव्य के रचयिता हैं। यह हिंदुई छंदों और आठ चरणों के पदों में चित्तौड़ की रानी पद्मावती की कथा है जिसकी नागरी अक्षरों में (लिखी गई) एक अत्यन्त सुंदर प्रति ईस्ट इंडिया हाउस के पुस्तकालय में है। अपने पृष्ठों की प्रत्येक पीठ पर चमकीले चित्रों से सुसज्जित वह ७४० फ़ोलिओ पृष्ठों की एक सुन्दर जिल्द है। इसी पुस्तकालय में फ़ारसी अक्षरों में (लिखित) लगभग ३०० छोटे फ़ोलिओं पृष्ठों की एक और प्रति है। इस प्रति में अत्यन्त सुन्दर रँगीले चित्र हैं। पेरिस के राजकीय पुस्तकालय में भी नागरी अक्षरों में (लिखित) एक प्रति[४] है (मूल के द्वितीय संस्करण में यह फ़ारसी अक्षरों में लिखी कही गई है—अनु०)। लीड (Leyde) के पुस्तकालय में कैथी-नागरी अक्षरों में एक और प्रति है, जो विलमेट (Wilmet) पर आधारित है (इस पुस्तकालय के सूचीपत्र की सं० १३४ और १३५)। अन्य पुस्तकालयों और संग्रहों में उसकी अन्य अनेक प्रतियाँ मिलती हैं क्योंकि उसकी हस्तलिखित प्रतियाँ दुष्प्राप्य नहीं हैं; उसके अनेक संस्करण हैं, जिनमें से एक की सूचना मेरठ के २३ अगस्त, १८६६ के 'अख़बार-इ आलम' में निकली है; एक उसका फ़ारसी अक्षरों में है, ३६० अठपेजी पृष्ठ, लखनऊ, १२८२ (१८६५), आदि। इसी विषय पर फ़ारसी में लिखी गई रचनाएँ हैं, किन्तु वे

१ जि० ७, 'एशियाटिक रिसर्चेज़' का पृ० २३०

२ पृ० ३२५ (मूल के द्वितीय संस्करण में, पृ० ५२५)

३ पद्मावति, या पद्मावती (फ़ारसी लिपि से)

४ जाँती संग्रह (Fonds Gentil), नं० ३१

हिन्दुस्तानी से अनूदित या अनुकरण हैं। अन्य अनेक के अतिरिक्त एक उल्लेख मैकेन्ज़ी-संग्रह के सूचीपत्र में है जिसमें हिन्दी छंदों का मिश्रण है।[1]

पद्मावत सिंहल की राजकुमारी थी। उसका विवाह चित्तौड़ के राजा, रत्नसेन, के साथ हुआ था; किन्तु १३०३ में अलाउद्दीन द्वारा इस नगर पर अधिकार करते समय, वह और तेरह हज़ार अन्य स्त्रियाँ, मुसलमान विजेताओं का शिकार बनने के स्थान पर, एक गुफ़ा में बंद होकर स्वयं जलाई हुई भीषण अग्नि में नष्ट हो गईं।[2] ल पी० कात्रू (Le P. Catrou) ने, जिन्होंने 'मुग़ल-इतिहास (Histoire du Mogol) शीर्षक एक इतिहास लिखा है, १५६६ में अकबर द्वारा चित्तौड़ पर अधिकार किए जाने (और) प्रस्तुत विषय में गड़बड़ कर दी है, और इस संबंध में उस राजकुमारी का वर्णन किया है जिसे उन्होंने 'पद्मिनी'[3] कहा है; किन्तु 'अकबर-नामा' में उसका उल्लेख नहीं है, साथ ही मेजर डेविड[4] प्राइस द्वारा दिए गए यहाँ पर उल्लिखित घटना से संबंधित विवरण का अनुवाद पढ़ कर कोई भी अपना निश्चय कर सकता है।

इसी लेखक की एक 'सोरठ'[5] शीर्षक रचना है; वह दोहरा नाम के पद्य-भेद में लिखी गई है। कलकत्ते में, बंगाल की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में उसकी एक प्रति सुरक्षित है।

---

[1] देखिए जि० २, पृ० १३८

[2] यह बर्बर प्रथा अपने उग्र रूप में अब भी राजपूताना में प्रचलित है। इस विषय के संबंध में 'एशियाटिक जर्नल' की जिल्द १७, नई सीरीज़, देखिए, पृ० ८६ और उसके बाद।

[3] जि० १, पृ० १८५ और उसके बाद

[4] 'मिसेलेनियस ट्रांसलेशन्स फ्रॉम ऑरिएंटल लैंग्वेजेज़'—'पूर्वी भाषाओं से विविध अनुवाद'—(ऑरिएंटल ट्रांसलेशन फ़ंड), जि० २

[5] सोरठ, एक रागिनी या गौण संगीत शैली का एक नाम

अंत में इसी लेखक की 'परमार्थ जपजी'[१] शीर्षक रचना है, जिसकी एक हस्तलिखित प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है; और 'घनावत'[२] (Ghanâwat), कविता जिसकी छोटे फ़ोलिओ में, १०६७ (१६५६-१६५७) में प्रतिलिपि की गई, एक अत्यन्त सुन्दर हस्तलिखित प्रति डॉ० ए० स्प्रेंगर (Sprenger) के पास है।

जायसी शेरशाह के राजत्व-काल में जीवित थे, क्योंकि ६४७ (१५४०-१५४१) में उन्होंने अपने 'पद्मावती' काव्य की रचना की। यह रचना, जो हिन्दी में लिखी गई है, या तो फ़ारसी अक्षरों में,[३] या देवनागरी अक्षरों में, लिखी गई है, और जिसमें ६५०० के लगभग छंद हैं।[४]

जाहर[५] सिंह

'फाग' (श्री कृष्ण)—श्री कृष्ण का फाग—के रचयिता हैं, कविता कृष्ण की क्रीड़ाओं पर है जो होली से संबंधित चरित्र है जब कि हमेशा लाल या पीले रंगे हुए अबरक की बुकनी फेंकी जाती है, और जिसे 'फाग' कहते हैं। यह कविता, जिसके मुख

---

१ जिसका 'असीम सत्ता पर बातचीत का आत्मा' अर्थ प्रतीत होता है।

२ यह शब्द एक भारतीय व्यक्तिवाचक नाम प्रतीत होता है, क्योंकि यह 'घ' (सप्राण 'ग') से लिखा गया है।

३ रिशल्यू (Richelieu) की सड़क वाले पुस्तकालय की हस्तलिखित प्रति और डंकन फ़ोर्ब्स (Duncan Forbes) के पास सुरक्षित हस्तलिखित ग्रन्थों में से नं० १६८ की प्रति फ़ारसी अक्षरों में हैं। १८५६ के 'जूर्ना एसियातीक' (Journal Asiatique) में पद्मावत पर श्री टी० पैवी (T. Pavie) का कार्य देखिए।

४ उसी पत्रिका में श्री टी० पैवी ने उसका अनुवाद दिया है। इस काव्य का एक लखनऊ का संस्करण है, १८४४, अठपेजो।

५ 'जाहर' संभवतः अरबी शब्द 'जौहर'—मोती या हीरा—के हिन्दुओं द्वारा किए गए विकृत हिज्जे हैं।

पृष्ठ पर इस क्रीड़ा का चित्र बना हुआ है, अठपेजी आकार के १२ पृष्ठों में संवत् १९२१ (१८६५) में मुद्रित हुई है।

ज़ाहिर सिंह

'कृष्ण फाग'—कृष्ण का फाग (होली त्योहार के गाने) के—रचयिता हैं; लीथो, १२ चौंपेजी पृष्ठ।[1]

जै दत्त[2] (पंडित)

जोशी नाम से विभूषित, संपादक हैं :

१. नैनीताल के 'समय बिनोद' शीर्षक पाक्षिक हिन्दी पत्र के, जिसका उल्लेख उत्तर-पश्चिम प्रदेश के शिक्षा-विभाग के डाइरेक्टर, श्री केम्पसन (Kempson) ने अपनी १९ फ़रवरी, १८६९ की रिपोर्ट में किया है;

२. 'गोपीचंद' के, उज्जैन के इस प्राचीन राजा की कथा जिसने संसार छोड़ कर वैराग्य धारण किया। कुमायूँ, १८६८, ७४ बड़े अठपेजी पृष्ठ।

ज़ैनुल आबिदीन[3]

हिन्दी पद्य में इतिहास, 'छत्र मुकट' या 'छत्तर मकट', के रचयिता हैं। ('Bibliotheca Sprengeriana')

जै सिंह[4]

टॉड द्वारा 'ऐनल्स ऑव राजस्थान' में उल्लिखित एक प्रकार के ऐतिहासिक पत्र 'कल्पद्रुम'[5] के रचयिता हैं।

---

[1] 'जाहर सिंह' और प्रस्तुत 'जाहिर सिंह' एक ही व्यक्ति प्रतीत होते हैं।—अनु०

[2] भा० 'विजयी (जो विजय द्वारा प्रदत्त है)'

[3] अ० 'भक्तों का आभूषण'

[4] भा० 'विजय का सिंह'

[5] इन शब्दों का वही अर्थ है जो 'कल्पवृक्ष'—उपयोगिता का पेड़—इन्द्र के लोक का वृक्ष जो मनोवांछित फल देता है। यह मुसलमानों के स्वर्ग के 'तूबा' की तरह का वृक्ष है।

ज्ञान देव या ज्ञानेश्वर[1]

ब्राह्मण जाति के एक हिन्दी-लेखक तथा निम्नलिखित रचनाओं के रचयिता हैं :

१. 'अमृतानुभव'—अमृत का अनुभव ;

२. 'भावार्थ दीपिका'—भावों के उद्देश्य को प्रकाशित करने वाली।

लेखक ने १२१२ शक-संवत् (१२९० ईसवी) में इन दोनों ग्रन्थों की टीका लिखी।

ठाकुर-दास[2] (पंडित)

हिन्दी में लिखित और 'गणित प्रश्नावली'—गणित की प्रश्नोत्तरी—शीर्षक गणित-सम्बन्धी रचना के रचयिता हैं; बनारस, १८६८, ५८ बारहपेजी पृष्ठ।

तन्धि[3] राम

राजपूत नरेश, किरन चन्द, के राज-कर्मचारी, हिन्दी में लोकप्रिय गानों के रचयिता हैं, जिनमें से एक 'पद' गणेश की स्तुति में है, जिसका पाठ डब्ल्यू० प्राइस[4] ने प्रकाशित किया है, और जिसका अनुवाद मैंने अपने 'शाँ पॉप्यूलेअर द लिंद' (भारत के लोकप्रिय गाने) में दिया है।[5]

---

[1] 'ज्ञान' का अर्थ है 'जानना' और 'देव' तथा 'ईश्वर' कुछ-कुछ समानार्थवाची आदरसूचक उपाधियाँ हैं, जिनका अर्थ है 'देवता' और 'मालिक'।

[2] भा० 'ईश्वर का दास'

[3] मेरा विचार है, महाप्राण मूर्धन्य के साथ लिखा जाने वाला 'ठंढी', हिन्दी विशेषण 'ठंढा' का स्त्रीलिंग, के लिए।

[4] 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स', जि० १, पृ० २५१

[5] 'रेव्यू कौंताँपोरेन' (सामयिक समीक्षा), १८५४

तमन्ना लाल (पंडित)

रचयिता हैं :

१. 'सुन्दरी तिलक'—(माथे का) सुन्दर चिन्ह—के, रचना जिसमें पैंतालीस विभिन्न प्राचीन तथा आधुनिक कवियों के चुने हुए हिन्दी छन्द हैं, (और जो) बाबू हरी चंद के आश्रय में तथा व्यय से, बनारस से, १९२५ संवत् (१८६९) में प्रकाशित हुई है, २२-२२ पंक्तियों के ५८ अठपेजी पृष्ठ। इस ग्रन्थ के ऊपर ही जिन कवियों की रचनाएँ ली गई हैं उनकी सूची है ; वे हैं :

बेनी	हनुमान	नरेंद्र सिंह महाराजै पटियाला
देव	श्रीपति	अजबेस
सुखदेव मिश्र	गंग	हरिकेस
रघु-नाथ	ब्रह्म	परमेस
नृप शंभु	बेनी प्रबीन	छितिपाल महाराज अमेठी
द्विजदेव		रघुराज सिंह महाराजै रीवा
महाराज मानसिंह		मण्डन
तोष	केशव-दास	देवकी नन्दन
मतिराम	सूर-दास	महाकवि
प्रेम	ठाकुर	गोकुल-नाथ
नेवाज	बोधा	गिरिधर-दास, बाबू गोपालचन्द
रस्रवान	बाबू हरी चंद्र	धनुसपाम (? घनश्याम-अनु०)
(? रसखान—अनु०)		किशोर
कवि शंभु	नवनिधि	
दास	कालिका	
सुन्दर	सेवक	
आलम	मबूरक (? मुबारक—अनु०)	
मणिदेव	अलीमन	
	धनानंद (? घनानंद—अनु०)	

तमन्ना लाल ही की देन हैं :

२. और ३. 'राम सहस्र नाम'—राम के सहस्र नाम—और 'राम गीता सटीक'—राम का गान, टीका सहित; बनारस, १६२५ संवत् (१८६६), २६ अठपेजी पन्ने।

तमीज़[1] (मुंशी काली राय[2])

फतहगढ़ के डिप्टी कलक्टर , रचतिता हैं :

१. (उर्दू रचना) 'फतहगढ़-नामा' ।...

२. 'खेत कर्म' या बिगड़े हुए रूप में 'करम'[3]—खेत के काम—के, उत्तर-पश्चिम प्रदेश के निवासियों की कृषि पर पुस्तक, उत्तर-पश्चिम प्रदेश के लेफ्टिनेंट गवर्नर की आज्ञा से, दिल्ली से, १८४१ में और आगरे से १८४६ में मुद्रित। उसका द्वितीय संस्करण दिल्ली से , १८४६, ५४ अठपेजी पृष्ठों का , हुआ है। इस पुस्तक का भूमि के विभिन्न प्रकारों , काम करने के साधनों , खेत सींचने की विधियों आदि से संबंध है। किन्तु उनका प्रधान उद्देश्य किसानों को ख़ज़ाने का लगान निकालने की विधि, और अपने अधिकारों की रक्षा करने के तरीक़े बताना है। पुस्तक में चित्र भी हैं, और पारिभाषिक शब्द फ़ारसी और नागरी दोनों अक्षरों में दिए गए हैं।

उर्दू संस्करणों, जिनका संकेत किया गया है, के अतिरिक्त उसके कई हिन्दी में संस्करण भी हैं जिनका उल्लेख पहली जून, १८५५ के 'आगरा गवर्नमेंट गज़ट' में किया गया है।

३. (उर्दू रचना) 'मुफ़िद-इ आम'।...

---

[1] अ० 'सूक्ष्मदर्शिता'

[2] एशियाटिक सोसायटी ऑव बंगाल के जर्नल, वर्ष १८५० , पृ० ४६५ , और 'बंबई ब्रांच रॉयल एशियाटिक सोसायटी' के जर्नल, १८५१, पृ० ३३०, में उनका नाम, ग़लती से' 'हलय' Halay लिखा गया है।

[3] पहली जून, १८५५ के 'आगरा गवर्नमेंट गज़ट' में इस रचना का अँगरेज़ी शीर्षक। 'Hints on Agriculture' दिया गया है।

४. और 'कुरुक्षेत्र दर्पण'—कुरुक्षेत्र का दर्पण के, 'महाभारत' का प्रसिद्ध युद्ध-क्षेत्र, लीथो में इस तीर्थ-स्थान और वहाँ पर व्यवहृत रस्मों के विवरण सहित ।

५. (हिन्दुस्तानी कविताएँ)......

तानसेन (मियाँ)

पटना के निवासी, एक अत्यन्त प्रसिद्ध गवैए हुए हैं, जो प्रसिद्ध वैष्णव संत, चैतन्य के शिष्य, तथा वृन्दावन में आकर रहने वाले और हरि का स्तुति-गान करने वाले गोसांई हरि-दास के शिष्य थे। हरि-दास की ख्याति अकबर के कानों तक पहुँची, जो स्वयं उन्हें अपने दरबार में आने का निमंत्रण देने के लिए गया, जिसे उन्होंने अस्वीकार किया; किन्तु उन्होंने अपने शिष्य, मियाँ तान-सेन को, जो उस समय अठारह वर्ष के युवक थे, सुलतान के साथ जाने की आज्ञा दे दी। दिल्ली में, तानसेन मुसलमान हो गए और मृत्यु होने पर वे ग्वालियर में दफ़नाए गए [२]। तानसेन को दूसरों के पद गाने से ही संतोष नहीं था, वरन् उन्होंने स्वयं भी बनाए। डब्ल्यू० प्राइस द्वारा अपने 'हिंदी ऐंड हिन्दुस्तानी सेले-क्शन्स' में प्रदत्त हिन्दुओं के लोक-प्रिय गानों के संग्रह में, अन्य के अतिरिक्त, उनका एक 'धुरपद' मिलता है। जब कि समस्त संसार उत्सुकतापूर्वक और सर्वोच्च आदर के साथ उनका स्वागत करता था, अपनी प्रेयसी से भर्त्सना पाने का उन्होंने उसमें उलाहना दिया है। ऐसा प्रतीत होता है कि उनके गीतों का संग्रह 'राग माला'--रागों की माला—शीर्षक (जो अन्य संग्रहों का भी रहता है) के अंतर्गत किया गया है। 'संगीत राग कल्प द्रुम' में वे मिलते हैं।

---

[१] भा० 'तान' का अर्थ है 'गाने के स्वर' और 'सेन' चिकित्सकों की उप-जाति की उपाधि है।

[२] भोलानाथ चंद ; 'ट्रैविल्स ऑव ए हिंदू' जि० २, ६७ तथा बाद के पृष्ठ

तारिणी चरण मित्र[1]

हिन्दू विद्वान् जो रचयिता हैं :

१. 'पुरुष परीच्छा[2]' के (कसौटी या पुरुष की पहचान)। वह हिन्दुओं के नैतिक सिद्धान्तों की व्याख्या करने वाली कहानियों का एक संग्रह है; उसका संस्कृत से हिन्दुस्तानी में अनुवाद किया गया है, और वह १८१३ में कलकत्ते से प्रकाशित हुई है। काली कृष्ण ने संस्कृत पाठ का अँगरेज़ी में अनुवाद किया है।

२. हिन्दुओं के लोकप्रिय त्यौहारों के संक्षिप्त विवरण के, 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' की जिल्द १ में प्रकाशित, १८२७ में कलकत्ते में छपा, संक्षिप्त विवरण जिसका मैंने उस रचना के लिए उपयोग किया है जो मैंने 'नूवो ज़ूर्ना एसियातीक' (Nouveau Journal Asiatique), जि० १३, पृ० ६७ और उसके बाद, और पृ० २१६ और उसके बाद, में दी है।

उन्होंने निम्नलिखित रचनाओं में सहायता दी :

१. 'दि ऑरिएंटल फ़ैब्यूलिस्ट', डॉक्टर गिलक्राइस्ट द्वारा प्रकाशित ईसप की तथा अन्य कहानियों का हिन्दुस्तानी, ब्रज-भाखा, आदि में अनुवाद। वे ब्रज-भाखा अनुवाद के रचयिता हैं।

२. 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स'। उन्होंने यह रचना श्री डब्ल्यू० प्राइस[3] की सहकारिता में प्रकाशित की है। उसकी योजना और कार्य रूप में परिणति उन्हीं के द्वारा प्रस्तुत हुई।

---

[1] तारिणी चरण मित्र, अर्थात् दुर्गा के चरणों का मित्र

[2] 'पुरुष पराछा' (फ़ारसी लिपि से)

[3] प्रथम संस्करण १८२७ में कलकत्ते में छपा; दूसरा संस्करण, जो लीथो में है, १८३० में निकला। उसके साथ 'प्रेम सागर' और उसमें पाए जाने वाले खड़ी बोली शब्दों की डब्ल्यू० प्राइस द्वारा प्रस्तुत की गई सूची जोड़ दी गई है। देखिए लेख जो मैंने इस रचना के संबंध में 'ज़ूर्ना दे सावाँ' (Journal des Savants), वर्ष १८३२, पृ० ४२८ और उसके बाद, और ४७८ और उसके बाद, में लिखा है।

अन्य के अतिरिक्त उन्होंने संशोधन किया है:

'बैताल पचीसी' का, रचना जिसके संबंध में उनका उल्लेख सुरत और विला पर लेखों में किया गया है।

ये बाबू १८३४ में जीवित थे, और मंत्री-रूप में उनका कलकत्ता स्कूल बुक सोसायटी से संबंध था। 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स', जिसके तैयार करने में उन्होंने सहायता प्रदान की और जो १८२७ और १८३० में कलकत्ते से प्रकाशित हुआ, मूलतः गिलक्राइस्ट द्वारा संपादित हुआ था, और उसकी छपाई फ़ोर्ट विलियम कॉलेज की अध्यक्षता में १८०१ में प्रारंभ हो गई थी।[1]

तुका राम[2]

सामान्यतः 'सरवान'[3] के नाम से ज्ञात एक हिन्दी लेखक हैं। वे राजा शिवाजी के समय में जीवित थे। उनका जन्म १५१० शक-संवत् (१५८८) और मृत्यु फागुन (फ़रवरी-मार्च) ३, १५७१ शक-संवत् (१६४६) में हुई। दिल्ली में स्थित, उनकी समाधि फागुन के महीने में तीर्थ-स्थान बन जाती है।

'कवि चरित्र' में, जनार्दन ने उनकी निम्नलिखित रचनाओं का उल्लेख किया है :

१. 'सत्ताईस 'अभंग';

२. 'सिद्धिपाल चरित्र'—सिद्धिपाल की कथा;

---

[1] 'कलकत्ता रिव्यू', १८४५, अंक ७ (No. VII)

[2] भा० 'छंदों के राम' ('तुका' को 'तुक' शब्द ही मान लेने पर)

[3] यह शब्द मिश्र हो सकता है और जिनका एक दूसरे के समान अर्थ है। तो वह बना है संस्कृत शब्द 'सर', —'स्वर, गाने का स्वर, गाना, आदि' के स्थान पर—और 'वान'—'बान' के स्थान पर—से, फ़ारसी शब्द जिसका शब्दार्थ है 'रक्षक' और जो कई शब्दों से मिल कर बना है।

३. 'प्रह्लाद चरित्र'—प्रह्लाद की कथा;
४. 'पत्रिका अभंग'—पत्ररूप अभंग।

तुलसी-दास

हिन्दुई के एक अत्यन्त प्रसिद्ध लेखक, तुलसी या तुलसी-दास[1] का 'भक्तमाल' में अपनी स्त्री, जिसे वे अत्यधिक प्यार करते थे, के द्वारा राम के प्रति विशेष भक्ति की ओर प्रेरित होना लिखा है। उन्होंने एक भ्रमणशील जीवन ग्रहण किया; वे बनारस गए, उसके बाद वे चित्रकूट गए, जहाँ उनका हनुमान से व्यक्तिगत साक्षात् हुआ, जिनसे उन्होंने काव्य-प्रेरणा और चमत्कार दिखाने की शक्ति प्राप्त की। उनकी ख्याति दिल्ली तक पहुँची जहाँ शाहजहाँ राज्य करता था। सम्राट् ने उन्हें बुला भेजा; किन्तु उनके धार्मिक सिद्धांन्तों से सन्तुष्ट न हो उसने उन्हें बन्दी बना लिया। तत्पश्चात् वहाँ हज़ारों बानर इकट्ठे हो गए और उन्होंने बन्दीगृह को नष्ट करना प्रारंभ किया। शाहजहाँ ने, आश्चर्यचकित हो, उन्हें तुरंत मुक्त कर दिया और साथ ही अनुचित व्यवहार करने के बदले में कुछ माँग लेने के लिए उनसे कहा। तब तुलसी-दास ने पुरानी दिल्ली जो राम का निवास हो गई थी छोड़ देने के लिए शाहजहाँ से प्रार्थना की, जो सम्राट् ने किया; और उसने एक नया नगर बसाया जिसका नाम उसने शाहजहाँनाबाद या शाहजहाँ का नगर रखा। उसके बाद तुलसी-दास वृंदावन गए, जहाँ उनका नाभाजी[2] से साक्षात्कार

[1] तुलसी दास, तुल्सी या तुलसी (Ocymum Sanctum) का दास। यह तुलसी जातीय पौधा हिन्दुओं के घरों में अत्यन्त पूज्य माना जाता है। उनका विश्वास है कि तुल्सी एक अप्सरा थी जिसे कृष्ण प्यार करते थे और जिसे उन्होंने इस पौधे में रूपान्तरित कर दिया। यह ज्ञात हो जाता है कि ओविड (Ovide) के प्रसिद्ध देवों के रूपान्तरित होने की उत्पत्ति न तो रोमन और न ग्रीक ही है।

[2] इस लेखक के संबंध में लेख देखिए।

हुआ। वहाँ वे ठहरे और राधा-कृष्ण के स्थान पर सीता-राम की भक्ति का प्रचार किया।

श्री विल्सन[1] ने 'भक्तमाल' की इस विचित्र कथा में इस प्रसिद्ध व्यक्ति की वास्तविक रचनाओं से ग्रहण किए गए या परंपरा द्वारा सुरक्षित अन्य तथ्य जोड़ दिए हैं, तथ्य जो कुछ बातों में ऊपर की बातों से भिन्न हैं, जिन्हें मैं उद्धृत करता हूँ। इन प्रमाणों के अनुसार, तुलसी-दास (सरवरिया शाखा के) ब्राह्मण थे, और चित्रकूट के पास हाजीपुर के निवासी थे। जब वे परिपक्वावस्था को प्राप्त हुए तो वे बनारस में आकर बस गए और वहाँ इस नगर के राजा के मंत्री के कार्य करने लगे। नाभाजी की भाँति अग्रदास के शिष्य जगन्नाथ दास उनके आध्यात्मिक गुरु थे। अपने गुरु के साथ वे वृन्दावन के निकट गोवर्धन गए; किन्तु उसके बाद वे बनारस लौट आए। वहीं[2] पर उन्होंने संवत् १६३१ (ईसवी सन् १५७५) में, केवल इकतीस बर्ष की अवस्था में, अपना 'रामायण' प्रारंभ किया। वे लगातार उसी नगर में रहे, जहाँ उन्होंने सीता-राम का एक मन्दिर बनवाया, और उसी के साथ एक मठ की स्थापना की। यह इमारत अब तक विद्यमान है। उनकी मृत्यु संवत् १६८० (ईसवी सन् १६२४) में जहाँगीर के शासनान्तर्गत[3] हुई।

इसके अतिरिक्त, 'भक्तमाल' का पाठ-विवरण इस प्रकार है :

छप्पय

कलि कुटिल जीव निस्तार हित बालमीकि तुलसी भयो[4]।
त्रेता काव्य निबन्ध करिब सत कोटि रमायन।
इक अक्षर उधरे ब्रह्म हत्यादिक जिन होत परायन।

[1] 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १६, पृ० ४८

[2] किन्तु स्वयं तुलसी का कहना है कि उन्होंने अवध में प्रारंभ किया।

[3] 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १६, पृ० ४८

[4] पुनर्जन्म द्वारा

अब भक्तन सुख देन बहुरि वपु[1] धरि लीला बिस्तारी।
राम चरण रस मत्त रहत अहर्निशि व्रत धारी।
संसार अपार के पार को सुगम रूप नौका लयो।
कलि कुटिल जीव निस्तार हित बालमीकि तुलसी भयो।

टीका

तुलसी का जब विवाह हुआ, तो वे स्त्री को अपने घर ले आए। उसके प्रति प्रेम में वे इतने डूब गए थे, कि यद्यपि उनकी सास के यहाँ से कई बार लोग उसे लेने आए, किन्तु उन्होंने उसे न जाने दिया। एक दिन उनकी अनुपस्थिति में उनका साला उसे लेने आया; किन्तु इसी बीच में वे लौटे, और स्त्री का क्या हुआ, उसे कौन ले गया, बातें पूछने लगे। किसी ने कहा कि वह अपने मैके चली गई। यह समाचार सुनते ही वे दौड़े और अपने ससुर के घर पहुँचे, जब कि उनकी स्त्री मुश्किल से पहुँच पाई थी और अभी किसी से बात तक न कर पाई थी। जब उनकी स्त्री ने उन्हें देखा, तो झुँझला कर उनसे कहा : 'मैं राम चन्द्र से उतना ही प्रेम करती हूँ जितना अपने इस शरीर से। क्या आप श्याम-सुन्दर राम की भांति सुन्दर हैं? उनका सा सौन्दर्य तो मनुष्यों में पाया नहीं जाता।' तुलसी ने जब यह वचन सुना, तो वे अपने घर वापिस न आए, किन्तु काशी में निवास करने चले गए, और प्रकाश रूप से प्रभु की सेवा में लग गए।

एक बार कुछ चोर रात को उनके यहाँ चोरी करने आए। उन्होंने तुलसी के घर में पाँच-सात बार घुसने की कोशिश की, किन्तु धनुष-बाण धारण किए हुए राम ने उन्हें भगा दिया। सुबह होने पर वे घर में घुसे, और लूट लिया; किन्तु सिपाहियों ने उन्हें घेर लिया। तब तुलसी यह स्पष्टतः समझ गए कि राम ने उनकी रक्षा की है,

[1] मेरे विचार से, 'रामायण' के विविध आधुनिक रूपांतरों के रचयिताओं की ओर संकेत है।

और उन्होंने अपनी संपत्ति चोरों में बाँट दी, जो शुद्ध होकर उनके शिष्य हो गए।

एक ब्राह्मण की मृत्यु हो गई थी; उसकी स्त्री जब उसके साथ सती होने जा रही थी, तो मार्ग में जाते हुए तुलसी ने उसे देख प्रणाम किया, और वह जो करने जा रही थी उसके मुँह से सुना। उस समय सब कुटुंबी, जो शव के साथ थे, इस स्त्री के विरोधी थे, तुलसी ने हरि की प्रार्थना की; मृत फिर जीवित हो उठा, उनका शिष्य हो गया और अपने घर वापिस गया। बादशाह ने जब यह खबर सुनी तो उसने तुलसी को लेने के लिए एक अहिदी[1] पठाया। तब वे दिल्ली आए और बादशाह के समीप पहुँचे। बादशाह ने अत्यधिक आदर-सत्कार के साथ उन्हें बिठाया और चमत्कार देखने की इच्छा प्रकट की। तुलसी ने उत्तर दिया; 'मैं राम को जानता हूँ, चमत्कार नहीं।' बादशाह ने कहा: 'तो राम मुझे दिखाइए।' और ऐसा कह कर उसने उन्हें बंदीगृह में डाल दिया। उस समय उन्होंने हनुमान का आवाहन किया।

तुरंत ही लाखों वानर और रीछ आ गए, और घरों की छतों पर चढ़, वे सब प्रकार के उत्पात करने लगे। उन्होंने किले का ऊँचा गुम्बद तोड़ डाला, उसमें घुस गए, और विध्वंस और मृत्यु का बाज़ार गरम हो गया। तब किसी ने बादशाह से कहा: 'तूने जिन्हें बन्दीगृह में डाल रखा है वे हनुमान को अपने रक्षक इष्टदेव के रूप में मानते हैं। उन्हें जाने दो, नहीं तो और भी उत्पात होंगे।' यह बात सुन कर बादशाह दौड़ा गया; वह तुलसी के चरणों पर गिर पड़ा, और उनसे कहा: 'अब किस प्रकार इस आग को दबाया जाय?' तुलसी ने उससे कहा: 'तुम राम के दर्शन करना चाहते थे; अब यह उनकी सेना, अथवा उनका हरावल दस्ता है जो यहाँ पहुँच गया है।

[1] इस शब्द का 'एकेश्वरवादी' अर्थ प्रतीत होता है, तथा यहाँ पर उसका मतलब एक प्रकार के 'सिपाही' से है।

इसके बाद वे आवेंगे। तुम शीघ्र उन्हें देखोगे।' बादशाह लाज के मारे गड़ गया, और फिर तुलसी ने उससे कहा : 'यह स्थान अब से रघु-नाथ का हो गया; अपना झंडा कहीं और जाकर लगाओ, और यदि तुम अपना भला चाहते हो तो, कहीं और अपना निवास-स्थान बनाओ।' यही अवसर था जब कि बादशाह ने पुरानी दिल्ली छोड़ दी, शाहजहाँनाबाद बसाया,[१] और जहाँ अपने रहने के लिए उसने महल बनाया। स्वयं तुलसी, दिल्ली से वृन्दावन आए, और वहाँ नाभा जू[२] से भेंट की। बृन्दावन में वे साथ-साथ जहाँ-जहाँ गए उन्होंने राम और सीता का गुणगान किया, और कृष्ण तथा राधा का उल्लेख सुना।

दोहा

सब कहते हैं : कृष्ण और राधा हममें ऐसे मिले हुए हैं जैसे चिता में तीनों प्रकार की लकड़ी।[3] तब तुलसी, राम की ओर से, उनके विरुद्ध घृणा फैलाने व्रज क्यों आए हैं?

तुलसी ने जब सुना कि लोग उनके बारे में ऐसा कहते हैं तो वे एक कुटी में जाकर रहने लगे, जहाँ से वे बाहर नहीं निकलते थे। किन्तु एक वैष्णव उन्हें बहका कर कृष्ण-मंदिर में ले गया। उसने उनसे कहा : 'आओ, और तुम्हें राम के दर्शन होंगे।' तुलसी वस्तुतः उसके साथ गए, किन्तु देवता के हाथ में वंशी[४] देख कर उन्होंने यह दोहा पढ़ा :

---

१ आधुनिक दिल्ली की स्थापना के संबंध में हिन्दुओं में प्रचलित कथा इसी प्रकार की है। इसका बहुत पहले भी उल्लेख किया जा चुका है।

२ अथवा नाभा जी 'भक्तमाल' के रचयिता। दूसरी जिल्द में उन पर लेख देखिए। 'जू', 'जी', आदर-सूचक उपाधि, के प्राचीन और दक्षिणी हिज्जे हैं।

३ पाठ में हैं 'आक', 'टाक' (? ढाक-अनु०) और 'कैर', अर्थात् 'asclepias gigantea', 'butea frondosa' और 'Capparis aphylla' वृक्षों की लकड़ी।

४ कृष्ण की विशेषता

दोहा

कहा कहौं छबि आज की भले बिराजे नाथ ।
तुलसी मस्तक जब नवै धनुष बाण लेउ साथ ॥[1]

ये शब्द सुनते ही, देवता ने वंशी छिपाली, और धनुष-बाण सहित दर्शन दिए । तब तुलसी ने यह दोहा बनाया :

किरीट मुकुट माथे धर्यो धनुष बाण लियो हाथ ।
तुलसी जनके कारणे नाथ भये रघुनाथ ॥[2]

'रामायण' पूर्वी भाखा या पूर्वी हिन्दुई, अर्थात् हिन्दी की बोलियों में सबसे अधिक परिष्कृत, ब्रज की बोली में लिखा गया है । वह सात सर्ग या भागों (काण्ड)[3] में विभक्त है, जैसे : 'बालकाण्ड', अर्थात् बाल्यावस्था का भाग, संपूर्ण रचना की भूमिका; उससे विष्णु के अवतार के कारणों आदि का पता लगता है ।[4] 'अयोध्याकाण्ड'' अयोध्या (अवध) का भाग; उसमें इस नगर में राम के कार्यों का उल्लेख है ।[5] 'अरण्यकाण्ड' ; उससे राम का जंगलों

---

[1] राम की विशेषता

[2] छप्पय और ये दो दोहे 'भक्तमाल सटीक' के मुंशी नवल किशोर प्रेस के १८८३ के संस्करण (प्रथम) से लिए गए हैं ।—अनु०

[3] 'फ़ाल्ड एक्सरसाइजेज ऑव दि आर्मी' (Field Exercises of the Army) में लाथो रचनाओं से संबंधित सूचना (नोट) में उसे केवल छः सर्गों (फ़स्ल) में निर्मित कहा गया है; किन्तु यह अशुद्ध है । पौलाँ द सैं–बारथेलेमी (Le P. Paulin de Saint-Barthélemy) ने अपने 'Musei Borgiani codices manuscripti', पृ० १६३, में मारकुस अ तुंबा (le P. Marcus à Tumba) कृत हिन्दुस्तानी के आधार पर सातवें सर्ग (उत्तर काण्ड) के अनुवाद का उल्लेख किया है ।

[4] यह अलग से आगरे से, १८६५ में प्रकाशित हुआ है, २२४ अठपेजी पृष्ठ ।

[5] अलग से आगरे से १८६८ में प्रकाशित, १४० पृष्ठ ।

और वीरानों में जाने की बात का पता चलता है।[१] 'किष्किंधा काण्ड', गोलकुण्डा (Golconde) वाला भाग; रावण सीता को हरता और लंका ले जाता है।[२] 'सुन्दरकाण्ड' अर्थात् सुन्दर भाग; इस सर्ग का सम्बन्ध राम और उनकी पत्नी सीता के सौंदर्य और गुणों से है। 'लंकाकाण्ड', लंका वाला भाग[३] जहाँ रावण सीता को ले गया था। अंत में 'उत्तरकाण्ड' (भारत के) उत्तर का भाग; उसमें लंका से लौटने के बाद राम के कार्य हैं।

'रामायण' बाबू राम द्वारा, और लक्ष्मी नारायण की निगरानी में किदरपुर (खिज़रपुर)[४] से १८२८[५] में मुद्रित और १८३२ में कलकत्ते से घसीट (तेज़ी के साथ लिखे गए) नागरी अक्षरों में लीथो हुआ है। इसी प्रकार उसका एक संस्करण मिर्ज़ापुर का है।[६] इस काव्य की अन्य हस्तलिखित प्रतियाँ अनेक पुस्तकालयों में पाई जाती हैं।[७] खिज़रपुर से ही 'कबित रामायण'—कवित्त नामक छंद में रामायण शीर्षक के अंतर्गत उसका एक संक्षिप्त रूप प्रकाशित हुआ है।[८]

---

१ यह काव्य पृथक् रूप से आगरे से १८६३ में प्रकाशित हुआ है, ४० पृष्ठ।

२ आंशिक रूप में, फ़तहगढ़ से, १८६८ में प्रकाशित, १६ चौपेजो पृष्ठ।

३ यह काव्य पृथक् रूप में आगरे से १८६७ में प्रकाशित हुआ है, ३६ पृष्ठ।

४ खिज्र (पैग़म्बर अली Elie) का नगर

५ चौपेजा बड़ी जिल्द। चौपेजा छोटी जिल्द का एक पहले का संस्करण है; यह अन्तिम अच्छा छपा है और उत्तम काग़ज़ पर है। मैंने उसकी एक प्रति ईस्ट इंडिया हाउस (ऑफ़िस) में देखी है।

६ 'जनरल कैटैलौग ऑव ऑरिएंटल वर्क्स' में, आगरे से प्रकाशित, कलकत्ते और बनारस के संस्करण भी बताए जाते हैं।

७ ऐसा प्रतीत होता है कि इसका 'राम की कथा' अधिक हिन्दुस्तानी शीर्षक भी है। 'जनरल कैटैलौग ऑव ऑरिएंटल वर्क्स।'

८ मेरा विचार है कि यह वही रचना है जिसका 'दोहावली' शीर्षक के अंतर्गत ६८

तुलसीदास कृत 'रामयण' के अतिरिक्त इस शीर्षक की अनेक हिन्दी रचनाएँ हैं। अन्य के अतिरिक्त दिल्ली में १७२५ में, मुहम्मद शाह के शासन-काल में प्रतिलिपि की गई एक ईस्ट इंडिया हाउस (ऑफ़िस) के पुस्तकालय में है; वह फ़ारसी अक्षरों और ग्यारह पंक्तियों के छंदों में है। लेखक अपने को सूरज चन्द कहता प्रतीत होता है। एक उर्दू में अनूदित, अध्यात्म 'रामायण' है, जो १८४५ में दिल्ली से छपी थी।

'रामायण', जो तुलसी-दास की सबसे अधिक लोकप्रिय रचना है, से स्वतंत्र, उनकी और भी रचनाएँ हैं :

१. एक 'सतसई', विभिन्न विषयों पर सौ छंदों का संग्रह;[1]

२. 'रामगानावली', राम की प्रशंसा में पद्यों की माला। १८५६ में बम्बई से मुद्रित, चित्रों सहित १८० अठपेजी पृष्ठ;

३. एक 'गीतावली', नैतिक और धार्मिक उद्देश्य वाली एक काव्य-रचना। मेरे विचार से यह वही रचना है जो रामगानावली है;

४. 'विनय पत्रिका', अपने आचरण के ढंग पर एक प्रकार की पद्यात्मक रचना;

५. अपने इष्टदेव और उनकी पत्नी, अर्थात् राम और सीता के उपलक्ष्य में अनेक प्रकार के भजन, जैसे 'राग', 'कबित', और 'पद'। यह रचना आगरे से प्रकाशित हो चुकी है।

श्री विल्सन द्वारा उल्लिखित[2] इन रचनाओं के साथ वॉर्ड जोड़ते हैं :

अठपेजी पृष्ठों का एक संस्करण आगरे से १८६८ में निकला है। बनारस, १८६५ का एक और संस्करण है, जिसके अंत में 'हनुमान बाहुक' दिया गया है।

[1] प्रतीत होता है, 'जनरल कैटैलौग' के एक संकेत के अनुसार इसका शीर्षक 'सतसती' भी होना चाहिए।

[2] 'एसियाटिक रिसर्चेज', जि०, १६, पृ० ५०

६. 'राम जन्म', उनके अनुसार, भोजपुर की बोली में लिखी गई ;[1]

७. 'राम शलाका', कनौज प्रान्त की बोली में[2] लिखित ;

८. 'जानकी मंगल'—(राम के साथ) सीता का विवाह, लाहौर, बनारस, मेरठ, आगरा से मुद्रित, १६ अठपेजी पृष्ठ, और १८६८ में बनारस से फिर से प्रस्तुत की गई ;[3]

९. अंत में 'पंचरत्न'—पाँच बहुमूल्य रत्न—शीर्षक पाँच छोटी कविताएँ, १८६४ में बनारस से मुद्रित, २१-२१ पंक्तियों के १०० अठपेजी पृष्ठ ;

१०. तुलसी की उन रचनाओं के अतिरिक्त जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है, 'रुक्मिणी स्वयंबर टीका'—स्वयंबर के रूप में रुक्मिणी के विवाह का उपहार—उनकी देन है, रचना जिसकी एक प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी में है।

तुलसी-दास की सभी कृतियों को भारत में अत्यधिक ख्याति प्राप्त है ; विद्वान् और सच्ची ख्यातिप्राप्त एच० एच० विल्सन का भी निस्संकोच कहना है[4] "कि वे संस्कृत रचनाओं की अनेक पोथियों से अधिक हिन्दू जन-समाज को प्रभावित करती हैं।"

मैं नहीं जानता यदि 'कथा ब्रजमाल', या स्पष्ट कथा, तुलसी-दास

---

[1] यह ग्रंथ वास्तव में वामन का लिखा हुआ है जिनके संबंध में जैसा आगे कहा जायगा।

[2] 'हिन्दुओं का इतिहास आदि', जि० २, पृ० ४८०। आगरे के 'जनरल कैटैलौग ऑव ऑरिएंटल वर्क्स' में, कलकत्ते से मुद्रित, तुलसीकृत 'राम सगनावली'—शकुन विचार की पुस्तक—का भी उल्लेख है।

[3] इस संबंध में १८६८ के शुरू का मेरा 'दिस्कूर' (Discours) देखिए, पृ० ६३ से ६५।

[4] 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १६, पृ० ४९ (द्वितीय संस्करण में ४८०—अनु०)

कृत है। मैं इस पुस्तक के विषय के बारे नहीं जानता, जिसे मुहम्मद बख्श के हिन्दुस्तानी हस्तलिखित ग्रंथों के सूचीपत्र में तुलसी-कृत कहा गया है।[1]

पिछली बातों के साथ-साथ मैं यह भी जोड़ देना चाहता हूँ कि, जैसा कि 'भक्तमाल' से लिए गए अंश में बताया गया है, वे संस्कृत 'रामायण' के रचयिता वाल्मीकि के अवतार समझे जाते थे। उनके पिता का नाम आत्मा राम पन्त (Pant) था। बारह वर्ष की अवस्था में ब्रह्मचारी हो गए थे; उनकी स्त्री का नाम देवी ममता था; वे अत्यन्त पवित्र थीं, और उन्हीं ने उन्हें राम और सीता की भक्ति की ओर प्रेरित किया, साथ ही वैराग्य धारण करने का निश्चय उत्पन्न किया।

तुलसी-कृत रामायण भारतवर्ष के सबसे अधिक पढ़े जाने वाले और सबसे अधिक लोकप्रिय ग्रंथों में से है, यद्यपि सामान्यतः लोग उसकी सूक्ष्मता का कारण और उसके प्राचीन रूपों को कम समझते हैं। उसे प्रायः 'तुलसी ग्रंथ'—तुलसी की पुस्तक—कहते हैं, और इस शीर्षक के अंतर्गत वह मेरठ से १८६४ में प्रकाशित हुई है। राम गोज़न[2] ने 'तुलसी शब्दार्थ प्रकाश' शीर्षक के अंतर्गत उसकी एक टीका प्रकाशित की है; दुर्भाग्यवश, भारतीय टीकाएँ उन ग्रन्थों की अपेक्षा कठिन होती हैं जिन्हें वे स्पष्ट करना चाहती हैं।

अनेक स्थानों में, और पटना में ही, जहाँ तुलसी-दास की रचनाएँ अन्य स्थानों की अपेक्षा भलीभाँति समझी जाती हैं, प्रतिष्ठित व्यक्ति थोड़ा सा प्रसाद वितरण कर इन रचनाओं का साफ़-साफ़ पाठ सुनने के लिए इकट्ठे होते हैं। प्रत्येक समुदाय में दस या बारह व्यक्तियों से अधिक नहीं होते जो कथा समझ सकते

---

१ 'तुलसी किरत' (फ़ारसी लिपि से)—दुर्गा प्रसाद पर लेख देखिए।

२ इन पर लेख देखिए।

हों। प्रत्येक अंश का अर्थ उन्हें समझाना पड़ता है। साथ ही ऐसे लोग भी हैं जो तुलसी कृत 'रामायण' के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों में उसे पढ़ नहीं सकते, क्योंकि सुनते-सुनते वह उन्हें कण्ठस्थ हो जाती है।[1]

तुलसी कृत 'रामायण' के जिन संस्करणों का मैंने उल्लेख किया है, उनके अतिरिक्त भी अनेक हैं। १८३२ के में, जिसकी एक प्रति मेरे पास है, १८२८ के संस्करण की अपेक्षा, अक्षर बहुत छोटे, किन्तु साथ ही अधिक साफ़ हैं। शेष पाठ की दृष्टि से कोई भेद नहीं है, वे एक ही हैं।

एक संस्करण, बद्री लाल के निरीक्षण में, बनारस से १८५० में, और एक, चित्रों सहित, आगरे से १८५२ में निकला है। अंत में, सबसे अच्छा बनारस से १८५६ में प्रकाशित हुआ है[2]; क्योंकि सम्पादक, पं० राम जसन ने, न केवल सब छंदों को दूर कर अलग-अलग रखने की ओर वरन् सब शब्दों और पाठ को, परिशिष्ट में, देने, कठिन शब्दों का प्रचलित हिन्दी में अर्थ बताते हुए एक कोष देने, और काव्य का संक्षिप्त सार देने की ओर ध्यान दिया है।

देशी लोगों द्वारा प्रकाशित लीथो के अन्य संस्करण हैं, जैसे आगरा, १८५१ का[3], आदि।

---

[1] मौंट्गोमरी मार्टिन (Montg. Martin), 'ईस्टर्न इंडिया', जि० १, पृ० ४८३, और जि० २, पृ० १३२

[2] ३५-३५ पंक्तियों के ४८ अठपेजा पृष्ठ। झींगन लाल की टीका सहित बनारस के एक और संस्करण का विज्ञापन हुआ है; किन्तु मैं कह नहीं सकता वह प्रकाशित हुआ है या नहीं।

[3] मेरठ के 'अख़बार इ आलम' के, २२ मार्च, १८६६ के अंक, में, लखनऊ से मुद्रित, उर्दू, छन्दों में, कई सौ चित्रों सहित, एक 'रामायण' की घोषणा निकली है; दिल्ली से १८६८ में, 'रामायण सटीक'—टीका सहित 'रामायण'—शीर्षक के अंतर्गत एक संस्करण निकला है।

'विनय पत्रिका'—निर्देश की पत्रिका—मुद्रित हो चुकी है। मेरे पास उसका एक संस्करण कलकत्ते, १८११ (१८१३) का है: उसमें १२० अठपेजी पृष्ठ हैं। मेरे पास एक दूसरा १८६४ का है, १०० बड़े अठपेजी पृष्ठ।

उसका एक संस्करण शिवप्रकाश सिंह की टीका सहित है; बनारस, १८६४, ३८० चौपेजी पृष्ठ।

तेग़[1] बहादुर

सिक्खों के नवें गुरु हैं। उनकी हिन्दी में लिखित कुछ धार्मिक कविताएँ हैं, जो 'आदि ग्रंथ' के चौथे भाग में हैं।

तोरल[2] मल (Toral Mal)

ब्रज-भाखा में लिखित 'भागवत' के रचयिता हैं, जिसकी नस्तालीक अक्षरों में लिखी एक हस्तलिखित प्रति, मुझे ट्रिनिटी कॉलेज के फ़ेलो, श्री० ई० एच० पामर (Palmer) से जो मालूम हुआ है उसके अनुसार, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के पुस्तकालय में है।

त्रिलोचन[3]

एक ब्राह्मण सन्त, हिन्दी में लिखित धार्मिक गीतों के रचयिता हैं और जो 'आदि ग्रन्थ' के चौथे भाग में मिलते हैं।

दरिया-दास[4]

एक मुसलमान दर्ज़ी थे जिन्होंने एक नए आकाश-पंथ की

---

[1] फ़ा० 'तलवार'

[2] भा० कड़ा जो कलाई पर पहिना जाता है।

[3] भा० शिव का एक नाम, अर्थ है 'तीन आँखों वाला'

[4] फ़ा० भा० '(सब से बड़ा) नदी का दास', अर्थात्, मेरे विचार से, 'गंगा का'

स्थापना की, अर्थात् जो एक नवीन संप्रदाय अथवा कबीर की प्रणाली में एक सुधार के प्रवर्तक थे। उनके अनुयायी न तो मंदिर रखते हैं, न मूर्ति, न प्रार्थना का निश्चित रूप। वे मद्यपान नहीं करते और पशु-मांस नहीं खाते, क्योंकि वे उन्हें भी उसी दिव्य शक्ति से अनुप्राणित जीव समझते हैं जिसे वे 'सत्य सुकृत' कहते हैं। वे देवताओं के अस्तित्व में विश्वास नहीं रखते। वे बलि और होम नहीं करते, किन्तु ईश्वर को वे फल, मिठाई, दूध तथा अन्य प्राकृतिक पदार्थ ज़मीन पर रख कर चढ़ाते हैं। वे 'संस्कृत विज्ञान' से घृणा करते हैं, वेद, पुराण और कुरान को भी नहीं मानते, और उनका कहना है कि जो कुछ जानने की आवश्यकता है वह दरिया-दास द्वारा रचित हिन्दी के अठारह ग्रन्थों में मिल जाता है। ब्यूकैनैन ने ये ग्रन्थ देखे थे, किन्तु वे उन्हें प्राप्त नहीं कर सके क्योंकि लोग उन्हें पवित्र समझते हैं।[१]

दया राम[२]

हिन्दी रचना 'दया विलास'—दया के सुख—के रचयिता हैं जिसकी एक हस्तलिखित प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी में है। यह रचना संभवतः वही है जिसकी नस्तालीक़ अक्षरों में एक प्रति, नं० ५२, 'भागवत' शीर्षक के अंतर्गत, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के पुस्तकालय में है।

दया संभवतः वही लेखक जिनके हिन्दुस्तानी, गुजराती और मराठी में प्रसिद्ध भजन और गीत मिलते हैं जो अत्यन्त प्रसिद्ध गवैया अपने शिष्य, रामचन्द भाई, के पास छोड़े गए एक

---

[१] मौंट्गोमरी मार्टिन, 'ईस्टर्न इंडिया', जि० १, पृ० ५००

[२] भा० 'दया, उदारता, सद्भावना'

सौ पैंतीस हस्तलिखित ग्रन्थों में संग्रहीत हैं, और जिनका संबंध देश के लोगों की रुचि के अनुकूल सभी विषयों से है। वस्तुतः इन कविताओं में धार्मिक, शोक-पूर्ण, शृंगारपूर्ण गीत हैं; कुछ में भारतीय नगरों और व्यक्तियों की उल्लेख है, तो अन्य में हिन्दू सम्राटों और पौराणिक भक्तों की परंपरागत कथाएँ हैं। कहा जाता है कि धार्मिक भजनों में भावों की उच्चता, भाषा की सरसता और काव्य रूपकों की प्रचुरता है।

दशा भाई बहमन जी[1] (Dosabhai Bomanjee)

बम्बई के, ने गिलक्राइस्ट कृत 'Hidee Roman orthoepigraphical ultimatum'[2] शीर्षक रचना में लातीनी अक्षरों में दिए गए संस्करण के आधार पर काज़िम अली जवाँ कृत 'शकुन्तला नाटक' का फ़ारसी अक्षरों में एक संस्करण १८४८ में प्रकाशित किया है।

दादू[3]

दादूपंथी संप्रदाय के, जो रामानंदियों की एक शाखा है, और फलतः वैष्णव मतों में सम्मिलित है, संस्थापक दादू कबीर-पंथी प्रचारकों में से एक गुरु के शिष्य थे और रामानंद या कबीर की शिष्य-परंपरा में पाँचवें थे, जिनके नाम हैं : कमाल, जमाल, बिमल, बुद्धन और दादू।

दादू धुनियाँ जाति के थे। उनका जन्म अहमदाबाद में हुआ

---

[1] भा० 'दशा' का अर्थ है 'हालत, अवस्था', 'भाई'—भाई, 'बहमन' (बिरहमन के लिए) ब्राह्मण, और 'जी' एक आदरसूचक उपाधि है।

[2] 'जर्नल आव दि बॉम्बे ब्रांच रॉयल एशियाटिक सोसायटी', जनवरी, १८६१। मेरे पास इस रचना की अठारह सौ पृष्ठों की एक प्रति है।

[3] 'दबिस्तान' के रचयिता ने उनका नाम दादू दरवेश लिखा है। ए० ट्रौयर (A. Troyer) कृत अनुवाद की जि० २, पृ० २३३ देखिए।

था ; किन्तु बारह वर्ष की अवस्था में वे अजमेर में साँभर, वहाँ से कल्यानपुर, तत्पश्चात् नराना नगर गए जो साँभर से चार कोस पर और जयपुर से बीस कोस पर बसा हुआ है। उस समय वे सैंतीस वर्ष के थे। वहीं एक आकाशवाणी द्वारा चेताए जाने पर, साधु-जीवन व्यतीत करने का निश्चय कर वे नराना से पाँच कोस भराना पहाड़ी चले गए, जहाँ, कुछ समय पश्चात्, वे अन्तर्द्धान हो गए (और) उनके एक भी चिह्न का कोई पता नहीं लगा सका। उनके शिष्यों का विश्वास है कि वे परम पुरुष में लीन हो गए। कहा जाता है यह घटना सन् १६०० के लगभग, अकबर के शासन-काल के अन्त या जहाँगीर के शासन-काल के प्रारंभ में हुई। नराना में, जो दादू-पंथी संप्रदाय का प्रधान स्थान है, अब भी दादू के बिछौने और ग्रंथ-संग्रह सुरक्षित हैं जिनका ये संप्रदाय वाले आदर करते हैं। पहाड़ी पर एक छोटी समाधि इस संस्थापक के अन्तर्द्धान होने वाले स्थान का चिह्न है।

इस संप्रदाय के सिद्धान्त भाखा में विभिन्न ग्रंथों में सम्मिलित जिनमें ऐसा प्रतीत होता है कि कबीर की रचनाओं के बहुत-से अंश सम्मिलित हैं। हर हालत में ये रचनाएँ आपस में बहुत समान हैं।[२]

वॉर्ड[३] ने इस लेखक की 'दादू की वाणी' का उल्लेख किया है। यह रचना जयपुर की बोली में लिखी गई है। प्रसिद्ध एच० एच०

---

२ यह अवतरण कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के मुखपत्र, अंक जून, १८३७ से लिया गया है। उसमें, जिसे अभी उद्धृत किया गया है, दादू पंथी संप्रदाय का विवरण मिलेगा, साथ ही श्री० विल्सन के विवरण (मेम्वायर), 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० ३०२ आदि में।

३ 'हिन्दुओं का इतिहास आदि', जि० २, पृ० ४८१

विल्सन के संबंधी लेफ्टिनेंट जी० आर० सिडन्स[1] ने इस साधु ग्रंथकार की 'दादूपंथी ग्रंथ' अर्थात् दादू के शिष्यों की पुस्तक, शीर्षक पुस्तक का अनुवाद-कार्य हाथ में लिया था। प्रोफ़ेसर विल्सन भी अपने को उसी कार्य में लगाना चाहते थे। श्री सिडन्स ने कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के मुखपत्र के जून, १८३५ के अंक में इस महत्त्वपूर्ण रचना का जो श्री जे० प्रिन्सेप के अनुसार, केन्द्रीय भारत की खड़ीबोली (शुद्ध हिन्दुस्तानी) का एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करती है, पाठ और (धार्मिक) विश्वास-संबंधी अध्याय का अनुवाद दिया है। उसके कुछ उद्धरण देखिए :

'ईश्वर में विश्वास तुम्हारे सब विचारों, सब शब्दों, सब कर्मों में व्याप्त हो। जो ईश्वर की सेवा करते हैं वे किसी और में भरोसा नहीं रखते।

यदि तुम्हारे हृदय में ईश्वर की स्मृति हो तो तुम उन कार्यों को पूर्ण करने योग्य हो सकोगे जो उसके बिना संभव नहीं हैं; किन्तु उनके लिए जो ईश्वर तक ले जाने वाले मार्ग की खोज करते हैं वे अत्यन्त सरल हैं।

हे मूर्ख! ईश्वर तुमसे दूर नहीं है; वह तुम्हारे समीप है। तुम अज्ञानी हो, किन्तु वह सर्वज्ञ है, और वह अपने दान अपनी इच्छा-नुसार बाँटता है.........

वही खाना और कपड़ा धारण करो जो ईश्वर तुम्हें अपनी ख़ुशी से देता है। तुम्हें और कुछ नहीं चाहिए। ईश्वर के दिए रोटी के टुकड़े पर खुश रहो......

तुम अपने शरीर की रचना देखो, जो मिट्टी के बर्तन की तरह है, और जो कुछ ईश्वर से सम्बन्धित नहीं है उस सब को अलग रख दो।

जो कुछ ईश्वर की इच्छा है वह सब अवश्य होगा; इसलिए चिन्ता में अपना जीवन नष्ट मत करो, किन्तु ध्यान करो।

---

[1] यह नवयुवक भारतीय-विद्या-विशारद हिन्दुई भाषा में विशेष रूप से व्यस्त रहा

जो ईश्वर से विमुख हैं उनके लिए क्या आशा हो सकती है, वे चाहे सारी पृथ्वी का चक्कर लगा लें। हे मूर्ख ! साधु पुरुष, जिन्होंने इस विषय पर विचार किया है, तुम्हें ईश्वर के अतिरिक्त और सब कुछ छोड़ देने के लिए कहते हैं, क्योंकि सब दुःख है।

सत्य में विश्वास रखो, अपना हृदय ईश्वर में लगाओ, और नम्र बनो, जैसे तुम मृत हो......

जो ईश्वर से प्रेम करते हैं, उनके लिए सब बातें अत्यन्त सरल हैं। वे कभी दुःख न पावेंगे, चाहे वे विष से क्यों न भर दिए जायँ; ठीक इसके विपरीत, वे उसे अमृत के समान ग्रहण करेंगे। यदि कोई ईश्वर के लिए दुःख उठाता है, तो अच्छा है; अन्यथा शरीर को कष्ट देना वृथा है।

जिस जीव को उसमें विश्वास नहीं है वह दुर्बल और डाँवाडोल है, क्योंकि कोई निश्चित आधार न होने से, वह एक वस्तु से दूसरी वस्तु पर चलायमान होता है.....

रचयिता ने जो कुछ बनाया है उसकी निंदा मत करो, उसके साधु भक्त उससे संतुष्ट रहते हैं......

दादू कहते हैं : ईश्वर मेरा धन है, वह मेरा भोजन और मेरा आधार है। क्योंकि उसकी आध्यात्मिक सत्ता से मेरा अंग-अंग ओत-प्रोत है...वह मेरा शासक है, मेरा शरीर और मेरी आत्मा है। ईश्वर अपने जीवों की उसी प्रकार रक्षा करता है जिस प्रकार एक मा अपने बच्चे की।...हे परमात्मा ! तू सत्य है; मुझे संतोष, प्रेम, भक्ति और विश्वास दो। तुम्हारा दास दादू सच्चा धैर्य माँगता है, और अपने को तुम्हें समर्पित करना चाहता है।'

दान[1] सिंह जू[2]

एक हिन्दुई कवि हैं जिनका कर्नल ब्राउटन (Broughton)

---

१ भा० 'दान'

२ 'जू', 'जी' की भाँति आदरसूचक उपाधि है, हिज्जे दूसरे हैं।

ने अपने 'Popular Poetry of the Hindoos' में रसादिक उद्धृत किया है।

दामा[1] जी पन्त[2]

'कवि चरित्र' में उल्लिखित एक हिंदुई लेखक हैं। उनका जन्म १६०० शालिवाहन (१६७८) में, महाराज शिवाजी के समय में, डंडरपूर (Dandarpûr) में हुआ था। दामाजी कई ग्रन्थों के रचयिता हैं जिनके शीर्षक नहीं दिए गए।

दूल्हा-राम[3]

वे १७७६ में रामसनेही हुए और १८२४ में मृत्यु को प्राप्त हुए। वे अपने संप्रदाय के तीसरे गुरु थे। उनके दस हज़ार शब्द[4] और लगभग चार हज़ार साखियाँ उपलब्ध हैं, अर्थात् अपने गुणों द्वारा न केवल अपने निजी संप्रदाय में, वरन् हिन्दुओं, मुसलमानों और दूसरों में प्रसिद्ध व्यक्तियों की प्रशंसा में कविताएँ: प्रत्यक्षतः यह मजमुआ-इ-आशिक़ीं' की तरह की, जिस रचना का उल्लेख 'अधम'-संबंधी लेख में हो चुका है, एक रचना है। इस प्रकार की पुस्तकें पूर्णतः मुसलमान सूफ़ियों की, जो ईसा मसीह और मुहम्मद, बुद्ध और ज़रथस्त्र कृष्ण और अली, पवित्र कुमारी मेरी और फ़ातिमा आदि, को एक ही श्रेणी में रखती है, उदार प्रणाली के अंतर्गत आती हैं। कुछ वर्ष हुए यूरोप ने इस प्रवृत्ति का एक सच्चा अध्यात्मवादी हिन्दू, महाराज राम मोहन राय, देखा था, जो

---

[1] भा० रस्सी, डोर'

[2] 'पन्त' या 'पन्थ', जिसका अर्थ है 'रास्ता', जिससे एक आध्यात्मिक पन्थ, एक धार्मिक-संप्रदाय का भी द्योतन होता है; व्यक्ति वाचक नामों के बाद यह शब्द; इस प्रकार के किसी संप्रदाय से संबंधित, अर्थ प्रकट करता प्रतीत होता है।

[3] दूल्हा-राम—राम जो दूल्हा हैं

[4] शब्द—नानक-पन्था आदि का एक प्रकार का गीत

जितनी स्वेच्छा से कैथोलिकों के यज्ञ-विशेष में गया उतनी ही (स्वेच्छा से) प्रोटेस्टेंटों के धर्मोपदेशों और ब्रह्म सभा के, जिसकी उसने स्थापना की, दार्शनिक (एवं) धार्मिक समाज में ।

दूल्हा-राम के उत्तराधिकारी छत्र-दास हुए; वे १८२४ में गद्दी[1] पर बैठे और १८३१ में मृत्यु को प्राप्त हुए। कहा जाता है उन्होंने एक हज़ार शब्दों की रचना की; किन्तु वे उन्हें लिपि-बद्ध करने की आज्ञा देने को राज़ी न हुए। नारायण दास उनके उत्तराधिकारी हुए और वे इस समय इस संप्रदाय के, जिसके सिद्धान्तों की व्याख्या कैप्टेन वेस्मकॉट (Westmacott) द्वारा कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के मुखपत्र के फ़रवरी, १८३५ के अंक में हुई है, चौथे गुरु हैं।

देबी-दास या देवी-दास[2]

'कवि चरित्र' में उल्लिखित अत्यन्त धार्मिक हिन्दी लेखक हैं। वे निम्नलिखित रचनाओं के रचयिता हैं :

१. 'वैंक (Vyenk) देश स्तोत्र'—विष्णु की प्रशंसा—एक सौ आठ भागों में ;

२. 'करुणामृत'—करुणा का अमृत—संत रचना ;

३. 'संत मालिका'—संतों की माला—'भक्तमाल' की तरह का शीर्षक, जिसका अर्थ भी वही है ;

४. 'उक्ति युक्ति रस कौमुदी'—बातचीत के रूपकों में रस की चाँदनी—बनारस के बाबू हरि चन्द्र[3] की 'कवि बचन सुधा' में प्रकाशित।

---

[1] हिन्दुस्तान में यह शब्द 'मसनद' का समानार्थवाची है। ये दोनों शब्द एक बादशाह या गुरु आदि के सिंहासन का अर्थ प्रकट करते हैं

[2] भा० '(सर्वोच्च) देवी का दास', अर्थात् 'दुर्गा का'

[3] इन पर लेख देखिए।

देवी-दीन[1]

हिन्दी में 'भूगोल ज़िला इटावा' के रचयिता हैं; इटावा, १८६८, बड़े अठपेजो २८ पृष्ठ।

(कब) देव[2]

लोक-प्रिय हिन्दी गीतों के रचयिता हैं जिनके उदाहरण ब्राउटन कृत 'पॉप्यूलर पोयट्री ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं की लोकप्रिय कविता) और मेरे 'शाँ पॉप्यूलेअर द लिंद' (भारत के लोकप्रिय गीत) में पाए जाते हैं।

देव-दत्त[3] (राजा)

रचयिता है :

१. 'नखशिख'[4] के;

२. 'अष्टयाम'[5] के, वॉर्ड द्वारा हिन्दुओं के इतिहास, साहित्य और पौराणिक कथाओं संबंधी अपने ग्रन्थ, जि० २, पृ० ४८०, में उल्लिखित हिन्दी रचनाएँ। दूसरी बनारस के बाबू हरि चन्द्र के 'कवि बचन सुधा' में प्रकाशित हो चुकी है।

देव-राज[6]

वॉर्ड द्वारा हिन्दुओं के इतिहास, साहित्य और पौराणिक-कथाओं संबंधी अपने विद्वत्तापूर्ण ग्रंथ, जि० २, पृ० ४८० में उद्धृत 'नख-

---

[1] 'देवी (दुर्गा) के प्रति दीन'

[2] 'कब', 'कबि' या 'कवि' के लिए है; 'देव'—देवता, आदरसूचक उपाधि के रूप में प्रयुक्त।

[3] भा० 'देवता द्वारा दिया गया'

[4] भा० 'सिर के ऊपर बालों का जूड़ा और पैरों के अँगूठे का नाखून' (सिर और पैर)

[5] या 'अष्ट जाम', अर्थात् एक दिन के आठ पहर या विभाग

[6] इन्द्र का नाम जिसका अर्थ है देवताओं का राजा

शिखा'[1] और 'अष्टयाम'[2] हिन्दी ग्रंथों के रचयिता। दुर्भाग्यवश वोर्ड ने न तो इन रचनाओं के विषय की ओर संकेत किया है और न उनके शीर्षकों का अर्थ ही बताया है।

देवी-दयाल[3]

केवल 'देवी सुकृत'—देवी द्वारा निर्मित—शीर्षक, शिव संप्रदाय संबंधी एक हिन्दी काव्य के रचयिता हैं। पाठ के साथ उर्दू में एक टीका भी है जिसमें कठिन शब्द समझाए गए हैं; और कुल १३६ पृ० का ग्रंथ है, लखनऊ में मुद्रित।

धना[4] या धना भगत[5]

अपनी साधु प्रवृत्ति द्वारा प्रसिद्ध एक हिन्दू और हिन्दी में भजनों के रचियता हैं।[6] अपने 'भक्त माल' में नारायण दास का कहना है कि धना ध्यान में इतने लवलीन रहते थे कि एक दिन वे भोजन का ग्रास समझ कर एक पत्थर निगल गए। उनकी भक्ति का फल देने के लिए, विष्णु ने, गाय-बैलों के रक्षक के रूप में, मानव रूप धारण किया। एक दिन इस देवता ने उनसे रामानन्द का शिष्य हो जाने के लिए कहा, और उसी समय पीछे से एक दिव्य वाणी सुनाई दी कि धना पहुँच गए और तुरंत उनके कान में पवित्र

१ नखशिखा—इन शब्दों में से पहले का अर्थ है 'नाखून', और वह विशेषतः पैर के अँगूठे का; दूसरे शब्द से तात्पर्य है 'बालों का जूड़ा' जिसे बहुत से भारतीय सिर के ऊपरी हिस्से पर उगने देते हैं। इन दोनों शब्दों का योग हिन्दुस्तानी में 'पूर्ण' का अर्थ धारण कर लेता है, शब्द के अनुसार 'सिर से पैर तक'।

२ अष्ट याम—दिन (और रात) की आठ घड़ियाँ।

३ अ०' (?-अनु०) देवी (दुर्गा) के प्रति स्नेही'

४ भा० 'सच्चा' (विशेषण)

५ 'सन्त धना'

६ 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १७, पृ० २३८

मंत्र घोषित किया गया। और वस्तुतः धना बनारस पहुँच गए, वे रामानंद के शिष्य हुए ; और उनके अपने घर वापिस आने पर, विष्णु ने उन्हें अपने हृदय से लगा लिया।

उनकी धार्मिक कविताएँ 'आदि ग्रंथ' के चतुर्थ खंड में संग्रहीत हैं।

धर्म-दास[1]

कबीर के बारह शिष्यों में से एक थे। उनकी 'अमर-माल'—सदैव रहने वाली माला—शीर्षक रचना है जिसमें उन्होंने अन्य हिन्दू संप्रदाय वालों के साथ वाद-विवाद का वर्णन किया है।

ध्रू[2]

सिक्खों के 'शंभु ग्रंथ' में संग्रहीत पवित्र कविताओं के रचयिता हैं।

नज़ीर (लाला गनपत राय)

दिल्ली के, कायस्थ जाति के एक हिन्दू समसामयिक, शाह नसीर के शिष्य हैं और उन्हीं की भाँति हिन्दुस्तानी कविताओं के रचियिता हैं जिनके करीम ने उदाहरण दिए हैं।

उन्होंने उर्दू और हिन्दी में, 'श्रीमत भागवत' शीर्षक के अंतर्गत, 'भागवत' का अनुवाद किया है ; लाहौर, १८६८, ७३२ अठपेजी पृष्ठ।

नन्द-दास[3] ज्यू[4]

रचयिता हैं :

१. कृष्ण और राधा की प्रेमलीलाओं के संबंध में, 'गीत

[1] भा० 'धर्म का सेवा करने वाला'

[2] भा० 'ध्रुव'

[3] भा० नंद दास, '(कृष्ण के कथित पिता) नंद का दास'

[4] सामान्यतः 'जो' रूप में लिखित आदरसूचक उपाधि

गोविन्द' के अनुकरण पर, हिन्दुई कविता 'पंचाध्यायी,'[1] पाँच अध्याय, के। संस्कृत काव्य का परिचय जोन्स के अनुवाद से प्राप्त होता है जो 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० ३ तथा उनकी रचनाओं में प्रकाशित हुआ है। 'पंचाध्यायी' मदन पाल द्वारा संपादित और कलकत्ते में बाबू राम के छापेखाने में छपी है; उसमें ५४ अठपेजी पृष्ठ हैं;

२. समानार्थवाची शब्दों का पद्य में कोष 'नाम मंजरी'—नामों का गुच्छा—या 'नाममाला' — नामों की माला—के;

३. अनेक अर्थ वाले शब्दों का पद्य में ही कोष 'अनेकार्थ मंजरी'—अनेक अर्थों का गुच्छा—के। ये दो छोटी-छोटी रचनाएँ एक साथ खिदरपुर से १८१४ में, अठपेजी रूप में, छपी हैं। पहली में ३४ पृष्ठ, और दूसरी में ५२ पृष्ठ हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि लोग उन्हें सामान्यतः एक साथ रखते हैं; और अंत में प्राय 'सतसई' और 'रसराज' भी पाई जाती हैं। हीरा चंद ने उन्हें अपने 'व्रज-भाखा काव्य संग्रह'—हिन्दी कविताओं का संग्रह—के प्रथम भाग में प्रकाशित किया है; बंबई, १८६५, अठपेजी।

करीम उद्दीन ने हमें नंद-दास की निम्नलिखित रचनाएं और बताई हैं, जो उपर्युक्त रचनाओं सहित, डॉ० स्प्रेंगर (Sprenger) के पास सुरक्षित उनकी रचनाओं के ५७६ पृष्ठों के संग्रह[2] का भाग हैं।[3]

४. 'रुक्मिणी मंगल'—रुक्मिणी का विवाह, संभवतः यही

---

[1] शेक्सपियर ('हिन्द० डिक्श०') के अनुसार, 'पंचाध्यायी' में कृष्ण और गोपियों की क्रीड़ाओं से संबंधित 'भागवत पुराण' के पाँच अध्याय हैं या करीम के अनुसार 'श्री राम माला'—हरि के नामों का गुच्छा।

[2] इसका शीर्षक है 'कृत श्री स्वामी नंद-दास ज्यू का', और एक जिल्द में है।

[3] 'Biblioth. Sprengeriana'

रचना 'पर्वत पाल' शीर्षक के अंतर्गत बताई गई है। भारतीय संगीत पर एक और रचना है जिसका शीर्षक भी यही है।

५. 'भँवर गीत'—भौंरे का गीत, हिन्दी काव्य; दिल्ली, १८५३, और आगरा, १८६४ ;

६. 'सुदामा चरित्र'—सुदामा की कथा ;

७. 'बिरह मंजरी'—प्रेम (दुःखद) का गुच्छा ;

८. 'प्रबोध चन्द्रोदय नाटक'—बुद्धि के चन्द्रमा के उदय का नाटक, रूपकात्मक नाटक, कृष्ण केशव मिश्र की संस्कृत रचना का अनुवाद।[1] इस प्रसिद्ध नाटक में आध्यात्मिक जीवन के कर्मों के रूप में, क्रोध और बुद्धि में, अन्य बातों के अतिरिक्त, बौद्ध मत तथा वेदान्त मत में संघर्ष और दूसरे सिद्धान्त की विजय दिखाई गई है[2]। इस ग्रन्थ को नस्तालीक अक्षरों में लिखी हुई एक प्रति केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के किंग कॉलेज के पुस्तकालय में है (नं ०५४)। वह १८६४ में आगरे से छपा है, ३२ पृ०।

९. 'गोवर्द्धन लीला'—गोवर्द्धन की क्रीड़ाएँ ;

१०. 'दशम स्कन्ध'—'भागवत पुराण' का दशम स्कंध ;

११. 'रास मंजरी'—(कृष्ण का गोपियों के साथ) रास का गुच्छा ;

१२. 'रस मंजरी'—रस का गुच्छा ;[3]

१३. 'रूप मंजरी'—रूप का गुच्छा ;

१४. 'मन मंजरी'—मन का गुच्छा।

---

[1] कैप्टेन टलर (Taylor) ने मूल संस्कृत का 'The Moon of intellect' शीर्षक के अंतर्गत अँगरेजी में अनुवाद किया है।

[2] इस रचना के संबंध में विस्तार देखिए, जे० लौग 'डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग', पृ० ३७

[3] स्वर्गीय कर्नल टॉड के संग्रह में 'रस मंजरी की द्वताना बात' (dvatâny bât)—'रस मंजरी' शीर्षक रचना का द्वितीय भाग—शीर्षक हस्तलिखित ग्रन्थ पाया जाता है।

नबी

मीर अब्दुल जलील बलाग्रमी (? बिलग्रामी) के भानजे मीर ग़ुलाम नबी[1] बलाग्रमी, अर्थात् बेलग्राम के, ने हिन्दी भाषा में दो हज़ार चार सौ दोहरे[2] लिखे हैं जो, कहा जाता है, प्रसिद्ध बिहारी[3] के दोहरों का मुक़ाबला करते हैं। वे विविध विद्याओं और संगीत कला में भी अत्यन्त निपुण थे।

नवीन या नवीन चंद्[4] राय (बाबू)

रचयिता हैं :

१. 'संस्कृत व्याकरण' के, हिन्दी में लिखित और १८६६ में लाहौर से मुद्रित, १४८ छोटे फ़ोलिओ पृष्ठ ;

२. एक हिन्दी में लिखित तथा 'नवीन चन्द्रोदय'—नए चन्द्रमा का प्रकटीकरण—शीर्षक एक व्याकरण के; लाहौर, १८६६, ११४ अठपेजी पृष्ठ ;

३ 'लक्ष्मी सरस्वती सम्बाद'—लक्ष्मी और सरस्वती के बीच बातचीत—के, हिन्दी में; स्त्रियों के लिए कथाएँ और नीत्युपदेश; लाहौर, १८६६, २० अठपेजी पृष्ठ;

४. लाहौर से पं० मुकुन्द राम द्वारा प्रकाशित, हिन्दी और उर्दू में 'ज्ञान प्रदायिनी'—ज्ञान देने वाली—शीर्षक एक पाक्षिक और दार्शनिक संग्रह के ; अठपेजी, १६ पृष्ठों की प्रतियों में लीथो किया गया।

इस संग्रह में कुछ परिवर्तन हुआ कहा जाता है, क्योंकि १८६८

---

१ पैग़म्बर, 'ग़ुलाम नबी' के लिए 'पैग़म्बर का दास'

२ 'दोहरा' पुरानी हिन्दुस्तानी में 'बैत' पद्य का समानार्थवाची

३ हिन्दी कवि जिसका इस ग्रन्थ में उल्लेख हुआ है।

४ भा० 'नया चन्द्रमा'

और १८६६ में पंजाब में प्रकाशित पुस्तकों के सूचीपत्र में दर्शन, मूल धर्म (Natural Religion) और समाचारों आदि के तथा 'ज्ञान प्रदायिनी पत्रिका'—ज्ञान देने वाली पत्रिका—का अधिक पूर्ण शीर्षक धारण किए हुए एक मासिक पत्र के प्रथम अंक का उल्लेख हुआ है; १६ अठपेजी पृष्ठ, और इन्हीं बा० नवीन चंद्र राय द्वारा लिखित। इस अंक में चुनी हुई वेद की स्तुतियाँ, ईश्वरवाद पर प्रश्नोत्तरी, प्रार्थनाएँ आदि हैं।

क्या ये वही लेखक तो नहीं हैं, जिन्होंने बाबू नवीन चन्द्र बनर्जी नाम से, १८६५ में लाहौर से एक 'सरकारी अख़बार'—सरकार के समाचार—शीर्षक उर्दू पत्र प्रकाशित किया ?

नर-हरि-दास[1]

१८६२ में १६ पन्नों की बंबई से लीथोग्राफ़ की गई हिन्दी रचना, 'ज्ञान उपदेश' के रचयिता।[2]

नरायन[3] (पंडित)

कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय के संस्कृत ग्रंथों के सूचीपत्र के अनुसार, 'हितोपदेश' के हिन्दी में रूपान्तरकार हैं जिसकी एक प्रति सोसायटी के पुस्तकालय में है।[4] यह तो ज्ञात ही है कि 'हितोपदेश' का संस्कृत मूल, 'ताल्मुद' (Télémaque) की भाँति, पाटलिपुत्र (Palibothra) के एक राजा के पुत्र की नैतिक शिक्षा के लिए लिखा गया था।

उसी सूचीपत्र के अनुसार पंडित नरायन ने ही 'राजनीति' का

---

१ भा० 'विष्णु के चौथे अवतार के दास'

२ ३० अप्रैल, १८६६ का 'ट्रूबनर्स रेकॉर्ड' (Trübner's Reeord)

३ विष्णु के नामों में से एक

४ हिन्दी में एक 'हितोपदेश' आगरे से प्रकाशित हुआ है, पहली जून, १८५५ का 'आगरा गवर्नमेंट गज़ट', मैं नहीं जानता कि यह रूपान्तर वही है।

ब्रज-भाखा रूपान्तर प्रस्तुत किया ; साथ ही लल्लूजी कृत इस रचना के संस्करण में यह स्पष्टतः कहा गया है कि नरायन ने उसका संस्कृत से अनुवाद किया था।

क्या ये फ़ोर्ट विलियम के पुस्तकाध्यक्ष, लक्ष्मी नारायण लेखक ही तो नहीं हैं, जिन्होंने इसी रचना का बँगला में अनुवाद किया था ?[1]

१८६८ में फ़तहगढ़ से, १६ पृष्ठों में, प्रकाशित 'श्याम सगाई' तो हर हालत में उनकी रचना है; और इससे पहले अँगरेजी में 'Sports of Krishna' शीर्षक सहित, १८ पृ० में, आगरे से, १८६२ और १८६४ में।

नरोत्तम[2]

कृष्ण के एक सखा, सुदामा, की कथा, 'सुदामा चरित्र' के रचयिता हैं; फ़तहगढ़, १८६७, २४ अठपेजी पृष्ठ।

नवल दास[3]

'मन प्रमोद'—हृदय या आत्मा का आनन्द—के रचयिता हैं, जो ईश्वरवाद पर एक रचना है, फ़तहपुर से १८६८ में प्रकाशित, १८-पेजी आठ पृष्ठ।

नवाज़

नवाज़ कबिश्वर[4], मुसलमान कवि जो संस्कृत नाटक 'शकु-

[1] जे० लौंग, 'कैटलौग', पृ० १२

[2] भा० 'उत्तम मनुष्य'

[3] भा० 'कृष्ण का दास'

[4] कबिश्वर—इस शब्द का अर्थ है कवियों का सिरताज। यह मुसलमानों के 'मलिक उशशुअरा' शब्द का समानार्थवाची है। यह हिन्दी के अनेक लेखकों के प्रधान नाम के साथ लगाया जाता है, जिनमें से सुन्दर और सुरत अनुवादकों के साथ, पहले 'सिंहासन बत्तीसी' के, दूसरे 'बैताल पचीसी' के।

न्तला' के ब्रज-भाखा पद्य में अनुवाद के रचयिता हैं। यह अनुवाद उन्होंने फ़िदाई ख़ाँ के पुत्र मौला ख़ाँ जिन्होंने अपने समय के मुग़ल सम्राट् फ़र्रुख़सियर से आज़म ख़ाँ नाम पाया था, के कहने से किया था। काज़िम अली जवाँ कृत 'शकुन्तला' में नवाज़ के विषय में यह उल्लेख हुआ है कि उन्होंने ११२८ (१७१६) में 'शकुन्तला नाटक' का, खण्डकाव्य के रूप में संस्कृत से हिन्दी (ब्रज-भाखा) में अनुवाद किया। स्वर्गीय जॉन रोमर ने इस अनुवाद की देवनागरी अक्षरों में लिखित एक सुन्दर हस्तलिखित प्रति मुझे भेंट की थी जो उनके पास थी, किन्तु जो १८६४ में लाल द्वारा बनारस से प्रकाशित हो चुकी है, ११४ अठपेजी पृष्ठ। इसी पाठ के आधार पर गिलक्राइस्ट ने काज़िम अली जवाँ[1] से उर्दू रूपान्तर तैयार कराया था।

नसीम (पं० दया-सिंह या दया-शंकर या संकर)

मूलत: काश्मीरी, किन्तु जिनका जन्म लखनऊ में हुआ और जो उसके (अँगरेज़ी राज्य में ?—अनु०) मिलाए जाने से पूर्व वहीं रहते थे, हिन्दुस्तानी के अत्यन्त प्रसिद्ध लेखक हैं। वे गंगा प्रसाद के पुत्र और ख़्वाजा हैदर अली आतिश के शिष्य हैं। वे आगरा कॉलेज में हिन्दी के प्रोफ़ेसर रह चुके हैं। रेख़्ता या उर्दू में उनकी कविताएँ हैं जिनके कुछ अंश मुहसिन ने अपने 'तज़किरा' में उद्धृत किए हैं, और जो निम्नलिखित रचनाओं के रचयिता हैं :

१. 'दयाभाग'—दया का भाग[2]—के, जिसका अँगरेज़ी में

---

[1] इन पर लेख देखिए।

[2] यह निस्संदेह वही रचना है जो 'दया भाग ओ दत्तक का चन्द्रिका'—हिन्दुओं में सम्पत्ति विभाजन के वर्णन का चन्द्रमा—है, १६० पृ०; कलकत्ता, १८६५ (जे० लौंग, 'डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग', १८६७, पृ० २१)

शीर्षक है 'Law of inheritance, translated from the Sanscrit into hindui of the Mitakshara' (मिताक्षरा का उत्तराधिकार नियम, संस्कृत से हिंदुई में अनूदित)। यह अनुवाद कमिटी ऑव पब्लिक इन्सट्रक्शन (सार्वजनिक शिक्षा समिति) के व्यय से १८३२ में कलकत्ते से छपा है। वह ७१ अठपेजी पृष्ठों की बड़ी जिल्द है, जिसकी एक प्रति मेरे निजी संग्रह में है।[1] कोलब्रुक ने अपने 'Two treatises of the hindu Law of inheritance' (हिन्दू उत्तराधिकार नियम पर दो पुस्तकें) शीर्षक ग्रंथ में इस पुस्तक का अनुवाद किया है; कलकत्ता, १८१०, चौपेजी।

१. 'अलिफ़लैला' के उर्दू अनुवाद...

२. 'गुलज़ार-इ नसीम'...

नाथ[2]

एक हिन्दी-लेखक हैं जिनकी 'धनेश्वर चरित्र'—कुबेर की कथा—नामक रचना कही जाती है, जिसे मध्व कृत रचना भी कहा जाता है, जो सम्भवतः एक ही व्यक्ति थे, जिनकी 'नाथ' आदर सूचक उपाधि प्रतीत होती है। उनका उल्लेख 'कवि चरित्र' में हुआ है।

नाथ भाई[3] तिलक चन्द

एक समसामयिक हिन्दी लेखक हैं, जिन्होंने 'पुष्टि मार्गनी वैष्णव' आदि, वल्लभ सम्प्रदाय के धार्मिक पद, प्रकाशित किए हैं; बम्बई, १८६८, ५० अठपेजी पृष्ठ।

---

[1] इसके अनेक संस्करण हैं, जिनमें से एक आगरे का है।

[2] भा० अथवा, संस्कृत उच्चारण के अनुसार 'नाथ'—'मालिक, स्वामी'

[3] भा० 'स्वामी का भाई'

नानक[1]

सिक्ख[2] संप्रदाय के प्रसिद्ध संस्थापक, नानक शाह, उसके 'आदि ग्रंथ'[3] अर्थात् पहला ग्रंथ, नामक पूज्य ग्रंथ के रचयिता हैं। सम्भवतः यह वही है जो 'पोथी गुरु नानक शाही' (गुरु नानक शाह की पोथी) के शीर्षक के अंतर्गत ईस्ट इंडिया हाउस में है, और जो प्रायः 'ग्रंथ'[4] के अनिश्चित नाम से पुकारा जाता है, जैसे मुसलमानों का क़ुरान 'मुशफ़' (ग्रंथ) के नाम से। यह ग्रंथ बताता है कि सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक ईश्वर केवल एक है, जो समस्त विश्व में व्याप्त और सब पदार्थों में विद्यमान है, और जिसकी पूजा तथा स्तुति अवश्य करनी चाहिए; फिर महशर का एक दिन

---

[1] भा० 'एक से अधिक'

[2] सामान्यतः लोग यह नहीं जानते कि 'सिक्ख' शब्द की व्युत्पत्ति हिन्दुस्तानी है। वह ('सीखना' सामान्य क्रिया के आज्ञावाचक) 'सीख' से है, शब्द जिसे नानक प्रायः अपने शिष्यों से कहा करते थे। विल्किन्स, 'एशियाटिक रिसर्चेज़, जि० १, पृ० ३१७।

[3] आदि ग्रन्थ। वॉर्ड ने अपना 'हिस्ट्री, एट्सीटेरा ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं का इतिहास आदि), जि० ३, पृ० ४६० तथा उसके बाद, में इस रचना से रोचक उद्धरण दिए हैं। मैंने अर्जुन पर लेख में नानक कृत 'आदि ग्रन्थ' और नानक की एक कविता 'रत्नमाल' पर विस्तार से लिखा है। यह रचना, जिसमें आठ प्रार्थनाएं हैं, स्वर्गीय ए० के० फ़ोर्ब्स द्वारा अँगरेज़ी में अनूदित हो चुकी है और 'बोम्बे ब्रांच, रॉयल एशियाटिक सोसायटी' के पत्र में प्रकाशित हो चुकी है, जि० ६, २० तथा बाद के पृष्ठ। उसी जिल्द में, इस विषय पर जे० न्यूटन के विचार भी देखिए, XI तथा बाद के पृष्ठ।

[4] देखिए सी० स्टीवर्ट (Stewart) का बिक्री का सूचीपत्र, नं० १०८। वास्तविक 'ग्रन्थ', अर्थात् नानक का ग्रन्थ, पंजाब की बोली या पंजाबी में, नानक द्वारा आविष्कृत, फलतः 'गुरुमुखी' (गुरु के मुख से), अक्षरों में पद्यबद्ध लिखा गया है। ये वही हैं जो अब भी इस बोली में काम में लाए जाते हैं।

आएगा जब पुण्य का पुरस्कार और पाप का दण्ड मिलेगा। नानक ने उसमें न केवल सार्वभौम सहिष्णुता का आदेश दिया है, वरन् एक दूसरे धर्मावलम्बी से विवाद करने की भी आज्ञा नहीं दी। उन्होंने वध, चोरी तथा अन्य दुष्कर्मों का भी निषेध किया है; उन्होंने समस्त सद्गुणों के अभ्यास, और विशेषतः प्राणिमात्र का उपकार, और अजनबियों तथा यात्रियों का आतिथ्य-सत्कार करने की शिक्षा दी है।'[1]

पेरिस के राजकीय पुस्तकालय में, हिन्दुस्तानी में, नानक का एक हस्तलिखित इतिहास जिसमें इस प्रसिद्ध सुधारक के अनेकानेक वाक्य उद्धृत हैं, और ईस्ट इंडिया हाउस में ब्रजभाखा में लिखित, 'निर्मल ग्रन्थ'[2] अर्थात् पाक पुस्तक, और 'पोथी सरब गनि'[3] नामक दूसरी पुस्तक जिसमें नानक के सिद्धान्तों की व्याख्या है, सुरक्षित है। ईस्ट इंडिया हाउस में एक 'सिक्ख-दर्शन, पोथी नानक शाह, दर नज्म' अर्थात् सिक्ख-दर्शन, नानक की पोथी, पद्य में, शीर्षक पोथी भी है। प्रत्यक्षतः यह वही रचना है जिसकी 'सिखाँ-इ बाबा नानक'[4], अर्थात् बाबा नानक के उपदेश, के नाम से एक प्रति, पद्य में, मेरे पास है। इस हस्तलिखित

---

[1] विलकिन्स, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १, फ्रेंच अनुवाद का पृ० ३१७

[2] निर्म्मल ग्रन्थ। इस पुस्तक की एक प्रति मैकेन्ज़ी संग्रह में है। श्री विलसन ने अपने सूचीपत्र (जि० २, पृ० १०६) में कहा है कि इस प्रति में चार 'महल' (mahal) या व्याख्यान हैं जिनमें सिक्खों के धार्मिक सिद्धान्तों की, पंजाब की हिन्दू बोली में, व्याख्या हुई है। ईस्ट इंडिया हाउस वाली हस्तलिखित प्रति में केवल प्रथम 'महल' है, 'किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि गुरु साधो सिंह द्वारा प्रदत्त उसकी एक दूसरा पूर्ण प्रति है।

[3] मैंने यह शीर्षक पूर्वी अक्षरों में लिखा हुआ नहीं देखा। मैं उसके वास्तविक हिज्जे और अर्थ नहीं जानता।

[4] 'सिखनो बाबा नानक' (फ़ारसी लिपि से)

पोथी में १७२ अठपेजी आयताकार पृष्ठ हैं।[1] इसी शीर्षक की एक रचना फ़रज़ाद (Farzâda) की पुस्तकों में दिखाई गई है। मुहम्मद बख़्श की पुस्तकों के हस्तलिखित सूचीपत्र में सिक्ख धर्म पर, हिन्दी में लिखी हुई, और 'सिखाँ ग्रंथ'[2] अर्थात् सिक्खों की पुस्तक, शीर्षक रचना पाई जाती है। संक्षेप में, ऐसे अनेक ग्रंथ हैं जिनमें नानक पंथ के धार्मिक पद्य और भजन मिलते हैं; इनमें से उदाहरण के लिए एक वह है जिसकी एक प्रति ईस्ट इंडिया हाउस में सुरक्षित है, और जिसका शीर्षक है 'अशार ब ज़बान-इ भाखा बर दीन-इ नानक शाही' (नानक शाह के धर्म पर भाखा में कविताएँ), और एक दूसरे का शीर्षक है : 'दीवान दर ज़बान-इ भाखा, याने पोथी गुरू नानक शाह' (भाखा ज़बान में दीवान अर्थात् गुरू नानक शाह की पोथी)।

नानक का जन्म लाहौर प्रदेश के तलबिंडी (Talbindî) नामक गाँव में १४६६ में हुआ था; कुछ और लोगों का कहना है कि उनका जन्म शाहंशाह बाबर के राजत्व-काल में अर्थात् १५०५ से १५३० तक के बीच में हुआ। युवावस्था में ही भक्ति और तप वाले जीवन के लिए उन्हें संसार से विरक्ति हुई। एकान्तवास धारण करते हुए ही उन्होंने एक नवीन धार्मिक व्यवस्था का निर्माण किया और उन्होंने 'ग्रंथ'[3] नामवाचक शब्द से ज्ञात रचना का सृजन किया। नब्बे वर्ष की अवस्था में नानक की मृत्यु

---

१ मेरे ख़ास संग्रह में अब भी, फ़ारसी अक्षरों, पद्य और गद्य, में एक हिन्दी 'ग्रंथ' है।

२ 'सिखाँ ग्रन्थ' (फ़ारसी लिपि से)

३ स्वर्गीय एच० एच० विल्सन ने मुझे बताया था कि 'ग्रन्थ' का तात्पर्य सामान्यतः सभी नानक पंथी धार्मिक रचनाओं के संग्रह से है, उसमें सूरदास की कविता, तुलसीदास का 'रामायण', संक्षेप में प्रधान हिन्दुई गीत। यह बाइबिल (बिबलिआ, Biblia) शब्द की तरह है जो यहूदियों और ईसाइयों की दैवी पुस्तकों के संयुक्त रूप का द्योतक है।

हुई। उनके संप्रदाय के अनुयायी आज तक उनकी समाधि के धार्मिक भाव से दर्शन करने जाते हैं। श्री आउज़्ले (Ouseley) ने अपने 'ऑरिएण्टल कलेक्शन्स', जि० २, पृ० ३६०, में नानक का चित्र दिया है; किन्तु उसकी रूपरेखा की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं जानता। कलकत्ते से ४३ अठपेजी पृष्ठों की, 'गुरु नानक स्तोत्रांग' (नानक की प्रशंसा) शीर्षक (रचना) प्रकाशित हुई है।

इस प्रसिद्ध व्यक्ति के सम्बन्ध में मैंने ऊपर तथा 'रुदीमाँ द ल लाँग ऐंदुई (Rudiments de la langue hindouie) की भूमिका में जो कुछ कहा है, उसके अतिरिक्त, 'कवि चरित्र' के आधार पर, मैं यह और जोड़ देना चाहता हूँ, कि नानक का जन्म पंजाब में १३५५ शक संवत् (१४३३) में हुआ था और साधारणतः भारतवर्ष में यह विश्वास किया जाता है कि वे मक्का तक पहुँचे, जहाँ वे बिना मुसलमान रूप धारण किए नहीं पहुँच सकते थे। कहा जाता है कि, वहाँ वे अंतर्द्धान हो गए[२] और अमरत्व प्राप्त कर लिया। इसके अतिरिक्त हिन्दू उन्हें एक पैग़ंबर के रूप में मानते हैं, किन्तु उनके बहुत-से अनुयायी उन्हें स्वयं ईश्वर मान कर उनकी पूजा करते हैं।[३]

उनके पिता क्षत्रिय जाति के हिन्दू और बेहदू (Behdu) नामक तहसील के निवासी थे। कहा जाता है, उनके गुरु एक मुसलमान थे, जिनसे संभवतः उनके सिद्धान्तों को सर्वसंग्रहकारी प्रवृत्ति प्राप्त हुई।

जे० डी० कनिंघम के 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्खस (सिक्खों का इतिहास) ३७७ तथा बाद के पृष्ठ, में नानक की धार्मिक कविताओं

---

[१] अन्य इतिहासकारों के अनुसार, १५३९ में, सत्तर वर्ष की अवस्था में।

[२] वे 'अप्रकट' हो गए—'दिखाई नहीं दिए'।

[३] मौंटगोमरी मार्टिन, 'ईस्टर्न इंडिया', जि० ३, पृ० १८२

के महत्त्वपूर्ण अंशों का अनुवाद पाया जाता है, जिनमें करीम नामक एक काल्पनिक राजा को संबोधित, और उसी राजा के लिखित एक उत्तर के रूप में, 'नसीहतनामा' शीर्षक एक पत्र का आंशिक अनुवाद है।

नानक की कविताओं में विश्वास, दया और सत्कर्म का सिद्धान्त स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है।[1]

नाभा जी[2]

इस प्रसिद्ध हिन्दी लेखक का आविर्भाव अकबर के शासन-काल के अन्त में और उसके उत्तराधिकारी जहाँगीर के शासन-काल के प्रारम्भ में, अर्थात् १६ वीं शताब्दी के अंत और १७ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ। वे जाति के डोम[3] या डोमरा थे जो टोकरियाँ बुनने का व्यवसाय तथा इसी प्रकार के अन्य कार्य करते हैं। कहा जाता है[4] वे अंधे उत्पन्न हुए थे, और जब वे केवल पाँच-वर्ष के थे, उनके माता-पिता, जब वे ग़रीबी के दिन बिता रहे थे, उन्हें एक जंगल में छोड़ आए, जहाँ उनका अंत हो जाना निश्चित था। ऐसी अवस्था में ही वैष्णव सम्प्रदाय के उत्साही प्रचारक अग्रदास और कील ने उन्हें पाया। उन्हें अकेला पड़ा देख उन दोनों को दया आगई, और कील ने अपने कमंडल[5] का पानी उनकी आँखों पर छिड़का, जिससे आँखें ठीक हो गईं। वे उन्हें अपने मठ में ले गए, जहाँ वे अग्रदास द्वारा वैष्णव सम्प्रदाय में शिक्षित और दीक्षित

---

[1] 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्ख्स', पृ० ४१, में इस सिद्धान्त का विचित्र विकास देखिए।

[2] नाभाजि। भा० नाभा' या 'नभ'-आकाश; 'जी' आदरसूचक शब्द

[3] 'डोम' या 'डोमरा' (फ़ारसी लिपि से)

[4] एच० एच० विलसन, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६, पृ० ४७

[5] कमंडल, संस्कृत में कमण्डलु, जल-पात्र, मिट्टी या लकड़ी का बना हुआ, फ़क़ीरों द्वारा काम में लाया जाता है।

हुए। परिपक्व अवस्था प्राप्त करने पर उन्होंने अपने गुरु, जो ऐसा प्रतीत होता है, उसे संस्कृत में लिख चुके थे,[1] की इच्छानुसार 'भक्तमाल' की रचना की। इस रचना, जिसके शीर्षक का अर्थ है 'भक्तों की माला', और जिसे 'संत चरित्र' भी कहते हैं, में प्रधान हिन्दू, विशेषतः वैष्णव, संतों की जीवनियाँ हैं। उसकी रचना छंदों में अत्यन्त कठिन हिन्दुई में हुई है। शाहजहाँ के राजत्व काल में नरायण दास ने उसका शोधन और परिवर्द्धन किया, और १७१३ में कृष्ण-दास ने टीका की। उसका एक अन्य सम्पादन प्रियादास द्वारा हुआ है।[2] उसका रूपान्तर साधारण हिन्दुस्तानी में भी हुआ है। श्री डब्ल्यू० प्राइस ने अपने 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सलेक्शान्स' (हिन्दी और हिन्दुस्तानी संग्रह) में जितने मूल से उतने ही टीका से रोचक उद्धरण दिए हैं। यह ग्रन्थ स्वर्गीय श्री विल्सन को हिन्दू सम्प्रदायों पर अपने विद्वत्ता और महत्त्वपूर्ण कृति के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ। इस विद्वान् भारतीय विद्याविशारद के पास प्राचीन और आधुनिक संपादन की कई प्रतियाँ थीं।

ऐसा प्रतीत होता है कि 'भक्तमाल' का पूर्ण अनुवाद बँगला में हुआ है, जैसा कि मैं देखता हूँ कि रेवरेंड जे० लौंग[3] द्वारा उल्लिखित इस अनुवाद के दो भाग हैं, जिनमें से पहला ३९२ पृष्ठों का और दूसरा १२४ पृष्ठों का है, जो कुल मिलाकर ५१६ पृष्ठ होते हैं। अन्य भक्तों के अतिरिक्त इस ग्रन्थ में प्रह्लाद और हरि-दास की जीवनियाँ भी हैं। दूसरे की प्रियादास द्वारा किए गए सम्पादन में पाई जाती है, किन्तु डब्ल्यू० प्राइस द्वारा दिए गए कृष्णदास वाले उद्धरणों में वह नहीं है।

---

[1] अग्रदास पर लेख देखिए।

[2] इन पर लेख देखिए।

[3] 'डिस्क्रिप्टिव कैटैलौग ऑव बँगाली वर्क्स', पृ० १०२

एक अनुवाद फ़ारसी, या, मेरे विचार से, कहना चाहिए उर्दू में भी है, जो १८५३ में मेरठ से छपा है, और जितने हिन्दी में उतने ही उर्दू में उसके अनेक संस्करण हैं।

नाम देउ[1]

एक प्रसिद्ध हिन्दू रचयिता हैं,[2] जो, रेवरेंड जे० स्टीवेन्सन[3] के अनुसार, प्राकृत[4] के रचयिताओं से भी अधिक प्राचीन हैं, जिनके नाम से बाद के लोग परिचित रहे हैं। कहा जाता है कि वे, शक-संवत् १२०० (१२७८ ई०) में उत्पन्न, ग्वालियर में पाए गए बालक थे। उन्हें एक दर्ज़ी ने उठा लिया था जिसका उन्होंने व्यापार ग्रहण किया, तथा वे छीपी भी थे। किन्तु 'कवि चरित्र' के लेखक का कहना है कि उनके पिता का नाम ज्ञान देव था। वे पंडलिका (Pandalika) के, जिन्होंने सर्वदर्शन संग्रहकारी संप्रदाय की स्थापना की थी, सर्वप्रथम शिष्यों में से थे। उन्होंने बहुत बड़ी संख्या में छंदों की रचना की जिनमें 'अभंग'[5] या धार्मिक और नैतिक भजन भी हैं, जिनमें से कुछ स्वर्गीय दोशोआ (Ch.-d'Ochoa) द्वारा भारत से एक हस्तलिखित पोथी में बताए गए हैं; तथा उनका 'हरिपाठ' शीर्षक एक ग्रन्थ है।

---

१ अथवा 'नाम देव'

२ 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि०, १७, पृ० २३८

३ 'जर्नल ऑव दि बॉम्बे ब्रांच ऑव दि रॉयल एशियाटिक सोसायटी', पहली जिल्द, पृ० ३

४ इस शब्द से, स्टीवेन्सन 'मरहठी' का अर्थ समझते हैं, और वास्तव में उन्होंने नाम देव का मरहठा लेखकों में ही उल्लेख किया है। किन्तु नाम देव ने वस्तुतः हिन्दुई में लिखा प्रतीत होता है, कम-से-कम कुछ कविताएँ। किन्तु अन्य के अतिरिक्त, भारतीय बोलियों (dialects) में मरहठी और गुजराती ऐसी दो बोलियाँ हैं जो हिन्दी के अत्यधिक निकट हैं।

५ इस काव्य पर देखिए 'भूमिका', पहली जिल्द, पृ० १०

नाम के यहाँ ज़ाना बाई [१] नाम की एक स्त्री दासी थी, जो स्वयं रचयिता थी और जिसने परम्परा से प्रसिद्ध 'अभंगों' की भी रचना की। वे शक-संवत् १२५० (१३२८ ई०) में मृत्यु को प्राप्त हुए।

उनके सम्बन्ध में 'भक्तमाल' में इस प्रकार उल्लेख है :

छप्पय

नामदेव प्रतिज्ञा निर्वही ज्यों त्रेता नरहरिदास[२] की।
बालदशा बीठल्य[3] पान जाके पय पीयो।
मृतक गऊ जिवाइ परचो असुरनि को दीयो।
सेज सलिल तें काढ़ि पहले जैसी ही होती।
देवल उलटो देखि सकुचि रहे सब ही सोती।
पंडुरनाथ[४] कृति अनुग त्यों छानि सुकर छाई दास की।
नामदेव प्रतिज्ञा निर्वही ज्यों त्रेता नरहरिदास की॥

टीका

नाभा जू ने नाम देव की तुलना प्रह्लाद (नर-हरि-दास) से की है, क्योंकि जिन सब स्थानों में विष्णु ने प्रह्लाद को दर्शन दिए, उन्हीं स्थानों में उन्होंने नाम देव को दर्शन दिए।

---

१ अथवा उचित रूप में 'जाना बाई'। जहाँ हिंदू फ़ारसी 'ज़' को 'ज' कहते हैं, वहाँ कभी-कभी मुसलमान भारतीय 'ज' को 'ज़' कहते हैं। इससे भारत में 'ज' और 'ज़' में निरंतर गड़बड़ होती रहती है। देखिए, पृ० ८३, जानी बेगम पर लेख।

२ वैष्णवों में प्रसिद्ध व्यक्ति प्रह्लाद का दूसरा नाम। देखिए, श्री विल्सन का 'विष्णु पुराण', १२४ तथा बाद के पृष्ठ।

3 इस मूर्ति के संबंध में आगे प्रश्न उठेगा।

४ इस शब्द का अर्थ है 'स्वामी', अर्थात् पण्डुर या पण्ढरपुर के देवता। यह नगर बीजापुर या बीज़ापुर प्रान्त में है, जो अंगरेज़ी के नकशों में, Punderpûr लिखा जाता है; देशान्तर ७५°२४; अक्षांश १७°४०, ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ के देवता विष्णु के अतिरिक्त और कोई नहीं हैं।

बाम देव[1] (नाम देव के मातामह) पण्डुरपुर में छीपी थे। अपनी पुत्री के अत्यन्त युवावस्था में विधवा जाने पर बाम देव ने विचार किया : जब तक प्रेम है तब तक अन्य कोई भाव मेरी पुत्री पर अधिकार नहीं जमा सकता। इस समय से जिसके साथ उसका चित्त लग जायगा उसी के साथ लगा रहेगा : यह एक निश्चित बात है। तब बाम देव ने उससे कहा : 'मेरी पुत्री, विष्णुदेव की सेवा में चित्त दो; यदि तेरा ऐसा मनोरथ हो तो मैं सब रस्म पूर्ण कर दूँगा'। उसने इस ओर अपनी इच्छा प्रकट की। तब उन्होंने उसके कान छेदे और उसके हाथ में गुड़ रखा। बड़े उत्साह के साथ उसने देवता की सेवा में मन लगाया। कुछ समय पश्चात् उसे काम-वासना का अनुभव हुआ; उसने अपने इष्टदेव के प्रति आत्म-समर्पण किया और गर्भवती हुई। पड़ोसियों के काना-फूसी करने पर उनकी बात बाम देव के कानों तक पहुँची। सोच-विचार करने के बाद उन्होंने इस सम्बन्ध में अपनी पुत्री से पूछा। उसने उत्तर दिया : 'जिसके लिए आपने मुझे दीक्षा दी थी उसने मेरी इच्छा पूर्ण की : आप मुझसे क्या पूछते हैं ?' तब बाम देव सन्तुष्ट हुए, और फिर किसी ने उसे न चिढ़ाया। कुछ समय पश्चात् एक बच्चे का जन्म हुआ। इस अवसर पर खूब खर्च किया गया और उसका नाम नाम देव रखा गया। वह दिन-दिन बड़ा हुआ। अपनी उम्र के बच्चों के साथ खेलने जाने पर, वे सब पूजा और भक्ति का अनुकरण करते। नाम देव ने अपने नाना से अनेक बार सेवा-विधि पूछी। एक बार जब बाम देव पड़ोस के गाँव जाने लगे तो उन्होंने नाम देव से कहा : 'मुझे गाँव में तीन दिन का काम है, तुम सेवा करो। रात को मूर्ति[2] को दूध पिला दिया करना।'

---

[1] बाम देव का उन मुनियों की सूची में नाम आता है जो ऋषि शृंगी द्वारा शापित होने के समय राजा परीक्षित के पास आते थे।

[2] यह मूर्ति वही है जो ऊपर 'बिट्ठल' या 'पण्डुरनाथ' के नाम से कही गई है। यह कृष्ण, भागवत या विष्णु के अतिरिक्त और कोई दूसरी चीज नहीं है।

इस प्रकार जब ग्राम देव गाँव चले गए तो नाम देव ने दिन में सेवा की, और रात को एक कटोरे में मिश्री मिला दूध लेकर मूर्ति को भोग के लिये अर्पित किया; किन्तु मूर्ति ने दूध न पिया। दूसरे दिन भी यही हुआ। तीसरे दिन उन्होंने कटोरा रखा, किन्तु पहले दिनों की भाँति मूर्ति ने दूध न पिया। नाम देव ने अपनी छुरी निकाली, और गला काटने ही वाले थे, कि विष्णु (भगवत) ने जो भक्तों के सहारे हैं, हाथ[1] पकड़ लिया, और उससे दूध पी लिया।

तीन दिन व्यतीत हो जाने पर ग्राम देव लौटे, और नाम देव से पूछा कि तुमने किस प्रकार सेवा की। नाम देव ने उत्तर दिया : 'नाना जी, जाते समय क्या आप मूर्ति से नहीं कह गए थे कि मेरा धेवता तुम्हारे लिये दूध लायेगा, साथ ही क्या वह मुझे नहीं जानती, और क्या वह इतनी हठी है कि मेरे द्वारा अर्पित दूध नहीं पीती।' नाम देव ने अंत में तीसरे दिन जो हुआ उसका वर्णन किया, जब कि पहले दिनों की भाँति ही उन्होंने मूर्ति के पीने के लिए दूध अर्पित किया था।

राजा ने जब यह बात सुनी, उसने नाम देव को बुला भेजा[2] और कहा : 'मुझे करामात दिखाओ'। नाम देव ने उत्तर दिया : 'यदि मुझ में करामात दिखाने की शक्ति होती, तो क्या मैं यहाँ बुलवाया जाता ?' राजा ने क्रुद्ध होकर कहा : 'इस मरी गाय को जीवित किए बिना तुम घर वापिस नहीं जा सकते।'

तब संत ने यह पद कहा :

राग-पद

हे दुनिया के मालिक, मेरी विनती सुनो; मैं तुम्हारा दास हूँ; हे कृष्ण, जो इच्छा मैं तुम्हारे सामने प्रकट कर रहा हूँ उसे सुनो।— गरीब निवाज, क्यों नहीं इस बिचारी गाय को फिर से जीवित कर देते,

---

१ अर्थात् मेरे विचार से मूर्ति के हाथ से जो उनकी ओर बढ़ा।

२ यह निस्संदेह आदिलशाही वंश, जिसने १४८९ से १६८९ तक राज्य किया, का बीजापुर का कोई मुसलमान राजा प्रतीत होता है।

जो अभी थोड़ी देर पहले तक रँभा रही थी, और जिसके सब अंग अच्छे थे ?—इससे मेरा गौरव बढ़ाओ—यदि तुम कहो कि इसके भाग्य में जीवन का सुख नहीं लिखा, तो ठीक है, इसके जीवन में मेरे जीवन का शेष भाग जोड़ दो।

गाय उठी और अपने पैरों पर खड़ी हो गई। राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उनसे कहा : 'यदि आप गाँव और भूमि चाहते हों तो आप उन्हें ले सकते हैं, नाम देव ने यह अस्वीकार कर दिया, किन्तु एक छोटी रत्नजटित सेज स्वीकार की। लेकिन उन्होंने उसे भीमड़ा[1] (Bhimra) नदी में फेंक दिया। यह जान कर राजा ने फिर नाम देव को बुला भेजा और कहा : 'मेरी सेज मुझे दो।' तब संत ने अनेक प्रकार की सेजें नदी से निकालीं और उन्हें किनारे पर डालते हुए कहा : 'इनमें से अपनी पहिचान कर ले लो।' जब राजा ने यह देखा, तो संत के चरणों पर गिर पड़ा और कहा : 'मुझसे कोई चीज़ माँगिए।' नाम देव ने उत्तर दिया : 'मैं जो तुमसे माँगता हूँ वह यह है कि मुझे फिर अपने पास मत बुलाना, और साधुओं को कभी दुःख मत देना।'

पंडुरनाथ के मन्दिर में पद गाना उनका नित्य का क्रम था। एक दिन जब उन्हें देर हो गई, तो उन्होंने अपने जूते उतारे, और इस भय से कि भीड़ में कोई उन्हें चुरा न ले, उन्हें अपनी कमर से बाँध लिया। वहाँ से 'ताल'[2] निकालते समय, उनके जूते गिर पड़े। तब मन्दिर में काम करने वालों ने नाराज़ होकर उनके सिर पर पाँच-सात चोटें कीं जिस पर उलझे हुए बालों की जटाएँ थीं, और जिन्हें पकड़ कर उन्हें धक्का देकर बाहर निकाल दिया। नाम देव के मन में ज़रा भी क्रोध उत्पन्न न हुआ; किन्तु मन्दिर के पीछे चले गए, जहाँ

---

१ मेरे विचार से, यह वहा है जिसे सामान्यत: 'भीम' कहते हैं।

२ एक प्रकार की करताल जिसे लकड़ी के बने डंडे से बजाया जाता है। देवता के आदर में बजाने के लिए नाम देव उसे ले गए थे।

बैठ कर वे अपना पद गाने लगे। गा लेने के बाद, उन्होंने कहा : 'हे स्वामी, यह दण्ड शायद ठीक ही है; किन्तु तो भी आज से इसी स्थान पर बैठ कर मैं अपने पद गाऊँगा। तुम सुनो या न सुनो, अब मैं तुम्हारे मन्दिर में न जाऊँगा।'

राग-पद

हीन हो जाति मेरी यादव राइ ॥ कलि में नामा इहां काहे को पठायो। ताल पखावज बाजै पातुरि नाचै हमरी भक्ति वीठल काहे को राचै ॥ पंडव प्रभु जू बचन सुनी जै। नामदेव स्वामी दरशन दीजै ॥[1]

जब वे यह पद गा चुके, तो मन्दिर के दरवाज़े ने स्थान बदल दिया और वह जो थोड़ी देर पहले पूर्व की ओर था पश्चिम की ओर हो गया; और पंडुरनाथ ने उन्हें हाथ पकड़ कर अपने पास बिठा लिया। मन्दिर के कर्मचारियों को जब यह ज्ञात हुआ तो वे घबड़ाए; और नाम देव के पैरों पर गिर क्षमा-याचना की।

एक धनाढ्य व्यापारी ने अपने तुला-दान की हर एक चीज़ का बड़ा भारी दान प्रारम्भ किया। एक दिन उसने नाम देव को बुलाकर कहा : 'आप की जो इच्छा हो सो लीजिए'। संत ने यह देख कर कि इस व्यक्ति को गर्व हो गया है उसका गर्व-खण्डन करने की बात सोची। उन्होंने एक तुलसी-पत्र लेकर उस पर राम-नाम लिखा और उसे व्यापारी को देते हुए कहा : 'इस पत्र की बराबर जो कुछ हो मुझे दो।' व्यापारी ने आश्चर्यचकित होकर कहा : 'यह क्या, आप परिहास करते हैं ? कोई चीज़ लीजिए।' नाम देव ने अनुरोध करते हुए कहा—'नहीं, मुझे इस पत्ती के बराबर ही दीजिए'। तब उसने पत्ती तुला में रखी; किन्तु दूसरी ओर अपने घर, अपने परिवार और अपने पड़ौसियों का सब सामान रख देने पर भी, पत्ती वाला पलड़ा ऊपर ही न उठा। व्यापारी को बड़ा आश्चर्य हुआ, और उसके सब

[1] यह पद 'भक्तमाल सटीक', मुंशी नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, १८८३ ई०, प्रथम संस्करण, से लिया गया है।—अनु०

सेवकों ने उससे कहा : 'आप नहीं जानते आपने किससे झगड़ा मोल लिया है? यह व्यक्ति जिसने आप को पराजित किया है वह अवश्य नाम देव है।'

अन्त में व्यापारी जो कुछ देना चाहता था सब तराज़ू में रख दिया, किन्तु पलड़ा न उठा। तब उसने पराजय स्वीकार की। सफलता पूर्वक उसका गर्व-खण्डन कर लेने पर नाम देव ने उसे अपना धन ले जाने दिया और स्वयं वहाँ से बिदा हो गए।

एक दिन कृष्ण ने एक वृद्ध ब्राह्मण का रूप धारण किया, और कृष्ण-पक्ष की एकादशी के दिन[1] नाम देव को परीक्षा लेने गए। उन्होंने सन्त से खाना माँगा, तो उन्होंने (सन्त ने) कहा : 'आज तो एकादशी है, आप यहाँ विश्राम कीजिए, कल प्रातः आप बहुत-सा लीजिए।' उनमें दो-चार याम प्रश्नोत्तर हुए। गाँव के लोगों ने दोनों में सुलह कराने की चेष्टा की, किन्तु उन्होंने उनकी बातों पर ध्यान न दिया। जब दोनों झगड़ते-झगड़ते थक गए, तब ब्राह्मण ने चारपाई मँगाई और सन्त के दरवाज़े के आगे लेट रहे। प्रातः नाम देव उन्हें देखने गए तो उनका मुँह खुला हुआ, और उन्हें मरा हुआ पाया। बहुते-से लोग लाश के चारों तरफ इकट्ठे हो गए, और नाम देव को भला-बुरा कहने और हत्या का दोषी ठहराने लगे। नाम देव ने किसी से कुछ न कहा, किन्तु ब्राह्मण को अपने कन्धों पर उठा कर नदी के किनारे ले गए, जहाँ उन्होंने एक चिता बना कर उस पर लाश रख दी और स्वयं भी उस पर चढ़कर बैठ गए। वहाँ से उन्होंने चिल्ला कर कहा : 'दुनिया ने सती[2] देखी है, किन्तु सता[3] किसी ने न देखा होगा; ठीक है, उसे लोग अब देख लें!' इतना कह उन्होंने अपनी

---

१ विष्णु को ख़ास तौर से समर्पित दिन, और जब कि नवयुवक अत्यन्त प्रसन्न होते हैं।

२ स्त्री जो अपने पति की लाश के साथ जल जाती है।

3 पुरुष जो अपनी स्त्री की लाश के साथ जल जाता है, बात जो कभी नहीं सुनी गई।

उँगली अपनी ठोड़ी पर रखली, और आग जलाने की आज्ञा दी। इसी बीच भगवान् ने उन्हें दर्शन दिए, तथा तमाम गाँव वाले वहाँ आए और नाम देव में उनका विश्वास बढ़ गया।

नायक बख़्शी[1]

शाहजहाँ द्वारा संकलित हिन्दी गीतों (कविताओं-अनु०) के संग्रह 'सहस्त्र रस' के संपादक (फ़ारसी में भूमिका सहित)। इस संग्रह की एक हस्तलिखित प्रति ऑक्सफ़र्ड यूनिवर्सिटी के किंग्स कॉलेज के पुस्तकालय में है।[2]

नारायण-दास[3]

हिन्दी लेखक जो शाहजहाँ के राजत्व काल में रहते थे। ये ही थे जिन्होंने संशोधनों और परिवर्द्धनों द्वारा नाभा जी की 'भक्तमाल' शीर्षक प्रसिद्ध रचना को, जिसका कुछ पहले उल्लेख किया जा चुका है और किया जायगा,[4] वास्तविक रूप दिया।[5]

निंब[6] राजा

एक ब्राह्मण हैं जिनका आविर्भाव १६०० शक संवत् (१६७८)

---

१ भा० फ़ा० 'वेतन देने वाला अफ़सर'

२ ई० एच० पामर (E. H. Palmer) कृत इस पुस्तकालय के प्राच्य हस्तलिखित ग्रंथों का सूचीपत्र देखिए। 'जर्नल ऑव रॉयल एशियाटिक सोसायटी', जि० ३, भाग १, नई सीरीज़।

३ नारायन दास-नारायण (विष्णु) का दास

४ नाभाजी, प्रियादास आदि पर लेखों में।

५ 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६, पृ० ८

६ भा० Linnée के melia azadirachta (azâd-dirakht-आज़ाद दरख़्त) का नाम

में हुआ और जिन्होंने ईश्वर की प्रशंसा में कविताएँ लिखी हैं।[1] उनका उल्लेख 'कवि-चरित्र' में हुआ है।

निवृत्ति[2] नाथ

ज्ञानी (Gaini) नाथ के शिष्य, जनार्दन रामचन्द्र जी द्वारा अपने 'कवि चरित्र' शीर्षक तज़किरा में उल्लिखित हिन्दी के ग्रंथकार हैं, और जिनके कई ग्रंथ हैं। वे शक-संवत् १२२० (१२९८) में मृत्यु को प्राप्त हुए।

निश्चल-दास[3]

वेदान्त-दर्शन पर, 'विच्यार सागर'—विचारों का समुद्र—के रचयिता हैं; बंबई, १८६८, २३६ चौपेजी पृष्ठ।

नीलकण्ठ शास्त्री गोरे[4] (पंडित Nehemiah)

बनारस के, जिन्होंने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया है, जैसा कि उनका ईसाई नाम प्रकट करता है, रचयिता हैं :

१ 'षड् दर्शन दर्पण'—छः दर्शनों का दर्पण—शीर्षक के अंतर्गत, १८६० में कलकत्ते से मुद्रित, दो जिल्दों में एक महत्त्वपूर्ण हिंदी रचना के, I! अठपेजी १५२ और १७६ पृ० अर्थात् भारतीय षट् दर्शन की परीक्षा, जिसका प्रसिद्ध भारतीयविद्याविशारद फ़िट्ज़ एडवर्ड हॉल (Fitz Edward Hall) ने 'A Rational Refutaion

---

१ 'ईश्वर', जिससे साधारणतः शिव का अर्थ समझा जाता है।

२ भा० 'विश्राम'

३ भा० 'न हटने वाली (पृथ्वी, दैवीकृत) का दास'

४ 'नीलकण्ठ'—नीली गर्दन—महादेव या शिव का, उनसे संबंधित एक कथा के आधार पर, एक नाम है; 'शास्त्री' या 'शास्त्री' का अर्थ है शास्त्रों के आदेशों में विश्वासी, अर्थात् 'कट्टर, और 'गोरे,' श्री फ़िट्ज़ एडवर्ड हॉल ने मुझे बताया है कि यह व्यक्ति के कुटुंब का नाम है।

of the Hindu Philosophical Systems'[1] शीर्षक से मूल-पाठ की व्याख्या करने वाले नोट्स सहित अनुवाद किया है या कहना चाहिए कि उसे संशोधनों सहित और उसमें से कुछ अंश निकाल कर उसे ज्यों का त्यों रख दिया है। यह ग्रंथ, जो मूल रचयिता और अनुवादक तथा टीकाकार दोनों को ख्याति दिलाने वाला है, २८४ अठपेजी पृष्ठों में है ;कलकत्ता, १८६२।[2]

२ इसी लेखक की 'वेदान्त मत विचार और खिष्ट मत का सार' शीर्षक दूसरी रचना है; मिर्ज़ापुर, १८५४, ५९ अठपेजी पृष्ठ।

नौनिध राय[3]

हिन्दी के एक धार्मिक ग्रंथ के रचयिता हैं जिसका शीर्षक है 'कथा सत नारायण'—सत नारायण (विष्णु) की कथा—अर्थात् मेरे विचार से, शरीर रूप में सच्चे ईश्वर की (हमारे प्रभु ईसा मसीह), १८६४ में मेरठ से प्रकाशित।

पठान सुलतान[4]

बाबू हरि चन्द्र द्वारा 'कबि बचन सुधा' के ८ वें अंक में उल्लि-

---

१ गलती से मुझे इस रचना में और बंगला में लिखित एक दूसरी रचना में भ्रम हो गया है, पहला जिल्द, पृ० २३३, जहाँ से पहला पैराग्राफ़ निकाल देना चाहिए।

२ श्री बा० सैं-हिलेअर (B. Saint- Hilaire) ने इस रचना पर Journal des Savants (ज़र्नां दे सावाँ), मार्च, १८६४ के अंक, में एक लेख लिखा है।

३ भा० इस शब्द का ठीक-ठीक उच्चारण है 'नौनिध', और अर्थ है 'कुबेर के नौ कोष'।

४ भा० अ० 'पठान' 'अफ़ग़ान' का समानार्थवाची शब्द है। 'सुल्तान' यहाँ बिना किसी विशेष अर्थ के साधारण आदरसूचक शब्द है, जैसा कि कुछ दिन पहले पेरिस आए हुए एक भारतीय के उदाहरण में पाया जाता है जिसका नाम नवाब सुलतान अली खाँ था।

खित, बिहारी लाल की 'सतसई' पर रचित एक 'कुंडलिया'[1] के रचयिता हैं।

पदम-भागवत[2]

भारतीय संगीत पर हिन्दी पुस्तक 'रुक्मिणी मंगल' (प्रसन्नता), अर्थात् रुक्मिणी का विवाह, के रचयिता हैं; दिल्ली , १८६७।

पद्माकर देव[3] (कवि)

ग्वालियर के, लोकप्रिय गीतों (कविताओं—अनु०) के रचयिता हिन्दू कवि हैं, जिन्होंने १८१० से १८२० तक लिखा और जिनका एक कवित्त करीम ने उद्धृत किया है। अन्य रचनाओं के अतिरिक्त उनकी ये रचनाएं हैं :

१. 'जगत बिनोद' या 'जगत विनोद'—वाणी का आनन्द, बाबू अविनाशी लाल और मुन्शी हरिवंश लाल के धन से १८६५ में बनारस से मुद्रित हिन्दी-काव्य, २०-२० पंक्तियों के १२६ अठपेजी पृष्ठ ;

२. 'गंगा लहरी'—गंगा की लहरें, सदा सुख लाल कृत 'गंगा की लहर' शीर्षक रचना की भाँति ; बनारस , १८६५, २०-२० पंक्तियों ३६ अठपेजी पृष्ठ ;

३. 'गद्याभरण'—गद्य का रत्न, अर्थात् अलंकारों की व्याख्या ; बनारस, १८६६, ४४ अठपेजी पृष्ठ ;

४ 'पद्माभरण'—पद्यों के रत्न, गोकुल चन्द द्वारा प्रकाशित और उनसे सम्बन्धित लेख में उल्लिखित।[4]

---

[1] इस प्रकार का कविता के संबंध में, दे०, भूमिका, पृ० १२

[2] भा० 'कमलों का देवता' (विष्णु)

[3] भा० 'कमल के तालाब का देवता'

[4] पहली जि० का पृ० ४६८, जहाँ मैंने इस शीर्षक का अनुवाद कुछ भिन्न किया मालूम होता है।

परमानन्द या परमानन्द-दास[1] (स्वामी)

रचयिता हैं :

१. लोकप्रिय धार्मिक गीतों (कविताओं—अनु०) के जो 'आदि-ग्रन्थ' (चौथा भाग) में सम्मिलित हैं, और जो निम्नलिखित रचनाओं की भाँति हिन्दी में हैं :

२. 'दधि लीला'—दही लीला, कृष्ण द्वारा मथुरा की गोपियों के साथ; आगरा, १८६४, ३२ छोटे अठपेजी पृष्ठ, और बनारस, १८६६ १० १२- पेजी पृष्ठ;

३. 'नाग लीला'—सर्प लीला, अर्थात् कृष्ण का वंशी-सहित शेषनाग पर खेलना ; बनारस , ८ बारह-पेजी पृष्ठ;

४. 'दान लीला'—(संतोष) देने की लीला, कृष्ण की अन्य क्रीड़ाएँ आगरा, १८६४, १६ बारह-पेजी पृष्ठ; और फ़तेहगढ़, १८६७, केवल आठ पृष्ठ ।

परमाल[2]

शंकर[3] के पुत्र परमाल 'श्रीपाल चरित्र' शीर्षक एक जैन ग्रंथ के रचयिता हैं । श्री विल्सन के पास हिन्दी पुस्तकों के अपने बहुसंख्यक संग्रह में इस रचना की एक प्रति है । वह इसी शीर्षक की एक दूसरी जैन रचना से नितांत भिन्न है ।

परशु-राम[4]

'उषा (या उखा) चरित्र'[5] शीर्षक हिन्दुई काव्य के रचयिता

---

[1] भा० 'ईश्वर (परम आनन्द) का दास'

[2] भा० मेरे विचार से यह शब्द वही है जो विशेषण 'परमल', या ठीक-ठीक 'परिमल'-मीठा गंध-है ।

[3] मैं नहीं जानता कि ये वही व्यक्ति हैं जो शंकर आचार्य के नाम से पुकारे जाते हैं ।

[4] भा० विष्णु के एक अवतार का नाम

[5] इस काव्य से एक उद्धरण मेरे निरीक्षण में श्री लाँसरो (Lancereau) द्वारा प्रकाशित हिन्दी और हिन्दुई संग्रह (Chrestomathie) में है ।

हैं, जिसका संबंध उषा और अनिरुद्ध के साथ उसके प्रेम की कथा से है। इस कथा का 'प्रेम सागर' में, कई अध्यायों में, विस्तृत वर्णन है।[1] मैं नहीं जानता यदि यह वही रचना है जो मुद्रित हो चुकी है और जो देशी स्कूलों में पढ़ाई जाती है।[2]

पालि[3] राम

ने 'बरन चन्द्रिका' – वर्णन के चन्द्रमा की ज्योति, शीर्षक के अंतर्गत 'नैरंग-इ नज़र' का उर्दू से हिन्दी में अनुवाद किया है; यह एक प्रकार का चित्रों सहित छोटा-सा विश्व-कोष है, जो लड़कियों के स्कूलों के लाभार्थ है, और जिसके प्रथम अंक १८६४ और १८६५ में, लगभग ३० छोटे अठपेजी पृष्ठों में, मेरठ से प्रकाशित हुए हैं।

वे अमीर अहमद के उर्दू-पत्र 'नजमुल अख़बार'—समाचारों का सितारा—के हिन्दी-रूपान्तर, मेरठ के पाक्षिक पत्र, 'बिद्यादर्श' —ज्ञान का आदर्श, के संपादक हैं।

पीपा

एक फ़क़ीर, अथवा हिन्दू सन्त समझे जाने वाले एक जोगी थे, जिनकी हिन्दी कविताएँ 'आदि ग्रन्थ' में सम्मिलित हैं।[4] 'भक्तमाल' में उनका इस प्रकार उल्लेख है, जिसके अनुसार बारहवीं शताब्दी

---

१ ४२ तथा बाद के अध्याय

२ एच० एस० रीड (Reid), 'रिपोर्ट ऑन इनूडेजेनस एज्यूकेशन'; आगरा, १८५२, पृ० १३७

३ भा० 'रक्षक राम'

४ 'एशियाटिक रिसर्चेज़,' जि० १७, पृ० २८८

के लगभग मध्य में शासन करने वाले राजा शूरसेन के राजत्व-काल में ये प्रसिद्ध व्यक्ति जीवित थे।

छप्पय

पीपा प्रताप जग बासना नाहर को उपदेश दियो।
प्रथम भवानी भक्त मुक्ति मांगन को धायो।
सत्य कह्यो तिहि शक्ति सुदृढ़ हरि शरण बतायो॥
श्री रामानंद पद पाइ भये अति भक्ति की सींवा।
गुण असंख निरमोल संत धरि राखत ग्रीवा॥
परस प्रनाली सरस भई सकल विश्व मंगल कियो।
पीपा प्रताप जग बासना नाहर को उपदेश दियो॥

टीका

पीपा गांगरनगढ़ के राजा थे; एक रात, जब वे सो रहे थे, तो एक प्रेत[1] आया और उनकी चारपाई उलट दी। पीपा ने यह स्वप्न अशुभ समझा। वे उठे, और तुरन्त ही अपनी कुलदेवी का ध्यान किया। जब भवानी प्रकट हुई तो पीपा ने उनसे कहा: 'इस यंत्रणा पहुँचाने वाले प्रेत से मेरी रक्षा कीजिए'। भवानी ने उत्तर दिया: 'यह प्रेत विष्णु का भेजा हुआ है, मैं इसे नहीं भगा सकती।' राजा ने कहा 'यदि आप मुझे इस प्रेत से नहीं छुड़ा सकतीं तो यम[2] से कैसे छुड़ाएँगीं? और यदि आप स्वयं मेरा उद्धार नहीं कर सकतीं, तो वह मार्ग बताइए जिसका अनुसरण करने से मैं अपना उद्धार कर सकता हूँ।' देवी ने उनसे कहा: 'रामानन्द को गुरु बना कर हरि-भजन करो'।

दोहा

राम के अतिरिक्त अन्य किसी की भक्ति करना बाँस के बन के

---

१ फिर आने वाला, आत्मा, बुरी आत्मा

२ भारतीय Pluton

समान है जिसका जल जाना निश्चत है—यह कटे हुए तृणों पर लेप करने या बालू पर दीवार के समान है।

सुबह होते ही, पीपा बिना किसी से सलाह किए, बनारस के रास्ते पर चल पड़े, और शीघ्र ही रामानंद के द्वार पर पहुँच गए। द्वार रक्षक स्वामी को उनके आने की सूचना देने के लिए घर के अन्दर गया। तिस पर स्वामी ने चिल्ला कर कहा: 'मेरा राजा से क्या मतलब ? क्या वह जो मेरे पास है उसे लूटने आया है ?' ये शब्द सुनते ही, राजा ने वास्तव में अपना महल नष्ट करने की आज्ञा दे दी। तब रामानंद ने राजा को संबोधित करते हुए कहा, 'क्या तुम कुँए में गिर सकते हो !' पीपा ने उसी क्षण कुँए में गिरना अपना कर्त्तव्य समझा। जो लोग वहाँ उपस्थित थे उन्होंने हाथ पकड़ कर निकाला; तब रामानंद ने पीपा को अपने पास बुलाकर उन्हें एक मंत्र दिया, और यह कहते हुए उन्हें उनके देश वापिस भेज दिया : 'साधुओं के साथ जैसा व्यवहार करना चाहिए वैसा ही यदि वैष्णवों के साथ किया गया सुनूँगा, तो मैं तुम्हारे यहाँ आऊँगा।'

पीपा तब अपने देश लौट आए, और इतने उत्साह के साथ साधुओं की सेवा में तत्पर हो गए, कि जो साधु रामानन्द के पास आते थे, वे ही पीपा की महिमा का वर्णन करते थे। उनकी ख्याति देश-देश में फैल गई। जब कुछ वर्ष और दिवस व्यतीत हो गए, तो पीपा ने रामानन्द को अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करने के लिए लिखा। पत्र पढ़कर, स्वामी ने चार शिष्य, जैसे, कबीर, आदि, अपने साथ लिए, और उधर चल दिए। पीपा ने जब यह समाचार पाया, तो उनसे भेंट करने आए। वे उनके चरणों पर गिर गए, और साष्टांग दण्डवत किया। उन्होंने संत के साथियों के साथ भी अत्यन्त नम्रतापूर्ण व्यवहार किया। वे रामानन्द और उनके साथियों को महल में ले गए। उन्होंने गुरु और उनके साथियों की सब प्रकार से आवभगत की;

उन्होंने उनका बड़े उत्साह के साथ स्वागत किया ; और फल तथा पक्वान्न उनकी भेंट किए ।

जब रामानन्द द्वारिका चलने लगे तो पीपा ने उनका अनुगमन किया । स्वामी ने उनसे ऐसा करने से मना किया; किन्तु पीपा ने ध्यान न दिया । उनके साथ बारह स्त्रियाँ भी थीं, जो उनके साथ जाना चाहती थीं । रामानन्द ने उन्हें भय दिखाया, और ग्यारह ने तो वास्तव में अपना विचार बदल दिया । किन्तु बारहवीं ने, जिसका नाम सीता था, और जो बहुत कम उम्र की थी, स्वामी के आदेशों का पालन किया ।

पीपा के पुरोहित ने रामानन्द को जिन्होंने राजा को, जिसका वह भण्डारी था , बैरागी बना लिया था, घृणित वध[1] का अपराधी सिद्ध करने के लिए विष खा लिया । किन्तु पीपा ने वह जल जिससे उन्होंने रामानन्द के चरण धोए थे पिला कर उसे फिर जीवित कर दिया ।

पीपा ने यह सुन रखा था कि द्वारिका में जिस महल में कृष्ण प्रकट होते हैं वह समुद्र में है; उसके सम्बन्ध में निश्चित करने के लिये वे सीता-सहित समुद्र में कूद पड़े । ऐसा करते देख, कृष्ण ने उन्हें दर्शन दिए, और उन्हें हृदय से लगा लिया । पीपा ने वहाँ सात दिन व्यतीत किए, तत्पश्चात् भगवान् ने उनसे कहा : 'हरि के भक्तों को जल-मग्न रखना मेरे लिये अनुचित है, इसलिए तुम इसी क्षण चले जाओ' । तब पीपा उदास हुए; किन्तु अपने देवता की आज्ञा भी न टाल सकते थे, वे वापिस चले आए । चलते समय, कृष्ण ने एक मुहर देते हुए उनसे कहा : 'तुम जिसके यह मुहर लगा दोगे, वह अपने पापों की यातना से रक्षित होगे ।' तत्पश्चात् पीपा समुद्र से बाहर निकले, और यह दृश्य देखकर समुद्र-तट पर जो लोग थे वे इकट्ठे हो

[1] शब्दशः, 'ब्राह्मण के इस वध का'

गए। पीपा की यह दिव्य-शक्ति देखकर, लोगों की भीड़ रात-दिन इकट्ठी रहने लगी। सीता ने उनसे कहा : 'यहाँ से चला जाना आवश्यक है, क्योंकि यदि यह भीड़ कुछ और दिन हम लोगों के पास इकट्ठी होती रही, तो भक्ति-साधना नष्ट हो जायगी, और हमारा तप धूल में मिल जायगा।'

यह सलाह सुनकर, पीपा अर्ध रात्रि के समय चुपचाप द्वारिका से चले गए। छठे मिलान में, पठानों ने सीता का सौन्दर्य देख उन्हें छीन लिया; किन्तु राम तुरंत धाए, और उन सब को मार कर सीता को पीपा के हवाले कर दिया। तब पीपा ने सीता से कहा : 'अब तुम घर वापिस जाओ, क्योंकि मार्ग में तुम बलाक्रांत होगी।' सीता ने कहा : 'हे पीपा, तुम तो बैरागी हो गए हो, किन्तु अब भी तुमने वह अवस्था ठीक-ठीक प्राप्त नहीं की है। जब मैं मार्ग में बलाक्रांत हुई, तब तुमने तो कोई साहस का कार्य नहीं किया; क्योंकि मेरे रक्षक ने मेरी रक्षा की।' पीपा ने उत्तर दिया: 'मैं तो इस बात की परीक्षा लेना चाहता था कि तुममें शक्ति है, या नहीं।'

वे आगे चले, और जंगल में उन्हें एक शेर मिला। पीपा ने उसे अपनी माला से स्पर्श किया और उसके कान में एक मंत्र पढ़, इस प्रकार उसे उपदेश दिया : 'न तो मनुष्यों पर और न गायों पर आक्रमण करो, किन्तु उदर-पूर्ति के लिए जो आवश्यक हो उसे खाकर अपना पोषण करो।' [1]

---

[1] प्रभु यीसू ख्रीष्ट के मिश्र जाने के सम्बन्ध में एक ऐसी ही कथा का वर्णन केसियस (Kessaeus) ने किया है। उनका कहना है: 'जोसेफ़ को रास्ते में एक बड़ा शेर मिला जो एक दुराहे पर खड़ा हो गया था, और क्योंकि वे उससे डर गए थे, यीसू ने शेर को सम्बोधित करते हुए कहा : जिस बैल के चीड़ने का तुम स्वप्न देख रहे हो, वह एक गरीब आदमी है; तुम एक ऐसी जगह जाओ, जहाँ तुम्हें एक ऊँट का मृत शरीर मिलेगा, उसे खाओ।' जो० ब्रूनेट (Brunet),

वे और आगे बढ़े, और एक गाँव में पहुँचे जहाँ शेषनाग पर सोए हुए विष्णु की एक मूर्ति थी। देवता के सामने पूजा के रूप में लोगों ने बाँस लगा रखे थे। उन्हीं के निकट बाँस के डंडों का एक ढेर था जो लोगों ने वहाँ लगा रखा था। पीपा ने उनमें से एक डंडा माँगा। जिसके वे थे उसने उन्हें देना न चाहा। तब सब डंडे हरे बाँस के रूप में परिणत हो गए। देखने वाले लोग पीपा के समीप आए, और उनके चरणों पर गिर गए। वहाँ स्थापित मूर्ति के दर्शन कर, पीपा और उनकी स्त्री चीधर (Chidhar) नामक एक विष्णु-भक्त के घर गए, जिसने उन्हें देख कर उनका आदरपूर्वक स्वागत किया, और उन्हें अपने घर ले गया। किन्तु उनकी भेंट कर सकने योग्य उसके पास कुछ न रह गया था। तब वैष्णव ने अपनी स्त्री से कहा : 'यह अत्यन्त सौभाग्य की बात है कि ऐसे साधु हमारे घर आए हैं; किन्तु हम उन्हें भोजन किस प्रकार कराएँ ?' उसकी स्त्री ने कहा : 'मैं अपने को घर में छिपा रखूँगी, तुम यह नया लहँगा[1], जो मैंने आज पहली बार पहना है, लेकर बनिए के यहाँ जाओ, और साधुओं के लिये सीधा ले आओ।' वैष्णव ने वैसा ही किया। जब खाना तैयार हो गया और उसने चीजें लाकर चार पत्तलों पर लगादीं, तो उसने उन्हें भोजन के लिए बुलाया, किन्तु अपने लिए साधुओं के बाद खाने की प्रतिज्ञा घोषित की। पीपा ने उससे कहा :'और मैं, मैंने उस स्वागत वाले घर में न खाने की प्रतिज्ञा कर ली है, जहाँ घर के लोग

Evang. apocryphes (इंजील की कथाएँ), पृ० १०३। 'History of the Nativity of Mary and the Childhood ot he Saviour', अध्याय १८, से ज्ञात होता है । मिश्र जाते समय ड्रेगन्स यीसू के प्रति भक्ति प्रकट करने आए, गीतकार (Psalmist) के कथन के समान, और यीसू ने उन्हें किसी व्यक्ति का अहित न करने का उपदेश दिया। वही, पृ० २०३।

[1] भारतीयों का आवश्यक वस्त्र, जिसके बिना वैष्णव की स्त्री बाहर ही नहीं आ सकती।

साथ नहीं खाते; इसलिए यदि तुम चाहते हो कि मैं खाऊँ, तो अपनी स्त्री को लाओ।' उसी समय उन्होंने सीता को उसे लेने भेजा। 'जाओ, और हमारी मेहमानी करने वाले की स्त्री को ले आओ।' सीता ने तमाम घर में उसे ढूँढ़ा, और अंत में उसे कमरे में नंगा पाया। उन्होंने उससे पूछा तुम नंगी क्यों हो। वैष्णव की स्त्री ने उत्तर दिया: 'ऐसी चौरासी लाख[1] स्त्रियाँ हैं जो नंगी हैं। यदि मैं भी हूँ तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है।' तब जिस कपड़े को सीता पहने हुए थीं उसे उन्होंने बीच से फाड़ डाला, और आधा उसे देकर उसे अपने साथ ले आईं।

एक दिन पीपा कहीं आमंत्रित थे, और सीता घर पर ही रहीं। संत की अनुपस्थिति में, कुछ साधु घर आए; किन्तु घर में कुछ नहीं था। इतने पर भी सीता उन्हें बिठाकर, बनिए के घर गईं, और उससे कहा: 'कुछ साधु मेरे घर आए हुए हैं, किन्तु मेरे पति घर पर नहीं हैं। मुझे कुछ सामान दे दो, लौटने पर वे तुम्हारे दाम चुका देंगे।' बनिए ने कहा: 'अच्छी बात है, तोल लो और जो तुम चाहो ले जाओ; किन्तु शाम को, रात तक के लिए, आ जाना।' सीता ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया; उन्हें जो सामान चाहिए था उसे वे ले आईं, और उसे साधुओं को तथा और उन को जो खाना चाहते थे भेंट किया। इसी बीच में पीपा आ गए, और वह सब देख कर आश्चर्यचकित हुए। शाम को अपने को ऊपर से कपड़ों से ढक कर जब सीता जाने को हुईं, तो वर्षा होने लगी और शीघ्र ही ज़मीन पानी से भर गई। पीपा ने सड़क का शेष भाग दिखाते हुए उनसे अपना वचन पूर्ण करने के लिए कहा। उत्साह प्रदान करने की दृष्टि से उन्होंने उन्हें कन्धों पर बिठा लिया, और बनिए के घर ले आए; वे अकेली अन्दर गईं और पीपा दरवाज़े से बाहर ही रह गए। जब बनिए ने उन्हें

---

[1] अर्थात् अस्सी लाख और चार लाख

आते देखा, तो उसने उनसे पूछा कि आप ऐसी कीचड़ में अपने पैर किस प्रकार सूखे रख सकीं। सीता ने उत्तर दिया कि मेरे पति अपने कन्धों पर लाए हैं। ये शब्द सुनते ही, बनिया घर से बाहर आया, और पीपा के चरणों पर गिर पड़ा; फिर अन्दर जाकर वह सीता के चरणों पर भी गिरा और कहा : 'माँ, अपने घर लौट जाओ। आप के साथ इस प्रकार का व्यवहार कर मैंने महान् अपराध किया है।'

एक दिन जब पीपा के घर में कुछ खाने को न था, वे बाज़ार गए; वहाँ उन्हें एक तेलिन मिली जिसने अपने से खरीदने के लिए उन्हें फुसलाने की कोशिश की। किन्तु उन्होंने उससे पहले राम-नाम लिवाना चाहा, ताकि जिस कार्य के लिए उसने प्रार्थना की थी, वह कार्य पूर्ण हो। तेलिन को क्रोध आ गया और उसने अत्यधिक झुँझलाहट प्रकट की। पीपा ने उससे कहा : 'अच्छी बात है, जब तेरा पति मरेगा, और तू सती होगी, तब तू चिल्लाएगी : हे राम !'—स्त्री ने कहा : 'तुम मुझे चिढ़ाते हो; तुम स्वयं, जो ऐसी बुरी बात कहते हो, मर जाओ।' पीपा इस उत्तर से बड़े दुःखी हुए, और यह सोचने लगे कि यह स्त्री अपनी ग़लती सुधार सकती है। उन्होंने अपने मन में कहा, 'यदि इसका पति मर जाय, तो यह राम का नाम लेगी, इस घटना का घटित होना ही ठीक होगा।' यह सोचने के बाद स्वामी उसके घर में गए, और तेलिन के मन में बेचैनी बढ़ने लगी। पीपा ने तुरन्त उसके पति की आत्मा बाहर कर दी, और अंतिम क्रियाओं के लिए द्वार स्वयं खुल गया। वास्तव में, पति को मरते देर न लगी। तब तेलिन ने राम की प्रार्थना की। उसके परिवार के सब लोग आँसू बहाने लगे। पुरुष और स्त्री, भाई और बहन, पिता और माता, सब इकट्ठे हुए, पति की लाश लाए, और अत्यन्त दुःख प्रकट करते हुए अंतिम कर्म करने लगे। तब स्त्री ने सती होने के निश्चय के साथ अग्नि की ओर देखा, और अपने वचन को दृढ़ करने का संतोष प्राप्त किया। विविध प्रकार के वाद्य यंत्रों की ध्वनि

के साथ वे चिता के पास पहुँचे, किन्तु इसी बीच में पीपा आ गए। सती चिल्लाई 'राम राम', उसकी जीभ एक क्षण के लिए भी न रुकी। पीपा ने हँसते हुए कहा : 'मेरी माँ, क्यों राम-नाम लेती हो, उस समय क्यों चुप हो गई थीं जब तुम जीवित थीं ? मृत्यु के समय यह विचार क्यों उठा ? तब तेलिन के मन में विश्वास से मिश्रित आदर का भाव उत्पन्न हुआ। उसने कहा, 'तुम्हारे शाप से मेरे पति की मृत्यु हुई है। मेरे भाई, अब मुझे क्या कहना चाहिए जिससे मेरा पति एक क्षण में जीवित हो जाय।' पीपा ने कहा विष्णु की प्रार्थना करो, तो तुम्हारे पति की लाश फिर जी उठेगी, और तुम स्वयं न मरोगी। इन शब्दों ने तेलिन को शान्ति प्रदान की; उसने प्रार्थना की और पीपा ने लाश ज़िंदा कर दी। वे पति और पत्नी को घर ले गए, और उन दोनों को दीक्षा दी ; तत्पश्चात् उन्होंने विष्णु के भक्त बुलाए, और इस अवसर पर उन्होंने बड़ा उत्सव मनाया।

'अब मुझे अपना अहंकार मिटाना चाहिए; किन्तु मैं जाऊँ कहाँ ?' इस प्रकार कहते हुए बिना यह जाने कि कहाँ जा रहे हैं वे अनिश्चित दिशा की ओर चल दिए। किन्तु घाट के मार्ग पर उन्हें एक विष्णु-भक्त मिला, जो उन्हें अपने घर ले गया। प्रत्येक दिन उनकी प्रीति बढ़ती ही गई। अंत में पीपा ने वहाँ से चल देना चाहा। यह जान कर वैष्णव बड़ा दुःखी हुआ। अपने हृदय को प्रेम से और आँखों को आँसुओं से भर उसने कहा: 'हे राम, संत मुझसे क्यों अलग होना चाहते हैं ?' सब साधुओं ने इकट्ठे होकर पूजा की और खाने के सामान से भरी एक गाड़ी पीपा को दी। उन्होंने उन्हें रुपयों से भरी एक थैली भी दी। भेंट रूप में उन्होंने बहुत से कपड़े दिए, किसी ने पहिनने के लिए, किसी ने ओढ़ने के लिए। तत्पश्चात् पीपा उस घर से चले , किन्तु डाकू आ पहुँचे, और उन्होंने घाट रोक लिया , उन्होंने गाड़ी ले ली और उसे लूट लिया। पीपा को पैदल चलना पड़ा। उन्होंने कहा : 'आज मेरी आत्मा को प्रसन्न करने वाली बात

हुई है।' किन्तु अपने पास रह गई थैली की ओर उनका ध्यान गया। जो घी और शकर उनके पास रह गई थी उसे भी लेकर डाकुओं के पीछे दौड़े। उन्होंने उनसे कहा: 'एक ग़लती हो गई है, तुमने सब-कुछ नहीं लिया; मेरी कमर में यह थैली थी।' इतना कह उन्होंने वे चीज़ें गाड़ी के सामने फेंक दीं। यह सुन कर डाकुओं को आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा: 'हे भगवान, ऐसा होते कभी नहीं देखा? तुम हो कौन। तुम कहाँ से आ रहे हो, और कहाँ जा रहे हो? फिर तुम्हारा नाम क्या है?' उन्होंने उनसे कहा: 'मैं पीपा, भगवान् का भक्त हूँ; मैं संतों के लिए अपना सिर कटाने के लिए प्रस्तुत हूँ। तुम्हें विश्वास हो गया कि जो कुछ मेरे पास था, वह सब तुमने ले लिया, किन्तु तुम धोखे में रहे; जो बचा हुआ मैं तुम्हें दे रहा हूँ उसे ख़राब मत समझो।'

ये वचन सुनते ही डाकू पीपा के चरणों पर गिर पड़े, और हाथ जोड़ उनसे क्षमा-याचना की। उन्होंने उन्हें गाड़ी और थैली लौटाते हुए कहा: 'अब हम आपकी कृपा चाहते हैं। हमें दीक्षा दीजिए, हमें भगवान् के भक्तों में शामिल कर लीजिए; हम यह भेंट आपको देते हैं।' पीपा ने कहा: 'अच्छी बात है, किन्तु आगे किसी को मत लूटना। यही उपदेश मैं तुम्हें देता हूँ।'

एक दिन पीपा ने एक महाजन से कुछ रुपया उधार माँगा। उनकी इच्छानुसार महाजन ने चार सौ टके उन्हें दिए। पीपा ने एक रसीद लिख दी और एक अच्छी गवाही करादी। महाजन ने उनसे कहा: 'यह धन आप जब दे सकते हों तभी दें, मुझे कोई परेशानी न होगी।' छः महीने बाद, महाजन ने उनसे रुपया माँगा; उसका पीपा से झगड़ा हो गया, और उनके पक्ष की बात बिल्कुल सुनने के लिए राज़ी न हुआ। तब पीपा ने उससे कहा: 'कब तुमने मुझे रुपया दिया, और कब मुझे मिला, मेरा गवाह कौन है?' इस झगड़े के बाद, पीपा ने उससे रसीद पंचों के सामने पेश करने के लिए कहा; किन्तु उसने अपने घर के नए-पुराने काग़ज़ व्यर्थ ही ढूँढ़े। तब सब लोगों ने

महाजन को झूठा बताया। उत्तर समझ में न आने के कारण, उसे सब के सामने क्रोध आ गया, किन्तु पीपा ने कहा: 'अच्छा ठीक है, मैंने यह रुपया लिया; किन्तु ईश्वर की दया से हरि-भक्तों के वह काम आया। तुम उसकी शान क्यों कम[1] करना चाहते हो? यदि तुम मुझे परेशान नहीं करोगे, तो जब मेरे पास रुपया होगा, मैं तुम्हें दे दूँगा।' तब उन्होंने एक नई रसीद लिख दी, और महाजन के हृदय को शान्ति मिली। वह दीक्षित हो कर, पीपा का शिष्य हो गया, भेंटों के ढेर लगा दिए।

पीपा ने मन में सोचा कि क्या वास्तव में मैंने घर-बार छोड़ दिया है। उन्होंने अपने मन में कहा: 'जब तक मैं लोगों के सामने रहूँगा, मैं भक्ति-कार्य न कर सकूँगा। दिन-रात भीड़ मुझे घेरे रहती है; मेरा मन उससे थक-सा गया है।' उन्होंने सीता से कहा: 'राम-भजन के लिए चिथड़े लो, और हमें किसी दूसरी जगह चलना चाहिए। परिस्थिति के अनुसार, हम शिक्षा लेंगे। जंगल में रहना हमारे लिए महल में रहने के बराबर होगा। कुछ समय तक हम वहाँ रहें।' सीता ने उत्तर दिया: 'जब आपने यह आज्ञा दी है तो आपकी आज्ञा का पालन होगा; मैं सदैव आपकी इच्छाओं का अनुसरण करती रहूँगी।' तब, अपनी आत्मा की प्रेरणा के अनुसार, वे इधर-उधर घूमने लगे।

तब वे जंगल के एक गाँव में रहने गए, जिसके आधे भाग में गाड़ीवान रहते थे। स्त्री-पुरुष उनका मज़ाक बनाने लगे। उन्होंने उनका (पीपा और सीता का) वहाँ रहना बुरा समझा, और वे उनके साथ बैठते-उठते नहीं थे। तब पीपा और सीता एक ख़ाली मकान में चले गए, और दोनों मिल कर राम-नाम लेने लगे। इसी बीच सौ संन्यासी पीपा के यहाँ आए। उन्होंने दया-व्यवहार की याचना

---

[1] शब्दशः, 'झूठा करना'

की। पीपा ने उनका स्वागत किया ; अपने से अतिरिक्त एक दूसरे मकान में उन्होंने उन्हें ठहरा दिया। उन्होंने यह मकान सीता से साफ़ कराया, और चूल्हा, चौका और बर्तन ठीक कराए। पेड़ की पत्तियाँ लेकर उन्होंने पत्तलें बनाईं, तत्पश्चात् विष्णु ने फ़कीरों के खाने के लिए आवश्यक वस्तुएँ दीं।

इसी समय एक हत्यारा उस स्थान पर आया, जिससे सब लोग भयभीत हो उठे। जिधर से भजनों का स्वर आ रहा था वह उधर गया, और पीपा के चरणों पर गिरते हुए कहा : 'मैं हत्यारा हूँ, मैंने एक गाय का वध किया है ; इसलिए मैंने सिर मुड़ाया है, गंगा स्नान किया है। जब आपने खाना पकाया है, तो क्या आपका भाई न खाएगा ? मेरे ऊपर दया कीजिए, मुझे अपनी शरण में लीजिए, आज से मैंने अपनी जाति छोड़ दी है[1] ? इस प्रकार कोई व्यक्ति आपसे कुछ न कह सकेगा। मेरी आत्मा विश्वास से पूर्ण है।'

तब गुरु ने डाकू की आत्मा का संशय दूर किया। उन्होंने खट्टे दूध में आटा, पिघला हुआ मक्खन और शकर मिलाई; दूध उन्होंने एक बरतन में भरा और हत्यारे को उसे खिलाया, तथा उसकी मंगलकामना की। संतोषी संन्यासियों, साथ ही सपरिवार गाँव के निवासियों ने भी उसे खाया। क्षण भर में सब फिर मिल बैठे।

पीपा ने एक हत्यारे का अपराध क्षमा किया ; और सबने राम का नाम लेकर मोक्ष प्राप्त किया। उसमें करोड़ों हत्यारों को नष्ट करने की शक्ति थी ; ऐसा होता क्यों नहीं ? इस राम-भक्ति के प्रचार में पीपा संलग्न रहे और देश-देश में मनुष्यों को मोक्ष प्रदान किया।

---

[1] यह अच्छा अंश है ; इससे किसी स्थान पर एच० एच० विल्सन के कथन, कि फकीरों के समाज में जाति-भेद नहीं माना जाता, की प्रामाणिकता सिद्ध होती है।

बेचैन और व्यथित राजा शूरसेन[१] ने उन्हीं से अपने संबंध में कहा : 'पाप-कर्म मेरा स्वभाव बन गया है, क्षमा मुझ से दूर भाग गई है।' वह सब दिशाओं में घूमा,[२] घोड़े पर चढ़ा, और अपनी उत्तेजना में चिल्लाता फिरा। अस्सी कोस तक जाने के बाद राजा उनके पास फिर आया ; वह अपने महल में वापिस आया और अपनी प्रजा का अभिनन्दन प्राप्त किया। उसने बहुत-सा पूजा-पाठ किया ; अपने महल के धन का आधा भाग ग़रीबों में बाँट दिया, और पीपा से कहा : 'स्वामीजी मुझे छोड़ कर न जाइए, मैं आपका आदर करूँगा ; मैं आपसे सच्ची प्रतिज्ञा करता हूँ।'

यहाँ पर जिन कार्यों का वर्णन किया है पीपा के ऐसे ही अन्य अनेक कार्यों का वर्णन किया जा सकता है; किन्तु क्या मैं उन सब का उल्लेख कर सकता हूँ ? इसलिए उनमें से कुछ का वर्णन कर ही मुझे संतोष है।[3]

पुष्पदान्त[४]

'महीन स्तोत्र' शीर्षक एक कविता के रचयिता हैं। मैंने यह नाम स्वर्गीय मार्सडेन (Marsden) की पुस्तकों के सूचीपत्र, पृ० ३०७, में पाया है; किन्तु उसका ऐसे अनिश्चित रूप में उल्लेख

---

१ अथवा सूरजसेन, जैसा कि अन्य रूपान्तरों में मिलता है। अन्य कथाओं में इसी नरेश का कई बार प्रश्न उठा है जिनका कोई महत्त्व न होने के कारण मैं अनुवाद नहीं दे रहा हूँ। यह शूरसेन बंगाल का राजा था, जिसने ११५१ से ११५४तक राज्य किया ; और जैसा मैं कह चुका हूँ, इससे पीपा का आविर्भाव काल ईसवी सन् की बारहवीं शताब्दी का मध्य भाग निकलता है।

२ शब्दशः, 'दसों दिशाओं में '

3 पीपा से संबंधित मूल छप्पय 'भक्तमाल' के १८८३ ई० (नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ) के संस्करण से लिया गया है।—अनु०

४ पुष्पदान्त : पुष्प—फूल, और दान्त—देनेवाला से

हुआ है कि मुझे संदेह है कि वह संस्कृत या बँगला की रचना न हो।[1]

पृथीराज[2]

एक प्रसिद्ध राठौर राजपूत हैं जो, १५५२ से १६०५ तक अकबर के राजत्व-काल में रहते थे। वे बीकानेर नरेश के छोटे भाई थे, और जिन्होंने कवि के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त की।[3] टॉड ने[4] 'ऐनल्स ऑव राजस्थान' में वर्णित एक ऐतिहासिक घटना से संबंधित उनकी रचना के एक महत्त्वपूर्ण अंश का उल्लेख किय है। इसी व्यक्ति की हिन्दू सन्तों में गणना की जाती है, और 'भक्तमाल' में उनसे संबंधित लेख इस प्रकार है :

छप्पय

आवैर[5] अछित कूर्म को द्वारकानाथ दर्शन दियो।
श्री कृष्णदास[6] उपदेश परम तत्त्व परचो पायो।
निर्गुण सगुण स्वरूप तिमिर अज्ञान नशायो।
काछ बाछ निःकलंक मनो गांगेय युधिष्ठिर।
हरिपूजा प्रहलाद[7] धर्मध्वज धारी जग पर।

---

१ इस रचना के विषय के संबंध में सूचीपत्र में जो दिया गया है, वह इस प्रकार है : 'महीना स्तोत्र : पुष्पदान्त द्वारा एक हिन्दू काव्य, १२-पेजी आयताकार'

२ भा० 'पृथ्वी का राजा'

३ राग सागर 'पृथीराज का रासा' का उल्लेख करता है।

४ 'ऐनल्स ऑव राजस्थान', जि० १, पृ० ३४३

५ 'अंबेर'. । जयपुर प्रान्त की प्राचीन राजधानी। उसकी वास्तविक राजधानी इसी नाम का नगर है।

६ यही नाम उनका है जिन्होंने 'भक्तमाल' के पुराने पाठ का विकास और उसकी टीका की।

७ इस महापुरुष के संबंध में ऊपर और नाम देव संबंधी लेख में कहा जा चुका है, इस जिल्द (२) का पृ० ४३४।

पृथ्वीराज परचौ प्रगट तन शंख चक्र मंडित कियो।
आवेर अछित कूर्म को द्वारकानाथ दर्शन दियो। २१६[1]

टीका

राजा पृथीराज अपने गुरु कृष्णदास के साथ द्वारिका तीर्थ-यात्रा के लिए तैयार हुए। उनके मंत्री ने गुरु के कान में कहा कि इस यात्रा से राजा के कार्यों में बाधा पड़ेगी, किन्तु उसकी यह इच्छा नहीं थी कि उसने उनसे जो कहा था वह महारानी को मालूम हो। प्रातः जब राजा अपने साथियों के साथ चलने के लिए तैयार हुआ, तो गुरु ने उनसे कहा : 'यहीं रहो, तुम अपने महल में ही द्वारावति-नाथ देखोगे; तुम गोमती[2] में स्नान करो, और तुम अपनी भुजा पर शंख और चक्र की छाप देखोगे।' राजा ने कहा: 'अच्छी बात है; किन्तु गुरु के शब्दों का प्रभाव कब दिखाई देगा ?'

तीन दिन इसी प्रकार व्यतीत हो गए, और पृथीराज द्वारिका न पहुँचे, तो कृष्ण, राजा पर कृपा करने के लिए, गोमती को अपने सिर पर रख कर, और अपनी बग़ल में शंख तथा चक्र दबा कर, द्वारिका से चले। वे क्षण भर में राजा के द्वार पर पहुँच गए, और उनके गुरु के स्वर में ही स्निग्ध वाणी से पुकार कर कहा: 'अहो पृथीराज।' राजा आश्चर्य-चकित हो दौड़े, और भगवान् को देखा। तब कृष्ण ने गोमती गिरा कर पृथीराज से उसमें स्नान करने के लिए कहा। वे उनकी आज्ञा का पालन भी न कर पाए थे कि शंख और चक्र उनके शरीर पर छप गए। यद्यपि रानी भी आईं, वे भगवान् को न

---

[1] यह मूल छप्पय 'भक्तमाल' के १८८३ ई० (नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ) से लिया गया है। —अनु०

[2] गोमती, शब्दार्थ 'घूमती हुई', कुमायूँ के पर्वतों में उत्तर से निकलती है, और बनारस से नीचे गंगा में मिल जाती है। ऐसा प्रतीत होता है कि द्वारिका के पास से जाने वाली गोमती कोई दूसरी है।

देख पाईं, किन्तु अद्भुत गोमती में उनका स्नान हो गया। सुबह होते ही यह बात सारे नगर में फैल गई, और नगर-निवासी महल के चारों ओर इकट्ठा हो गए। आश्चर्य-चकित पृथीराज ने उनसे हज़ारों रुपए भेंट स्वरूप पाए। तब उस स्थान पर जहाँ भगवान् उन्हें पुकारने के लिए रुके थे उन्होंने एक मन्दिर बनवा दिया, और उसमें एक मूर्ति स्थापित की जिसका यश संसार ने गाया।

एक दिन एक अंधा ब्राह्मण एक शिव-मंदिर के द्वार पर आया और धरना[1] के बहाने अपने नैन माँगे। शिव ने उससे कहा: 'नैन तेरे भाग्य में नहीं हैं।' उसने उत्तर दिया: 'तुम्हारे तीन आँखें हैं।' उनमें से दो मुझे दे दो, और एक अपने पास रख लो।' तब शिव ने, उसके आग्रह से, जिससे उसकी श्रद्धा प्रकट होती थी, द्रवित हो कहा: 'तेरी देखने की शक्ति पृथीराज के अँगोछे में है; उसे अपनी आँखों से लगा, और तू देखने लगेगा। ब्राह्मण राजा के पास गया और जो कुछ हुआ था उनसे कह दिया। ब्राह्मणों का गौरव जानते हुए, जो सम्मान उनका कहा जाता है उसके मिट जाने के भय से, उन्होंने अपना अँगोछा देने से इंकार कर दिया। किंतु सब लोगों की स्वीकृति लेकर उन्होंने एक नया अँगोछा मँगाया, और उसे अपने शरीर से छुआ कर, ब्राह्मण को दे दिया। ब्राह्मण ने उसे अपनी आँखों से लगाया भी नहीं था कि नए खिले हुए कमल की भाँति उसकी आँखें खुल गईं।

प्रह्लाद[2]

'शंभु ग्रंथ'—(सिक्खों की) पिता की पुस्तक[3] में सम्मिलित धार्मिक कविताओं के रचयिता हैं।

---

[1] इच्छानुसार कोई काम कराने के लिए भारत में अत्यधिक प्रयुक्त साधन, जिसमें फल-प्राप्ति तक जिस स्थान पर बैठा जाता है उसे छोड़ा नहीं जाता।

[2] भा० 'हर्ष, प्रसन्नता', पाटल खण्ड के एक सामन्त का नाम

[3] नानक पर लेख देखिए

प्रिय-दास[1]

नित्यानंद के अनुयायी, बंगाल के निवासी, रचयिता हैं :

१. बुन्देलखण्ड की बोली में एक भागवत के जिसका वॉर्ड ने उल्लेख किया है;[2]

२. कवित्त छन्द के पद्यों में 'भक्तमाल'[3] की एक टीका के जिसका शीर्षक है 'भक्तिरस बोधिनी'—भक्ति के रस का ज्ञान कराने वाली। मेरे पास उसकी एक प्रति है जो मुझे दिल्ली के स्वर्गीय एफ़० बूट्रोस (Boutros) ने दी थी। इस हस्तलिखित पोथी में मूल तो वही है जो कृष्णदास ने ग्रहण किया है, अर्थात् नाभा जी और नारायणदास का। प्रिय दास कृत टीका के साथ 'दृष्टांत' और 'भक्तमाल प्रसंग' भी हैं।

जिन हिन्दू संतों की जीवनी उन्होंने इस ग्रंथ में दी है उनकी सूची इस प्रकार है :

वाल्मीकि	धना भगत	सदना कसाई
परीक्षित	माधोदास	लड्डू भक्त
सुखदेव	रघु-नाथ	गंजा माल (Ganjâ mâla)
अग्रदास	हरि व्यास	लशा भक्त (Lascha Bhakta)
शंकर	विट्ठल-नाथ	नरसी भगत
नाम देव	गिरिधर	मीराबाई
जय देव	बिट्ठल-दास	पृथीराज
श्रीधर स्वामी	रूप सनातन	नर देव

---

[1] प्रिय दास, अच्छे लगने वालों का दास

[2] 'व्यू ऑव दि हिस्ट्री, एट्सीटरा, ऑव दि हिन्दूज़', जि० २, पृ० ४८१

[3] एच० एच० विल्सन, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६, पृ० ५६, मं ट्गोमरी मार्टिन, 'ईस्टर्न इंडिया', जि० १, पृ० २००

कबीर हरिदास
पीपा गोपाल भट्ट

प्रेम-केशवर-दास

'भागवत' के द्वादश स्कंध के एक हिंदुई अनुवाद के रचयिता, रचना जिसकी एक प्रति ईस्ट इंडिया हाउस के पुस्तकालय में है।[1]

प्रेमा[2] भाई या बाई

मेरे ख़्याल से जिन्हें 'प्रेमी' भी कहते हैं, एक कवियित्री हैं जिनका उत्कर्ष शक संवत् १६०० (१६७८) में हुआ। उनके स्थान, जाति, कुटुंब के बारे में ज्ञात नहीं है। उनकी रचनाएँ हैं :

१. 'भक्त लीलामृत'—भक्तों की लीलाओं का अमृत;[3]
२. 'गंगा स्नान';
३. श्री गोपाल (कृष्ण) की 'पूजा';
४. 'भागवत श्रवण'—भगवान् की स्तुति;
५. 'ध्रुव लीला'—ध्रुव की लीलाएँ।[4]

फट्यल-वेल (Phatyala-Véla)[5]

वॉर्ड द्वारा हिन्दुओं के इतिहास, पौराणिक कथाओं और साहित्य पर अपने ग्रन्थ, जि० २, पृ० ४८१ में उल्लिखित एक गीता के रचयिता, जयपुर के लेखक हैं।

---

[1] देखिए 'भू पति' पर लेख जिसमें इसी ग्रंथ के दो अन्य हिन्दी अनुवादों का उल्लेख है।

[2] भा० 'प्रेम' का संस्कृत रूप

[3] हिन्दी के अनेक ग्रन्थों का यही शीर्षक रहता है।

[4] दिल्ली, १८६८, ८ अठपेजी पृष्ठ

[5] या Phatyola vélo, बँगला उच्चारण के अनुसार।

फ़तह नरायन सिंह (बाबू)

संस्कृत में, हिन्दी-टीका सहित, 'वैद्यामृत'—चिकित्सक का अमृत—के रचयिता हैं; बनारस, १६२४ संवत् (१८६७), ६१ अठपेजी पृष्ठ; तथा उन्होंने 'सिद्धान्त' के आधार पर 'मेघ माल'—बादलों की माला—या, मेघ की, अर्थात् मूल रचयिता, मुनि मेघ की – शीर्षक ज्योतिष-सम्बन्धी हिन्दी रचना प्रकाशित की है; बनारस १६२३ (१८६८), ५६ अठपेजी पृष्ठ ।

फन्दक[1] (Phandak)

सक्खों में व्यवहृत पवित्र गीतों के रचयिता हैं ।[2]

फ़रहत (मुंशी शंकर दयाल)

एक अत्यन्त प्रसिद्ध समसामयिक हिन्दुस्तानी लेखक और लखनऊ में हुसैनाबाद के अमेरिकन मिशनरियों द्वारा संचालित स्कूल में प्रोफ़ेसर हैं; वे रचयिता हैं :

× × ×

२. उर्दू पद्य में 'प्रेम सागर' के अनुवाद के, लखनऊ से नवल-किशोर के बड़े छापेखाने से मुद्रित, प्रत्येक पर दो छंदों सहित ५६ बड़े अठपेजी पृष्ठ, अनेक चित्रों सहित ।

३. तुलसी कृत 'रामायण' का उर्दू पद्यों में रूपान्तर, प्रत्येक पर दो छंदों की २५-२५ पंक्तियों सहित १६४ बड़े अठपेजी पृष्ठ, अनेक चित्रों से सुसज्जित; कानपुर, १८६६ ।

× × ×

---

[1] भा० 'मोटा'

[2] नानक पर लेख देखिए

बंसीधर[1] (पण्डित)

उत्तर-पश्चिम प्रदेश के स्कूलों के प्रधान निरीक्षक, उर्दू और विशेषतः हिन्दी के एक बहुत लिखने वाले आधुनिक लेखक हैं, जिन्हें श्री एच० एस० रीड (Reid) ने, जब वे उत्तर-पश्चिम प्रदेश के शिक्षा-विभाग के अध्यक्ष (Director of Public Instruction) थे, कई रचनाओं के निर्माण या अनुवाद करने में लगाया। जो मेरे जानने में आई हैं उनकी सूची यह है :

१. सदासुखलाल कृत 'मिफ़ताह उल क़वायद' के अनुकरण पर देशी लोगों के लाभार्थ एक अंगरेजी व्याकरण का हिन्दी रूपान्तर, जिसमें उत्तर पश्चिम प्रदेश के शिक्षा विभाग के तत्वावधान में १८५५ में आगरे से अलग-अलग प्रकाशित तीन परिच्छेद हैं, और जिनके कई संस्करण हो चुके हैं। बंसीधर ने उर्दू व्याकरण[2] पर भी एक प्राथमिक रचना प्रकाशित की है, जिसका उल्लेख आगे है।

२. 'मिरात उस्सात' — समय का दर्पण, हिन्दी में श्रीलाल लिखित समय प्रबन्ध का उर्दू अनुवाद, और आगरे से ही प्रकाशित।

३. 'ग्राम' या 'ग्राम्य कल्पद्रुम', जमालुद्दीन हसन[3] कृत उर्दू में 'किताब-इ हालात-इ दीहि' का हिन्दी में अनुवाद। उसके कई संस्करण हैं; दूसरा, इलाहाबाद से, बड़े अठपेजी ७८ पृ० का है।

---

१ भा० कृष्ण के नामों में से एक जिसका अर्थ है-'भारतीय अंजार के पेड़ का मालिक', इस पेड़ का छाया में उनके वंशी बजाने की दृष्टि से।

२ श्री एच० एस० रीड की कृपा से, मेरे पास तृतीय संस्करण की एक प्रति है; इलाहाबाद, १८६०, १२-पेजी; प्रथम परिच्छेद, ३६ पृ०; द्वितीय परिच्छेद, ७८ पृ०

३ देखिए उन पर लेख

४. 'किसान उपदेश,' हिन्दी में, और वही रचना उर्दू में 'पंद-नामा-इ काश्तकारान' के समान शीर्षक के अंतर्गत, एक-सी रचनाएँ हैं। पहली का रूपान्तर महाबन के तहसीलदार रोशनअली और मथुरा ज़िले में माठ के तहसीलदार मोतीलाल द्वारा रचित दो संवादों के अनुकरण पर बंसीधर और श्री एच० एस० रीड ने किया है। इसमें, किसानों के लिए बन्दोबस्त का प्रयोग और रूप तथा पटवारियों के सालाना खाते समझाए गए हैं; इलाहाबाद, १८६०, अठपेजी २० पृष्ठ।

५. 'शिक्षा पटवारियान का', उर्दू से हिन्दी में अनूदित। आगरा, १८५५, चौपेजी ७७ पृष्ठ।

६. 'छंद दीपिका', हिन्दी छंदों पर पुस्तक; आगरा, १८५४, अठपेजी ३४ पृ०; प्रथम संस्करण, १००० प्रतियों का; तृतीय संस्करण, २००० प्रतियों का, इलाहाबाद, १८६०, अठपेजी ३६ पृष्ठ।

७. 'माप प्रबंध' ('खेस्र'[1] पर एक पुस्तक), 'मिस्बाह उल मसाहत' शीर्षक उर्दू रचना, और साथ ही 'रिसाला पैमाइश' का हिन्दी में अनुवाद; आगरा, १८५३, अठपेजी ५३ पृष्ठ।

८. 'जीविका परिपाटी'—घरेलू अर्थशास्त्र—श्री एच० एस० रीड की अध्यक्षता में उर्दू 'दस्तूरुल्माश'[2] का हिन्दी में अनुवाद है। (दस्तूरुल्माश) डबलिन् के आर्च बिशप, स्वर्गीय एस० जी० ल टी० रेव० डॉ० ह्वॉट्ले (Whateley) कृत 'मनी मैटर' के आधार पर आगरे में सरकारी दुभाषिए और

१ 'खेस्र' अथवा 'खसर:' या 'खसरा' एक भारतीय शब्द है जिसका ठीक-ठीक अर्थ रजिस्टर है जिसमें गाँवों के नाम, उनके साथ लगी हुई ज़मीनों और उनकी पैदा-वार सहित, लिखे रहते हैं।

२ 'आगरा गवर्नमेंट गज़ट' पृ० ५३४। 'दस्तूरुल्माश'—आजीविका संबंधी नियम —के कई संस्करण हो चुके हैं। मेरे पास इलाहाबाद का संस्करण है, १८६१, अठपेजी १०० पृ०।

उत्तर-पश्चिम प्रदेश की सरकारी पुस्तकों के संरक्षक जॉन पार्क्स लेड्ली (Ledlie) द्वारा आय-व्यय, व्यापार आदि से सम्बन्धित राजनीतिक अर्थशास्त्र पर अँगरेजी में लिखित प्राथमिक रचना का अनुवाद है। अनुवाद अच्छा हुआ है: पहले वह आगरे से प्रकाशित हुआ, तत्पश्चात् १८५६ में इलाहाबाद से, अठपेजी ७० पृष्ठ।

बच्चों के लाभार्थ राजनीतिक अर्थशास्त्र पर 'दस्तूर माश' शीर्षक एक और भी अधिक प्राथमिक रचना है, १७-१७ पंक्तियों के चौपेजी ६४ पृष्ठ।

९. 'उर्दू मार्तण्ड'—उर्दू का सूर्य—'क़वायदुल मुब्तदी'—प्रारंभिक नियम—शीर्षक उर्दू रचना का हिन्दी अनुवाद; आगरा, १८५४, अठपेजी १०४ पृष्ठ।

१०. 'भोज प्रबंध सार'—भोज की कहावतों का संचयन—हिन्दी टीका सहित संस्कृत में; इलाहाबाद, १८५६ और १८६२, ९० पृष्ठ का द्वितीय संस्करण। ६४ पृष्ठ का एक संस्करण आगरे से भी प्रकाशित हुआ है।

११. 'शिक्षा मंजरी'—शिक्षाओं का गुच्छा—(दो भागों में), टॉड की 'हिन्ट्स ऑन सेल्फ़ इम्प्रूवमेंट' शीर्षक रचना में एच० सी० टर्नर द्वारा चुने हुए अंशों के अनुवाद 'तालीमुन्नाफ़्स' शीर्षक उर्दू रचना का हिन्दी रूपान्तर; इलाहाबाद, अठपेजी, दो भागों में, पहला संस्करण १८५६ का, २८ पृष्ठ; दूसरा १८६० का, ४३ पृष्ठ। उसके कई संस्करण हैं।

१२. 'मबादी उल् हिसाब'—गणित का प्रारंभ—'गणित' या 'रेखागणित प्रकाश'—गणना की ज्योति—का उर्दू अनुवाद, Rule of Three से लेकर Cube Root[1] (घनमूल) तक चार भागों में।

[1] 'श्री लाल' शीर्षक लेख देखिए। शायद यह रचना वही है जो लाहौर के ६ मार्च १८६६ के 'कोह-इ नूर' में घोषित, इसी शीर्षक की एक पद्यात्मक अर्थमेटिक है।

बंसीधर ने यह रचना मोहनलाल की सहकारिता में लिखी है।

१३. 'मिस्बाह' या 'मिरातुल मस्साहत'—दीपक या खेत नापने का दर्पण,[1] दो भागों में, 'क्षेत्र चन्द्रिका' या खेतों का दीपक, का उर्दू अनुवाद, जिसके कई संस्करण हो चुके हैं, जिनमें से एक लाहौर के 'कोह-इ-नूर' छापेखाने से निकलता है,[2] और १८५३ से १८५६ तक आगरे से, आदि, जिनमें चिरंजीलाल का सहयोग है।

१४. 'तारीख़-इ-हिन्द'—हिन्द का इतिहास, उर्दू में आगरा स्कूल बुक सोसायटी के लिए 'भारतवर्ष का वृत्तान्त' या 'इतिहास' शीर्षक के अंतर्गत रेव० जे० जे० मूर की सहकारिता में पुनः प्रकाशित। दूसरा संस्करण कलकत्ते से निकला है, १८४६, ३१६ अठपेजी पृष्ठ। एक आगरे का संस्करण भी है, १८५४, और दूसरा १८५६ का, १२० अठपेजी पृष्ठों की १०००० प्रतियाँ छपीं।

१५. बंसीधर ने उर्दू, हिन्दी और अँगरेज़ी की शब्दावली 'तसलीसुल्लुगत'—तीन पूर्वापर संबद्ध विषय—के संपादन में सहयोग दिया।

१६. देशी स्कूलों के विद्यार्थियों की परीक्षा के लिए उनके पाठ्य-क्रम में निर्धारित उर्दू में लिखित पुस्तकों पर १८५० में विशेष रूप से तैयार की गई २० पृष्ठ की पुस्तिका 'गंज-इ सवालात' —सवालों का ख़ज़ाना—भी उनकी देन है।

१७. 'हकायक-इ मौजूदात'—उत्पन्न हुई चीज़ों की वास्तविकता —विज्ञानों का एक प्रकार का संक्षेप, श्री लाल कृत हिन्दी में 'विद्यांकुर' या 'विद्यांकुर'—विज्ञान की प्राथमिक बातें—का उर्दू में अनुवाद, कई बार आगरे से मिर्ज़ा निसार अली बेग के संरक्षण में छपा है।

[1] संस्करणों के अनुसार शीर्षक भिन्न हैं।

[2] बहुत छोटे ६२ चौपेजी पृष्ठों की।

१८. 'दशमलव दीपिका'—दशमलवों का दीपक—(दशमलवों पर पुस्तक), हिन्दी में, श्री एच० एस० रीड (Reid) के संरक्षण में; आगरा, १८५४, द्वितीय संस्करण, २२ अठपेजी पृष्ठों की; एक और संस्करण रुड़की से, १८६०, २४ अठपेजी पृष्ठ।

१९. 'कसूर-इ आशारिया'[1] शीर्षक के अंतर्गत श्री रीड की सहकारिता में वही रचना उर्दू में।

२०. 'पुष्प वाटिका'—फूलों का बाग—नरेशों के आचरण के बारे में नियमों से संबंधित, 'गुलिस्ताँ' के आठवें अध्याय का हिन्दी अनुवाद; आगरा, १८५३; लीथो की ३००० प्रतियाँ। यदि इस संबंध में विश्वास किया जाय तो दूसरा संस्करण इलाहाबाद से, १८६०, २८ अठपेजी पृष्ठ, इस अनुवाद के रचयिता बिहारी लाल होने चाहिए। उर्दू अनुवाद का शीर्षक है 'बाब-इ हश्तम गुलिस्ताँ'—गुलिस्ताँ का आठवाँ अध्याय।[2]

२१. 'ईश्वरता निदर्शन'—दैवी शक्ति का प्रकटीकरण—देवी प्रसाद कृत 'मज़हर-इ कुदरत'—दैवी शक्ति का प्रदर्शन—का हिन्दी अनुवाद; आगरा, द्वितीय संस्करण, १८५६, ३४ अठपेजी पृष्ठ।

२२. 'चित्रकारी सार'—चित्र खींचने का सार, अर्थात् 'पुस्तकों के लिए रेखा-चित्र बनाने के प्राथमिक सिद्धान्त', 'हंटर कृत मद्रास जर्नल ऑव आर्ट' के अनुकरण पर, उर्दू में, 'रिसाला उसूल-इ इल्म-इ नक्काशी' का सचित्र हिन्दी अनुवाद; दो भागों में : पहला (द्वितीय संस्करण), आगरा, १८५८, २० अठपेजी पृष्ठ; दूसरा (द्वितीय संस्करण), इलाहाबाद, ३३ अठपेजी पृष्ठ।

२३. 'उसूल-इ हिसाब (रिसाला)'—गणित के सिद्धान्त—'गणित निदान' से अनूदित।

---

[1] बाकिर अली पर लेख देखिए।

[2] करीमुद्दीन पर लेख देखिए।

२४. बंसीधर ने उर्दू 'क़िस्सा सैंडफ़ोर्ड और मार्टिन' का 'सैंडफ़ोर्ड और मार्टिन कहानी' शीर्षक के अंतर्गत हिन्दी में अनुवाद किया है, आगरा, १८५५, बड़े अठपेजी; पहला भाग, ७० पृष्ठ; दूसरा भाग, ७४ पृष्ठ।

२५. उन्होंने कृष्णदत्त कृत दिलचस्प नैतिक कथा 'बुद्धि फलोदय'—बुद्धि के फल का निकलना—का 'क़िस्सा-इ सुबुद्धि कुबुद्धि'—एक अच्छे और बुरे आदमी का क़िस्सा—शीर्षक के अंतर्गत अनुवाद किया है। इसके कई संस्करण हो चुके हैं; आगरे से, १८५८, १८ अठपेजी पृष्ठ, उसका मुख पृष्ठ १८२६ में स्थापित आगरा कॉलेज के चित्र से सुसज्जित है।

२६. बंसीधर ने 'धर्मसिंह का क़िस्सा'—धर्मसिंह की कहानी—शीर्षक के अंतर्गत इसी शीर्षक की हिन्दी रचना 'धर्मसिंह का बृत्तांत' या 'वृत्तांत'[1] का अनुवाद किया है। आगरा, १८५८, १८ अठपेजी पृष्ठ।[2]

२७. 'ख़ुलासा निज़ाम-इ शम्सी'[3]—सौर जगत की झलक—आगरा स्कूल बुक सोसायटी के ख़र्च से ख़्वाजा ज़ियाउद्दीन के संरक्षण में आगरे से प्रकाशित; नवीन संस्करण, १८५७, बहुत छोटे ४४ चौपेजी पृष्ठ।

मेजर फ़ुलर की आज्ञा से और अयोध्या प्रसाद के संरक्षण में इसी रचना का एक संस्करण लाहौर से १८६२ में प्रकाशित हुआ, १८ पंक्तियों के ३६ अठपेजी पृष्ठ, चित्रों सहित।

२८. 'उसूल इल्म-इ हिसाब'[4]—गणित के सिद्धान्त—लघु-

---

१ चिरंजी पर लेख देखिए। वे भी इसी रचना के अनुवादक बताए जाते हैं।

२ इसके कई और संस्करण हो चुके हैं।

३ श्री लाल पर लेख में इसी शीर्षक की एक रचना देखिए।

४ उर्दू में अनूदित डि मौर्गैन की गणित का यही शीर्षक है। हरदेव सिंह पर लेख देखिए।

गणक (Logarithmes) की एक तालिका सहित, हिन्दी से अनूदित, जिसके कई संस्करण हो चुके हैं, जिनमें से एक आगरे का है, १८५४,२३६ बड़े अठपेजी पृष्ठ ।

२६. 'तहरीर-इ उकलिदस'—यूकलिद (Euclide) के मूल सिद्धांत, दो भागों में : कहा जाता है पहले की रचना बंसीधर ने मोहनलाल की सहायता से की, इलाहाबाद, १८६०,१६० अठपेजी पृष्ठ, लघुगणक की एक तालिका सहित; दूसरा मोहनलाल और बंसीधर के द्वारा साथ-साथ रचित, वही, १२२ पृष्ठ ।

३०. 'नतीजा तहरीर उकलिदस'—यूकलिद के मूल सिद्धांतों का परिणाम, हिन्दी से अनूदित, अठपेजी तीन भागों में । प्रथम १०८ पृष्ठों का, दूसरा १५० पृष्ठों का, आगरा, १८५४ और १८५६ । इसके कई संस्करण हो चुके हैं ।

३१. 'मिरातुस्सिदूक (किताब)', लाभदायक उपदेशों की श्रृंखला, कृष्णदत्त द्वारा हिन्दी में लिखित 'सत निरूपण' का उर्दू में अनुवाद; दिल्ली, १८५६; द्वितीय संस्करण, १२० अठपेजी पृष्ठ ।

३२. 'क्षेत्र चन्द्रिका', 'मिस्बाह उलमसाहत' का हिन्दी अनुवाद, दो भागों में, देशी स्कूलों के लिए स्वीकृत हिन्दी रचना । इसके कई संस्करण हो चुके हैं, जिनमें से चौथा, बनारस से, चौपेजी, १०,००० प्रतियाँ मुद्रित ।[1]

३३. बंसीधर ने प्रधानतः भरत खण्ड के भूगोल से सम्बन्धित हिन्दी रचना 'भूगोल'[2] या 'भूगोल वर्णन' की दो भागों में रचना की है; प्रथम भाग, ५५ अठपेजी पृष्ठ, आगरा, १८६०; दूसरा भाग ११० अठपेजी पृष्ठ, आगरा, १८६०; और मिर्ज़ापुर, १८५३,१६४ अठपेजी पृष्ठ ।

---

[1] श्री लाल पर लेख देखिए ।

[2] वासुदेव लेख में इसी शीर्षक की एक रचना देखिए ।

३४. 'रेखा गणित सिद्ध फलोदय'—ज्यामित के वास्तविक फलों का प्रकटीकरण—पंडित मोहनलाल की सहकारिता में।[1]

३५. 'प्रसिद्ध चर्चावली' – विख्यात लोगों के संस्मरण – पाँच भागों में, उर्दू 'तज़किरात उल् मशाहिर' का अनुवाद; प्रथम भाग, आगरा, १८५६,४० अठपेजी पृष्ठ ; द्वितीय भाग, आगरा, १८५६, चित्र सहित १२ अठपेजी पृष्ठ ; तीसरा भाग, इलाहाबाद, १८६०, १२७ पृष्ठ ; चौथा भाग, आगरा, १८६०, १३० पृष्ठ; पाँचवाँ भाग, आगरा, १८५१. ७० पृष्ठ।

३६. 'इँगलैंडीय अक्षरावली'—अँग्रेजी वर्णमाला—रुड़की, १८५८, १२-पे० ५६ पृष्ठ।

३७. 'गणित प्रकाश'; प्रथम भाग, सातवाँ संस्करण, १८६१, इलाहाबाद, अठपेजी। दूसरे, तीसरे और चौथे भाग श्री लाल के सहयोग से। ५५ पृष्ठों में, दूसरा भाग (तीसरा संस्करण) १८६० में बनारस से छपा है ; तीसरा भाग (तीसरा संस्करण) आगरे से १८६१ में, ८३ पृ० ; और चौथा भाग (पाँचवाँ संस्करण) बनारस से, १८६०, ७१ पृष्ठ।

३८. 'पिण्ड चन्द्रिका'—शरीर का चन्द्रमा—जो, मेरे विचार से, मशीन-सम्बन्धी प्रबन्ध है; आगरा, १८५६, ६७ अठपेजी पृष्ठ।

३९. 'सिद्धि पदार्थ विज्ञान'—मशीन-संबंधी सच्चा ज्ञान ; इलाहाबाद, १८६०, १०१ अठपेजी पृष्ठ।

४०. 'पाठक बोधनी'—नीति-सम्बन्धी उपदेश – हिन्दी में; आगरा, १८५६, ५० अठपेजी पृष्ठ।

४१. 'जगत् वृत्तान्त'—संसार का इतिहास—संक्षेप में प्राचीन इतिहास से हिन्दी में (दूसरा संस्करण), प्रथम भाग ; आगरा, १८६०,७२ अठपेजी पृष्ठ।

---

[1] मोहन लेख में इसी शीर्षक की एक रचना का उल्लेख देखिए।

४२. 'उपदेश पुष्पावली'—उपदेशों की वाटिका—'गुलदस्ता अख़लाक़' का हिन्दी अनुवाद ; इलाहाबाद, १८५६. ६७ अठपेजी पृष्ठ।

४३. 'जब्र ओ मुकाबला'—अलजबरा और ज्योमेट्री, उर्दू में, पं० मोतीलाल की सहकारिता में; मेरठ, १८६६,२२२ पृ०।

अंत में बंसीधर आगरे के 'नूरुल इल्म' नामक छापेख़ाने से 'आब-इ हयात-इ हिन्द' शीर्षक उर्दू पत्र प्रकाशित करते हैं, जिसके हिन्दी रूपान्तर का शीर्षक 'भरत खंड अमृत' है।

बख़्तावर

ये एक हिन्दू फ़क़ीर थे जिन्होंने हिन्दी या ब्रजभाषा छंदों में 'सुनीसार' नामक ग्रन्थ[1] की रचना की। इस ग्रंथ में सून्यवादियों (जैन संप्रदाय) के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। यह ग्रंथ दयाराम के आश्रय में लिखा गया था। दयाराम इस संप्रदाय के संरक्षक और १८१७ में आगरा प्रान्तान्तर्गत हाथरस नगर के राजा थे। इसी वर्ष मार्क्विस हेस्टिंग्ज़ ने इस नगर पर अधिकार प्राप्त किया।

इस उपदेशात्मक काव्य में ग्रन्थकार का उद्देश्य ईश्वर और मनुष्य सम्बन्धी सभी विचारों की प्रवञ्चकता और निस्सारता दिखाना है। इस रचना से कुछ अवतरण यहाँ दिए जाते हैं। इन अवतरणों को प्रसिद्ध विद्वान् एच० एच० विलसन ने हिन्दुओं के धार्मिक संप्रदायों की रूपरेखा ('एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० ३०६ और उसके बाद के पृष्ठ) द्वारा विद्वन्मण्डली के सामने रक्खा था। असंगतता उनकी विशेषता होने पर भी मैंने उन्हें उद्धृत किया है,

---

[1] इस ग्रन्थ की एक हस्तलिखित प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्त-कालय में सुरक्षित है, किन्तु गलती से उसे हाथरस के दयाराम कृत कहा गया है।

यद्यपि वे कुछ ऐसे शोचनीय सिद्धान्त प्रस्तुत करते हैं जिनकी जितनी निन्दा की जाय थोड़ी है।

मैं जो कुछ देखता हूँ शून्य है। आस्तिकता और नास्तिकता, माया (दृश्य) और ब्रह्म (अदृश्य), सब मिथ्या है, सब भ्रम है। स्वयं जगत् और ब्रह्मांड, सप्तद्वीप और नवखण्ड, आकाश और पृथ्वी, सूर्य और चन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु और शिव, कूर्म और शेष, गुरु और उसका शिष्य, व्यक्ति और जाति, मंदिर और देवता, रीति-रस्मों का पालन, प्रार्थना करना, यह सब शून्य है। सुनना, बोलना और विचार करना, यह सब कुछ नहीं है, और स्वयं वास्तविकता का अस्तित्व नहीं है।

तो फिर प्रत्येक (व्यक्ति) अपने आप पर ही ध्याननिष्ठ रहता है, और किसी दूसरे पर नहीं; क्योंकि वह केवल अपने में ही सबको पाता है।...अपना ही चेहरा दर्पण में देखने की भाँति, मैं दूसरों में अपने को देखता हूँ; यह तो एक समझ की भूल है कि मैं जो कुछ देखता हूँ वह मेरा रूप नहीं, वरन् किसी दूसरे का है। जो कुछ तुम देखते हो वह केवल तुम हो; तुम्हारे स्वयं माता-पिता का कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं है। तुम्हीं बालक और बूढ़े, बुद्धिमान और मूर्ख, पुरुष और स्त्री हो...तुम्हीं मारने वाले और मृत, राजा और प्रजा हो...... तुम्हीं विलासी और साधु, रोगी और स्वस्थ हो, संक्षेप में जो कुछ तुम देखते हो वह तुम्हीं हो, ठीक वैसे ही जैसे पानी के बुदबुदे और उसकी लहरें पानी से भिन्न दूसरी वस्तु नहीं हैं।

जब हम स्वप्न देखते हैं, हम समझते हैं वास्तविक वस्तुएँ देख रहे हैं, हम जागने पर अपने को भ्रम में पाते हैं। लोग अपने स्वप्न पड़ोसियों को सुनाते हैं; किन्तु उनके दुहराने से क्या लाभ ? यह तो घास के तिनके उड़ाने के समान है।

मैं केवल 'सुनि' ('शून्य') सिद्धान्त पर ध्यान लगाता हूँ, मैं न तो पुण्य जानता हूँ और न पाप। मैंने पृथ्वी के राजाओं को देखा

है; वे न कुछ लाते हैं और न ले जाते हैं। उदार व्यक्ति का सुयश उसके साथ जाता है, और लोभी की आत्मा को निंदा ढक लेती है।

जीवन के सुख वास्तव में हैं, अनेक रहे हैं, और बहुत-से अभी होंगे। संसार कभी ख़ाली नहीं होता। जिस प्रकार पेड़ की पत्तियाँ होती हैं; जीर्ण पत्तियों के गिर जाने से नई पत्तियाँ प्रकट हो जाती हैं। मुर्झाई पत्ती में अपना मन मत रमाओ, किन्तु हरे पत्र-दल की आत्मा खोजो। हज़ार रुपए का घोड़ा मर जाने पर किस काम का; किन्तु जीवित टट्टू तुम्हें तुम्हारे मार्ग पर ले जायगा। उस व्यक्ति में कोई आशा मत रखो जो मर चुका है; जो जीवित है उसी में भरोसा रखो। जो मर चुका है वह फिर जीवित नहीं होगा...फटा कपड़ा फिर शायद नहीं बुना जा सकता; एक टूटा बरतन फिर शायद नहीं बनाया जा सकता। जीवित मनुष्य का स्वर्ग या नरक से कोई संबंध नहीं; जब शरीर धूल में मिल जाता है, तब सन्त और खल में क्या अन्तर रह जाता है ?

पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु इन सबसे मिलकर शरीर बना है। इन चार तत्वों से सृष्टि की रचना हुई है, और कोई अन्य नहीं है। वही ब्रह्मा है, वही चींटी है; सभी इन तत्वों से बने हैं।

हिन्दू और मुसलमान एक ही प्रकृति से निकले हैं। वे एक ही वृक्ष की दो पत्तियाँ हैं। ये अपने धार्मिक व्यक्तियों को 'मुल्ला' कहते हैं, वे 'पण्डित' कहते हैं। एक ही मिट्टी के वे दो बर्तन हैं; एक 'नमाज़' पढ़ते हैं, तो दूसरे 'पूजा' करते हैं। अन्तर कहाँ है ? मैं तो कोई अन्तर नहीं देखता। वे दोनों द्वैत सिद्धान्त का अनुगमन करते हैं (आत्मा और पदार्थ का अस्तित्व)......उनसे विवाद मत करो, किन्तु उन्हें समझाओ कि वे एक हैं। व्यर्थ के सब विवाद छोड़ो और सत्य पर, अर्थात् दयाराम के सिद्धान्त पर, दृढ़ रहो।

अंत में ये कुछ पंक्तियाँ हैं जो सच्चे दर्शन-शास्त्र के योग्य हैं :

मुझे सत्य की घोषणा करने में भय नहीं है। मैं प्रजा और राजा

में कोई भेद नहीं जानता, मुझे न तो भक्ति की आवश्यकता है और न आदर की, और मैं केवल गुणों से समाज का पोषण चाहता हूँ। मैं केवल वही चाहता हूँ जिसे मैं सरलतापूर्वक प्राप्त कर सकता हूँ; किन्तु मेरे लिए एक महल और एक झाड़ी एक ही वस्तु हैं। मैंने अपनी या तुम्हारी ग़लती मानना छोड़ दिया है, और मैं न लाभ जानता हूँ न हानि। यदि मनुष्य इन सत्यों का उपदेश दे सकता है, तो वह लाखों की प्रारंभिक ग़लतियों का उन्मूलन कर सकता है। ऐसा उपदेशक आज दुनिया में है, और वह दयाराम के अतिरिक्त अन्य कोई दूसरा नहीं है।[१]

बचा[२] सिंह

आगरे के 'जेनेरल कैटैलौग' और जेंकर (Zenker) के अपने 'Bibliotheca Orientalis' में उल्लिखित हिन्दी रचना, 'गीतावली'[३] (गीतों में प्रेम कथा) के रचयिता हैं।

बद्री लाल[४] (पंडित)

रचयिता हैं :

१. उत्तर-पश्चिम प्रदेश की सरकार की आज्ञानुसार भारत के स्कूल और कॉलेजों की संस्कृत कक्षाओं के लिए १८५१ में मिर्ज़ापुर में मुद्रित 'हितोपदेश' की प्रथम पुस्तक के हिन्दी अनुवाद के। 'उपदेश दर्पण' शीर्षक के अंतर्गत उसका एक बनारस का संस्करण है। इस संस्करण की यह विशेषता है कि जहाँ तक हो सका है मूल

---

१ तासी कृत इतिहास के द्वितीय संस्करण में इन उद्धरणों का पाठ तो यही है किन्तु अनुच्छेदों के विभाजन में अंतर है।—अनु०

२ फ़ा० बच्चा

३ तुलसी-दास पर लेख में इसी शीर्षक की एक रचना का उल्लेख है।

४ भा० 'बद्री (उत्तर भारत में तीर्थ स्थान) का प्रिय'

संस्कृत शब्द सुरक्षित रखे गए हैं, ताकि बाद में मूल पाठ की संस्कृत समझने वाले भारतवासियों को सुविधा हो सके। उसकी रचना संस्कृत और हिन्दी में अत्यन्त प्रवीण स्वर्गीय डॉ० जेम्स बी० बैलैन्टाइन के संरक्षण में हुई है।

२. 'विष्णु तरंग मल्लि'—विष्णु के आनंद—के। यह ग्रंथ ग्रंथ-कार के नाम वाले छापेख़ाने (बद्रीलाल प्रेस[1]) बनारस से छपा है।

३. हिन्दुई में 'बालबोध व्याकरण'—बच्चों के लिए व्याकरण के (व्याकरण की भूमिका); मिर्ज़ापुर।

मेरे पास इस रचना का बहुत छोटा चौपेजी छब्बीस पृष्ठों का १८५८ में आगरे से छपा छठा संस्करण है।

४. लकड़ी पर खुदे नागरी अक्षरों में छपे 'रॉबिन्सन क्रूसो' के हिन्दी अनुवाद के; बनारस, १८६०, १२-पेजी ४५६ पृष्ठ, 'रॉबिन्सन क्रूसो का इतिहास' शीर्षक के अंतर्गत।

उसका एक संस्करण फ़ारसी अक्षरों में है, बनारस, १८६२, ३३४ अठपेजी पृष्ठ; और एक रोमन अक्षरों में, १८२ अठपेजी पृष्ठ, १८६४।

मेरा विचार है हिन्दी में 'रॉबिन्सन' का अनुवाद हो भी चुका है, और उसका एक अनुवाद निश्चित रूप से उर्दू और फ़ारसी अक्षरों में 'रॉबिन्सन क्रूसो की ज़िंदगी का अहवाल' शीर्षक के अंतर्गत मिर्ज़ापुर में छपा है।

५. (बँगला के माध्यम द्वारा) 'एक हज़ार एक रजनी' का 'सहस्त्र रात्रि संक्षेप' शीर्षक संक्षिप्त हिन्दी अनुवाद के, नागरी अक्षरों में, ८४ अठपेजी पृष्ठ; बनारस, १८६१।

---

[1] 'जेनेरल कैटैलौग', जेंकर (Zenker) द्वारा उल्लिखित, Biblioth. orient. जि० २

६. मिर्ज़ापुर से देवनागरी अक्षरों में छपे भारत में स्त्री शिक्षा पर हिन्दी में एक व्याख्यान के। क्या यह उनकी बनारस इंस्टीट्यूट के विवरण, १८६४-१८६५, पृष्ठ ८, में उल्लिखित 'सीता बनवास' शीर्षक रचना तो नहीं है ?

बलदेव-प्रसाद[1] (लाला)

फ़ारसी से अनूदित एक हिन्दी ग्रंथ के रचयिता हैं और जो मुहम्मद वज़ीर ख़ाँ के छापेखाने में आगरे से १९१९ संवत् (१८-६३) में छपा है। यह देवनागरी अक्षरों में ४० पृष्ठों की एक अठपेजी पुस्तिका है, और अनेक चित्रों से सुसज्जित है।

बलभद्र[2]

'बल-भद्र चिन्ती' (Chintī)—बलभद्र की कथा—के रचयिता हैं, जिसका उल्लेख वॉर्ड ने हिन्दुओं के इतिहास, साहित्य और पौराणिक कथाओं के इतिहास[3] पर अपने ग्रंथ में किया है, किन्तु बिना कोई विस्तार दिए। यह संभवतः कृष्ण के भाई बलदेव की कथा है। लेकिन मौंट्गोमरी मार्टिन[4] कृत 'ईस्टर्न इंडिया' में कहा गया है कि बल-भद्र 'जोतिष' ब्राह्मणों की जाति के आदि पूर्वज हैं, और उन्होंने गँवारू भाषा में ज्योतिष पर विभिन्न रचनाओं का निर्माण किया है। विश्वास किया जाता है कि उन्होंने राजा भोज को मिले महान् अधिकारों की उनके जन्म से पहले ही भविष्यवाणी कर दी थी।

---

१ भा० (देवता बल) बलदेव का प्रसाद

२ 'श्रेष्ठ बल'

३ जि० २, पृ० ४८०

४ जि० २, पृ० ४५४

बलवन्द[1]

डोम या डोमड़ा और शांतनी[2], कुछ धार्मिक कविताओं के रचयिता हैं जिन्हें वे गुरु अर्जुन के सामने गाते थे और जो 'आदि ग्रन्थ' के चौथे खण्ड का भाग हैं।

बलिराम[3]

'चित विलास'[4] के लेखक। यह सृष्टि की उत्पत्ति पर एक रचना है जिसमें मानव-जीवन के उद्देश्यों और उसके अंत, स्थूल और क्षीण शरीरों के निर्माण और निर्वाण-प्राप्ति के साधनों का उल्लेख किया गया है।[5]

बशीशर-नाथ (पंडित)

बुन्देलखंड में रतलाम के हिन्दी-उर्दू साप्ताहिक पत्र के संपादक हैं, जिसका प्रकाशित होना मई, १८६८ से प्रारम्भ हुआ और जिसका शीर्षक है 'रतन प्रकाश'—रत्नों का प्रकाश। प्रत्येक अंक में हिन्दी अनुवाद सहित उर्दू में चार पृष्ठ रहते हैं। मेरठ के 'अख़बार-इ आलम' ने गंभीरता और स्वरूप की दृष्टि से उसके संपादन की प्रशंसा की है।

---

[1] भा० 'शक्तिमान, दृढ़'

[2] इन भारतीय शब्दों का अर्थ है 'संगीतज्ञ', अथवा संभवतः वे उन व्यक्तियों की ओर संकेत करते हैं जो उन मुसलमान गवैयों में, जिनकी स्त्रियाँ नाचती हैं, परिगणित किए जाते हैं।

[3] मेरे विचार से 'बलिराम' और कृष्ण के बड़े भाई का नाम 'बलराम' एक ही शब्द है।

[4] अर्थात् 'आत्मा की क्रीड़ा'; शब्दों में 'चित' = 'मन', 'बुद्धि' और 'विलास' = 'आनन्द, क्रीड़ा'

[5] मैक०, जि० २, पृ० १०८ ('मैकेंनज़ी कलेक्शन')

बाकुत (Bakut)

'पोथी वंशावली'[1]—वंशावली की पुस्तक—शीर्षक पुस्तक के रचयिता हैं, कर्नल टॉड के संग्रह में कुछ फ़ोलिओ पृष्ठों का हिन्दी में हस्तलिखित ग्रंथ।

बापू[2] देव (श्री पंडित)

शर्मा या शास्त्री, बनारस के संस्कृत कॉलेज में गणित के अध्यापक, निम्नलिखित रचनाओं के रचयिता हैं :

१. 'बीज गणित'—अलजबरा के सिद्धान्त—हिन्दी में, १८५६ में बंबई से प्रकाशित और १८५१ में बनारस से (प्रथम भाग रहित) ;

२. 'व्यक्त गणित अभिधान'—प्रत्यक्ष गणना कोष—गणित-संबंधी रचना ; आगरा, १८५६, ६७ अठपेजी पृष्ठ ;

३. 'त्रिकोणमिति'[3]—सरल ट्रिग्नोमेट्री के सिद्धान्त—चित्रों सहित ६० छोटे चौपेजी पृष्ठ; बनारस, १८५६।

बापू देव का भूगोल से भी बहुत सम्बन्ध है, और १८५४ में उन्होंने सामान्य भूगोल की रचना की जिसका भारत के भूगोल से सम्बन्धित भाग हाल ही में प्रकाशित हुआ है।[4] उसका शीर्षक है 'भूगोल वर्णन'। किन्तु इस प्रथम भाग का सम्बन्ध केवल हिन्दुस्तान से है ; मिर्ज़ापुर, १८५३, १६२ अठपेजी पृष्ठ।[5] पं० स्वरूप

---

[1] कहा जाता है यह रचना वास्तव में 'बाकुताकर' (Bâkutakara) है, अर्थात् बाकुत कृत। वल्लभ पर लेख देखिए।

[2] भा० 'वपु'—शरीर के लिए

[3] एच० एस० रीड, 'रिपोर्ट ऑन इंडिजेनस ऐजूकेशन' (देशी शिक्षा-संबंधी रिपोर्ट); आगरा, १८५४, पृ० ५७

[4] कुंज बिहारी लाल लेख भी देखिए।

[5] इसी शीर्षक की रचना के उल्लेख के लिए बंसीधर लेख देखिए।

नारायण और पण्डित शिव नारायण द्वारा 'मरे, एनसाइक्लोपीडिया ऑव ज्योग्राफ़ी' (Murray, Encyclopedia of Geography) के आधार पर रचित की अपेक्षा लोग इसे पसंद करते हैं।

उन्होंने 'भूगोल सार' शीर्षक के अंतर्गत एक अत्यन्त संक्षिप्त भूगोल प्रकाशित किया है।

बाल कृष्ण[1] (शास्त्री)

ने 'भूगोल विद्या' शीर्षक के अंतर्गत एक भूगोल सम्बन्धी रचना का अँग्रेज़ी से हिन्दी में अनुवाद किया है ; जिसके प्रथम संस्करण का शीर्षक था 'भूगोल वृत्तांत'। १८६० में इलाहाबाद से छपा दूसरा संस्करण चित्रों सहित अठपेजी है और उसमें ४४ पृष्ठ हैं।

बाल गंगाधर[2] (शास्त्री)

१८१० में राजपूर में उत्पन्न हुए थे, १८२९ में दिल्ली में प्रोफ़ेसर हुए, और १८४६ में बंबई में मृत्यु को प्राप्त हुए। वे हिन्दी, संस्कृत, फ़ारसी और अँगरेज़ी में प्रवीण थे। मराठी में उनकी अनेक रचनाएँ हैं, और उनकी अन्य रचनाएँ हिन्दी में हैं जिनमें से 'कवि चरित्र' में उल्लिखित प्रधान रचनाएँ ये हैं :

१. 'बाल व्याकरण'—बच्चों के लिए व्याकरण ;

२. 'नीति कथा'—सदुपदेश की कथाएँ (हिन्दी भाषा में कथाएँ), अठपेजी पुस्तिका ; आगरा, १८४६। यही रचना हिन्दुई में भी प्रकाशित हुई है, अठपेजी पुस्तिका; कलकत्ता, १८४३।

३. 'सूर संग्रह'—सूर-दास की चुनी हुई कविताएँ;

४. 'भूगोल विद्या'—भूगोल संबंधी ज्ञान, भूगोल संबंधी कीथ (Keith) की रचनाओं से संग्रह।

---

[1] भा० 'बालक कृष्ण'

[2] भा० 'बालक शिव'

बिन चन्द बनर्जी (बाबू)

एक हिन्दू हैं जिनके संरक्षण में 'गणित सार' अर्थात् गणित-सम्बन्धी पुस्तक के दूसरे और तीसरे भाग १८६३ में लाहौर से प्रकाशित हुए हैं, १६८ और १५० अठपेजी पृष्ठ। पहला भाग पं० अयोध्याप्रसाद की देखरेख में मुद्रित हुआ है।

बिल्व[1] मंगल

धार्मिक भजनों और 'मंगलाचरण'[2], जो, मेरे विचार से, कविताओं का संग्रह है, के रचयिता, एक अत्यंत प्रसिद्ध हिन्दू सन्त हैं। 'भक्तमाल' में उनका उल्लेख इस प्रकार है।

छप्पय

कृष्ण कृपा को पर प्रगट बिल्वमंगल मंगल[3] स्वरूप।
करुणामृत सुकबित्त उक्ति अनुबिष्ट उचारी।[4]
रसिक जननि जीवनि हृदय जै हारावलि धारी।
हरि पकरायो हाथ बहुरि तहँ लियो छुटाई।
कहा भयो कर छुटैं बदौ तौ हिये ते जाई।
चिंतामणि[5] संग पाइ कै ब्रज बधू केलि बरणी अनूप।
कृष्ण कृपा को पर प्रगट बिल्वमंगल मंगल स्वरूप।

---

१. भा० Aegle Marmelos को बिल्व कहते हैं।

२. 'मंगलसूचक नियम', रचयिता के नाम से संबंधित।

३. कवि ने ऐसा इसलिए व्यक्त किया है क्योंकि उल्लिखित संत इस ग्रह का नाम धारण किए हुए है।

४. अर्थात् मेरे विचार से, प्रभु की भावना से पूर्ण व्यक्ति ही उनकी कविताओं का महत्त्व समझ सकते हैं।

५. यह एक अद्भुत पत्थर का नाम है जिससे, अल्लादीन के चिराग की भाँति, इच्छित वस्तु प्राप्त होती है। यहाँ यह शब्द उस स्त्री के नाम से संबंधित है जिसका उल्लेख नीचे किया गया है।

टीका

बिल्व मंगल ब्राह्मण नामक एक व्यक्ति अत्यन्त मतिधीर था, जो कृष्णा के किनारे रहता था। दूसरे किनारे चिंतामणि नाम की एक स्त्री रहती थी। एक समय, जब कि वे उसके किनारे स्नान कर रहे थे, चिंतामणि दूसरे किनारे पर स्नान करने के लिए आई। उसने एक गाना इतने अच्छे स्वर से गाया, कि बिल्व मंगल अधीर हो गए, और तत्पश्चात्, उसके राज में, अपना सब कुछ त्याग कर उसके घर में जा कर रहने लगे।

एक दिन उन्होंने अपने पिता का श्राद्ध किया, सभी आगत व्यक्तियों को भोजन बाँटने में अत्यधिक समय लग गया; साथ ही वे व्याकुल हो गए। तुरंत वे नदी के समीप आए। किन्तु चार महीने की वर्षा के कारण नदी बहुत बढ़ी चढ़ी थी; और क्योंकि शाम हो चुकी थी, उन्हें कोई नाव भी न मिली। उन्होंने सोचा कि यदि मैं रात में नदी पार करता हूँ, तो पहुँच नहीं सकता, बीच में ही रह जाऊँगा; और यदि मैं यहीं रह जाने का निश्चय करता हूँ तो बिना चिंतामणि को देखे जीवित नहीं रह सकता; यदि दोनों प्रकार से जीवन से हाथ धोना है, तो पहला मार्ग ग्रहण करना उचित होगा।

इस प्रकार विचार कर, वे नदी में कूद पड़े, और डूबते-उतराते रात भर में आधी पार की। वे मृत्यु को प्राप्त होने ही वाले थे कि एक लाश उनके सामने से निकली। अपनी प्रियतमा द्वारा भेजी गई नाव समझ कर, वे मृत्यु से बचने के लिए सहारा लेकर उस पर बैठ गए; और सचमुच लाश दूसरे किनारे की ओर बढ़ चली। किनारे लगते ही बिल्व मंगल ने चिंतामणि के यहाँ पहुँचने में कुछ भी विलंब न किया। एक साँप मकान की छत से लटक रहा था। उन्होंने मन में सोचा : 'निस्संदेह मेरी अच्छी-सी प्रियतमा ने मेरे विलंब से चिंतित होकर, सोने से पहिले यह रस्सी लटका दी होगी।' तब उसे रस्सी समझ कर वे उसके सहारे छत पर चढ गए, और चिंतामणि

के कमरे में पहुँचने के लिए वे आँगन में कूद पड़े। उनके कूदने की आवाज़ ने सब को जगा दिया, और चिंतामणि की नींद टूट गई। चोर आए समझ कर, उसने दीपक जलाया, और बिल्व मंगल को देख कर आश्चर्य-चकित हुई; तथा सब-कुछ देख कर अत्यन्त दुःखी हुई। अपने प्रेमी को स्नान कराकर, उसने सूखे कपड़े पहिनाए, और अपने कमरे में ले गई। उसने उनसे पूछा कि नदी के इतनी चढ़ी रहने पर भी वे ऐसे समय पर कैसे आ सके। उन्होंने कहा : 'तुम्हीं ने तो मेरे लिए एक नाव भेज दी थी, और मैंने दरवाजे पर एक रस्सी लटकती हुई पाई।' इतना सुनते ही चिंतामणि तेज़ी से दौड़ी और चिल्ला कर कहा : 'तुम इतना झूठ क्यों बोलते हो?' ज्यों ही वह आगे बढ़ी, उसने साँप देखा, और नाव की बात भी उसे अधिक ठीक न जान पड़ी। तब उसने बिल्व मंगल से कहा : 'मैं तुम्हें तब बुद्धिमान समझूँगी जब कि तुम्हें जैसा प्रेम मेरे हाड़ और चाम से है वैसे ही कृष्ण के प्रति हो, अब से तुम तुम हो, और मैं अपनी स्वामिनी हूँ। ये शब्द कहने के बाद उसने अपने हाथ में बीन ली, और अपने को बिल्व मंगल से अलग करते हुए कृष्ण और गोपियों की रास-क्रीड़ा पर एक नया पद गाया। बिल्व मंगल के मन की आँखें खुल गईं, जैसे रात्रि के बाद प्रभात। उनके मन में भौतिक पदार्थों के प्रति विरक्ति उत्पन्न हो गई। प्रातःकाल चिंतामणि निकली, और एक तरफ़ चली गई; बिल्व मंगल दूसरी ओर चले गए। वे सोमगिरि के शिष्य हो गए, और पूरे एक वर्ष उनके पास रहे। परमात्मा के नित नए सौन्दर्य-रस से पूर्ण ग्रन्थों का पारायण करने के बाद, वे वृन्दावन गए। मार्ग में उन्होंने एक तालाब के किनारे रुक कर वहाँ निवास किया, और किसी वस्तु की ओर देखा तक नहीं। वृन्दावन नगर में उनका बड़ा यश फैला।

एक धनाढ्य साहूकार की पत्नी इस तालाब में नहाने आई; उसके सौन्दर्य पर मोहित होकर वे पीछे लग गए।

दोहा

वे अधिक समय तक उदासीन न रह सके; वे उसे देखने लगे। उन्होंने अपनी माला, अपने थैले, अपनी भगवत्-गीता और टीके का परित्याग कर दिया।

पहले के स्थान पर सोना, दूसरे के स्थान पर स्त्री, तीसरे के स्थान पर तलवार वांछनीय है।

वे हरि पर निर्भर होकर रहने चले थे, किन्तु उसके मार्ग के बीच में ही प्रेम के एक आघात ने उसे दूर कर दिया।

जो स्त्री उनके मन चढ़ गई थी वह तुरन्त अपने घर पहुँची। बिल्व मंगल दरवाजे पर ही रह गए। उधर से साहूकार घर आया, और ज्योंही उसने साधु को दरवाज़े पर खड़ा देखा, उसने अपनी स्त्री से उन्हें दान देने के लिए कहा। स्त्री ने उससे कहा : 'यह व्यक्ति साधु नहीं है; मैंने तपसी के रूप में उसकी ख्याति सुनी थी, और मैं जानती हूँ कि वह मेरे पीछे लग आया है।' ये शब्द सुनते ही साहूकार ने बिल्व मंगल को भीतर बुलाया, उन्हें अपनी चित्रसारी में बिठाया, और अपनी स्त्री से साधु को खाने के लिए थाली में भोजन तैयार कर देने, उनकी इच्छानुसार सब प्रकार की सेवा करने के लिए कहा। स्त्री ने अपने पति की आज्ञा का पालन किया, और ठीक-ठीक वही किया जो उससे करने के लिए कहा गया था। वह तुरन्त एक थाली में भोजन सँवार कर चित्रसारी में पहुँची। किन्तु भगवत् ने बिल्व मंगल का मन बदल दिया, और उन्होंने स्त्री से कहा : 'मुझे दो सुइयाँ ला दो।' उसने वैसा ही किया। तब बिल्व मंगल ने उन्हें लेकर, अपनी दोनों आँखों को छेदते हुए कहा : 'ये ही दो बुरी चीजें हैं जिनके कारण मैंने वृन्दावन के मार्ग में जाना छोड़ दिया था, और मैं यहाँ आ गया था।' साहूकार की स्त्री इस दृश्य से भयभीत हो जो कुछ हुआ था उसे अपने पति से कहने गई। साहूकार दौड़ा आया।

और बिल्व मंगल के चरणों पर गिरते हुए कहा : 'क्या मैंने साधु को कोई कष्ट पहुँचाया है ? यहाँ आइए, साधु, मुझसे जो सेवा हो सकेगी करूँगा।' साधु ने उत्तर दिया : 'तुमने तो वैसे ही मेरी बड़ी भारी सेवा कर दी है।' तब बिल्व मंगल ने फिर वृन्दावन का मार्ग ग्रहण किया। रास्ते में, कभी धूप, कभी छाया, कभी भूख, कभी जो कुछ मिल गया खा लिया। जब सूर्य की किरणें उन्हें पीड़ित करती थीं, तो प्रभु (कृष्ण) उनका हाथ पकड़ कर छाया में ले जाते थे। बिल्व मंगल हाथ की मृदुता पहिचान कर उसे छोड़ना न चाहते थे।

बिल्व मंगल के वृन्दावन पहुँचने के बाद प्रभु किसी अपरिचित के द्वारा उनके पास दूध और उबले हुए चावल भिजवा देते थे। इन्हीं बातों के बीच में बिल्व मंगल ने देखने की शक्ति को फिर से प्राप्त करने की इच्छा प्रकट की, ताकि उन्हें कृष्ण के सुन्दर मुख के चिंतन का लाभ प्राप्त हो सके। भगवत् ने, उन्हें प्रसन्न करने के लिए, मुरली ऐसी ध्वनि में बजाई जो श्रवण-मार्ग द्वारा बिल्व मंगल तक पहुँची; और तब बिल्व मंगल ने मंगलाचरण' नामक पुस्तक का अपने मुख से उच्चारण किया, जिसमें श्रेष्ठता का अमृत भरा हुआ है।

संस्कृत श्लोक

चिंतामणिर्जयति सोमगिरिर्गुरुर्येशिक्षा गुरुश्च भगवान् शिषिपिच्छमौलिः ॥ यत्पादकल्पतरुपल्लवशेखरेषु लीला स्वयं-वररसंलभतेव य श्रीः ॥[1]

कमल पुष्प की भाँति आँखें खुल जाने के बाद, उन्होंने कुछ दिन ज्ञान की बातें प्राप्त करने में व्यतीत किए। इसी बीच में चिंतामणि उनके पास पहुँची, और आपस में रीझे हुए वे एक दूसरे से बातें करने लगे। इसी समय प्रभु ने उनके खाने के लिए दूध और उबले हुए

---

[1] यह श्लोक तथा मूल छप्पय दोनों मुंशी नवलकिशोर प्रेस के १८८३ ई० में प्रकाशित 'भक्तमाल' (प्रथम संस्करण) से लिए गए हैं।—अनु०

चावल भेजे। बिल्व मंगल ने ये चीजें चिंतामणि के सामने रख दीं, जिसे उन्होंने अपने यहाँ मेहमान बनकर आई हुई एक अपरिचिता के रूप में माना। चिंतामणि ने कहा : 'तब मैंने अपने कर्मों द्वारा क्या पुण्य कमाया जो हरि मुझे यहाँ लाए, और ख़ास अपने हाथों से मेरा मार्ग-प्रदर्शन किया, ताकि मैं इस स्थान पर पहुँच सकूँ ?'

उनके पास बिना किसी और के आए, इस बातचीत में दिन व्यतीत हो गया।

बिल्व मंगल और चिंतामणि की ऐसी कथा है।

बिस्मिल (पं० मन्नूलाल)

औरंगाबाद के कायस्थ, सैयद मुहम्मद अली नज़ीर के शिष्य, करीम, जिन्होंने उनकी कविताओं में से एक छंद उद्धृत किया है, द्वारा उल्लिखित, उर्दू-कवि और हिन्दी के लेखक दोनों हैं। अंतिम रूप में 'पद्म पुराण' के 'पाताल खण्ड' पर आधारित, राजा ईश्वरीप्रसाद नारायण सिंह के संरक्षण में उनके पुस्तकालय में सुरक्षित एक हस्तलिखित प्रति के आधार पर प्रकाशित, 'रामाश्वमेध' उनकी देन है; बनारस, १९२५ संवत् (१८६९), २५० चौपेजी पृष्ठ।

बिस्वनाथ[1] सिंह (राजा)

लोकप्रचलित हिन्दी गीतों और कबीर की कविताओं पर 'टीका' के रचयिता हैं।

बिहारी लाल

कबीर के समकालीन बिहारी लाल हिन्दुई के एक अत्यन्त प्रसिद्ध लेखक हैं; अँगरेज़ उन्हें भारत का टॉमसन (Thompson) पुकारते हैं। वे 'सतसई' नामक काव्य के रचयिता हैं जो इतनी अधिक प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी है कि हिन्दू लोग अनवरत रूप में उसके अंश उद्धृत करते हैं और जो बनारस के राजा

[1] विश्व का मालिक (विष्णु)

चेतसिंह के आश्रय में पंडित हरिप्रसाद द्वारा सुन्दर संस्कृत छंदों में अनदित हो चुकी है।[1] हमारे संवत्सर की सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ में बिहारी आमेर[2] दरबार के प्रिय पात्र थे। कहा जाता है कि इस बात की सूचना मिलने पर कि महाराज जैसाह,[3] जो इसी समय वर्तमान थे, अपनी नवविवाहिता तरुणी पत्नी के सौन्दर्य पर इतने मुग्ध थे, कि राज्य-कार्य भी बिल्कुल भूल गए, उन्होंने एक उपलब्ध दास द्वारा एक दोहा महाराज के कानों तक पहुँचाया ताकि वे अपनी निद्रा से जाग उठें। इससे उन्हें सफलता ही प्राप्त नहीं हुई, वरन् राज्याश्रय प्राप्त हुआ। वह दोहा इस प्रकार है (मूल में अनुवाद दिया गया है—अनु०) :

> नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास एहि काल।
> अली कली ही सों बँध्यो आगे कौन हवाल॥

उनकी कविताओं का जो क्रम वर्तमान समय में उपलब्ध है वह अभागे राजकुमार आज़मशाह के लाभार्थ निर्धारित किया गया था, और इस प्रकार का संस्करण 'आज़मशाही' के नाम से पुकारा जाता है।[4] 'सतसई' सात सौ दोहा या दोहरा (वर्णनात्मक शैली की दो पंक्तियाँ) में रचा गया एक प्रकार का दीवान है। राधा और गोपियों के साथ कृष्ण की क्रीड़ाएँ उसका प्रधान विषय है। विद्वान् श्री विल्सन के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि बिहारी ने अपनी 'सतसई' संबंधी प्रेरणा गोवर्द्धन कृत 'सप्तशति' से ग्रहण की। 'सप्तशति' रचना भी विभिन्न विषयों पर सात सौ छंदों का संग्रह है।

---

१ 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि०, पृ० २२१

२ सूबा जयपुर का प्राचीन राजधानी

३ यहाँ पर निस्संदेह आमेर या जयपुर के राणा, जयसिंह, जिनका नाम मिर्ज़ा राजा भी है, से तात्पर्य है। साह 'शाह' का भारतीय रूपान्तर है।

४ कोलब्रुक, 'डिसर्टेशनस्' ('एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० ७, पृ० २२१, और जि० १०, पृ० ४१३)

अनुमानतः[1] इस पिछली रचना का हिन्दुई अनुवाद ही लल्लूलाल ने 'सप्त शतिका' शीर्षक के अंतर्गत, जो इस काव्य को दिया गया नाम भी है,[2] कलकत्ते से प्रकाशित किया।[3] जो कुछ भी हो, बिहारी की 'सतसई' की अत्यधिक प्रसिद्धि है, और पंडित बाबूराम द्वारा यह १८०६ में अठपेजी साइज़ में कलकत्ते से प्रकाशित हो चुकी है। इस कृति की दूसरी जिल्द में मैं इस रचना पर फिर विचार करूँगा। उसके अन्य अनेक संस्करण हैं। 'सप्त शतिका' शीर्षक संस्कृत रचना की एक प्रति, जो ईस्ट इंडिया पुस्तकालय के सुन्दर संग्रह का एक भाग है, में कोलब्रुक का लिखा हुआ निम्नलिखित नोट पाया जाता है :

'सप्तशती (या ७०० दोहे), गोवर्धनाचार्य कृत, अवंत पंडित (Avanta Pandita) की टीका सहित। यह वह मूल रचना कही जाती है जिससे बिहारी ने 'सतसई' का अनुवाद किया और बाद को जो फिर संस्कृत में अनूदित हो चुकी है...किंतु भूमिका के द्वितीय छंद से मुझे इसके प्राकृत से अनूदित होने में संदेह होता है। तो भी जयदेव ने गोवर्धन की प्रशंसा की है। स्वयं उन्होंने पूर्ववती कवियों की प्रशंसा की है, काव्य की भूमिका का छंद ३०।'

सतसई की आठ विभिन्न ज्ञात टीकाओं की गणना की जा सकती है। कवि लाल कृत टीका बनारस से १८६४ में छपी है, ३६० चौपेजी पृष्ठ।[4]

मेरे पास दो हस्तलिखित प्रतियाँ हैं, एक फ़ारसी लिपि में,

---

१ अनुमानतः मैं इसलिए कहता हूँ क्योंकि मैं इस रचना की एक प्रति भी नहीं देख सका।

२ इस काव्य की पद्धति के विषय पर, देखिए कोलब्रुक, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि०, १०, पृ० ४१३

३ देखिए लल्लूलाल पर लेख।

४ 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १०, पृ० ४१४ और ४१६

फलतः अत्यन्त असुविधाजनक रूप में, और दूसरी देवनागरी अक्षरों में जो मुझे स्वर्गीय जे० प्रिन्सेप की कृपा से प्राप्त हुई थी, किन्तु दुर्भाग्यवश जिसमें अशद्धियाँ भरी पड़ी हैं ।

बीरभान

बीरभान जो हिन्दू सम्प्रदाय 'साधु'[1] अर्थात् शुद्ध (शुद्धवादी) के संस्थापक माने जाते हैं दिल्ली प्रान्त में नारनौल के निकट ब्रज-हसिर (Brijhacir) के निवासी थे । विक्रम सवत् १७१४ (१६५८ ईसवी सन्) में उन्हें 'सतगुरु' (सच्चा पथ-प्रदर्शक), जिसे 'उदक दास' (अद्भुत देवता का दास) भी कहते हैं, और 'मालिक का हुक्म' (स्वामी की आज्ञा या मानव रूप में ईश्वर के शब्द) का दैवी प्रकटीकरण हुआ ।

बीरभान के दिव्य गुरु द्वारा दिए गए उपदेश मनुष्यों को 'शब्द' या 'साखी', अर्थात् कबीर के समान हिन्दी के मुक्तक छन्दों, द्वारा दिए गए थे । वे कुछ ग्रन्थों के रूप में संग्रहीत कर लिए गए हैं और साधुओं के धार्मिक सम्मेलनों में पढ़े जाते हैं । उन्हीं का सार लेकर 'आदि उपदेश', अर्थात् सर्व प्रथम उपदेश, नामक पुस्तक की रचना की गई । इस पुस्तक में सभी 'साधु' उपदेश बारह आज्ञाओं या हुक्मों में परिणत कर दिए गए हैं जो भिन्न-भिन्न रूप में दुहराए जाते हैं, किन्तु जो सदैव पहिचाने जा सकते हैं । श्री विल्सन ने अपने सुन्दर ग्रंथ 'मेम्वायर ऑन दि हिन्दू सेक्ट्स' (हिन्दू संप्रदायों का विवरण) में उनका परिचय दिया है । मेरा विश्वास है कि उन्हें यहाँ उद्धृत करने में पाठक सहमत होंगे :[2]

---

[1] ये संप्रदायवाले Cathares कहे जाते हैं, जिसका नाम और विशेषता समान है और जिसके उसी के अनुरूप सिद्धान्त हैं ।

[2] मूल पाठ 'सतनामी साधमत' की पेरिस के राजकीय पुस्तकालय वाली बंगाल सिविल सर्विस के श्री एफ़० एच० रॉबिन्सन द्वारा उसे प्रदत्त हस्तलिखित पोथी, ८३ तथा बाद के पृष्ठ, में है ।

१. केवल उस ईश्वर को मानो जिसने तुम्हें पैदा किया है और जो तुम्हें मार सकता है, जिससे कोई बड़ा नहीं है, और फलतः जिस अकेले की ही तुम्हें पूजा करनी चाहिए। न तो मिट्टी, न पत्थर, न धातु, न लकड़ी, न वृक्ष, अंत में न किसी उत्पन्न हुई वस्तु की पूजा करनी आवश्यक है। केवल एक स्वामी है और स्वामी का शब्द है। जो मिथ्या-प्रेमी हैं और कपटाचरण करते हैं, वे ही नरक में गिरने का पाप करते हैं।

२. नम्र और विनयशील बनो। सांसारिक मोह में मत पड़ो। अपने धर्म-चिन्ह के प्रति सच्चे रहो; भिन्न मतावलंबियों से समानता बचाओ, अपरिचित की रोटी मत खाओ।

३ कभी झूठ मत बोलो। किसी समय किसी चीज़ की, मिट्टी की, पानी की, वृक्षों और पशुओं की, बुराई मत करो। ईश्वर की प्रशंसा में अपनी वाणी का प्रयोग करो। धन, धरती, पशु और उनके चारे की इच्छा कभी मत करो। दूसरे की सम्पत्ति का आदर करो, और जो कुछ तुम्हारे पास है उसी में संतोष रखो। बुरा कभी मत सोचो। पुरुषों, स्त्रियों, नृत्यों, दृश्यों के संपर्क में आने पर अश्लील वस्तुओं पर दृष्टि मत जमाओ।

४. बुरी कथाएँ मत सुनो, रचयिता की प्रशंसा के अतिरिक्त और कोई नहीं। भजनों के अतिरिक्त न कथा-कहानी, न बात, न निंदा, न संगीत, न गाना सुनो।

५. कभी कोई इच्छा मत करो, न अपने शरीर के लिए, न उससे संबंधित धन की। उन्हें दूसरों से मत लो। ईश्वर सब चीज़ें देता है; उसमें अपने भरोसे के अनुसार तुम्हें मिलता है।

६. जब कोई पूछे तुम कौन हो, कह दो हम साधु हैं; जाति मत बताओ; विवादों में मत पड़ो। अपने धर्म में दृढ़ रहो; और मनुष्य में अपनी आशा मत रखो।

७. सफ़ेद कपड़े पहिनो, न तो रंग, न काजल, न अफ़ीम मिले

पदार्थों, न मेंहदी का प्रयोग करो ; न तो अपने शरीर पर कोई चिन्ह लगाओ, और न माथे पर अपना कोई ख़ास साम्प्रदायिक चिन्ह लगाओ; न तो माला, न सुमिरनी, न रत्न पहिनो।

८. न तो कभी कोई नशीली चीज़ खाओ और न पियो, न पान चबाओ, न इत्र सूँघो, न तम्बाकू पियो, अफ़ीम न खाओ और न सूँघो; न अपने हाथ फैलाओ, और न मूर्तियों और मनुष्यों के सामने अपना सिर झुकाओ।

९. मनुष्य-हत्या मत करो; किसी के साथ हिंसा मत करो; अपराधी को सज़ा दिलाने वाली गवाही मत दो; न कुछ बल-पूर्वक लो।

१०. एक पुरुष केवल एक ही स्त्री रखे, और एक स्त्री एक ही पति ; स्त्री पुरुष की आज्ञाकारिणी हो।[1]

११. किसी भिक्षुक के कपड़े मत लो ; न दान माँगो, और न भेंट ग्रहण करो। प्रेत-विद्या में न तो विश्वास करो और न उसकी शरण लो। विश्वास करने से पूर्व जान लो। पवित्र व्यक्तियों की संगतें ही एक मात्र तीर्थ स्थान हैं। उनमें से जो तुम्हें मिलें उन्हें प्रणाम करो।

१२. दिन, दो अमावस्या के बीच के काल, महीनों, ध्वनियों, और चिड़ियों तथा चतुष्पदों के संबंध में साधु को अंधविश्वासी नहीं होना चाहिए। वे केवल ईश्वर की इच्छा खोजते हैं।

जो कुछ ऊपर कहा गया है उससे हम देखते हैं कि साधु लोग, जिन्हें एकेश्वरवादी भारतीय कहा जा सकता है, केवल एक ईश्वर की उपासना करते हैं। उसे वे 'सतकर', अर्थात् सद्गुण का करने वाला, और 'सतनाम', अर्थात् सच्चा नाम, के नाम से पुकारते हैं। इस अंतिम शब्द के कारण, जिसका वे परमात्मा के लिए प्रयोग

[1] पाठ में, और भी है कि पुरुष को स्त्री का छोड़ा हुआ नहीं खाना चाहिए, किन्तु, रिवाज के अनुकूल, इसके विपरीत की आज्ञा है।

करते हैं, उन्हें कभी-कभी 'सतनामी' के नाम से भी पुकारा जाता है; किन्तु यह नाम एक दूसरे सम्प्रदाय के लिए विशेषतः प्रयुक्त होता है। उनका मत अत्यन्त सरल है। वे सभी प्रकार की मूर्ति-पूजा का खण्डन करते हैं। वे अन्य नदियों की अपेक्षा गंगा की अधिक भक्ति नहीं करते। सभी प्रकार के आभूषण उनके लिए निषिद्ध हैं। वे न तो नमस्कार करते हैं और न शपथ खाते हैं।[१] वे सभी प्रकार के व्यसनों से दूर रहते हैं, जैसे, तंबाकू, पान, अफ़ीम और मद्य। वे नर्तकियों के उत्सवों में कभी नहीं जाते।[२]

साधुओं के सिद्धान्त, कुछ ईसाई मत के सिद्धान्तों के अतिरिक्त स्पष्टतः कबीर, नानक तथा भारत के अन्य धार्मिक दार्शनिकों के सिद्धान्तों से निकले हैं। तो भी, श्री विल्सन के अनुसार, जहाँ तक उनके सृष्टि-निर्माण, छोटे-छोटे देवी-देवताओं और मुक्ति या भौतिक जीवन से छुटकारे पर विचार हैं वे अन्य भारतीयों की भाँति सोचते हैं।

उनका कोई मन्दिर नहीं होता, किन्तु वे किसी मकान या मार्ग में किसी निश्चित तिथि पर इकट्ठा होते हैं। उनके समाज पूर्णमासी के दिन जुड़ते हैं। दिन भर वे मनोरंजक बातचीत करते रहते हैं। शाम को इकट्ठा होकर वे प्रीतिभोज करते हैं और उसके बाद बीरभान या उनके गुरु द्वारा रचे कहे जाने वाले छन्दों और दादू, नानक और कबीर की कविताओं का गान करते हुए रात्रि व्यतीत कर देते हैं।

---

१ जैसा कि कोई भी देख सकता है, इस सम्प्रदाय की क्वेकरों से अत्यधिक समानता है।

२ ये सूचनाएँ डब्ल्यू० एच० ट्रैंट (W H. Trant) कृत 'नोटिस ऑन दि साध', 'ट्रान्जैक्शन ऑव दि रॉयल एशियाटिक सोसायटी', जि० १, २५१ तथा आगे के पृष्ठों से, ली गई है।

जिन नगरों में साध बहुत पाए जाते हैं वे दिल्ली, आगरा, जयपुर, फ़र्रुख़ाबाद हैं। इन नगरों में से किसी एक में एक बड़ा भारी वार्षिक समाज जुड़ता है।

साधुओं के धर्म पर हिन्दुस्तानी रचनाएँ, जो मेरे जानने में आ सकी हैं, निम्नलिखित हैं :

१. 'पोथी ज्ञान बानी साध सतनामी के पंथ की', अर्थात् साध सतनामी सम्प्रदाय के ज्ञान पर उपदेशों की पुस्तक। डब्ल्यू० एच० ट्रैंट (W. H. Trant), जिन्हें फ़र्रुख़ाबाद के इस सम्प्रदाय के गुरु भवानी-दास ने इसकी एक प्रति दी थी, इस रचना को साधुओं का धार्मिक ग्रंथ बतलाते हैं। श्री ट्रैंट यह प्रति लंदन की रॉयल एशियाटिक सोसायटी को दे चुके हैं। यह एक चौपेजी हस्तलिखित पोथी है।'

२. साधु धर्म का विवरण, हिन्दुस्तानी में ; चौपेजी हस्तलिखित पोथी, पहली की भाँति श्री ट्रैंट द्वारा रॉयल एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय को प्रदत्त।

बीरभान और साधु सम्प्रदाय के इतिहास की जो व्याख्या मैंने यहाँ की है उससे भिन्न रूप में रेव० एच० फ़िशर ने 'एशियाटिक जर्नल', जि० ७, पृ० ७२ और बाद के, में प्रकाशित एक रोचक लेख में की है।[1]

सम्प्रदाय की कुछ अन्य धार्मिक कविताओं सहित 'आदि उपदेश' 'सतनामी साधमत' नामक एक संग्रह का अंश है, और इस प्रकार जिसमें हैं :

---

[1] मेरा रचना 'हिन्दुई के प्राथमिक सिद्धान्त' (Rudiments Hindouis) की भूमिका भी देखिए।

१. 'आदि उपदेश', जिसका अभी उल्लेख हो चुका है ;
२. 'चितौनी' नामक उपदेश की चार मालाएँ ;
३. 'बिधि' और 'बानी' नामक विभिन्न कविताएँ ;
४. 'आदि लीला'[१] ;
५. 'अष्टांग जोग' ;
६. 'निसानी'—साधुओं की विशेषताएँ ;
७. 'नौ निधि'—अर्थात् ध्यान द्वारा प्राप्त लाभ ;
८. 'भेष चितौनी' ;
९. 'राजखण्ड' ;
१०. 'दुनिया की चितौनी' ;
११. 'साध पदवी' ;
१२. 'बसंत'[२] ;
१३. 'होरी'[३] ;
१४. 'पर्वती'[४] ;
१५. 'आरती'[५] ;
१६. 'मंगल' ;
१७. 'कबित'[६] ;
१८. 'कुंडरिया'[७] ;

---

[१] 'लीला' शब्द का अर्थ है 'कृष्ण की क्रीड़ाएँ', और फलतः गीत जो उनका वर्णन करते हैं।

[२] यह एक राग और विशेष प्रकार की कविता का नाम है।

[३] इस गीत पर मेरा 'हिन्दू उत्सवों का विवरण' देखिए।

[४] एक विशेष रागिनी और कविता।

[५] एक व्यक्ति या मूर्ति पर दीपक को वर्तुलाकार घुमाने की रस्म को इस प्रकार का नाम दिया जाता है।

[६] एक प्रकार की कविता जिसका उल्लेख भूमिका में किया गया है।

[७] उसी प्रकार की एक कविता जिसे साधारणतः 'कुंडलिया' कहते हैं।

१९. 'मालक की प्रशंसा' ;
२०. 'मनशा जन्म निस्तारा' ;
२१. बारह आज्ञाएँ जिनका मैंने अनुवाद किया है ;
२२. 'निर्बान' पर दोहे ;
२३. अंत में 'बड़ा पद' शीर्षक गीत।

ये विभिन्न अंश अत्यन्त सरल हिन्दी में लिखे गए हैं।

बृन्द या वृन्द (श्री कवि)

हिन्दी दोहों में 'सत सती' या 'सतसई' शीर्षक कहावतों के संग्रह के रचयिता हैं। यह रचना पहले रेवरेंड जे० जे० मूर (Moore) द्वारा प्राचीन ग्रंथ के रूप में आगरे से मुद्रित हुई थी, उसके बाद संवत् १९११ (१८५५ ई०) में वह बंबई से फिर मुद्रित हुई है, १०२ बारह-पेजी पृष्ठ।

बैजू बावरा[1] या बायु बावरा (नायक)[2]

उत्तर भारत के एक प्रसिद्ध संगीतज्ञ हैं, जो छः या सात सौ वर्ष पूर्व विद्यमान थे। उनका संगीतज्ञों और गवैयों में मान है, और उन्होंने लोकप्रिय गीत लिखे हैं। राग सागर ने और नेमचन्द ने, 'गुल ओ सनोवर,' भारत में मिलने वाले उसके संस्करण के पृष्ठ ७०, में, उनका उल्लेख किया है।

बैनर्जी[3] (रेव० के० एम्०)

ईसाइ हो गए हिन्दू, बिशप कॉलेज, कलकत्ता में प्रोफ़ेसर

---

१ 'ख़राब हवा'

२ यह शब्द, जो भारतीय है, फ़ारसी 'सरदार' की तरह है और जिसका अर्थ 'नेता' है। अब उसका प्रयोग कॉरपोरलों के लिए होता है।

३ भा० इस और आगे के शब्द की उत्पत्ति 'बानर जी' से होनी चाहिए। अथवा 'बानर' का अर्थ है बन्दर, अर्थात् 'वानर हनुमान', 'जी' एक आदरसूचक शब्द है।

हैं, जिनकी अँगरेज़ी में 'Dialogues of the Principal Schools of hindu philosophy, embracing a full statement of their prominent doctrines and a refutation of their errors, with extensive quotations of original passages never before printed or translated' शीर्षक एक हिन्दी रचना है।

यह रचना एफ़० ई० हॉल द्वारा हिन्दी से अँगरेज़ी में अनूदित हुई है : मैंने २ दिसम्बर, १८६१ के हिन्दुस्तानी व्याख्यान माला के प्रारंभिक व्याख्यान में उसका उल्लेख किया है।

बैनर्जी (बा० प्यारे मोहन)

ने पण्डित ईश्वर चन्द्र (विद्यासागर) कृत 'उपक्रमणिका' शीर्षक संस्कृत व्याकरण का बँगला से हिन्दी में अनुवाद किया है, अठपेजी ६६ पृष्ठ, बनारस, १८६७।

बैनी माधन

सैयद हुसेन अली की देखरेख में आगरे से अज्ञात तिथि में नागरी अक्षरों में छपी अत्यन्त छोटे १२-पेजी आठ पृष्ठों की एक 'बारह मासी'[1]—बारह महीने—कविता के रचयिता।

बैनी राम (पंडित)

हिन्दी और उर्दू में चित्रों और ज़िले के एक नकशे सहित, हिन्दी में 'सागर का भूगोल' के रचयिता हैं। सागर, १८५६, छोटे चौपेजी ३० पृष्ठ।

बोधले भाव (Bodhalé Bhava)

एक हिन्दी-कवि हैं, जो धामन (Dhâman) में, जहाँ उनके

[1] 'बैनी माधन की बारहमासी'

वंशज अब भी रहते हैं, शक संवत् १६०० (१६७८ ई०) में हुए, और जिन्होंने धार्मिक कविताओं की रचना की है। और रचनाओं के अतिरिक्त उनकी देन हैं :

१. 'भक्ति विजय';
२. 'भक्त लीलामृत'।

ब्रजबासी-दास

'ब्रज-विलास', अथवा ब्रज के आनन्द, के रचयिता। यह ब्रज और वृन्दावन-निवास से लेकर मथुरा जाने और कंस की मृत्यु तक कृष्ण के जीवन और क्रीड़ाओं पर काफ़ी विस्तृत काव्य-रचना है। यह काव्य-रचना जो भाखा में लिखित है मैकेन्ज़ी-संग्रह के सूचीपत्र में छपी हुई बताई गई है।[1] हर हालत में, उसका एक आगरे का लीथोग्रैफ संस्करण है, चित्रों सहित, २१२ चौपेजी पृष्ठों में; और संवत् १६२३ (१८६६ ई०) में वह लखनऊ से फ़ारसी अक्षरों में प्रकाशित हुई है, ७७८ अठपेजी पृष्ठ। वह बड़े अठपेजी (साइज़) में संभवतः कलकत्ते से प्रकाशित हुई।

ब्रह्मानंद[2] (स्वामी)

'शिव लीलामृतं' के रचयिता हैं, जिसकी एक प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी में है और जिसका विषय संभवतः धार्मिक है।

भट्ट जी[3]

१८६४ में मेरठ से मुद्रित 'बैद दर्पण' (Bed Darpan)—

[1] जि० २, पृ० ११६। 'एशियाटिक रिसर्चेज' भी देखिए, जि० १६, पृ० ६४
[2] भा० 'ब्रह्म का आनंद'
[3] भा०'भाट, कवि'

वैद्यक संबंधी दर्पण—शीर्षक वैद्यक-संबंधी एक हिन्दी ग्रंथ के रचयिता हैं।

भर्तृहरि

ये ब्रजभाषा भजनों के रचयिता हैं जिन्हें भारतीय जोगियों का एक वर्ग गाता है जिसे 'सारिंगीहार' कहते हैं क्योंकि वे अपने गाने गाते समय 'सारिंगी' नामक एक प्रकार की वीणा का प्रयोग करते हैं,[१] जो उसका संबंध संस्थापक से जोड़ते हैं और फलतः अपने को 'भरथरी' कहते भी हैं।[२]

क्या यह भारतीय कवि वही है जो बिक्रमाजीत (विक्रमादित्य) का भाई भर्तृहरि है जिससे हमें, अन्य बातों के अतिरिक्त, बोहलेन (Bohlen) द्वारा प्रकाशित प्रसिद्ध उक्तियों का एक संग्रह मिला है। ऐसी हालत में उनके द्वारा रचित हिन्दुई छन्द अत्यन्त प्राचीन होने चाहिए।

जो अधिक संभव बात है वह यह है कि हिन्दू भर्तृहरि और राग सागर में प्रकाशित लोकप्रिय गीतों और आई० रॉबसन द्वारा अपने 'सेलेक्शन ऑव ख़ियालस ऑर मेरवाड़ी प्लेज़' (Selection of Khiyals or Merwari plays) में प्रकाशित एक 'ख़ियाल' के रचयिता भरतरी एक ही हैं।

भयानन्द दास

हिन्दी में वेदान्त नामक दार्शनिक प्रणाली की व्याख्या करने वाले लेखक।[3] इस 'अमृतधार', जिसका शाब्दिक अर्थ है 'अमृत

---

१ 'हिन्दुओं के धार्मिक संप्रदाय की रूपरेखा' ('एशियाटिक रिसर्चेज़', जिल्द १७, पृ० १६३)

२ वही

3 'मैकेन्ज़ी कैटैलौग', जि० २, पृ० १०८

की धार', शीर्षक रचना में, जो संस्कृत के आधार पर लिखी गई है, चौदह अध्याय हैं। हमारे पाठकों में से जो वेदान्त प्रणाली से परिचित नहीं हैं वे उसका विकास स्वर्गीय कोलब्रुक[1] कृत 'एसे ऑन दि फ़िलॉसोफ़ी ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दू दर्शन पर निबंध) तथा श्री पोथिए (M. Pauthier) द्वारा प्रकाशित उसके फ्रेंच अनुवाद में पावेंगे। उसका कुछ भाव देने की दृष्टि से, हिन्दुस्तानी लेखक अफ़सोस ने अपने 'आराइश-इ-महफ़िल' में उसके संबंध में जो कहा है उसे हम यहाँ उद्धृत करते हैं :

> 'वेदान्त नामक शास्त्र व्यासदेव की रचना है। जो इस ग्रंथ के मत का अनुगमन करते हैं, वे एकता का सिद्धान्त मानते हैं : इस सिद्धान्त से वह इतना अनुप्राणित है कि उसकी आँखें सदैव केवल एक और वही पदार्थ देखती हैं। उसके अनुसार जीवों की विभिन्नता काल्पनिक है, वह वास्तव में केवल एक ही है, और यद्यपि सृष्टि में जो कुछ है वह उसी से निकला है, उस सबका उसके बिना कोई अस्तित्व नहीं। पदार्थों का आपस का संबंध जो हमारे गुणों और इस विचित्र जीव के सारतत्व को प्रभावित करता है ठीक वैसा ही है जैसा मिट्टी का पृथ्वी के साथ, लहरों का जल के साथ, प्रकाश का सूर्य के साथ।'

भवानी[2]

१८६८ में फ़तहगढ़ से प्रकाशित १६-१६ पंक्तियों के ८ पृष्ठ की एक हिन्दी कविता 'बारह मासा'—बारह महीने—के हिन्दू रचयिता का नाम है।

ऐसा प्रतीत होता है इसी रचना का शीर्षक 'रामचन्द्र की बारह

---

[1] 'रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑव लन्दन' के विवरणों में

[2] भा०, अथवा पार्वती, शिव की पत्नी

मासी'—राम के बारह महीने—भी है और जो इस शीर्षक के अंतर्गत १६-१६ पंक्तियों के आठ पृष्ठों में १८६८ में आगरे से मुद्रित हुई है।

भागूदास

ये कबीर के मुखशिष्यों में से एक और कबीर-पंथियों के संप्रदाय की रचनाओं में से सबसे अधिक प्रचलित रचना लघु बीजक या बीजक के लेखक या संग्रहकर्ता हैं। दूसरी पुस्तक स्वयं कबीर ने बनारस के राजा को सुनाई थी। सामान्य कबीर-पंथियों में भागूदास कृत बीजक सबसे अधिक प्रामाणिक समझा जाता है। वह अति मधुर छंदों में और एक अत्यन्त स्पष्ट व्याख्या के साथ लिखा गया है। किन्तु लेखक अपना मत स्थापित करने के स्थान पर तर्क अधिक करता है और अपने मत की व्याख्या करने की अपेक्षा वह अधिकतर अन्य प्रणालियों पर आक्रमण करता है। इस अंतिम उद्देश्य के लिए उसके विचार इतने अस्पष्ट हैं कि उसकी पुस्तक से कबीर के वास्तविक सिद्धान्त बड़ी मुश्किल से समझे जा सकते हैं; उसके शिष्य भी अनेक अंशों का प्रतिपादन भिन्न-भिन्न रूप से करते हैं। उनमें से गुरुओं के पास एक छोटी रचना रहती है जो सबसे अधिक कठिन अंशों के लिए कुंजी के समान है; किन्तु वह केवल थोड़े-से लोगों के हाथ में रहती है: तो भी उसका अधिक मूल्य नहीं है, क्योंकि वह मूल की अपेक्षा शायद ही कम उलझन में डालने वाली होती है।[1]

---

[1] ये बातें मैंने हिन्दुओं के धार्मिक संप्रदायों पर लिखे गए श्री विल्सन के विद्वत्ता-पूर्ण विवरण से ली हैं; जो अनुवाद मैं यहाँ दे रहा हूँ वह भी वहीं से लिया गया है। देखिए 'एशियाटिक रिसर्चेज', जिल्द १६, पृ० ६० और उसके बाद।

उनके द्वारा रचित एक छोटा अंश इस प्रकार है :

'अली और राम ने हमें जीवन प्रदान किया है, और, इसलिए, सब प्राणियों के प्रति समान रूप से दया प्रकट करना हमारा कर्तव्य है। किसके लिए हम अपना सिर मुड़ाते, साष्टांग करते, या जल-मग्न होते हैं? क्या तुम रक्त बहा कर अपने को शुद्ध कर सकते हो, और क्या तुम्हें अपने पुण्यों का गर्व है जिनका तुम कभी दिखावा न करोगे? किस लाभ के लिए अपना मुँह धोते हो, अपनी उँगलियों में माला के दाने फेरते हो, स्नान करते हो, और मन्दिर में सिर नवाते हो, जब कि प्रार्थना करते समय, तुम चाहे मक्के की ओर जाओ या मदीने की ओर, कपट तुम्हारे हृदय में है? हिन्दू एकादशी का व्रत रखते हैं; मुसलमान रमज़ान में...सृष्टिकर्ता जो समस्त विश्व में व्याप्त है मन्दिरों में रह सकता है? मूर्तियों में राम के दर्शन किसे हुए हैं? किसने उसे समाधियों में पाया है जिनके दर्शन करने यात्री आते हैं? जो वेद और फ़ेब (Feb) की असत्यता की बात कहते हैं वे उनका सार नहीं समझते। केवल एक को सब में देखो...समस्त पुरुष और स्त्री जिन्होंने जन्म धारण किया है, उसी प्रकृति से उत्पन्न हुए हैं जिससे तुम। जिसकी सृष्टि है और जिसके अली और राम पुत्र हैं, वह मेरा गुरु है, वह मेरा पीर है।'[1]

भू पति

कायस्थ जाति के भूपति या भूदेव हिन्दी पद्य में 'श्री भागवत' नामक एक भागवत के रचयिता हैं। उसकी एक प्रति कलकत्ते की

---

[1] अली मुसलमानों के पैग़म्बर हैं, राम हिन्दुओं के प्रिय देवता हैं। 'गुरु' बाद वालों का आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक है; 'पीर' पहलों का। इस व्याख्या से, पाठ का वाक्य बहुत स्पष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह ज्ञात है कि कबीर, और नानक का भी, उद्देश्य मुसलमान और ब्राह्मण धर्मों का सम्मिश्रण करना रहा है।

एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है, और वॉर्ड ने इस ग्रन्थ का उल्लेख अपने 'हिस्ट्री ऑव दि लिट्रेचर ऐंड दि माइथॉलोजी ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं के साहित्य और पुराण-कथाओं का इतिहास) में किया है। मैं नहीं कह सकता कि यह वही रचना है जिसकी एक प्रति ब्रिटिश म्यूज़ियम में संख्या ५६२०, हलहेड(Halhed) संग्रह के अंतर्गत मिलती है। इस पिछली की रचना नौ पंक्तियों के छंदों में हुई है, वह फ़ारसी लिपि में लिखी हुई है और जिस हिन्दुई बोली का इसमें प्रयोग हुआ है वह कठिनाई से समझी जाती है। हिन्दी छंदों में 'पोथी भागवत' के नाम से एक भागवत ईस्ट इंडिया हाउस (ऑफ़िस) और केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के किंग्स कॉलेज के पुस्तकालय में भी है; किन्तु सूचीपत्र के अनुसार वह भागवत पुराण[1] का संस्कृत से अनूदित केवल एक भाग है। इसमें दशम अध्याय, दशम स्कंध, का, जिसमें कृष्ण की कथा है और जिससे 'प्रेमसागर' की सामग्री भी ली गई है, विशेष रूप से हिन्दुस्तान में अनुवाद हुआ है। इसकी एक और प्रति का उल्लेख फ़रज़ाद कुली नामक व्यक्ति के सुन्दर पुस्तकालय के सूचीपत्र में मिलता है। यह सूचीपत्र मेरे माननीय मित्र एम० डी० फ़ोर्बस(M. D. Forbes) के पास और एक दूसरा फ़ोर्ट विलियम कॉलेज के पुस्तकालय में है। इस प्रति का नाम 'पोथी दशम स्कंध' है। उसी पुस्तकालय में 'श्री भागवत दशम स्कंध' के नाम से एक तीसरी प्रति है और इसी शीर्षक के अंतर्गत भाखा में ईस्ट इंडिया हाउस के पुस्तकालय में एक चौथी प्रति है। चैम्बर्स के संग्रह (सूचीपत्र का पृ० १८, सं० ६६) में भी एक अलग-अलग काग़ज़ के पत्रों पर लिखी फ़ोलिओ में, 'भाषा दशम स्कंध' शीर्षक प्रति मिलती है। उन्हीं फ़रज़ाद के हस्तलिखित

[1] भागवत १८ वां या अंतिम पुराण है ; किन्तु कुछ हिन्दुओं द्वारा यह अप्रामाणिक समझा जाता है।

ग्रंथों के सूचीपत्र में एक रचना का उल्लेख है जिसका शीर्षक यह है : 'इकावस स्कंध श्री भागवत व ज्ञानमाला कृष्ण व अर्जुन इरशाद करद:'। अंत में सैं बार्थलेमी (Saint Barthélemy) के पी० पोलाँ (P. Paulin) ने बोर्जिया (Borgia)[२] के हिन्दुस्तानी हस्तलिखित पोथियों के संग्रह में एक 'अर्जुन-गीत' (या अर्जुन का गान) शीर्षक एक ग्रंथ का उल्लेख किया है। किन्तु यदि वह वास्तव में हिन्दुस्तानी में है तो सम्भवत: वह ग्रंथ 'भगवद्‌गीता' का अनुवाद है। लेकिन मेरा विचार है कि वह संस्कृत में है। इसके अतिरिक्त भारत के कैप्यूचिन (Capucin) मिशनरी मारकस अ तुम्बा (Marcus à Tumba) द्वारा उसका इटेलियन में अनुवाद हो चुका है और इस अनुवाद की हस्तलिखित पोथी उसी बोर्जिया (Borgia) के पुस्तकालय में है।

'भागवद्' के नाम से फ्रेंच में भी 'भागवत' का एक अनुवाद है। यह एक तामूल (Tamoule) प्रति के आधार पर फ़ुशे दोबसौंवील (Foucher d' Obsonville) द्वारा तैयार किया गया था।

भैरव-नाथ[3]

हिन्दी कवि जिनका उत्कर्ष-काल शक संवत १७०० (सन् १६२२ ई०) है, और जिन्होंने १७५६ (१६७८ ई०) में तेईस अध्यायों में 'नाथ लीलामृत'—कृष्ण की लीलाओं का अमृत—की रचना की।

---

१ मेरे विचार से इकावस के स्थान पर इगारह होना चाहिए क्योंकि भागवत में अधिक से अधिक केवल बारह अध्याय हैं।

२ Museei Borgiani Velitris codices manuscripti, etc. pag. 15.

३ भा० 'भगवान् कृष्ण'

मंडन[१]

'जनक पचीसी'—जनक पर पचीस छंद, अथवा जनक की पुत्री, सीता का राम के साथ विवाह पर छंदों, के रचयिता हैं। १६ पृष्ठों की छोटी हिन्दी कविता, मैनपुरी में मुद्रित।

मगन लाल (पंडित)

इलाहाबाद के, चिकित्सक, ने डॉ० वॉकर (Walker) के साथ लिखी हैं :

१ 'गोथन शीतला के टीका देने का बयान'—टीके की व्याख्या, उर्दू में ३० अठपेजी पृष्ठ, और यही रचना 'गोथन शीतला के टीका देने का बर्णन' के उसी शीर्षक के अंतर्गत हिन्दी में है; आगरा, १८५३, २६ बड़े अठपेजी पृष्ठ;

२ 'मुब्तदी की पहली किताब',—शुरू करने वाले के लिए पहली पुस्तक; इलाहाबाद, १८६१, ५० चौपेजी पृष्ठ;

३. 'फ़र्रुख़ाबाद और बदरीनाथ की कहानी'—इलाहाबाद, १८५०, ३१ अठपेजी पृष्ठ;

४. पुराणों और शास्त्रों के आधार पर, वार्तालाप रूप में, वर्ण-व्यवस्था के पक्ष में मगन की एक रचना उर्दू में है जिसका शीर्षक है 'काशिफ़ दकायक मज़हब-इ हिन्द'(Kâschif dacâïc Mazhab-i Hind)—भारतीय धर्म की विशेषताएँ प्रदर्शित करने वाला; लखनऊ, १८६१, २६ अठपेजी पृष्ठ।

मणि देव[३]

गोपी-नाथ के शिष्य, गोकुल-नाथ के पुत्र, ने 'महाभारत दर्पण'

---

[१] भा० 'आभूषण'

[२] भा० 'खुश'

[३] भा० 'मोती, रत्न'

और 'हरिवंश पुराण' के संपादन में सहयोग प्रदान किया, अर्थात् उहोंने इस रचना को निर्मित करने वाले बहुत-से अंश दिए। पहली जिल्द में, केवल एक है; दूसरी में, चार; किन्तु तीसरी और चौथी जिल्दों में बहुत बड़ी संख्या है।

मतिराम[1]

श्रेष्ठ हिन्दी कवि जिनकी वॉर्ड और कोलब्रुक द्वारा उल्लिखित रचना, 'रस राज'[2] देन है, और जिसकी कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के विद्वान् और उत्साही मंत्री (स्वर्गीय) श्री जे० प्रिन्सेप, की कृपा से प्राप्त, नागरी अक्षरों में लिखी हुई एक प्रति मेरे पास है। उसका विश्लेषण करना तो कठिन होगा, और उससे उद्धरण चुनने में संकोच होता है। वह वास्तव में एक प्रकार का 'कोकशास्त्र' है जिसका जितना सम्बन्ध स्त्रियों के मानसिक गुणों से है उतना ही उनके शारीरिक गुणों से।[3]

तो भी, उचित सीमा में रहते हुए, इस विषय के सम्बन्ध में जो कुछ कहा जा सकता है, वह श्री पैवी (Pavie) द्वारा जनवरी, १८५६ के 'जूर्ना एसियातीक' (Journal Asiatique) में पद्मिनी की कथा पर लिखे गए लेख में मिलता है, और जिसका कम-से-कम संभव शब्दों में सार इस प्रकार है: पुरुषों के चार प्रकारों के अनुरूप स्त्रियाँ भी चार प्रकार की होती हैं: 'पद्मिनी',

---

[1] मतिराम। भा० 'बुद्धि के राम'। यह और मोतीराम, जिनका मैं कुछ आगे उल्लेख करूँगा, एक ही तो नहीं हैं?

[2] रस-राज, रस का राजा। इस रचना के लिए, देखिए, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १०, पृ० ४२०

[3] इसके अतिरिक्त, यह रचना १८१४ में खिदरपुर से छपी है, और उसमें ८६ अठपेजी पृष्ठ हैं।

'चित्रणी','हस्तिनी' और 'शंखिनी'; और, इसी क्रम में 'शश', 'हिरन', बृषभ', 'अश्व'।

मथुरा-प्रसाद[१] मिश्र

बनारस कॉलेज के, रचयिता हैं :

१. 'बाह्य-प्रपंच-दर्पण'—बाहरी बातों का दर्पण—के, डॉ० मान (Mann) कृत 'Lessons in general knowledge' का हिन्दी अनुवाद, उत्तर-पश्चिम प्रदेश के शिक्षा विभाग के संचालक की आज्ञा से मुद्रित ; रुड़की, १८६१, चित्रों सहित ३०६ अठपेजी पृष्ठ; द्वितीय संस्करण, बनारस, १८६६, २०६ अठपेजी पृष्ठ, और छः प्लेट। श्री एफ० ई० हॉल ने 'हिन्दी रीडर' में उससे उद्धरण दिए हैं ;

२. 'लघु कौमुदी'—हल्की चाँदनी—के, हिन्दी में रूपान्तरित अँगरेजी व्याकरण ; बनारस, १८४६ ;

३. 'तत्व कौमुदी'—कौमुदी का सार—के, हिन्दी में संस्कृत व्याकरण ; बनारस, १८६८, १६० अठपेजी पृष्ठ ;

४. अँगरेजी, उर्दू और हिन्दी में 'ट्राइलिंग्वल डिक्शनरी' के, १३०० अठपेजी पृष्ठों की बड़ी जिल्द, जिस पर मैंने १८६६ के 'Ethnographic Review' (मानव-जाति-विवरण-सम्बन्धी पत्र) में एक लेख दिया है ;

५. अंत में इस समय उन्होंने संस्कृत और हिन्दी में, 'हिन्दी रीडर' में उल्लिखित 'बृहच्चाणक्य' का एक संस्करण प्रस्तुत किया है।

---

[१] भा० हिन्दुओं के पवित्र नगर 'मथुरा का दिया हुआ'

मदन[१] या मण्डन

हिन्दुई के एक कवि हैं जिनकी लोकप्रिय कविताएँ ब्राउटन ने दी हैं।[२]

मद्दरल (Madrala) भट्ट[3]

'कवि चरित्र' में निम्नलिखित रचनाओं के रचयिता के रूप में उल्लिखित, राम के परम भक्त एक ब्राह्मण थे :

१. 'मदरल शतक'—मद्दरल के सौ छन्द ;

२. 'मदरल रामायण'—मद्दरल कृत रामायण ;

मध्व मुनीश्वर

ब्राह्मण जाति के कवि जो अमृत राजा के समय में रहते थे। वे कन्नौज, बंबई, औरंगाबाद रहे। 'धनेश्वर चरित्र'—कुबेर की कथा—उनकी रचना है, जो 'कवि चरित्र' के अनुसार, नाथ कृत भी बताई जाती है।

मनबोध[४]

'ईस्टर्न-इंडिया', जि० ३, पृ० १३१, में मौंटूगोमरी मार्टिन द्वारा उल्लिखित एक हिन्दुई कवि हैं।

मनोहर-दास[५]

'प्रबंध'[६] के रचयिता हैं, जिसकी एक प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है।

---

[१] भा० 'प्रेम', और, प्रेम के देवता, कामदेव का नाम

[२] 'हिन्दू पौप्युलर पोयट्री', पृ० ४५

[3] भा० 'दार्शनिक मद्दरल'

[४] भा० 'मन का ज्ञान'

[५] भा० 'कृष्ण का दास'

[६] एक प्रकार का गीत, या संभवतः शैली पर रचना

मनोहर-लाल[1]

ने सरकारी पुस्तकों के संरक्षक, श्री० जे० पी० लेड्ली (Ledlie), के निरीक्षण में 'बालोपदेश'—बच्चों को उपदेश, शीर्षक से हिन्दी की सचित्र अक्षरावली संकलित की है। यह रचना आगरा और लाहौर से कई बार छप चुकी है। वह सैयद अब्दुल्ला कृत 'तशीलुत्तालीम' (Tashîl utta' lim) शीर्षक उर्दू रचना का अनुवाद बताई जाती है।

महदी[2] (मिर्ज़ा महदी)

ने १२११ (१७९६-१७९७) में, 'बाग़-इ बहार'—वसंत ऋतु का बाग़—शीर्षक के अंतर्गत, हिन्दुस्तानी में 'अनवर-इ सुहेली' का अनुवाद किया है। विद्वान् एफ़० ई० हॉल से मुझे ज्ञात हुआ है कि यह अनुवाद अन्तर्वेद की बोली, अर्थात् शुद्ध भाखा में, जैसा कि रचयिता ने अपनी भूमिका में कहा है, न हो कर उस बोली में हैं जो वास्तव में हिन्दी कही जाती है, सिंहासन बत्तीसी' और 'बैताल पचीसी' के अनुरूप। उनकी रचना १६-१६ पंक्तियों के २०५ चौपेजी पृष्ठों के आकार की है।

इश्की के आधार पर, डॉ० स्प्रेंगर (Sprenger) ने एक मिर्ज़ा महदी का उल्लेख किया है, जो शायद यही हैं।

महानंद[3]

'आईन-इ अकबरी', जिल्द २, पृ० १०२ में उल्लिखित उलुग़

---

[1] भा० 'कृष्ण का प्रिय'

[2] अ० अंतिम इमाम का नाम

[3] भा० महानंद, अत्यधिक आनंद। इससे चिरंतन आनंद का अर्थ लिया जाता है।

बेग़ कृत 'न्यू ऐस्ट्रॉनॉमिकल टेब्रिल्स' ('नवीन नक्षत्र तालिका') का हिन्दुई अनुवाद करने वाले सहकारियों में से एक।

मही पति[1]

एक परम धार्मिक ब्राह्मण थे जिनका उल्लेख जनार्दन ने किया है, और जिन्होंने उनकी रचनाओं के शीर्षक इस प्रकार दिए हैं :

१. 'भक्त लीलामृत'—भक्तों की लीला का अमृत;[2]
२. 'भक्ति विजय'—धर्म की जीत ;
३. 'सन्त विजय'—संतों की जीत ;
४. 'सन्त लीलामृत'—सन्तों की लीला का अमृत ;
५. 'कथामृत'— कथा का अमृत ;
६. 'डण्डुरङ्ग स्तोत्र'—नरक-संबंधी गाथा ;
७. 'शनि महातुंग'—शनि का सूर्योच्च ;
८. 'कृष्ण लीलामृत'—कृष्ण की लीलाओं का अमृत ;
९. 'तुक राम चरित्र'—पद्यों में राम की कथा।

'लीलामृत', जिसे उन्होंने शालिवाहन शक संवत् १६९६ (१७७४) में समाप्त किया, लिखने के कुछ समय बाद ही, ८० वर्ष की अवस्था में उनका देहान्त हो गया।

महेश[3]

उलुग़ बेग़ कृत 'न्यू ऐस्ट्रॉनॉमिकल टेब्रिल्स' ('नवीन नक्षत्र तालिका') के, हिन्दुई में, अनुवाद कार्य में अबुलफ़ज़ल तथा अन्य

---

[1] भा० 'पृथ्वी का स्वामी'

[2] इसी शीर्षक की दो रचनाएँ बोधले भाव कृत कही जाती हैं (जि० प्रथम, पृ० ३५१) ; और इस जिल्द में उल्लिखित, केशवदास भी एक 'भक्त लीलामृत' के रचयिता हैं, पृ० १८२।

[3] भा० ठीक-ठीक महेस या महेश, बड़े ईश, शिव के नामों में से एक

विद्वानों के सहयोगियों में से एक। इस विषय पर अबुलफ़ज़ल से संबंधित लेख देखिए।

माधो-दास

तथा अधिक उचित रूप में मधु-दास[1] एक अत्यन्त प्रसिद्ध हिन्दी लेखक हैं, जिन्होंने, अन्य कविताओं के अतिरिक्त, गीत या भजन लिखे हैं जो भारत में बहुत प्रसिद्ध हो गए हैं।

'भक्तमाल' में उनके संबन्ध में जो उल्लेख है उसका अनुवाद यहाँ दिया जाता है :

छप्पय

विनय व्यास मनो[2] प्रकट ह्वै जग को हित माधव कियो।
पहिले वेदविभाग कथित पुराण अष्टादश भारत आदि भागवत मथित उद्धारेउ।
हरि यश अब सोधे सब ग्रंथ अर्थ भाषा विस्तारेउ।
लीला जे जय जयति गाइ भव पार उतारेउ;
श्री जगन्नाथ इष्ट बैराग सींव करुणा रस भीज्यो हियो॥
विनय व्यास मनो प्रकट ह्वै जग को हित माधव कियो॥

टीका

ब्राह्मण माधो-दास कन्नौज के रहने वाले थे; उन्होंने यह विचारा कि लड़का स्याना हो तो माता-स्त्री की टहल छोड़ कर नीलाचल[3] चला

[1] भा० 'कृष्ण का दास'

[2] तासी ने सम्भवतः 'मनु' (= मानो) पाठ देखकर धर्मशास्त्र के प्रणेता मनु समझा है। इसलिए उन्होंने फ्रेंच में Outre vyâca, Manu a fait...आदि लिखा है।—अनु०

[3] अर्थात्, 'नीला पर्वत', यह पुराणों में उल्लिखित पहाड़ों में से है ('विष्णु पुराण', पृ० १८४)। उड़ीसा के तट पर, कटक जिले में वह बताया जाता है। इसमें और 'नीलगिरि' में भ्रम नहीं होना चाहिए। 'नीलगिरि' का अर्थ वही है, किन्तु वह मालाबार तट के घाट में है।

जाय। इस बीच में उनकी पत्नी का देहान्त हो गया। यह देख कर कि ईश्वर ने उनके मन चाहे के विरुद्ध किया, वे निरुत्साहित हुए।

"उन्होंने सोचा, यह तो वैसा ही हुआ जिस प्रकार एक यात्री ने रास्ते में थक कर एक घोड़े की सवारी की इच्छा प्रकट की ताकि वह आसानी से आगे बढ़ सके। किन्तु उसे घोड़ी पर चढ़ा एक मुग़ल मिला। क्योंकि उस घोड़ी का बच्चा थक गया था, इसलिए उसने यात्री को पकड़ कर, बच्चा उसके कंधों पर रख दिया।"

जो अपनी स्थिति का गर्व करते हैं वे बहुत मूर्ख हैं। क्या ईश्वर के ही संरक्षण में हरएक चीज़ नहीं बनी रहती?

दोहा

तुम कहते हो: मैं अपने कुटुम्ब को खाना-कपड़ा देता हूँ, क्या तुम यह बता सकते हो कि हरे बनाए गए वृक्षों और पौधों में से कौन से मुरझा जायँगे?

इस प्रकार विचार कर उन्होंने गृह-त्याग किया और नीलाचल चले गए, और समुद्र के किनारे वृक्ष की शाखाओं से बनी झोपड़ी में रहने लगे। बिना भूख-प्यास की परवा किए, वे जगन्नाथ के स्वरूप-चिंतन में मग्न रहने लगे।

इसी बीच में माधो-दास की ख्याति फैली। उनके दर्शन के लिए लोगों की भीड़ इकट्ठी होने लगी जिससे उन्हें ध्यान और प्रार्थना के लिए समय न मिलने लगा। अपनी ख्याति नष्ट करने के लिए उन्होंने भिक्षा माँगने जाने की सोची। सुबह होते ही वे एक वृद्धा स्त्री के पास गए जो सफ़ाई कर रही थी। उसने फटे चीथड़े, जिन्हें वह हाथ में लिए हुए थी, उन पर फेंक दिए। इस चीज़ का मूल्य समझ कर माधो-दास ने उन्हें उठा लिया और उन्हें पानी में धोकर सुखा लिया। रात को उन्होंने उनकी एक बत्ती बनाई, और एक दीपक जला कर, उसे भगवान् के मन्दिर में रखते हुए यह प्रार्थना की: 'जिस प्रकार इस स्त्री के

दिए चिथड़ों से तुम्हारा मन्दिर प्रकाशित हुआ है, उसी प्रकार मेरा हृदय भी प्रकाशित हो।' ज्यों ही दीपक का जलना शुरू हुआ, बुढ़िया को संताप हुआ, और सिर धुनते हुए वह कहने लगी : 'मैंने चिथड़े एक वैष्णव के फेंक कर मारे हैं। क्या इससे भी अधिक कोई दुष्ट कर्म हो सकता है?' दूसरे दिन माधो-दास इस स्त्री से भेंट करने गए। वह दौड़ी और उनके पैरों पर गिर अपने अपराध के लिए क्षमा माँगी।

माधो-दास कृष्ण की सभी क्रीड़ा-स्थलियों के दर्शन करने के लिए सर्वप्रथम वृन्दाबन गए; फिर ब्रज-दर्शन के लिए भाण्डीर[1] (Bhandîr) गए। वहाँ, क्षेम-दास वैष्णव वैष्णवों से छिपकर रात को खाना खाते थे। माधो-दास उनके पास जाकर बैठ गए, और वहीं बैठे रहे। जब रात बहुत हो गई, तो क्षेम-दास ने लाचार होकर छिपी हुई सामग्री ज़मीन से निकाली और उसे पका कर, वृक्ष की दो पत्तियों पर रख कर, माधो-दास को खाने का निमन्त्रण दिया। ज्यों ही उन्होंने उन चीज़ों की ओर हाथ बढ़ाया, वे कीड़ों में परिवर्तित हो स्वयं ही अदृश्य हो गईं। क्षेम-दास ने आश्चर्यचकित हो उसका अर्थ पूछा। संत ने उनसे कहा : 'जब तुम साधुओं से छिपा कर खाते हो, तो तुम सदैव कीड़ों का पोषण करते हो। इसके बाद तुम अपनी ग़लती का बोझ उतारने के लिए बारह वर्ष तक केवल कच्चा खाना खाओ।' क्षेम-दास ने वैसा ही किया।

वहाँ से माधो-दास हरियाना[2] गए जहाँ उन्होंने अपनी प्रधान रचनाओं पर आधारित लीलाएँ देखीं।

इसी प्रकार की और बहुत सी बातें माधो-दास के बारे में कही जाती हैं। मैंने एक उदाहरण देने तक अपने को सीमित रखा है।

---

[1] यह शब्द उस जिले का नाम प्रतीत होता है जिसमें ब्रज है।

[2] देहली प्रान्त का जिला।

माधौ[1] सिंह

'देवी चरित्र सरोज'—देवी (दुर्गा) की कथा का कमल—के रचयिता हैं, पाठ पद्य में और टीका गद्य में, १८६२ में, मुंशी हरबंस लाल के निरीक्षण में बनारस में मुद्रित हिन्दी रचना; २७० अठपेजी पृष्ठ, प्रत्येक में २० पंक्तियाँ, अनेक चित्रों से सुसज्जित।

मान[2]

उपनाम 'कबीश्वर'—कवियों के सिरताज, औरंगजेब के विपक्षी, राम राज सिंह के राजत्व-काल में रहते थे। उनकी रचनाएँ हैं;

'राज बिलास'[3]—राजकीय आनंद, हिन्दुई में लिखित ऐतिहासिक रचना, जिससे टॉड ने 'मेवाड़ के इतिहास' ('ऐनल्स ऑव मेवाड़') के लिए सामग्री ली। टॉड ने बिना यह बताए कि वे हिन्दुस्तानी में लिखी गई हैं, इस प्रान्त के इतिहास के संबंध में तीन अन्य रचनाओं का उल्लेख किया है।[4] उनके नाम ये हैं:

१. 'राज रत्नाकर'—राजकीय रत्नों की खान, सदाशिव, भाट कृत, राम जै सिंह के राजत्व-काल में लिखित रचना:

२. 'जै विलास'[5]—विजय के आनन्द, राजसिंह के पुत्र, जै

---

[1] भा० 'माधव'—मधु का, कृष्ण का एक नाम

[2] भा० 'आदर, शान' (मान)

[3] टॉड, 'ऐनल्स ऑव राजस्थान', जि० २, पृ० २१४, गलती से 'बुलास' लिखा गया है।

[4] 'ऐनल्स ऑव राजस्थान', जि० २, पृ० ७५७

[5] मेरे विचार से, यह वही है जो 'बिजै बिलास'—बिजै या जीत के आनन्द—है, प्रधानतः बिजै सिंह के राजत्व-काल से संबंधित एक लाख छन्दों का काव्य।

सिंह के राजत्व-काल में लिखित। ये अंतिम दो रचनाएँ, यद्यपि 'राज विलास' भी, जिन नरेशों के राजत्व-काल में लिखी गई थीं उन नरेशों की सैनिक विजयों का वर्णन करने से पूर्व, मेवाड़ राज की वंशावली से प्रारंभ होती हैं।

३. 'खुमान[1] रास'—मेवाड़ के नरेशों के वीर-कृत्य, यह रचना अकबर के राजत्व-काल में संशोधित की गई प्रतीत होती है, किन्तु यह लिखी गई प्राचीन प्रमाणों के आधार पर ही है जो नवीं शताब्दी तक के हैं। उसमें नरेशों की लंबी वंशावली से संबंधित अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बातों, विशेषतः मुसलमानी आक्रमण-काल, तेरहवीं शताब्दी में अलाउद्दीन द्वारा चित्तौड़ की लूट, और अंत में राणा प्रताप और अकबर के युद्ध, सहित राम तक मेवाड़ के सम्राटों की वंशावली दी गई है।

टॉड ने १६७६ से १७३४ ई० तक मध्य भारत में होने वाली घटनाओं के संबंध में, और 'राज रूपक अखियात'[2] (akhiyât) शीर्षक एक चौथी रचना का उल्लेख किया है; अंत में एक पाँचवीं का जिसका शीर्षक केवल 'खियात'—प्रसिद्ध—है, और जो एक जीवनी-ग्रंथ है।

---

[1] टॉड, जिनसे हमें ये सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं, के अनुसार, 'खुमान' शब्द मेवाड़ के नरेशों की प्राचीन उपाधि है जिसका अब तक प्रयोग होता है। यह उपाधि, मेवाड़ राज्य के संस्थापक, बापा, जो बाद को Transoxiane चले गए, जहाँ वे प्राचीन सिथियनों के 'कुमानी' (Komani) नामक देश में ही मृत्यु को प्राप्त हुए, के पुत्र को दी गई थी।

[2] टॉड ने लिखा है 'राज रूपक अख्यात' (Raj Roopac akheat) और अनुवाद किया है 'Royal relationships'; किन्तु शीर्षक से मैं जो समझ पाया हूँ उसका अर्थ प्रतीत होता है 'वह जो राजकीय घटनाओं में अप्रकट है'।

मिर्ज़ायी

नैमुल्ला ख़ाँ के पुत्र मुहम्मद अली ख़ाँ मिर्ज़ायी[1] देश के वज़ीर नवाब शुजाउद्दौला के दरबार से संबंधित थे। उनमें काव्य-प्रतिभा थी और वे संगीत में अत्यन्त कुशल थे। अली इब्राहीम ने उनकी केवल दो कविताओं का उल्लेख किया है।

मैं नहीं जानता यदि यह लेखक और 'अयार दानिश' के हिन्दुस्तानी अनुवाद, 'ख़िर्द अफ़रोज़', के संशोधकों में से एक, और 'बिद्या दर्पन' अथवा विज्ञान का दर्पण शीर्षक हिन्दुस्तानी रचना के लेखक अवध के निवासी मुंशी मिर्ज़ायी बेग एक ही हैं। यह अंतिम रचना श्री लाल कवि[2] की लगभग दो शताब्दी पूर्व पूर्वी भाखा या पूर्वी हिन्दी नाम की बोली में लिखी गई 'अवध विलास' या अवध के आनन्द शीर्षक रचना के अनुकरण पर लिखी गई है। उसमें राम की कथा और भारतवासियों में प्रचलित विद्याओं का छोटा-सा विश्वकोष है। उसे एक अत्यन्त सुन्दर हिन्दी रचना समझा जाता है : वह उस प्रकार की हिन्दी बोली में लिखी गई बताई जाती है जिसे सिपाही बोलते हैं; मैं नहीं जानता यदि वह प्रकाशित हो गई है; १८१४ में वह प्रेस भेजे जाने के लिए तैयार थी।[3]

---

१ मिर्ज़ायी—राज्य

२ 'छत्र प्रकाश' के लेखक इस लाल कवि में और उनके नामराशि लल्लू जी लाल कवि में गड़बड़ नहीं होनी चाहिए।

३ रोएबक कृत 'ऐनल्स ऑव दि कॉलेज ऑव फ़ोर्ट विलियम', पृ० ४२४ और ५२१

मीरा या मीराँ बाई[१]

भगतनी (हिन्दू स्त्री-सन्त), मेड़ता के महाराणा या महाराजा की पुत्री, विष्णु की परमोपासिका थीं, जिन्होंने अतीत प्राप्त करने के लिए राजपाट छोड़ दिया। कुछ के अनुसार, उनका विवाह मेवाड़ या उदयपुर के राणा, जिनका १४६६ में अपने पुत्र ऊदो द्वारा वध हुआ,[२] के साथ विवाह हुआ था, और कुछ दूसरों के अनुसार उसी देश के राणा, लक्ष या लखा (Laxa ou Lakha) के साथ,[३] जिस परिस्थिति में वे चौदहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जीवित थीं, क्योंकि राणा ने १३७२ से १३९७ तक राज्य किया।[४] उधर दूसरी ओर यदि, जैसा कि टॉड ने कहा है, मीरा हुमायूँ के विपक्षी, विक्रमाजीत की माँ थीं, तो वे सोलहवीं शताब्दी के प्रारंभ में जीवित थीं। अंत में 'भक्तमाल' हमें बताता है कि वे अकबर की समकालीन थीं, क्योंकि यह बादशाह, जिसने १५५६ से १६०५ तक राज्य किया, अपने समय के प्रसिद्ध गवैये, मियाँ तानसेन, के साथ उनके दर्शन करने गया था। निस्संदेह इन चारों कथनों में से एक में कोई ग़लती है।

मीरा बाई ने हिन्दू स्त्री-संत और कवियित्री के रूप में अत्यधिक ख्याति प्राप्त की है। स्त्री-संत के रूप में, वे उन्हीं का नाम धारण करने वाले मीरा बाइयों के संप्रदाय की संरक्षिका हैं;[५]

---

१ शब्द 'बाई' का अर्थ है 'स्त्री', और प्रायः स्त्रियों के नामों के साथ लगाया जाता है।

२ टॉड, 'ऐनल्स ऑव राजस्थान', पहली जिल्द, पृ० २६०

३ टॉड, 'ट्रैवल्स', पृ० ४३५

४ प्रिन्सेप, 'यूसफ़ुल टेबिल्स'

५ एच० एच० विलसन ने इस संप्रदाय का 'मेम्वायर ऑन दि रिलीजस सैक्ट्स ऑव दि हिन्दूज़', 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६, पृ० ९९, और जि० १७, पृ० २३३, में उल्लेख किया है, और उन्होंने मीरा के उन दो पदों का अनुवाद किया है जिन्हें मैंने आगे उद्धृत किया है।

और कवियित्री के रूप में उन्होंने, उनके संप्रदाय वालों द्वारा सर्वत्र गाए जाने वाले भजनों की रचना की है, जो, टॉड के अनुसार, जयदेव कृत 'गीत गोविंद' की समता करते हैं।[1] उन्हें कृष्ण के प्रति असीम भक्ति थी, जिनका उन्होंने एक मंदिर बनवाया था जिसे कर्नल टॉड अपनी यात्रा के समय देखने गए थे। हिन्दुओं का मत है कि उनकी काव्य-रचनाओं की समता उनका समकालीन कोई दूसरा कवि नहीं कर सका। लोग उन्हें 'गीत गोविंद' की 'टीका' की रचयिता कहते हैं। इस कविता के साथ उनके कुछ पद, कान्या (कृष्ण) की भक्ति में भजन हैं, जो जयदेव के मूल संस्कृत की तुलना में रखे जा सकते हैं। ये पद तथा कृष्ण के आध्यात्मिक सौन्दर्य का वर्णन करने वाले अन्य गीत अत्यन्त भावुकतापूर्ण हैं। कहा जाता है कि मीरा ने सब कुछ त्याग दिया था और कृष्ण से संबंधित पवित्र स्थानों की, जहाँ वे दिव्य अप्सराओं के अनुकरण पर, उनकी मूर्ति के सामने, रहस्यपूर्ण 'रास मण्डल' नृत्य किया करती थीं, यात्रा करने में जीवन व्यतीत किया। उन्होंने उदयपुर में शरीर छोड़ा।

इसके अतिरिक्त, 'भक्तमाल' में उनसे संबंधित उल्लेख इस प्रकार है:

छप्पय

लोकलाज कुल शृंखला तजि मीरा गिरिधर[2] भजी।
सदृश गोपिकी प्रेम प्रगट कलियुगहि दिखायो।
नर अंकुश अति निडर रसिक यश रसना गायो।
दुष्टन दोष बिचार मृत्यु को उद्यम कीयो।
बार न बांको भयो गरल अमृत ज्यों पीयो।

---

[1] टॉड, 'ट्रैविल्स', पृ० ४३५

[2] तासी ने 'कृष्ण' शब्द देकर, फ़ुटनोट में लिखा है— 'गिरधर' नाम के अंतर्गत 'प्रेम सागर' में वर्णित एक कथा के अनुसार। यह छप्पय १८८३ में नवल-किशोर प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित 'भक्तमाल' से लिया गया है। — अनु०

भक्त निशान बजाय के काहूते नाहिन लजी।
लोकलाज कुल शृंखला तजि मीरा गिरिधर भजी।

टीका

मीरा बाई (अर्थात् श्रीमती मीरा) मेड़ता[१] के राजा की पुत्री थीं, जिनका विवाह मारवाड़ के राणा[२] के साथ हुआ। अपनी माता के घर में, बचपन से ही, वे कृष्ण की मूर्ति में डूबी रहती थीं और उन्हें अपना प्रियतम समझती थीं। जब उनके पति उन्हें लेने गए, और जब उन्होंने सुना कि उनके श्वसुर का गृह ही उनका भावी निवास-स्थान होने वाला है, तो उन्हें अत्यन्त प्रसन्नता हुई। पितृ-गृह से चलते समय उनकी माता ने मनवांछित वस्त्राभूषण साथ ले जाने के लिए उनसे कहा। उन्होंने कहा : 'यदि आप मुझे निहाल किया चाहती हैं तो कृष्ण की मूर्ति मुझे दीजिए।' उनकी माता, जो उन्हें बहुत प्यार करती थीं, ने उन्हें उसे लाकर देने में कोई संकोच न किया। उन्होंने मूर्ति और उसकी संदूक को पालकी में रख लिया। जब वे अपने श्वसुर के घर पहुँची, उनकी सास 'परिछन'[३] के लिए गाजेबाजे के साथ उन्हें लेने आईं। सर्वप्रथम वे उन्हें पूजा के लिए देवी के मन्दिर में ले गईं। फिर वर से पुजवा कर, वर-वधू के कपड़ों में पवित्र गाँठ लगाकर, उन्होंने मीरा से पूजा करने के लिए कहते हुए कहा : 'हमारे कुल में ये देवी पूजी जाती हैं; इसी पूजा से सौभाग्य बढ़ा है; इसलिए उसके सौभाग्य के लिए मेरे कहने के अनुसार पूजा करो।' मीरा ने उत्तर दिया : 'मेरा माथा तो कृष्ण के हाथ बिक गया है, और किसी के आगे यह न झुकेगा।'

---

[१] या मैड़ता तथा मेड़तः, अजमेर प्रान्त में।

[२] यद्यपि 'राजा' और 'राणा' समानार्थवाची शब्द माने जाते हैं, तो भी यह स्पष्ट है कि यहाँ इन दो उपाधियों में भेद माना गया है, और पहला दूसरी की अपेक्षा निम्न है।

[३] नवविवाहित के चारों ओर एक दीपक घुमाने की रस्म।

कबित[1]

पल काटों इन नयनन के गिरिधारी बिना पल अंत निहारैं। जीभ कटै न भजे नँद नंदन बुद्धि कटै हरिनाम बिसारैं। मीरा कहै जरि जाहु हियो पद पंकज बिन पल अंत न धारैं। शीश नवै ब्रजराज बिना वह शीशहि काटि कुंवा किन डारैं॥

संक्षेप में, सास के बार-बार कहने पर भी मीरा ने पूजा न की। तब उन्होंने क्रुद्ध स्वर में राणा से कहा : 'यह वधू काम की नहीं है। अब ही उसने जवाब दिया है। आगे वह और क्या नहीं कर सकती?' यह बात सुन कर राजा ने उन्हें अपने महल में न बुला कर दूसरे में उनके रहने का प्रबंध कर दिया। मीरा उसी में प्रसन्न थीं। अपनी प्रसन्नता में उन्होंने अपने प्रियतम की मूर्ति स्थापित की, और साधु-संग में जीवन व्यतीत करने लगीं।

उनकी नँनद ने आकर उन्हें समझाया : 'मेरी बहन, यदि तुम साधु-संग करती रहोगी, तो तुम्हारे दोनों कुलों को कलंक लगेगा। उस समय दुनिया तुम्हारे श्वसुर और पिता पर हँसेगी।' मीरा ने कहा, 'जो लोग बदनामी से डरते हैं उनसे अलग रहना चाहिए। साधु तो मेरे जीवन के साथ बँधे हैं।'

जब राजा ने यह बात सुनी, तो उन्होंने उनके पास चरणामृत[2] के रूप में तेज़ विष का एक प्याला भेजा। मीरा ने पानी का प्याला समझ कर ले लिया और उसे पी गईं। किन्तु विष का उन पर कोई प्रभाव न हुआ।

---

१ ये पंक्तियाँ संभवतः मीरा के काव्य से उद्धृत हैं। (यह सवैया है, जो १८८३ में नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित 'भक्तमाल' में मीरा-संबंधी छप्पय की टीका से उद्धृत किया गया है—अनु०)

२ शब्दशः, 'पैरों का अमृत'। यह वह जल होता है जिसमें कोई सन्त अपने पैर डुबा देता है।

संस्कृत श्लोक

विष सदैव विष नहीं होता, और अमृत सदैव अमृत—क्योंकि ईश्वर की इच्छा से कभी-कभी विष अमृत हो जाता है, और अमृत विष।

तत्पश्चात् राणा ने यह जानने के लिए कि वे अब भी साधु-संग करती हैं या नहीं मीरा के पीछे एक भेदिया लगा दिया।

एक दिन कृष्ण ने मीरा को दर्शन दिए तो भेदिए द्वारा सूचना प्राप्त होने पर राजा तुरंत वहाँ गए। तलवार खींच, दरवाज़ा तोड़ कर वे अन्दर घुसे; किन्तु उन्होंने मीरा को बिल्कुल अकेले बैठे पाया। खिसिया कर वे अपने महल वापिस चले आए।

उसी भेदिए ने, जो दुष्ट होने के साथ-साथ अशिष्ट था, एक दिन उनसे कहा: 'स्वामी ने आपको अंग-संग करने की आज्ञा दी है।' मीरा ने कहा: 'कौन जानता है, तुमसे यह बात कहने की आज्ञा देने में स्वामी ने क्या विचारा है?' तो भी उन्होंने संग-सेज तैयार की, और उस पर बैठ गईं। तब उन्होंने भेदिए से यह बताने की प्रार्थना की कि क्या राणा ने तुमसे वास्तव में वह बात कहने की आज्ञा दी थी, जो तुमने मुझसे कही है। तब उस व्यक्ति के मुख का रंग उड़ गया, और मीरा के चरणों पर गिर कर वह उनसे भक्ति-दान माँगने लगा।

उनके रूप की चर्चा सुनकर एक बार तानसेन[1] के साथ सुलतान अकबर उन्हें देखने गया, और उनमें कृष्ण की छवि निहार कर वह मुग्ध हो गया। तब तानसेन ने इस विषय पर एक पद सुनाया।

तत्पश्चात् मीरा बाई वृन्दावन गईं। इस स्थान के प्रधान गुसाईं ने स्त्री की शकल न देखने की प्रतिज्ञा कर रखी थी। किन्तु मीरा

[1] इस प्रसिद्ध गवैये पर तीसरी जिल्द में लेख देखिए

ने थोड़ी देर के लिए उनसे भेंट की, जिसके बाद वे उन्हें अपने साथ ले गईं और कृष्ण की लीलाओं के लिए प्रसिद्ध वृन्दावन के सब स्थानों के दर्शन किए। फिर अपने पति राणा की मलीनता देखकर द्वारिका में रहने गईं। इसी बीच में, उदयपुर में पाप बढ़ते हुए देख, तथा भक्ति का स्वरूप पहिचान कर, राजा ने ब्राह्मण बुलवाए। वे राजा की आज्ञा से आए, और धरना[1] देकर बैठ गए। उधर मीरा रणछोर[2] जी की आज्ञा लेने के लिए, द्वारिका के मन्दिर में गईं, और देवता ने उनकी इच्छाएँ पूर्ण कीं।

पद[3]

रणछोर, मुझे द्वारिका में रहने की आज्ञा दो, जहाँ शंख, चक्र, गदा और पद्म (विष्णु के विशेष चिह्न) से यम का भय नष्ट हो जाता है।

गोमती से लेकर सब तीर्थ स्थानों में लोग खूब जाते हैं; किन्तु शंख-घड़ियाल की ध्वनि यहीं गूँजती है; रस की क्रीड़ा का आनन्द यहीं प्राप्त होता है।

---

[1] भारतवर्ष पर विभिन्न रचनाओं में इस कार्य की व्याख्या की गई है। यह इस तरह होता है। जब एक भारतीय कोई मनवांछित कार्य पूर्ण करना चाहता है, अधिकतर रुपयों के मामले में, तो वह जिस व्यक्ति से कार्य पूर्ण कराना चाहता है उसे अपनी इच्छा पूर्ण न होने पर मर जाने की धमकी देता है। कभी वह आग जलाकर उसमें प्रवेश करता है; कभी उसमें वह किसी गाय या स्त्री को रख देता है। यह कार्य देवताओं की इच्छा से किया जाता है। तो जिस पाठांश से यह नोट लिया गया है उसका मतलब है कि ब्राह्मणों ने उदयपुर नगर के संकट दूर करने के लिए देवताओं को प्रसन्न करने की दृष्टि से इस प्रकार की अग्नि प्रज्वलित की।

[2] इस शब्द का अर्थ है 'जिसने युद्ध छोड़ दिया हो।' यह विष्णु के नामों में से एक, और द्वारिका में पूजित कृष्ण की मूर्ति, का नाम है। 'प्रेम सागर' में वर्णित एक कथा में यह नाम आया है।

[3] ये पद मीरा कृत हैं।

मैंने तो अपना देश छोड़ दिया, अपना सब कुछ त्याग दिया ! ओह ! मैंने तो राजा और उसका राज्य छोड़ दिया है। मीरा तुम्हारी दासी है; वह तुम्हारी शरण में आई है, वह बिल्कुल तुम्हारी है।

दूसरा पद

ओ मेरे मित्र, क्योंकि तुम मेरे प्रेम को जानते हो, उसे स्वीकार करो।

तुम को छोड़ कर मुझे और कुछ पाने की इच्छा नहीं है; मेरी एक यही इच्छा है।

दिन में भोजन न करने और रात को नींद न आने के कारण, मेरा शरीर प्रत्येक क्षण क्षीण होता जाता है।

ओ प्यारे कृष्ण, क्योंकि तुमने मुझे अपनी शरण में आने की आज्ञा दी है, अब मुझे न छोड़ो।

उल्लिखित मन्दिर में वस्तुतः अब भी मीरा की मूर्ति रणछोर की मूर्ति के सामने बनी हुई है, और वहाँ वे देवता के समान ही पूजी जाती हैं।

मीरा भाई[1]

ये सिक्खों में प्रचलित हिन्दी भजनों के रचयिता हैं। प्रसिद्ध भारतीय-विद्या-विशारद, श्री विल्सन, ने हिन्दू संप्रदायों पर अपने विद्वत्तापूर्ण 'मेम्वायर' (विवरण) में उनका उल्लेख किया है।[2]

मुकुन्द राम (पंडित)

लाहौर के विज्ञान-संबंधी पत्र, 'ज्ञान प्रदायिनी पत्रिका'—ज्ञान देने वाली पत्रिका—के संपादक हैं, जो मासिक प्रतीत होती

---

१ मूल के द्वितीय संस्करण में इनका उल्लेख नहीं है।—अनु०

२ 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० २३३

है, मार्च १८६८ से छोटे फोलिओ पृष्ठों के आकार की कॉपी के रूप में, दो कॉलमों में, एक में हिन्दी, देवनागरी अक्षर, दूसरे में उर्दू, फ़ारसी अक्षर। इस पत्र में कभी-कभी चित्रों सहित विज्ञान-संबंधी रोचक लेख और ऐतिहासिक, भूगोल-संबंधी तथा साहित्यिक लेख प्रकाशित होते हैं। मेरे विचार से उम्मेद सिंह[1] द्वारा रचित 'भगवद्गीता' का जो पाठ और उर्दू-अनुवाद है, उसमें प्रकाशित हुआ है।

मुकुन्द राम ने लाहौर से 'तिथि पत्रिका' – चन्द्रमा के अनुसार दिनों का पत्र – शीर्षक के अंतर्गत संवत् १६२६ (१८६६) का हिन्दी पंचांग, और एक दूसरा, 'तक्वीम' (Tacwîm) नाम से उर्दू में, प्रकाशित किया है।

मुकुन्द सिंह

सरवर द्वारा हिन्दी कवि के रूप में उल्लिखित दिल्ली के ब्राह्मण हैं।

क्या ये वेदान्त-सम्बन्धी रचना 'विवेक सिंधु'—ज्ञान का समुद्र—और 'परमामृत'—सर्वोत्तम अमृत, जिसके विषय से मैं अनभिज्ञ हूँ, के रचयिता मुकुन्द राजा ही तो नहीं हैं ?

ये अन्तिम लेखक जनार्दन द्वारा अपने 'कवि चरित्र' में उल्लिखित हैं।

मुक्तानंद[2] (स्वामी)

'विवेक चिन्तामणि'—निर्णय के सोच-विचार का मणि—शीर्षक हिन्दी रचना के रचयिता हैं, जिसमें अनेक उपदेश और धर्म पर अच्छे विचार दिए गए हैं; अहमदाबाद, १८६८, १५० अठ-पेजी पृष्ठ।

---

[1] देखिए इन पर लेख

[2] भा० 'मोक्ष जिसका ध्येय हो'

मुक्ता[1] बाई

हिन्दी कविताओं की रचयिता के रूप में 'कवि चरित्र' में उल्लिखित एक विदुषी और पवित्र महिला हैं।

मुक्तेश्वर[2]

विश्वम्भर बाबा के पुत्र, एक हिन्दी लेखक हैं, जिनकी माता, सीता बाई, ऊपर उल्लिखित, एकनाथ स्वामी की पुत्री थीं। उनका जन्म शक-संवत् १५३६ (१६१७ ई०) में हुआ था, और जन्म के समय वे गूँगे थे ; किंतु जीवनी-लेखक जनार्दन के अनुसार, एकनाथ की कृपा से वे बोलने लगे, और एक बड़े कवि हो गए।

उन्होंने पाण्डवों के वैभव के सम्बन्ध में एक पुस्तक लिखी, प्राकृत, अर्थात् , मेरे विचार से, हिन्दी में 'रामायण'; और दो अन्य रचनाएँ जो मुद्रित हो चुकी हैं, जिनके नाम हैं, 'हरि चन्द्राख्य'—प्रसिद्ध व्यक्ति हरि चन्द्र (अर्थात् विष्णु)—और 'सत-मुख रावणाख्य'—सात मुँह वाला प्रसिद्ध व्यक्ति रावण। उन्होंने मराठी में भी लिखा। वे राजा शिवाजी के समय में जीवित थे।

मोती राम[3]

हिन्दुई के प्रसिद्ध शृंगारी कवि, लेखक :

१. 'माधोनल' शीर्षक क़िस्से के, जिसे विला[4] और लल्लूजीलाल ने हिन्दुस्तानी उर्दू में किया। मैं नहीं जानता यह वही रचना

[1] भा० 'मोती'

[2] भा० 'मोक्ष का स्वामी'

[3] मतिराम पर लेख देखिए। यह लेखक पृ० २९२ (मूल के द्वितीय संस्करण का दूसरा जिल्द—अनु०) का मतिराम हो तो नहीं है ? हर हालत में, 'माधोनल' मोती राम की ही रचना प्रतीत होती है।

[4] 'विला' पर लेख देखिए

है जिसकी, मेरे निजी संग्रह में, फ़ारसी अक्षरों और छः पंक्तियों के छंद में लिखी हुई एक प्रति है। वह ब्रजभाषा में है, और उसका शीर्षक है 'क़िस्सा-इ माधोनल' या माधोनल का क़िस्सा। 'माधोनल', नायिका का नाम है; नायक का नाम 'काम कन्दला'[1] है।

कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय की पुस्तक-सूची में मोती राम कृत 'तर्जमा-इ माधोनल अटाली'[2] यानी माधोनल का तर्जमा, शीर्षक एक ग्रंथ का उल्लेख हुआ है; किंतु क्योंकि यह कहा गया है कि यह रचना नागरी अक्षरों में छपी हुई है, मेरा विचार है यह विला आदि का रूपांतर होनी चाहिए, पृष्ठ २३४ पर उल्लिखित और, जिसके बारे में मैं विला पर लेख में कहूँगा।

२. मोती राम गद्य में 'क़िस्सा-इ दिलाराम ओ दिलरुबा', दिलाराम और दिलरुबा का क़िस्सा, शीर्षक एक और क़िस्से के रचयिता हैं, रचना जिसकी एक प्रति इस शीर्षक के अंतर्गत कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में पाई जाती है, और दूसरी 'किताब-इ दिलरुबा' शीर्षक के अंतर्गत।

मोरोपंत (पंडित)

एक ब्राह्मण थे जिनके पिता का नाम बापू जी पंत था। उनका जन्म कोल्हापुर में शक- संवत् १६५१ में हुआ था। १७१० में वे

---

[1] काम कन्दला। स्वर्गीय Ch.d'Ochoa ने भारत में मोती राम की रचना की देवनागरी अक्षरों में एक हस्तलिखित प्रति की सूचना दी है; और अब यह हस्तलिखित प्रति राजकीय पुस्तकालय में पाई जाती है।

[2] यह शब्द संभवतः नायक का उपनाम है।

काशी गए। वे शक-संवत् १७१६ (१७९४ ई०) में पैंसठ वर्ष की अवस्था में मृत्यु को प्राप्त हुए। उनका कुटुंब अब तक पंडरपुर में रहता है।

उन्होंने प्राकृत (हिंदी) में निम्नलिखित रचनाओं का निर्माण किया :

१. 'परंतु रामायण'
२. 'दान रामायण'
३. 'नीरोष्ठ रामायण'
४. 'मंत्र रामायण'
५. 'अग्नि वेश्य रामायण'
६. 'भविष्य रामायण'
७. 'भावार्थ रामायण'[1]
८. 'मयूर पन्थी रामायण'
९. 'हनुमंत रामायण'
१०. 'केकावली'

मोहन लाल (पंडित)

पहले सर एलेग्ज़ैन्डर बर्न्स के मुंशी, बाद को मथुरा[2] ज़िले के तहसीलदार, रचयिता हैं :

१. 'बीज गणित' के – बीज गणित के प्राथमिक सिद्धान्त, श्रीलाल

---

[1] यही रचना, या इसी शीर्षक की एक रचना, ब्राह्मण एकनाथ स्वामी द्वारा रचित भी बताई जाती है। इस दूसरे व्यक्ति का, जो भारत में प्रसिद्ध प्रतीत होता है, यहाँ तक कि वह केवल 'भागवत' नाम से ज्ञात है, उल्लेख पहली जिल्द, पृ० ४३०, में हुआ है, और वहाँ पर 'भावार्थ रामायण' वाल्मीकि कृत 'रामायण' की टीका बताई गई है। एकनाथ का अर्थ है 'अकेला एक स्वामी', अर्थात् संभवतः विष्णु।

[2] या फ़ीरोज़ाबाद के, 'सेलेक्शन्स फ्रॉम दि रेकॉर्ड्स ऑव गवर्नमेंट,' १८५४, पृ० २६७ के आधार पर।

की सहकारिता में, दो भागों में, पहला १३० पृष्ठों का और दूसरा ११३ पृष्ठों; अठपेजी, बनारस, १८६१। यह रचना आगरे से भी प्रकाशित हुई है, और उसका एक उर्दू-अनुवाद मिलता है।

'सवालात बीज गणित'—बीज गणित पर प्रश्न—शीर्षक एक और उनकी हिन्दी रचना है।

२. पहले, चौथे, और छठे भागों को छोड़ कर मोहन ने 'उर्दू में यूक्लिड के प्राथमिक सिद्धान्त' का अनुवाद किया है, और एच० एस० रीड (Reid) ने ममलूक अली के अनुवाद की अपेक्षा इसे पसन्द किया है।

३. श्रीलाल की सहकारिता में उन्होंने 'रेखा गणित' के पहले दो भागों का हिन्दी रूपान्तर किया है, जिनमें से पहले का उन्होंने बाद को उर्दू में अनुवाद किया, और दूसरे का बंसीधर ने, और जो 'मबादी उलूहिसाब'[1] के प्रथम भाग में हैं, जो 'Rule of three' तक चलता है; और दूसरा भाग 'Rule of three' से 'Cube Root' तक चलता है। 'कोह-इ नूर' छापेख़ाने, लाहौर से उसका एक संस्करण हुआ है।

४. उन्होंने स्वय अकेले ही रेखागणित पर इस रचना के तृतीय भाग का अंगरेज़ी से अनुवाद किया है,[2] जिसमें यूक्लिड की छठी, दसवीं और बारहवीं पुस्तकें हैं।

---

[1] बंसीधर पर लेख देखिए। 'मबादी उलूहिसाब' में चार भाग हैं, पहले तीन छपे हुए, और चौथा लीथो में है। पहला १८५६ में रुड़की से, ७८ अठपेजी पृष्ठ; दूसरा १८६० में इलाहाबाद से, ७२ पृ०; तीसरा १८६० में रुड़की से, ४४ पृ०, और चौथा १८५६ में आगरे से, पृ० ६४, प्रकाशित हुआ है।

[2] एच० एस० रीड (Reid), 'रिपोर्ट,' आगरा, १८६४, पृ० १५७, में कहते हैं कि 'मबादी उलूहिसाब' का द्वितीय भाग, जिसमें सोसायटी के नियमानुसार Cube roots हैं, साथ ही चौथा, जिसमें गणित के प्राथमिक सिद्धान्त और दशमलव से लेकर Geometric Progression तक है, मोहनलाल और बंसीधर द्वारा लिखा गया था।

५. वंसीधर की सहायता से उन्होंने 'Chamber's Geometrical Exercises' का 'रेखागणित सिद्धि फलोदय'—रेखागणित सिद्धि का फल—शीर्षक के अंतर्गत हिन्दी में, और 'नतायज तहरीर उकलिदस',[1] के नाम से उर्दू में, अनुवाद किया है। पहली रचनाओं की भाँति, यह रचना उत्तर-पश्चिम प्रदेश के देशी स्कूलों के लाभार्थ मुद्रित हुई है।

६. 'सिद्धि पदार्थ विज्ञान'—वास्तविक यंत्र-रचना का ज्ञान, कृष्णदत्त[2] और वंसीधर की सहायता से, प्रधानतः श्री फिन्क (Fink) की रचना के उर्दू-अनुवाद के आधार पर संग्रहीत रचना।

७. 'खुलासा गवर्नमेंट गज़ट'—१८४० से १८४९ तक के गज़ट का संक्षिप्त सार।

८. 'गणित निदान'—गणित के सिद्धान्त, उत्तर-पश्चिम प्रदेश के देशी स्कूलों के इंस्पेक्टर-जनरल, श्री एच० एस० रीड (Reid) द्वारा श्री टाटे (Tate) की रचना और पेस्टालोज़ी (Pestalozzi) के सिद्धान्त पर आधारित रचना, और प्रस्तुत पंडित द्वारा अनूदित, तत्पश्चात 'रिसाला-इ उसूल-इ हिसाब'—गणित के सिद्धान्तों पर पुस्तक—शीर्षक के अन्तर्गत हरदेव सिंह द्वारा उर्दू में रूपान्त-

---

[1] यह रचना यूकलिड की प्रथम दो पुस्तकों के आधार पर लिखी गई है। उसका एक दूसरा भाग जिसका यही शीर्षक है और जो यूकलिड की तीसरी और चौथी पुस्तकों के आधार पर रचित बीजगणित संबंधी पुस्तक है।

एच० एस० रीड (Reid) की रिपोर्ट, आगरा, १८५४, में इस बात का उल्लेख भी मिलता है कि 'तहरीर उल उकलिदस' के दो भाग हैं, पहले में मोहनलाल और बंसीधर द्वारा अनूदित पहली और दूसरी पुस्तकें हैं।

[2] एच० एस० रीड, 'रिपोर्ट ऑन इनडिजेनस एजूकेशन' (देशी शिक्षा पर रिपोर्ट) आगरा, १८५४, पृ० १५३

रित,[1] उसके कई संस्करण हैं ; मेरे पास इलाहाबाद का, दूसरा है, १८५१, १८० अठपेजी पृष्ठ।

९.'The Life of the Amir Dost Muhammad Khan of Kabul, with his political proceedings towards the English, Russian and Persian governments including the victory and disasters of the British army in Afganistan' लंदन, १८४६, अठपेजी, २ जिल्द (जेंकर—Zenker, Biblioth. orientalis—बिबलिओथेका ऑरिएंटालिस)।

१०. 'Travels in the Penjab, Afganistan and Truquestan to Balk'h, Bukhara and Herat, and a visit to Great Britain and Germany'; लंदन, १८४६, अठपेजी।

११. 'भागबत' (भागवत—अनु०)—'मोखन (मोहन—अनु०) लाल कृत कृष्ण-संबंधी कथाएँ, बनारस, जनरल कैटलाग (जेंकर, बिबलिओ० ऑरिएं०)।

वही : कलकत्ता, जनरल कैटैलॉग (जेंकर, 'बिबलिओथेका ऑरिएंटालिस')।

१२. मोहन ने 'रिसाला जब्र ओ मुक़ाबला'—बीजगणित पर पुस्तक—के लिए अत्यन्त योग्यतापूर्वक सहयोग प्रदान किया, दो भागों में; आगरा, १८५६, अठपेजी; प्रथम भाग १७२ पृष्ठों का, और दूसरा १५६ का। यह रचना, ऐसा प्रतीत होता है, 'Laud's Easy Algebra' के आधार पर प्रधानतः संग्रहीत हुई है।

---

[1] हरदेव सिंह पर लेख देखिए

१३. श्रीलाल की सहकारिता में उन्होंने 'रेखागणित'—रेखाओं का हिसाब—की रचना की है। मेरे पास हैं प्रथम भाग का तृतीय संस्करण; बनारस, १८५८, १६० अठपेजी पृष्ठ; द्वितीय भाग का द्वितीय संस्करण, छोटा चौपेजी, आगरा, १८५६, १५७ पृष्ठ; और तृतीय भाग का प्रथम संस्करण, १३५ अठपेजी पृष्ठ।

१४. उन्होंने 'सार वर्णन सिद्धिपरीक्षा ज्ञान पदार्थ विद्या का'—विज्ञान की वास्तविक शाखाओं के वैज्ञानिक परीक्षा की व्याख्या का सार—शीर्षक प्राइमर और हिन्दी की प्रथम पुस्तक की रचना की है; २८० अठपेजी पृष्ठ; आगरा, १८६४, उत्तर-पश्चिम प्रदेश के शिक्षा-विभाग द्वारा प्रकाशित।

मेरे विचार से ये वही मोहनलाल[1] हैं जो पहली जिल्द (मूल की—अनु०) के १७१ तथा बाद के पृष्ठों में उल्लिखित पंडित अयोध्या-प्रसाद की सहकारिता में अजमेर से निकलने वाले हिन्दुस्तानी के साप्ताहिक पत्र 'खैरख्वाह-इ खलाइक'—मनुष्यों के दोस्त—के संपादक थे। इसके अतिरिक्त ऐसा प्रतीत होता है कि यह हिन्दुस्तानी पत्र अजमेर से ही निकलने वाले 'जगलाभ चिन्तक'—संसार की भलाई के लिए चिंता—शीर्षक हिन्दी पत्र का रूपान्तर था।

मोहनविजय[2]

ये 'मानतुंग चरित्र' अर्थात् मानतुंग का इतिहास शीर्षक एक रचना के लेखक हैं। इस रचना में जैन मत और उसके सिद्धान्तों के विकास के संबंध में विचार किया गया है; तब भी उसकी प्रणाली में काल्पनिकता है, और जिस कथा का उसमें वर्णन किया गया है वह रोचकतापूर्ण है। संक्षेप में उसका विषय इस प्रकार है:

---

[1] किंतु इस पत्र के संपादक का नाम 'सोहन' लिखा प्रतीत होता है।

[2] मोहनविजय अर्थात्, मेरे विचार से, प्रलोभन पर विजय

अवंती[1] के राजा, मानतुंग, ने अपनी मनवती नामक स्त्री की, उससे अपने विवाह के कुछ समय बाद, शिकायत सुन कर उसे एक अलग महल में बन्द कर दिया; वह निकल कर भागी और विभिन्न वेषों में, अपने पति की संगत का आनन्द उठाने लगी; वह गर्भवती हुई, और जब मानतुंग दक्षिण के राजा दलथम्भ की कन्या से विवाह करने गया हुआ था, उसने एक पुत्र को जन्म दिया। उसके पति राजा के लौटने पर, सब बातें स्पष्ट हुईं, और तत्पश्चात् वे प्रसन्नतापूर्वक रहने लगे।[2]

योगध्यान[3] मिश्र (पंडित)

'प्रेम सागर' के एक संस्करण के संपादक हैं; कलकत्ता, अठपेजी।

रघु-नाथ[4] (पंडित)

एक हिन्दी-लेखक हैं जो शक-संवत् १५०० (१६२२ ई०) में जीवित थे, और जिनकी देन है :

'नल दमयन्ती स्वयंवर आख्यानम्'—नल और दमयन्ती के स्वयंवर की कथा; अर्थात् उस रोचक कथा के अनेक रूपान्तर में से एक जिससे सर्वप्रथम बॉप (Bopp) ने 'नालुस' (Nalus) शीर्षक के अंतर्गत यूरोप को परिचित कराया था; और जिसने निश्चित रूप से विद्वन्मण्डली में संस्कृत का अध्ययन लोकप्रिय बनाया।

---

१ आधुनिक उज्जैन

२ देखिए 'मैकेन्ज़ी कलेक्शन', जि० २, पृ० ११४

३ भा० 'उपयुक्त ध्यान'

४ भा० 'रघु का स्वामी', राम का दूसरा नाम

बनारस से १८६८ में, बाबू गोकुलचन्द[1] द्वारा, विभिन्न रचयिताओं के हिन्दी दोहों का संग्रह, 'रघु-नाथ शतक'—रघु-नाथ की सौ रचनाएं—शीर्षक एक रचना प्रकाशित हुई है।

रघु-नाथ-दास[2] (बाबू)

ने प्रकाशित की हैं :

१. 'सूर सागर रत्न'—सूरदास के सागर के रत्न—शीर्षक के अंतर्गत, प्रसिद्ध सूरदास की चुनी हुई कविताएँ; बनारस, १८६४, २७४ अठपेजी पृष्ठ ;

२. 'कवित्त रामायण' का एक संस्करण, तत्पश्चात् 'हनुमान बाहुक', बनारस, १८६५, ६८ अठपेजी पृष्ठ; बाबू अविनाशी लाल, बाबू भोलानाथ और मुंशी हरिवंश लाल के खर्च से, गोपीनाथ पाठक के मुद्रणालय से प्रकाशित ;

३. 'रसिक मोहन'—(कृष्ण का) आध्यात्मिक आकर्षण, उन्हीं के खर्च से, बनारस से १८६५ में ही प्रकाशित ; १६-१६ पंक्तियों के १२२ अठपेजी पृष्ठ।

रघु-नाथ सिंह (महाराज)

रचयिता हैं :

१. अँगरेज़ी पुस्तक 'Outpost Drill' के 'आउट पोस्ट ड्रिल का किताब' शीर्षक के अंतर्गत, हिन्दुस्तानी में अनुवाद के; बलग्राम, १८६७, २१५ छोटे चौपेजी पृष्ठ ;

२. 'भागवत पुराण' के हिन्दी अनुवाद, 'आनन्द अंबुनिधि'—आनन्द का समुद्र—के, १२५२ चौपेजी पृष्ठों का बड़ा ग्रन्थ; बनारस, १८६८ ;

---

[1] इन पर लेख देखिए

[2] भा० 'राम का दास'

३. 'Field exercises and evolutions of infantry' के हिन्दुस्तानी अनुवाद के; बंबई, १८६८, ४५० अठपेजी पृष्ठ।

रणधीर सिंह

'भूषण कौमुदी' – भूषण (गहना) शीर्षक पुस्तक से संबंधित कार्तिक मास के पूर्ण चन्द्र[1] की चाँदनी – पर टीका के रचयिता हैं; बनारस, १८६३, २३-२३ पंक्तियों के ११२ अठपेजी पृष्ठ।

रतन लाल

रचयिता हैं :

१. 'Guide to the map of the world for the use of native Schools, translated from Clift's Outlines of geography' के ; आगरा, १८४२, १०० बारहपेजी पृष्ठों की पुस्तिका।

इसी शीर्षक की एक पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है; उसका नाम है 'Outlines of geography and astronomy and of the History of Hindustan, extracted from 'Pearce's Geography', with introductory Chapter by L. Wilkinson'; कलकत्ता, १८४०, १२ पेजी।

रतन ही रचयिता हैं :

२. 'Brief Survey of ancient History from Marshman, edited by the Rev. J. J. Moore' के।

रत्नावती[2]

भैया पूरनमल, हिन्दू सामन्त, रायसेन दुर्ग के रक्षक, जो शेर-शाह द्वारा पराजित हुए और उसी की आज्ञा द्वारा मृत्यु को प्राप्त

---

१ (युद्ध के देवता) कार्तिकेय के सम्मान में एक उत्सव का दिन।

२ भा० 'हीरे के समान'

हुए, की प्रिय पत्नी। उनका उल्लेख योग्यता के साथ लिखे गए हिंदी छन्दों की रचयिता के रूप में 'शेर शाह' शीर्षक इतिहास में हुआ है। शेरशाह की आज्ञा से अपने खेमे में घिर जाने के कारण, और यह जानते हुए कि वह प्राण लिए बिना नहीं रहेगा, उनके पति ने, १५२८ के लगभग, आशंका से प्रेरित हो, खास अपने हाथ से, इस रानी का सिर काट डाला।[१] क्रूर सुलतान शेरशाह का प्रतिशोध अकेले पूरनमल तक ही नहीं रहा; उसने उनके तीन पुत्रों को नपुंसक बनाने की आज्ञा दी; उनकी लड़की से जहाँ तक संबंध है, वह बाजीगरों को बाजीगरी का खेल दिखाने में सहायता करने के लिए दे दी गई।

रत्नेश्वर[२] (पंडित)

अंगरेजी में, सीहोर के रेजीडेंट एल० विल्किन्सन के कहने से, आगरा स्कूल बुक सोसायटी द्वारा मुद्रित, 'A Journey from Sehore to Bombay in a series of letters', शीर्षक ग्रंथ के रचयिता हैं; आगरा, १८४७, अठपेजी पुस्तिका।

क्या ये वही पण्डित रत्नेश्वर तिवारी बृन्दाबन तो नहीं हैं जो बनारस के साप्ताहिक, 'सुधाकर अखबार' शीर्षक पत्र के संपादक, और पत्र की भाँति ही, 'सुधाकर' नामधारी, बनारस के छापेखाने के संचालक हैं। यह पत्र प्रारंभ में दो कॉलमों में निकलता था, एक हिन्दी में और दूसरा उर्दू में, जैसा कि भाषण देने वालों की सुविधा के लिए भारतवर्ष में प्रायः किया जाता है, देवनागरी अक्षर

---

[१] पूरनमल और उनके जीवन को अन्त करने वाली घटना के संबंध में 'हिस्ट्री ऑव शेरशाह' (शेरशाह का इतिहास), मेरी हस्तलिखित प्रति का पृ० ६६, और 'ए चैप्टर ऑव दि हिस्ट्री ऑव इंडिया' (भारतीय इतिहास का एक अध्याय) के पृ० १३० में, विस्तृत विवरण पाया जाता है।

[२] भा० 'हीरों का राजा'

जानने वालों के लिए और हिन्दू शैली में, तथा फ़ारसी अक्षर जानने वालों के लिए और मुसलमान शैली में। अब यह केवल हिन्दी और देवनागरी अक्षरों में प्रकाशित होता है। वह .खूबसूरती के साथ लिखा जाता है, और अँगरेज़ सरकार का सच्चा सहायक है। उसमें केवल समाचार ही नहीं रहते, वरन् आलोचनात्मक लेख भी रहते हैं, और अन्य देशी पत्रों की अपेक्षा उसका साहित्यिक और वैज्ञानिक मूल्य उसकी अपनी विशेषता है। १८५३ में, अन्य के अतिरिक्त, उसमें पारस्परिक सहायता, सामान्य भूलों, चन्द्रमा का पशु, और वनस्पति जगत पर प्रभाव पर लेख और शेक्सपियर कृत 'Midsummer night's dream' शीर्षक नाटक का अनुवाद प्रकाशित हुआ है।

शैली और प्रकार की दृष्टि से वह बनारस के 'बनारस अख़-बार' शीर्षक हिन्दुस्तानी के अन्य पत्र की अपेक्षा उच्च कोटि का है; किन्तु वह संस्कृत शब्दों से मिश्रित कठिन हिन्दी में निकलता है, जिससे उसका प्रचार हिन्दू साहित्यिकों तक ही सीमित है।

बृन्दावन ने, बनारस के राजा के लिए १८५४ में, सुधाकर छापे-खाने से, एक 'जानकी बंध'—सीता का विवाह—शीर्षक एक हिन्दी ग्रंथ, और दूसरा काव्य-संबंधी 'शृंगार-संग्रह' शीर्षक ग्रंथ प्रकाशित किया है।

रसरंग[1]

तानसेन की भाँति, संगीतज्ञ और कवि थे। उनके प्रसिद्ध नाम का उल्लेख राजकुमार के गवैए के रूप में 'कामरूप' की कथा में हुआ है, जो उसकी सिंहल-यात्रा में उसके साथियों में से थे। 'राग कल्प-द्रुम' के रचयिता ने रसरंग का भारत में लोकप्रिय गीतों के प्रधान रचयिताओं में उल्लेख किया है, और डब्ल्यू० प्राइस ने उनकी कई कविताओं से परिचित कराया है।

---

[1] भा० 'रस का रंग'

रसिक सुन्दर[1]

पद्यों में 'गंगा भक्त'—गंगा के भक्त—शीर्षक गंगा के एक इतिहास के रचयिता हैं, और जिसे, 'जनरल कैटैलौग' में बनारस, 'गज़ट प्रेस', से प्रकाशित हुआ कहा गया है।

राउ-दन-पत[2] (Dan-Pat)

बुँदेला, 'टॉड्स ऐनल्स ऑव राजस्थान' में उल्लिखित आत्म-कथात्मक संस्मरणों के रचयिता हैं।

राग-राज[3] सिंह

भारतवर्ष में मुद्रित रचना, 'रुक्मिणी परिणय'[4]—रुक्मिणी का कृष्ण के साथ विवाह—के रचयिता हैं।

रागसागर[5] (श्री कृष्णानंद व्यासदेव)

गौड़ ब्राह्मण, और मेवाड़ प्रान्त में, उदयपुर में, देव गर्व-कोट के निवासी। वे बारह लाख पचीस हज़ार (१२,२५,०००) लोकप्रिय छंदों के संग्रह, 'राग कल्पद्रुम' के रचयिता हैं। इस रचना का छपना, कलकत्ते से १८९९ संवत् (१२४९ बंगाली संवत् और १८४२ ईसवी सन्) से प्रारंभ हुआ, १९०२ संवत्

---

१ भा० 'रसपूर्ण सौंदर्य'

२ भा० 'राजा का दिया हुआ स्वामी'

३ भा० '(संगीत शैलियों) रागों का राजा'

४ वस्तुतः इस शब्द का अर्थ एक गहना है जिसे स्त्रियाँ गले में पहिनती हैं ('क़ानून-इ इस्लाम')

५ भा० 'रागों का समुद्र'। यह शब्द वास्तव में एक उपाधि है जो दिल्ली के सुलतान ने यह संग्रह प्रस्तुत करने के उपलक्ष्य में रचयिता को दी थी; यह शीर्षक उसकी कविता का नाम या तख़ल्लुस होना चाहिए।

(१२५२ बंगाली संवत्, १८४५ ईसवी सन्) में पूर्ण हुआ। 'राग कल्पद्रुम' १८०० पृष्ठों के लगभग बड़े चौपेजी पृष्ठों का एक बड़ा ग्रन्थ है। जैसा कि उसने भूमिका में बताया है, इन लोकप्रिय गीतों का संग्रह करने के लिए रचयिता ने बाईस वर्ष की अवस्था में यात्रा की थी। यह संग्रह मूल्यवान् है, क्योंकि उसमें प्रसिद्ध रचयिताओं की तथा अब तक अज्ञात कविताएँ दी गई हैं। इन्हीं रागसागर ने नाभाजी कृत 'भक्तमाल' का एक संस्करण देने की घोषणा की है।

'राग कल्पद्रुम' कई भागों में विभक्त है। प्रधान सात (भागों) की गणना की जा सकती है: पहले में, जिसमें विभिन्न रागों में कविताएँ हैं, १६४ पृष्ठ हैं; दूसरे में, सूरदास कृत सपूर्ण 'सूर-सागर' है और जिसमें ६०० से अधिक पृष्ठ हैं; तीसरे में हिन्दुओं और मुसलमानों की कविताओं के ३४४ पृष्ठ हैं; चौथे में १७६ पृष्ठ में वसंत और होली पर गीत हैं; पाँचवें के दो भागों में, एक में २०८ पृष्ठ और दूसरे में १५६ पृष्ठ, ध्रुपदों और ख्यालों का संग्रह है; छठे में ग़ज़लों और रेख़ताओं आदि के ७६ पृष्ठ हैं; अंत में सातवें में भरतरी और गोपीचंद राजाओं के छंदों के २८ पृष्ठ हैं।

राजा (महाराज बलवन या बलवन्त सिंह बहादुर)

बनारस के राजा, चेतसिंह बनगौर (Bangor) के पुत्र और आगरे के निवासी, मिर्ज़ा हातिम अली बेग मुहर के शिष्य एक हिन्दुस्तानी-कवि हैं।......(दीवान)...। वे, टीका और हिन्दी छन्दों की विचित्र तालिका सहित, 'चित्र चन्द्रिका'—काव्य चित्रों की चन्द्रिका—अथवा छन्दोबद्ध हिन्दी काव्य-शास्त्र के रचयिता भी हैं। इस रचना की एक प्रति मुझे स्वर्गीय मेजर फ़ुलर की कृपा से मिली थी जो रचयिता के चित्र से सुसज्जित, १८५६ में आगरे से मुद्रित १२० अठपेजी पृष्ठों का ग्रन्थ है।

राम[1] (बाबू)

संभवतः जनार्दन द्वारा 'मोरोपन्त' शीर्षक लेख में उल्लिखित ज्योतिषी, बाबू जी नायक ही हैं।

राम किशोर[2] (पंडित)

एक हिन्दुई ग्रंथ के रचयिता हैं जिसका अँगरेज़ी में शीर्षक है 'Public Revenue, with an abstract of the Revenue Law'; दिल्ली।

राम किश्न[3] (पंडित)

मूलतः कश्मीर के तथा दिल्ली के निवासी........(उर्दू की रचनाएँ)

× × ×

१३. और 'स्त्री शिक्षा'—स्त्रियों के लिए शिक्षा, हिन्दी गद्य और पद्य में पुस्तिका; कलकत्ता, १८३४ ; आगरा १८५६, ६० अठपेजी पृष्ठ।

राम गोलन[4]

तुलसी-दास कृत 'रामायण' पर एक टीका के रचयिता हैं, जिसका, आगरे के 'जनरल कैटैलॉग ऑव ओरिएंटल वर्क्स' के अनुसार, कलकत्ते या बनारस से केवल प्रथम भाग प्रकाशित हुआ प्रतीत होता है।

---

[1] भा० विष्णु के एक प्रसिद्ध अवतार का नाम, अर्थात् रामायणों, जिनमें से वाल्मीकि कृत सबसे अधिक प्रसिद्ध है, के नायक।

[2] भा० 'राम का पुत्र'

[3] कृष्ण का विकृत उच्चारण और हिज्जे

[4] संभवतः 'राम-गलन'—राम का गल जाना—का बंगाली उच्चारण।

राम चरण[1]

राम चरण 'राम सनेहियों', अर्थात् ईश्वर के मित्र, के, जो पश्चिमी भारत में फैले हुए हैं, हिन्दू संप्रदाय के संस्थापक हैं। राम चरण एक बैरागी थे जिनका जन्म संवत् १७७६ (१७१६ ईसवी सन्) में जयपुर राज्य के सोरहचसन (Sorahchacen) गाँव में हुआ था। उन्होंने अपना पैत्रिक धर्म किस निश्चित समय में छोड़ा न तो यह ज्ञात है, न इस काम के कारण ही ज्ञात हैं, किन्तु वे बहुत शीघ्र मूर्ति-पूजा के विरोधी हो गए थे, और इस संबंध में ब्राह्मणों द्वारा अत्यधिक पीड़ित हुए थे। उन्होंने १७५० में अपना जन्म-स्थान छोड़ा; और कुछ समय तक भटकते फिरने के बाद, वे संयोगवश उदयपुर राज्य में भीलवाड़ा पहुँचे, जहाँ वे दो वर्ष तक रहे। इसके बाद राज्य के नरेश (और वर्तमान राणा के पिता), भीम सिंह, ने ब्राह्मणों द्वारा उसकाए जाने पर उन्हें इतना पीड़ित किया कि उन्हें नगर छोड़ने पर बाध्य होना पड़ा। शाहपुर के शासक ने, जिसका नाम भी भीमसिंह था, उनके दुःखों से द्रवीभूत हो, उन्हें अपने दरबार में शरण दी, और समुचित सशस्त्र रक्षा प्रदान की।

राम चरण ने इस उदार प्रस्ताव से लाभ उठाया, किन्तु विनम्रतावश उन्होंने हाथियों और सेवकों के दल की, जो उन्हें सुरक्षित रूप में लाने के लिए भेजा गया था, स्वीकार करने से इंकार कर दिया, और १७६७ में शाहपुर पैदल ही पहुँचे; किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इस नगर में वे दो वर्ष बाद ही, जब कि निश्चित रूप से उनके संप्रदाय की स्थापना हुई, अच्छी तरह से बस पाए थे।

---

[1] भा० राम के चरण

राम चरण अपनी ७६ वीं वर्ष की अवस्था में, १७६८ के अप्रैल मास में, मृत्यु को प्राप्त हुए, और शाहपुर के प्रधान मन्दिर में उनका शरीर भस्मीभूत कर दिया गया।

कहा जाता है कि भीलावाड़ा के सूबेदार, देवपर की जाति के बनिए ने, जो राम चरण के सबसे बड़े दुश्मनों में से था, एक दिन एक सिंगी[1] को उन्हें मार डालने के लिए भेजा। जिस समय यह व्यक्ति पहुँचा, राम चरण ने, जो संभवतः यह भेद जानते थे, सिर झुका दिया और उससे दी गई आज्ञा का पालन करने के लिए कहा, किन्तु यह जताते हुए कि जिस प्रकार केवल ईश्वर ने जीवन दिया, उसी प्रकार उसकी आज्ञा बिना उसे कोई नष्ट नहीं कर सकता। इन शब्दों से मारने वाले को यह विश्वास हो गया कि राम चरण ने अलौकिक ढंग से उसे सौंपे गए कार्य को पहले से ही जान लिया था ; वह सुधारक के पैरों पर गिर पड़ा और क्षमा याचना की।

राम चरण ने छत्तीस हज़ार दो सौ पचास शब्दों या भजनों की रचना की है, जिनमें से प्रत्येक में पाँच से ग्यारह तक पंक्तियाँ हैं। प्रत्येक श्लोक बत्तीस वर्णों से बना है। ये गीत, यद्यपि वे भी जो इस दार्शनिक के उत्तराधिकारियों[2] द्वारा लिखे गए हैं, देव-नागरी अक्षरों और प्रधानतः हिन्दी में, राजवाड़ा के ख़ास प्रयोगों, फ़ारसी और अरबी शब्दों, और संस्कृत तथा पंजाबी उद्धरणों के मिश्रण के साथ, लिखे गए हैं। मैंने ऊपर की सब बातें कैप्टेन वेस्मकट (Westmacott) से ली हैं, जिन्होंने उन्हें कलकत्ते

---

[1] हिन्दुओं की एक ख़ास जाति जो अपने सहधर्मियों को तीर्थ-स्थान ले जाते हैं। यह शब्द 'संगी' (साथी) का बिगड़ा हुआ रूप प्रतीत होता है।

[2] देखिए रामजन और दूल्हाराम पर लेख

की एशियाटिक सोसायटी के जर्नल (फ़रवरी, १८३५) में प्रकाशित किया है, जिनमें राम-सनेहियों के सिद्धान्तों की रूपरेखा मिलती है।

रामजन[1]

यह हिन्दू राम-सनेही संप्रदाय के संस्थापक, राम चरण के आध्यात्मिक आधिपत्य के उत्तराधिकारी और उनके बारह चेलों में से एक थे। उनका जन्म सिरसाँ (Sircin) गाँव में हुआ, १७६८ में उन्होंने नया धर्म ग्रहण किया, और बारह वर्ष, दो महीने और छः दिन तक आध्यात्मिक गद्दी पर बैठने के बाद वे शाहपुर में १८०६ में मृत्यु को प्राप्त हुए। उन्होंने अठारह हज़ार शब्दों या पदों की, राम चरण की भाँति अधिकतर हिन्दी में, रचना की।[2]

राम जसन या राम जस[3] (पं० लाला)

लाहौर के शिक्षा-विभाग के कर्मचारी, रचयिता हैं :

१. हिन्दी में लिखित भूगोल, 'भूगोल चन्द्रिका'—भूगोल का दीपक ; बनारस, १८५६, १५० छोटे चौपेजी पृष्ठ ;

२. तुलसीदास कृत 'रामायण', अथवा केवल 'बालकांड' और 'अयोध्या कांड' शीर्षक भागों या सर्गों के ; बनारस, १८६१, २२० अठपेजी पृष्ठ।

इससे पूर्व उन्होंने इसी नगर से (१८५६ में) इस काव्य का एक पूरा संस्करण, कठिन शब्दों के हिन्दी में अर्थ और पुस्तक के संक्षिप्त सार सहित, प्रकाशित किया था, ४८७ अठपेजी पृष्ठ।

---

[1] भा० राम का जन

[2] 'जर्नल ऑव दि एशियाटिक सोसायटी ऑव बंगाल', फ़रवरी १८३५

[3] भा० इन शब्दों का, जो समानार्थवाची है, 'राम की महिमा' अर्थ है।

३. उनका एक 'हितोपदेश' का हिन्दी रूपान्तर है, जिसे विद्वान् श्री एफ़० हॉल, जिन्होंने अपनी 'हिन्दी रीडर' में उसका प्रथम भाग प्रकाशित किया है, हिन्दी में किए गए दो अन्य अनुवादों, अर्थात् बद्रीलाल कृत और वह जिसका शीर्षक है 'Chârn-pûtha'—Jolie Lecture—की अपेक्षा अधिक पसन्द करते थे।

४. पंजाब के शिक्षा-विभाग के संचालक स्वर्गीय मेजर फ़ुलर (Fuller), की आज्ञा से उन्होंने इस प्रान्त के शिक्षा-विभाग के बोर्ड की रिपोर्ट (१८६१-१८६२) का अँगरेजी में अनुवाद किया है; ४६ छोटे चौपेजी पृष्ठ।

राम जोशी[1]

'कवि चरित्र' में उल्लिखित, शोलापुर के ब्राह्मण ने, जो १६८४ शक संवत् (१७६२) में उत्पन्न और पचास वर्ष की अवस्था में १७३४ (१८१२) में मृत्यु को प्राप्त हुए, 'छंद मंजरी'—छंदों का गुच्छा—की रचना की।

राम दया या दयाल[2] (पंडित)

रचयिता हैं :

१. देशी स्कूलों के लिए 'वृत्तांत वफ़ादार सिंह और गद्दार सिंह'—सचाई सिंह और झूठ सिंह की कथा—शीर्षक एक पुस्तक के हिन्दी अनुवाद के, २४ अठपेजी पृष्ठ, १८६० में २००० प्रतियाँ मुद्रित। यह पुस्तक उर्दू में लिखित 'क़िस्सा-इ वफ़ादार सिंह' का हिन्दी रूपान्तर है, और मेरे विचार से 'वृत्तांत धर्म सिंह' भी यही है;

---

[1] इस शब्द का अर्थ है 'नक्षत्र विज्ञानी' अथवा 'ज्योतिषी'।

[2] भा० 'राम का दिया हुआ' या 'राम की दया'

२. 'गणित सार'—गणित का सार—के; उर्दू 'ज़ुब्दतुल् हिसाब (Zubdat ulhicâb) का हिन्दी-अनुवाद, और स्वर्गीय मेजर फ़ुलर (Fuller) की आज्ञा से १८६३ में लाहौर से प्रकाशित, चार अठपेजी भागों में ;

३. 'गणित प्रकाश'—गणित का प्रकाश—के, ७२ अठपेजी पृष्ठ, १८६८ में लाहौर से ही प्रकाशित प्राथमिक गणित ;

४. 'क़ायदा पहला'—प्रथम नियम—स्कूल जाने वाली छोटी लड़कियों के लाभार्थ, ३६ पृष्ठों की 'कोह-इ नूर' छापेख़ाने, लाहौर, से मुद्रित हिन्दुस्तानी पुस्तिका।

राम-दास[1] मिश्र (स्वामी नायक)

सूरिया (Sûriyâ) जी, जिनकी, पत्नी राना बाई सूरिया जी थीं, के पुत्र, जिनका नाम पहले नारायण था, किन्तु राम-भक्ति के कारण उन्हें राम-दास नाम मिला। वे लोकप्रिय गीतों के रचयिता हैं, और निस्संदेह वही हैं जो सिक्खों के चौथे गुरु, नानक के तीसरे उत्तराधिकारी हैं। जैसा कि पीछे 'अर्जुन' लेख में देखा गया है, उनकी कुछ धार्मिक कविताएँ 'आदि ग्रन्थ' में हैं।

गुरु राम-दास सिक्खों के 'सोधी' (Sodhi) नामक विशेष संप्रदाय के संस्थापक हैं, जिसमें बेदी (Behdi), तीहौस (Tihaus) और भल्ले (Bhalleh) संप्रदायों की भाँति क्षत्रिय हैं। चमारों की अलग जाति के सिक्खों के एक दूसरे संप्रदाय या संस्था ने राम-दास को अपने गुरु रूप में स्वीकार किया है और फलतः वे अपने को 'राम-दासी' कहते हैं।

उनकी ये रचनाएँ कही जाती हैं :

---

[1] भा० 'राम का दास'

१. 'दास बोध'—राम-दास का ज्ञान ;

२. 'समास आत्मा राम'—सबकी आत्मा राम ;

३. 'मानुष स्लोक'—(शायद 'मनुष स्लोक' पढ़ा जाना चाहिए—मनुष्यों के लिए कविता ?);

४. 'राजनीति' पर दो सौ बीस श्लोक ;

५. 'रास बिलास'—कृष्ण का राधा और गोपियों के साथ 'नाचने की क्रीड़ा', लाहौर से १८६८ में मुद्रित हिन्दी कविता, ३०० अठपेजी पृष्ठ ।

राम-नाथ प्रधान[1]

प्रसिद्ध सामयिक हिन्दू, राम की कथा पर विचार 'राम कलेवा रहस्य' के रचयिता हैं; बनारस, १८६६, चित्रों सहित, २६-२६ पंक्तियों के २४ अठपेजी पृष्ठ ।

राम प्रसाद[2] लक्ष्मी लाल

अहमदाबाद के, रचयिता हैं :

१. 'धर्म तत्त्व सार', अर्थात् धर्म की वास्तविकता का निचोड़, के । श्री विलसन के पास उसकी एक प्रति है;

२. लोकप्रिय गीतों के ;

३. १८५५ में अहमदाबाद में मुद्रित हिन्दी कविता, 'विवेक सागर'—एक दूसरे का अन्तर पहिचानने की विद्या का सागर—के; १२४ पृष्ठ ।

---

[1] भा० 'सबसे ऊँचे भगवान् राम'

[2] राम प्रसाद—राम का प्रसाद

राम बस[1] (पंडित)

हिन्दी छन्दों में ईसा की जीवनी (Life of Christ) के रचयिता हैं जो १८३३ में श्रीरामपुर से मुद्रित हुई है, १२-पेजी। यह २६८ पृष्ठों का एक छोटा-सा सुंदर ग्रंथ है, जिसकी, जैसा कि प्रथम पृष्ठ के निचले भाग में दिए गए नोट से पता चलता है, वास्तव में, सितंबर १८३१, में दो हज़ार प्रतियाँ मुद्रित हुईं। उसकी रचना चौपाइयों (Chaupais) और दोहों में हुई है, और शीर्षक है 'ख्रीष्ट चरितामृत पुस्तक'—ईसा की कथा के अमृत की पुस्तक।

राम रतन[2] शर्मा

'वाक़यात-इ हिंद'—भारतवर्ष की घटनाएँ—अर्थात्, मेरे विचार से इस शीर्षक की करीमुद्दीन की उर्दू रचना के हिन्दी अनुवाद के रचयिता हैं।

उन्होंने हिन्दुई में 'पीयर्सेज़ आउटलाइन्स ऑव ज्यॉग्रफ़ी ऐंड ऐस्ट्रॉनॉमी' का, जो संभवतः वही रचना है जो 'आउटलाइन्स ऑव ज्यॉग्रफ़ी ऐंड ऐस्ट्रॉनॉमी ऐंड ऑव दि हिस्ट्री ऑव हिंदुस्तान' है, कलकत्ता स्कूल बुक सोसायटी द्वारा प्रकाशित, अनुवाद भी किया है; कलकत्ता, १८४०, अठपेजी।

राम राउ[3] (गुरु)

नानक के वंश के, नवीं पीढ़ी के,[4] शिष्य हैं। उन्होंने हिन्दुई

[1] भा० 'राम का शक्त' (बंगाल प्रान्त के उच्चारण के अनुसार 'राम बॉस')

[2] भा० 'राम का रत्न'

[3] 'राउ' राना या राजा का समानार्थवाची है।

[4] इस सम्बन्ध में जो सुना जाता है वह इस प्रकार है : तीसरी पीढ़ी तक स्वयं नानक के शिष्य रहे। तत्पश्चात् बाद की पीढ़ियों में उनके पुत्र रहे, राम राउ का सम्बन्ध नवीं से है।

भजनों की रचना की है। देहरादून[1] में, मंसूरी पहाड़ से नीचे, हिन्दुस्तान की उत्तरी सीमा पर बनी उनकी क़ब्र जितनी मुसलमानों द्वारा उतनी ही हिन्दुओं द्वारा समादृत है। जब मुहम्मद शाह गुलाम क़ादिर द्वारा दृष्टि-विहीन हुए, तो वे भाग कर मरहठों की तरफ़ चले गए और देहरादून पहुँचे, जहाँ उन्होंने क़ब्र के पास रखी हुई, गुरु राम राउ की चारपाई पर आराम किया। पहली अगस्त, १८४० को मंसूरी पहाड़ से हिन्दुस्तान आते समय जीवनी-लेखक करीम ने यह नगर देखा। उनका कहना है: "नगर सुन्दर है, और वह किसी भी अँगरेज़ी छावनी के बराबर समृद्ध है। यहीं देहरादून में गुरु राम राउ ने अपने दफ़नाए जाने के लिए वह इमारत बनवाई थी जिसे हिन्दू समाधि,[2] मुसलमान क़ब्र[3] और, नगर की भाँति, दो पहाड़ों के बीच में स्थित होने के कारण, 'दून' – नीचा – कहते हैं। यह समाधि काबा के अनुकरण पर बनाई गई है। इसी इमारत में राम राउ दफ़नाए गए हैं। कब्र के समीप ही वह चारपाई सुरक्षित रखी गई है जिस पर गुरु जी लेटा करते थे, और जो 'मंच[4] गुरु राम राउ' कहा जाता है, और जिसे हिन्दुओं ने एक विशेष ढंग से सजा रखा है। इस इमारत के बाहर, छत्तीस गज़ का एक खंभ लगा हुआ है, जिस पर लाल[5] रंग का झंडा उड़ता है। इस संत के भक्तों का विश्वास है कि झंडे की कृपा से सब इच्छाएँ पूर्ण होती हैं। वे उसकी पूजा करते हैं और

---

[1] इन शब्दों का ठीक-ठीक अर्थ है 'नीचे का मन्दिर' (pagode basse) या 'छोटा मन्दिर' (petite pagode) है।

[2] ठीक-ठीक 'समाधि', जिस शब्द का अर्थ है 'जोगी की क़ब्र'।

[3] समाधि के लिए अरबी शब्द।

[4] इस शब्द का अर्थ है 'प्लेटफ़ॉर्म', और फलतः, 'चारपाई'।

[5] यह रंग इस बात का द्योतक है कि संत शहीद समझा गया है। मेरा ग्रन्थ 'Memoir on the Musalman Religion in India' देखिए।

उस पर छोटे-छोटे झंडे चढ़ाते हैं। मार्च के महीने में इस गुरु का मेला लगता है। इस समय, उसके चारों ओर रहने वाले तमाम लोग उसके तीर्थ के लिए जाते हैं।'

लेखक ने इस महापुरुष के बारे में जो बातें दी हैं वे उसे १८४७ में गुरु राम की आध्यात्मिक गद्दी के उत्तराधिकारी से ज्ञात हुई थीं। उन्होंने उसे बताया कि राम राउ, बारह वर्ष की अवस्था में, लाहौर में थे, और अन्य अनेक बिलकुल एक-सी छड़ियों में से, अपनी छड़ी पहिचान ली थी, जो उन्होंने मियाँ नूर[1] से ली थी, जहाँ उन्होंने इसी प्रकार के बहत्तर चमत्कार, अन्य व्यक्तियों के अतिरिक्त आलमगीर के सामने, दिखाए, यद्यपि आलमगीर के इतिहासों में उनका उल्लेख नहीं मिलता।

हिन्दुओं का कहना है कि गुरु राम राउ मक्का गए थे और उन्होंने हज में भाग लिया। हिन्दुओं का मत उन्हें हिन्दू-मत के साथ ही साथ मुसलमानी मत मानने की आज्ञा देता है; नानक-संप्रदाय वालों का भी ठीक ऐसा ही विचार है।

उल्लिखित इमारत के चारों कोनों में गुरु की चार स्त्रियों की क़ब्रें हैं। चारों ओर कुछ वृक्ष हैं जो कहा जाता है, इस स्थान पर उनके दँतून[2] फेंक देने से उत्पन्न हो गए थे। इमारत की पूर्व की ओर एक पत्थर है जिस पर गुरु की मृत्यु-तिथि खुदी हुई है।

करीम के आधार पर मैंने जिस व्यक्ति का उल्लेख किया है वह निस्संदेह वही है जिसे, 'पोथी हिन्दी अज़ राम राय'—राम

---

[1] अर्थात्, प्रत्यक्षतः, नानक-सम्प्रदाय के आठवें गुरु, जिनके वे (राम राउ) उत्तराधिकारी हुए।

[2] यहाँ यह बता देना उचित होगा कि दँतून, जिसे हिन्दू 'दतवन' और मुसलमान 'मिसवाक' (Miswâk) कहते हैं, एक विशेष मुलायम पेड़ की लकड़ी से बनाई जाती है।

राय कृत भारतीय (धार्मिक) पुस्तक – का रचयिता, राम राय या राम राजा भी कहते हैं; और जो 'राम रायी' संप्रदाय का, जो हरिद्वार के निकट, हिमालय के निम्न भाग में एक बड़ी भारी संस्था है, संस्थापक है ।[1]

राम सरन-दास[2] (राय)

दिल्ली के डिप्टी कलक्टर, व्यावहारिक लाभ-संबंधी अत्यधिक पुस्तकें लिखने वाले सामयिक लेखकों में से हैं। देशी शिक्षा की रिपोर्टों में उनकी पुस्तकों को 'राम सरन-दास' सीरीज़ कहा गया है; लिखी जाने वाली बोली (dialect) के अनुसार 'हिन्दी सीरीज़' और 'उर्दू सीरीज़' अलग-अलग हैं, और उन का क्रम इस प्रकार रखा जाता है :

१. 'अक्षर अभ्यास'—अक्षरों का अध्ययन, चार भागों में एक प्रकार की पहली पुस्तक है, जिसमें विकसित देवनागरी लिपि और सरकारी पत्र तथा दरख्वास्तें लिखने की विधि है, और जिस पर 'An educational course for village accountants (Patwaris)' अँगरेज़ी शीर्षक दिया हुआ है; आगरा, १८४४। ईस्ट इंडिया लाइब्रेरी में १८४५ के संस्करण की एक प्रति है, अठपेजी; मेरे पास उसकी १८४६ की एक उर्दू प्रति है, सिकन्दरा, अठपेजी ही, २४ पृष्ठ।

२. 'फ़ैलावट' या 'गणित प्रकाश'—गणित का प्रकाश – और 'उसूल-इ हिसाब' शीर्षक के अंतर्गत उसका उर्दू रूपान्तर, अठपेजी,

---

[1] 'Memoir on the religious sects of the Hindus' (हिन्दुओं के धार्मिक सम्प्रदायों का विवरण), 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १८, पृ० २८६; कनिंघम कृत 'हिस्ट्री ऑव दि सिक्ख्स', पृ० ४००

[2] भा० 'राम की शरण का दास'

आगरा, आदि । मेरे पास उसके कलकत्ते के उर्दू संस्करण की एक प्रति है, १८५०, ३४ अठपेजी पृष्ठ, दस हज़ार प्रतियाँ मुद्रित;

३. 'मापतोल' – तोलना और नापना[1] (क्षेत्र विज्ञान—मैन्सुरेशन के प्राथमिक सिद्धान्त), अठपेजी । इन पुस्तकों के, उर्दू और हिन्दी में, अनेक संस्करण हो चुके हैं; और जो अँगरेजी भारत में उच्च कोटि की पुस्तकें मानी जाती हैं,[2] अन्य के अतिरिक्त एक उर्दू में, आगरे से १८४८, चित्रों सहित, १२ अठपेजी पृष्ठ ।

४. 'पटवारी या पटवारियों की किताब, या पुस्तक' (जिसके अनुसार यह पुस्तक उर्दू या हिन्दी में लिखी गई है)—पटवारियों के लिए पुस्तक—अर्थात् चार भागों में, उत्तर-पश्चिम प्रदेश के देशी लोगों के लाभार्थ, गाँव के पटवारियों के लिए पाठ्य-क्रम ।[3] उसका आगरे का १८४६ का एक उर्दू संस्करण है, ८० अठपेजी पृष्ठ; एक दूसरा १८५३-१८५५ का, चित्रों सहित; एक लाहौर से. १८६३, ५४ छोटे चौपेजी पृष्ठ, आदि ।[4]

राम सरूप[5]

मीर वली मुहम्मद, जो सम्भवतः हिन्दू से मुसलमान हुए, की हिन्दी में लिखित दो कविताओं के संपादक हैं; पहली का शीर्षक है 'श्री कृष्ण जी की जनम लीला',—कृष्ण के जन्म-समय की लीला—फ़तहगढ़, १८६८, १३ पृष्ठ; दूसरी 'बालपन बाँसुरी लीला'—(कृष्ण की) वंशी की बचपन की लीला; वहीं से, १४ पृष्ठ ।

---

[1] इसी प्रकार की एक उर्दू पुस्तक का शीर्षक है 'मिसबाह उलमसाहत' ।

[2] इस विषय पर दे० 'आगरा गवर्नमैंट गज़ट', १ जून, १८५५ का अंक ।

[3] क्या यह 'पटवारियों का कागज़ बनाने की रीति' रचना ही तो नहीं है, जिसके अनेक संस्करण हो चुके हैं ।

[4] 'पटवारी प्रोट्रैक्टर' शीर्षक के अन्तर्गत उर्दू में एक पुस्तिका आगरे से प्रकाशित हुई है ।

[5] भा० 'राम का रूप'

रामानंद[1]

बनारस, के फ़क़ीर या बैरागी, प्रसिद्ध हिन्दू सुधारक, रामानुज के शिष्य और कबीर के गुरु, वैष्णवों के समस्त आधुनिक संप्रदायों के (मध्यवर्ती) सुधारक हैं।

उनकी हिन्दी में लिखित कुछ धार्मिक कविताएँ हैं और जो 'आदि ग्रंथ' में सम्मिलित हैं। १४०० के लगभग, यही व्यक्ति थे जिन्होंने ईश्वर के समक्ष, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र, सब की समानता सर्वप्रथम घोषित की, और जिन्होंने सब को बराबर अपने शिष्यों के रूप में ग्रहण किया; जिन्होंने यह घोषित किया कि सच्ची भक्ति वाह्य रूपों तक ही सीमित नहीं, किन्तु इन रूपों से ऊपर है। उन्होंने, अपने प्रधान शिष्य कबीर के बारे में कहा है, कि भले ही वे जुलाहे हों, ब्रह्मज्ञान के कारण वे ब्राह्मण हो गए हैं।[2]

रामानुज रामापति[3]

लोकप्रिय हिन्दी गीतों के रचयिता हैं।

राय-सिंह[4]

'पोथी रामायण', अर्थात रामायण की पुस्तक, शीर्षक एक हिन्दुई 'रामायण' के रचयिता। फ़ारसी लिपि में लिखी हुई उसकी एक प्रति ब्रिटिश म्यूज़ियम में सुरक्षित है। उसकी रचना सात, आठ या नौ पंक्तियों के छन्दों में हुई है।

---

१ भा० 'राम का आनन्द'

२ 'दबिस्तान', शा और ट्रॉयर (Shea and Troyer) का अनुवाद, जि० २, पृ० १८८

३ भा० 'भगवान् राम, राम का छोटा (पुत्र)'

४ भा० या उत्तम रूप में,—'राजा सिंह'. राजा-सिंह

रूप और सनातन

दो भाई थे, जो पहले मुसलमान और गौड़ के सुलतान के मंत्री थे। उन्होंने हिन्दू धर्म स्वीकार किया और सुधारक चैतन्य[1] के अनेक शिष्यों में से अत्यन्त प्रसिद्ध हो गए। उन दोनों ने, विभिन्न सुधारवादी संप्रदायों के वैष्णवों की बोली (dialect) हिन्दी में, एक-एक 'ग्रन्थ'—पुस्तक (धार्मिक दर्शन)—की रचना की। इस के अतिरिक्त वे अन्य अनेक रचनाओं के रचयिता हैं।[२]

'भक्तमाल' में उनके संबंध में इस प्रकार का लेख मिलता है :

छप्पय

संसार स्वाद सुख बात ज्यों दुहु श्री रूप सनातन त्याग दियो।
गौड़ देश बंगाल हुते सब ही अधिकारी।[3]
हय गय भवन भँडार बिभव भूभुज असुहारी।
यह सुख अनित्य बिचार बास वृन्दाबन कीनो।
यथा लाभ संतोष कुंज कर बामन दीनो।
ब्रज भूमि रहस्य राधा कृष्ण भक्त तोष उद्धार कियो।
ससार स्वाद सुख बात ज्यों दुहु श्री रूप सनातन त्याग दियो॥ ८६[४]

टीका

रूप और सनातन ने अपनी इच्छाओं पर विजय प्राप्त करली थी। उन्होंने बंगाल देश का राज्य छोड़ दिया, जैसा कि नाभाजी ने उपर्युक्त छन्द में कहा है। जब वे वृन्दाबन गए, तो शुकदेव द्वारा 'भागवत' में वर्णित रीति के अनुसार, उन्होंने कृष्ण-लीला से संबंधित सुरक्षित रखे गए स्थानों के दर्शन किए।

---

[1] इस व्यक्ति के संबंध में, देखिए, भोलानाथ चंद्र : 'दि ट्रैविल्स ऑव ए हिन्दू', पहली जि०, ३२ तथा बाद के पृष्ठ।

[२] 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १६, पृ० १२० और १२१

[3] विलसन : 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १६, पृ० ११४।

[४] यह छप्पय 'भक्तमाल' के १८८३ के लखनऊ वाले संस्करण से लिया गया है।—अनु०

भागवत और आध्यात्मिक बातों के रसिकों को सुखदाई रीति के अनुसार उन्होंने उपासना की। फिर प्रभु की आज्ञा पाकर वृन्दावन के कोतवाल, गोपेश्वर[1] महादेव, उनके पास आकर कहने लगे : 'क्योंकि तुम वृन्दावन आए हो, प्रभु की स्तुति में कुछ लिखो। अन्यथा मैं तुम्हें यहाँ रहने की आज्ञा नहीं दूँगा।' यह सुनकर वे डर गए और उन दोनों ने एक-एक ग्रंथ की रचना की।

एक बार सम्राट् अकबर वृन्दावन में उनकी कुटी में उनके दर्शन करने गए, और उनसे कहा : 'यदि आपकी इच्छा हो, तो मैं आपके लिए एक मकान बनवा दूँ।' उन्होंने उससे कहा : 'अपनी आँखें बन्द करलो।' उसने ऐसा ही किया, और देखा कि उनका निवास-स्थान बहुमूल्य रत्नों से जड़ा हुआ है। रूप और सनातन ने उससे कहा : 'यदि तुम अपने राज्य का सब धन भी लगा दो, तो ऐसी कुटी नहीं बनवा सकते।'

रूप ने अपने 'ग्रन्थ' में राधा के बालों की समता साँपिन से की थी।[2] सनातन ने यह अंश पढ़ा, तो छंद उन्हें भद्दे प्रतीत हुए, और उन्होंने काव्य-रीति के अनुसार संदेह दूर किया। किन्तु एक बार स्वयं राधा ने, राधासरतीर लटक कर, अपने फैले हुए बालों को व्याल रूप प्रदान किया।

सनातन ने उसे देख चिल्लाकर ब्रजवासियों से कहा : 'दौड़ो, साँप इस बच्चे को डसने और निगलने वाला है।' लोग आए, और

---

[1] शाब्दिक अर्थ, 'गोपों का प्रधान (स्वामी)' यह कृष्ण का एक नाम है। यहाँ पर यह शब्द या तो एक आदरसूचक उपाधि है, या एक व्यक्तिवाचक नाम, यद्यपि यहाँ यह बता देना यथेष्ट होगा कि एक ही व्यक्ति शिव और कृष्ण के नाम एक साथ ही धारण कर सकता है।

[2] इस तुलना का बहुत अधिक व्यवहार किया जाता है। उसका एक उदाहरण मेरे 'बकावली' के संक्षिप्त अनुवाद में देखिए ('जूर्नां एसियातीक', वर्ष १८३५; जि० १६, पृ० ३५८; अथवा 'प्रेम-सिद्धांत' में, पृ० ११२।

देखा; किन्तु उन्हें न तो बच्चा दिखाई दिया और न साँप । तब सनातन ने समझा कि इस विषय से सम्बन्धित रूप के छन्दों में, असमय ही सन्देह करने से स्वयं राधा ने अपने बालों को सचमुच सर्प के रूप में प्रदर्शित किया है । वे अपने अनुज के पास आए, और उनकी प्रदक्षिणा करते हुए कहा : 'मेरे दोष लगाने का फल यह हुआ, कि जिस रूप की मैंने आलोचना की थी उसी रूप में राधा ने अपने दर्शन दिए ।'

रूपमती[1]

का जन्म सारंगपूर में हुआ था, जो उस समय के स्वतंत्र राज्य, तथा अफ़गान सरदार बाज़ बहादुर, जिसकी वे प्रेयसी थीं, द्वारा शासित, मालवा में है । जब अकबर ने अपने को इस प्रान्त का सम्राट् घोषित किया, तो बाज़ का हरम विजेताओं के हाथ में पड़ गया, तथा कहा जाता है कि बाज़ के प्रति सच्ची रहने के लिए रूपमती ने अपने को मृत्यु को सौंप दिया । अब भी मालवा में गाए जाने वाले भजनों की वे रचयिता हैं; ये भजन लिखित रूप में हैं, और भारतवर्ष की प्रसिद्ध नारियों पर एक रोचक लेख के लेखक ने उनमें से कई उद्धृत किए हैं ।[2]

रैदास या राउ-दास[3]

ये मान्य व्यक्ति, जो अपने कामों में चमड़े का प्रयोग करने वाले, चमारों की अपवित्र समझी जाने वाली जाति के थे, रामानंद के शिष्य और अपने नाम के आधार पर रै-दासी कहे जाने वाले

---

[1] भा० 'सौंदर्य का आदर्श'

[2] 'कलकत्ता रिव्यू', अप्रैल, १८६६, पृ० ११

[3] संस्कृत उच्चारण के अनुसार 'रवि दास',—सूर्य का दास — के स्थान पर ।

एक संप्रदाय के संस्थापक थे। उनकी हिन्दी-कवियों में गणना की जाती है, क्योंकि, वास्तव में, इस भाषा में लिखित असाधारण कविताओं के लिए लोग उनके ऋणी हैं। कुछ तो सिक्खों के 'आदि ग्रंथ' में हैं, और कुछ बनारस में प्रयुक्त इस संप्रदाय के भजनों और प्रार्थनाओं के संग्रह में हैं।[1] इसके अतिरिक्त इस मान्य व्यक्ति के संबंध में 'भक्त माल' के लेख में एक अंश पाया जाता है, और जिसका अनुवाद इस प्रकार है :

छप्पय

संदेह ग्रंथ खंडन निपुण बाणी बिमल रैदास की।
सदाचार श्रुतिशास्त्र बचन अविरुद्ध उचार्‌यो।
नीरक्षीर बिवरन परमहंसन उर धार्‌यो।
भगवत कृपा प्रसाद परम गति इहि तन पाई।
राज सिंहासन बैठि ज्ञाति परतीति दिखाई।
बर्णाश्रम अभिमान तजि[2] पद रज बंदहि जासकी।
संदेह ग्रंथ खंडन निपुण बाणी बिमल रैदास की।

टीका

रामानंद का एक शिष्य ब्रह्मचारी[3] था। वह सीधा लेकर भोजन बनाता, और उसे देवता की मूर्ति के सामने रख देता था। मन्दिर के दरवाज़े पर एक बनिया था जिसका एक कसाई के साथ व्यापारिक संबंध था। यह व्यक्ति निरंतर ब्रह्मचारी से भगवान् के लिए सीधा अंगीकार करने के लिए कहता था; किन्तु ब्रह्मचारी ने उसकी इस माँग पर कोई ध्यान न दिया। एक दिन वर्षा के कारण ब्रह्मचारी मन्दिर

१ एच० एच० विल्सन, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६, पृ० ८१; जि० १७, पृ० २३८

२ नवीन भारतीय संप्रदायों के गुरुओं, जैसे रामानंद, दादू, आदि, ने शाक्यमुनि के अनुकरण पर, धर्म के क्षेत्र में सब व्यक्तियों की समानता स्वीकार की है।

३ नवयुवक ब्राह्मण विद्यार्थी

से बाहर न जा सका, तब उसने बनिए का सीधा स्वीकार कर, उसे देवता को अर्पित किया। प्रसाद ग्रहण करने के बाद जब रामानन्द ने रघुनाथ (राम) पर ध्यान लगाया, तो वे ध्यान केन्द्रित न कर सके। तब उन्होंने अपने शिष्य से पूछा कि उस दिन भगवान् का भोग किसने लगाया था। इस पर उसने उत्तर दिया वह बनिए से प्राप्त हुआ था। तब स्वामी ने ये शब्द सुनाए 'अरे चमार! इस शाप के कारण रैदास मृत्यु को प्राप्त हुए, और फिर से चमारों की जाति के व्यक्ति के घर जन्म लिया।' क्योंकि वे अपनी माता का दूध नहीं पीते थे, रामानन्द को एक आकाशवाणी सुनाई थी। एक भागवत ने उनसे कहा: 'उस चमार के घर जहाँ रैदास ने नवीन जन्म धारण किया है जाओ।' संत उठे और बताए हुए घर की ओर चले। रैदास के माता-पिता, दुःखी होने के कारण उत्सुकतापूर्वक दौड़े, और सन्त के चरणों पर गिर पड़े। रामानन्द रैदास के कान में दीक्षा-मंत्र दे भी न पाए थे, कि उन्होंने अपनी माता का दूध पीना प्रारंभ कर दिया।

जब वे बड़े हुए, तो जूतों का काम करने लगे। जब साधु उनसे कुछ माँगने आते थे, तो वे दे डालते थे; और शाम को अपने पास बचे दो-चार पैसे अपने माता-पिता को आकर दे देते थे। उनकी इस बात पर वे नाराज़ होते थे, और उन्हें अपने घर से निकाल दिया।

भगवान् उनसे एक वैष्णव के रूप में मिलने आए, उन्होंने उन्हें पारस पत्थर (Philosopher's stone) का एक टुकड़ा दिया, और उससे लोहे को स्वर्ण में परिवर्तित करने की विधि बताई। किन्तु रैदास ने कहा: 'मेरा धन तो राम है।'

सूर-दास का पद

भक्तों के लिए हरि का नाम सबसे बड़ा धन है, पाव या आधे

से वह दिन-दिन बढ़ता ही जाता है, और एक दाम[1] भी कभी कम नहीं होता। न तो दिन में और न रात में कोई चोर उसे ले सकता है[2]; वह घर में सुरक्षित रहता है। सूरदास कहते हैं, जिनके पास भगवान् रूपी धन है उन्हें किसी पत्थर की क्या आवश्यकता ?

रैदास ने कहा : 'यह पत्थर का टुकड़ा छत पर रख दो।' भगवान् तेरह महीने बाद जब आए तो उन्होंने रैदास को उसी मुसीबत में पाया। पत्थर भी उसी जगह रखा हुआ था। उसी समय रैदास पूजा करने गए, और देवता, के सिंहासन के नीचे पाँच स्वर्ण के टुकड़े देखे, और अपना धार्मिक कृत्य जारी न रख सके। किन्तु भगवान् ने उन्हें एक स्वप्न दिखाया, और स्वप्न में उनसे कहा : 'तुम मुझे छोड़ दोगे या मैं तुम्हें छोड़ दूँगा ?' यह बात सुन उन्होंने सोने के टुकड़े लेने का निश्चय किया, और उनसे एक नया मन्दिर बनवा कर वहाँ एक महन्त रख दिया। दिन में वे भगवान् को अर्पित किया गया भोग बाँटते थे। उनकी ख्याति नगर भर में फैल गई। छोटे-बड़े सब आते थे, और पवित्र भोग ग्रहण करते थे। तब भगवान् ने उन्हें प्रसिद्ध करना चाहा। उन्होंने सोचा कि साधुओं के वैभव के कमरे को खोलने के लिए दुष्ट जन ही उचित कुंजी हैं ! तब उन्होंने रैदास के विषय में ब्राह्मणों की मति फेर दी; तदनुसार वे राजा से इस प्रकार शिकायत करने गए :

संस्कृत श्लोक

जहाँ जिन चीज़ों का आदर न होना चाहिए उनका आदर होता है, और जिन चीज़ों का आदर होना चाहिए उनकी ओर कोई ध्यान नहीं देता, वहाँ तीन चीज़ों का निवास रहता है : दुर्भिक्ष, मृत्यु, भय।

---

[1] एक पैसे का चौंतीसवाँ भाग, जो आने में बारह होते हैं। सोलह आने का एक रुपया।

[2] Conf. Matth. Vl, १६,२०

रैदास का अनादर करते हुए उन्होंने कहा : 'एक चमार शालग्राम की पूजा करता है, और तत्पश्चात् नगर के स्त्री-पुरुषों को पवित्र प्रसाद बाँटता है। इस प्रकार वह उनकी जाति भ्रष्ट और नष्ट करता है।' राजा ने ये शिकायतें सुन कर, रैदास को बुलाया, और उनसे कहा : 'शालग्राम ब्राह्मणों के लिए छोड़ दो।' उन्होंने उत्तर दिया : 'यह तो बहुत अच्छा है, मैं भी यही चाहता हूँ; किन्तु यदि रात को मूर्ति फिर मेरे पास आ जायगी, तो ब्राह्मण इससे समझेंगे कि मैंने उसे चुरा लिया है। इसलिए प्रमाण के बाद ही वह उन्हें दी जाय।' फलतः, राजा ने मूर्ति का सिंहासन महल में रखवाया। उन्होंने ब्राह्मणों से मूर्ति मँगवाई। तिस पर वे वेदोच्चार करते-करते थक गए, किन्तु मूर्ति टस से मस न हुई। तब रैदास ने एक ऐसा मधुर गाना सुनाया, कि मूर्ति अपनी गद्दी सहित रैदास की गोद में जा बैठी। ब्राह्मण लज्जित हो लौट गए, और राजा ने रैदास का अत्यधिक आदर किया।

चित्तौड़ की रानी, झाली, कबीर के पास उनकी शिष्या होने गई। वहाँ पहुँचने पर उसने कबीर को दरी पर बैठे हुए पाया जो शीरा गिरा होने के कारण कई हज़ार मक्खियों से ढकी हुई थी। यह दृश्य देखकर उसे श्रद्धा न हो सकी; किन्तु रैदास की मूर्ति का सौन्दर्य देखकर वह उनकी शिष्या हो गई। जब उनके साथ के ब्राह्मणों ने यह सुना तो उनका शरीर क्रोधाग्नि से जल उठा, और फिर से शान्त होने के लिए राजा के पास गए। ब्राह्मणों के आग्रह से राजा ने सन्त को फिर बुला भेजा, और पहले की भाँति फिर वही प्रमाण देने के लिए कहा। ब्राह्मण वेद पढ़ते-पढ़ते थक गए; उधर रैदास ने पतित पावन देवता के सम्मान में यह पद पढ़ा।

पद

आयो आयो हो देवाधिदेव तुम शरण आयो। सकल सुखकी मूल जाकी नाहिं सम तूलसो चरण मूल पायो। लियो बिबिध जौन

बास[1] यमकी अगम त्रास तुम्हरे भजन बिन भ्रमत फिर्‌यौ ॥ माया मोह विषय रस लंपट यह दुस्तर दूर तर्‌यौ । तुम्हारे नाम बिश्वास छाड़िये आन आश संसारी धर्म मेरो मन न धीजै । रैदास दास की सेवा मानहुँ देव पतितपावन नाम आज प्रगट कीजै ॥

तब भगवान् पहले की भाँति उठे, और संत की गोद में जा बैठे ।

जब रानी ने रैदास से विदा ली तो उन्होंने किसी ऐसी बात के बारे में जिसके संबंध में वह जानना चाहती हो लिखने के लिए कहा । जब वह अपने देश पहुँची तो ब्राह्मणों ने अनादर किया, चमार की शिष्या हो जाने के कारण उसकी निंदा की । इससे रानी को अत्यन्त चिन्ता हुई, और उसने अपने गुरु को एक पत्र लिखा जिस पर वे आए । रानी ने अत्यन्त आदर के साथ उनका स्वागत किया, और उन्हें महल में ले गई । सब ब्राह्मण आए ; रानी ने उन्हें सीधा दिया । अपनी-अपनी विधि के अनुसार रसोई पकाकर, वे खाने बैठे; किन्तु हर दो ब्राह्मणों के बीच एक रैदास दिखाई दिए । ब्राह्मणों ने दो-चार बार यह आश्चर्य देखा तो उन्हें रैदास के प्रति भक्ति हुई, और उनके चरणों पर गिर पड़े । तब सन्त ने अपना सीना खोला और जाति का निश्चित चिन्ह यज्ञोपवीत उन्हें दिखाया ।[2]

लछमन या लक्ष्मण[3]

गोकुलचंद द्वारा प्रकाशित, और बनारस में, पंडित तमन्ना लाल द्वारा मुद्रित, रघुनाथ कृत 'शतक' के अनुकरण पर, दोहा के एक 'शतक' (१२६) के रचयिता हैं, १९२३ संवत् (१८६८), २०-२० पंक्तियों के ३२ पृष्ठ ।

---

[1] पुनर्जन्म की ओर संकेत ।

[2] मूल छप्पय और 'आयो आयो·······' यह पद 'भक्तमाल' के १८८३ के संस्करण (मुंशी नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ) से लिए गए हैं । —अनु०

[3] भा० 'राम के भाई का नाम'

लक्ष्मण-प्रसाद[1] या लक्ष्मण-दास[2]

बरेली कॉलेज के

× (उर्दू रचनाएँ) ×

क्या ये वही लक्ष्मण दास हैं, जो हिन्दुओं की धार्मिक रचना, 'प्रह्लाद संगीत'—प्रह्लाद पर संगीत, हिन्दी में, के रचयिता हैं; दिल्ली, १८६८, ३८ अठपेजी पृष्ठ ?

लक्ष्मण सिंह (कुँवर)

इटावा के ज्वाइंट मजिस्ट्रेट, श्री ए० ओ० ह्यूम की सहकारिता में, रचयिता हैं : १. लगान वसूल करने के लिए १८५६ के ऐक्ट १० (×) के उर्दू-अनुवाद के, १८५६ में इटावा से मुद्रित (११४ अठपेजी पृष्ठ), सदर बोर्ड ऑव रेवेन्यू की आज्ञा से ; २. 'हिन्दुस्तान का दण्ड-संग्रह' शीर्षक के अंतर्गत इंडियन पेनल कोड (१८६० का ऐक्ट १४—xiv) के हिन्दी रूपान्तर के ; इटावा, १८६१, ३६४ अठपेजी पृष्ठ।

संभवतः यह लेखक मुन्शी लक्ष्मण ही है, जो रचयिता हैं :

१. 'किताब खाना शुमार-इ मग़रबी'—पश्चिमी राज्य-कर संबंधी भाग का पुस्तकालय—के, आगरे से मुद्रित[3] ;

२. 'हिदायतनामा वास्ते डिप्टी मजिस्ट्रेट'[4] उर्दू में, 'शिक्षा डिप्टी मजिस्ट्रेट', के अर्थात् डिप्टी मजिस्ट्रेटों तथा अन्य पुलिस कर्मचारियों के लिए शिक्षा, शीर्षक के अंतर्गत हिन्दी में, 'स्किप-

---

[1] भा० 'राम के भाई, लक्ष्मण का दिया हुआ'

[2] भा० 'लक्ष्मण का दास'

[3] 'आगरा गवर्नमेंट गज़ट', पहली जून, १८५८ का अंक

[4] सम्भवतः यह उसी रचना का दूसरा संस्करण है जिसका शीर्षक है : 'हिदायत नामा मजिस्ट्रेट', लाहौर, १८६१ ।

विथ्स (Skipwith's) 'मजिस्ट्रेट गाइड' (Magistrate Guide) अँगरेज़ी रचना का अनुवाद। उर्दू संस्करण १८५६ में इलाहाबाद से छपा है, २८ अठपेजी पृष्ठ, और दो हज़ार प्रतियाँ।

हिन्दी संस्करण भी आगरे से १८५३ में छपा है, ५२ अठपेजी पृष्ठ;

३. 'गोपीचन्द भरथरी' के, हिन्दी रचना जिसमें उज्जैन के इस नाम के प्राचीन राजा की कथा है जिसने संसार से वैराग्य धारण कर लिया था।[1] इसका एक संस्करण आगरे का है, १८६७, ३२ अठपेजी पृष्ठ, और एक दिल्ली का है, उसमें भी २८ अठपेजी पृष्ठ हैं।

लक्ष्मी[2] राम

लोकप्रिय गीतों के रचयिता हैं।

लल्लू (श्री लल्लू जी लाल कवि)

या केवल लल्लू सिंह, जितनी ब्रजभाषा में उतनी ही हिन्दुस्तानी उर्दू में अनेक रचनाओं के रचयिता (श्री लल्लू जी लाल कवि)[3] गुजरात के निवासी ब्राह्मण हैं। पिछली में से कुछ देवनागरी अक्षरों में लिखी गई हैं। ये रचनाएँ निम्नलिखित हैं:

१. 'प्रेम सागर',[4] ब्रज-भाखा से संक्षिप्त अनुवाद, उर्दू में नहीं, वरन् खड़ीबोली या ठेठ में, अर्थात् शुद्ध हिन्दुस्तानी में, दिल्ली-आगरे के हिन्दुओं की हिन्दुस्तानी में, अरबी-फ़ारसी के शब्दों के

---

१ इसी विषय पर एक ग्रन्थ का उल्लेख देखिए, पृ० १३६

२ भा० अर्थात् 'श्री (धन की देवी), विष्णु की पत्नी'

३ या श्री लल्लू जी लाल कवि

४ प्रेम सागर, प्रेम का समुद्र

मिश्रण बिना।[1] सर्वप्रथम यह रचना व्यासदेव कृत 'भागवत' के दशम स्कंध के आधार पर चतुर्भुज मिश्र द्वारा ब्रजभाखा दोहा चौपाई में की गई थी। हमारे लेखक ने इसी ब्रज-भाखा पाठ का बीच-बीच में पद्यों (श्लोकों) से मिश्रित हिन्दी गद्य में रूपान्तर किया है, क्योंकि मूल ब्रज-भाखा का मुझे ज्ञान नहीं है, मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता कि लल्लू जी का अनुवाद पाठ से कितना भिन्न है। इतना तो मैं कह सकता हूँ कि उसका गद्य शुद्ध हिन्दी में लिखा गया है, यद्यपि उसमें अधिकांश पद्यों का प्राचीन या ब्रज-भाखा रूप सुरक्षित रखा गया है। मैं उससे यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि संभवतः लल्लू जी गद्य को सुधारने और अत्यधिक कठिन पद्यों को निकाल देने से सन्तुष्ट हुए हैं। यह रचना, जिसके नायक कृष्ण हैं, होमर या उनके अनुकरण पर लिखी गई रचनाओं की भाँति महाकाव्य नहीं है; और न कृष्ण के बाद का प्रामाणिक इतिहास ही। इसमें तो एक प्रकार की विभिन्न क्रीड़ाएँ हैं जिनका साम्य कहीं और नहीं मिलता, और जो हमेशा थोड़ा-बहुत कृष्ण से संबंधित रहती हैं। उनका वर्णन करने में 'महाभारत', 'सिंहासन बत्तीसी', 'तूती नामा' 'सहस्र रजनी' आदि प्रकार की रचनाओं में एशियावासियों द्वारा परंपरा-पालन के अनुकरण पर सामान्य नियम ग्रहण किया गया है।

यद्यपि यह कहा जाता है कि 'प्रेम सागर' का आधार 'भागवत पुराण' का दशम स्कंध है, किन्तु यह जान लेना अच्छा होगा कि इस प्रकार की कथाएँ, जो भारतीय लेखकों को बहुत अच्छी लगती हैं, अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण रचनाओं में भी पाई जाती हैं, विशेषतः

---

[1] वास्तविक शब्द : 'यामिनी भाषा छोड़' अर्थात् (फ़ारसी मिश्रित) अरबी, प्रेम सागर की भूमिका, पृ० २

'विष्णु पुराण', 'हरिवंश' तथा अन्य अनेक रचनाओं में। 'प्रेम सागर' की कथा इन्हीं कथाओं के समीप है, कहीं अधिक विकसित, कहीं अधिक संक्षेप में, किन्तु व्याकरण के रूपों, समानार्थवाची शब्दों और गुणवाचक विशेषणों से समृद्ध प्राचीन संस्कृत काव्य की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म अभिव्यंजनाओं और सरल वाक्यों से समन्वित भारतीय शैली के काव्य से सर्वत्र स्पंदित। साथ ही जिन तीन ग्रंथों के सम्बन्ध में मैं संकेत कर चुका हूँ उन्हें पढ़ने के बाद 'प्रेम सागर' की कथा आकर्षक और रोचक, विशेषतः धार्मिक और दार्शनिक, साहित्यिक और पौराणिक दृष्टिकोण के अंतर्गत लिखी गई, प्रतीत होती है।

मुझे उसमें जो बात प्रमुख रूप से ज्ञात होती है वह ईसा मसीह (क्राइस्ट) और कृष्ण के जीवन की बहुत-सी मिलती-जुलती बातें हैं, संयोग से कृष्ण और क्राइस्ट के नाम भी आपस में बहुत-कुछ समान हैं[1] और साथ ही धर्म-पुस्तक (Gospel) और 'प्रेम सागर' के सिद्धान्त भी, प्रधानतः अवतार में विश्वास-संबंधित। क्या यह समानता संयोगवश है ?[2] क्या यह इस अर्थ में स्वाभाविक है कि समस्त जातियों के धार्मिक व्यक्तियों में एक से विचार जन्म लेते हैं ? "श्री एजेनो द गैसपाराँ (Agénor de Gasparin) का कथन है कि मनुष्य के हृदय में उत्पन्न समान कारणों ने विभिन्न देशों में समान बातें उत्पन्न की हैं।" मैं इसमें विश्वास नहीं रखता और यह निश्चित है कि जिस साम्य का मैंने उल्लेख किया है वह वास्तव में ईसाई मत के प्रारंभिक वर्षों में भारत में लाई गई स्वयं ईसा मसीह की कथा का प्रतिबिंब

[1] वास्तव में वे केवल एक से प्रतीत होते हैं; क्योंकि व्युत्पत्ति की दृष्टि से दोनों शब्द बिल्कुल भिन्न हैं।

[2] वास्तव में ऐसा प्रतीत होता है कि कृष्ण वेदान्त दर्शन के साकार रूप हों।

है।[1] टी० मॉरिस[2] और भोलानाथ चन्द्र[3] के साथ मुझे इस अंतिम कारण को ग्रहण करने में कोई संकोच नहीं है।

वैष्णवों या विष्णु के अनुगामियों का संप्रदाय, जिसके लिए 'प्रेम सागर' लिखा गया है, शैवों या शिव के अनुगामियों के सम्प्रदाय के, जो साथ में हृदय-परिवर्तन के बिना शारीरिक तप में अपनी ईश्वर-भक्ति समझते हैं, स्थान पर एक सुधार है। वस्तुतः ये केवल प्रायश्चित की यातनाओं में विश्वास रखते हैं। प्रायश्चित शब्द का अर्थ उनके लिए हम ईसाइयों में प्रचलित अर्थ से बिल्कुल भिन्न है। ईसाइयों में यह एक ग्रीक शब्द का अनुवाद है जिसका अर्थ है परिवर्तन, और जो धर्म-पुस्तक के नए नियम (New Testament) में हृदय के सच्चे प्रायश्चित के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।[4]

विष्णु के अंतिम अवतार कृष्ण की भक्ति, जो शिव की भक्ति से बिल्कुल भिन्न है, आध्यात्मिक है। इस धर्म में जो प्रणाम किया जाता है वह ऐसा है जो केवल उनके कर्मों, उनकी दुनिया के मतों को पुनरुज्जीवित करता है। शैवों का सिद्धान्त, जो वैष्णवों की

---

[1] ईसाई-विरोधी लेखकों ने एक और कल्पना की है; वह ईसाई मत पर भारत का अनुकरण करने का दोष लगाने में है। टी० मॉरिस ने 'Brahmanical Fraud detected' में यह कल्पना दूर करने का कष्ट किया है, जिससे ईसाई मत के प्रति केवल अनुचित घृणा दूर हो सकती है। संत श्री बर्ट्रैंड ने भी एक दैनिक पत्र में 'The Bible in India' शीर्षक बेहूदी रचना का सफलता पूर्वक खण्डन किया है, जिसमें यह बात हाल ही में फिर से उठाई गई है।

[2] ऊपर के नोट में उल्लिखित रचना में।

[3] 'दि ट्रैविल्स ऑव ए हिन्दू, विथ ऐन इन्ट्रोडक्शन बाई जे० टौलबॉयज़ (Tolboys) ह्वीलर', जि० २, पृ० २५

[4] यदि हम आंतरिक तप के साथ-साथ बाह्य प्रदर्शन रखें, तो इससे हमें प्रेरित करने वाली भावनाओं के प्रमाण में, और अंत में प्रायः पाप के कारण उत्पन्न क्षणिक संताप की शांति के लिए ईसा मसीह के बलिदान के साथ योग स्थापित हो जाता है; किन्तु हम जानते हैं कि अकेले बाह्य प्रदर्शनों में कोई साहस का काम नहीं।

अपेक्षा अधिक प्राचीन है, एक प्रकार से यहूदियों के नियम की भाँति है, जो पशु-बलि द्वारा प्रकटित मानवी प्रायश्चित पर आधारित भी है, जब कि नए नियम में शांति के लिए केवल ईसा मसीह का ही बलिदान है।

कृष्ण और ईसा मसीह के जीवन में जो तुलना प्रस्तुत की गई है, उसके संबंध में यह आपत्ति की जाती है, कि कृष्ण एक ऐतिहासिक व्यक्ति हैं, जो अत्यधिक ठीक-ठीक गणना के पश्चात् ईसवी सन् से लगभग तेरह सौ वर्ष पूर्व हुए और फलतः जिनका ईसा मसीह के साथ भ्रम नहीं होना चाहिए। वास्तव में वासुदेव के पुत्र और दिल्ली के राजा युधिष्ठिर के फुफेरे भाई कृष्ण, यही प्रतीत होता है कि, उस समय हुए जिस की ओर मैंने संकेत किया है; और ऐसा प्रतीत होता है कि परंपरा ने युगों में भ्रम उत्पन्न कर दिया है, तथा मेरे मतानुसार, इस महापुरुष संबंधी अस्पष्ट भावनाओं को ईसा मसीह पर आरोपित करने में ऐतिहासिक तथ्यों को विकृत किया जाता है। जैसा कि मैं कह चुका हूँ गंगा-यमुना की घाटी में ईसा मसीह ईसवी सन् के प्रारंभ में ही प्रवेश कर चुके थे।

वास्तव में ईसवी सन् की सोलहवीं या सत्रहवीं शताब्दी[१] से ही आधुनिक कथाओं सहित कृष्ण-भक्ति भारत में फैली जिसके, अन्य व्यक्तियों के अतिरिक्त, कृष्ण 'महाभारत' के कृष्ण की कथा में बिल्कुल अज्ञात हैं। मैं राधा या राधिका का उल्लेख करना चाहता हूँ, जो विश्वासी आत्मा की मानवी प्रतीक हैं।

---

[१] बेंटले (Bentley) ने, (कृष्ण के जन्म-संबंधी विवरण) 'जन्म पत्र' के आधार पर, जिसमें देवता के जन्म के समय ग्रहों की स्थिति दी गई है, स्वयं गणना की है (उज्जैन की घड़ी निकाल कर, यूरोपीय तालिका के आधार पर गणना के अनुसार) कि जन्म पत्र में ग्रहों की स्थिति केवल ७ अगस्त, ६०० ई० की हो सकती है।

भारतवासियों के अनुसार अन्य अवतारों में विष्णु ने अपनी दिव्यता का केवल एक अंश ही प्रकट किया था। यह (कृष्ण) अवतार पूर्ण था ; ये सशरीर विष्णु ही थे। किन्तु कृष्ण कथा की ईसा मसीह से तुलना में वही कहा जा सकता है जो फाँतेन (Fontanes) ने क़ुरान के संबंध में कहा है, कि बाइबिल ही एक सहस्र रजनी के रूप में परिवर्तित हुआ। इस अनुमानित अभाव के कारण ही संभवतः इस ग्रंथ में कहीं-कहीं अस्पष्टता मिलती है।

'प्रेम सागर' का रूपान्तर और छपाई कलकत्ते में, मार्क्विस वेलेज़ली के शासनान्तर्गत, और १८६० संवत् (१८०४ ई०सन्) में डॉक्टर गिलक्राइस्ट की अध्यक्षता में शुरू हुई थी, किन्तु इस स्कॉटलैंड-निवासी प्राच्यविद्याविशारद के चले जाने से छपाई का काम रुक गया। बहुत बाद को लॉर्ड मिन्टो के शासन-काल में जॉन विलियम टेलर के आदेशानुसार, और डॉ० डब्ल्यू० हन्टर की सहायता से उसे फिर हाथ में लिया गया ; और रचना और छपाई दोनों ही १८६६ (१८१०) में, अब्राहैम लॉकेट की अध्यक्षता में समाप्त हुई। वह २५० चौपेजी पृष्ठों की एक बड़ी जिल्द है। मैं नहीं कह सकता यदि यह वही रचना है जो, 'श्री भागवत' शीर्षक, शुद्ध हिन्दी में, प्रीमीटी ऑरिएंटालीस' (Primitiae Orientales) जिल्द ३, पृ० ४११ में प्रेस भेजी गई घोषित की गई है ; 'अथवा हो सकता है वह चतुर्भुज मिश्र की मूल रचना हो। जिस १८१० के संस्करण का मैंने यहाँ उल्लेख किया है उसके अतिरिक्त कई अन्य संस्करण हैं जिनमें उसके अध्यायों की संस्कृत पुष्पिकाएँ हटा कर उनके स्थान पर अध्यायों की संख्या प्रकट करने वाले अँगरेज़ी शीर्षक रख दिए गए हैं। यह जो १८२५ में छपा है वह पहले की अपेक्षा अधिक छोटे अक्षरों में है। आकार तब भी बड़ा चौपेजी है। मेरे विचार से अंतिम १८३१ का है, छोटे चौपेजी आकार का,

और जिसकी छपाई देखने में अत्यन्त सुन्दर और बढ़िया कागज़ पर है किन्तु पहलों की अपेक्षा देखभाल कम हुई है, क्योंकि उसमें छापे की अनेक ग़लतियाँ हैं जो उनमें नहीं मिलतीं। उसका एक लीथो संस्करण भी है जो डब्ल्यू० प्राइस कृत 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' के नए संस्करण का एक अंश है और जिसके साथ उसमें प्रयुक्त खड़ीबोली शब्दों की सूची जुड़ी हुई है; एक बंबई का है, १८६२, २८२ पृष्ठों का। सेना के अफ़सरों की 'हायर स्टैंडर्ड' की परीक्षा के लिए १८६७ में कलकत्ते से उसके कुछ उद्धरण प्रकाशित हुए हैं।

'प्रेम सागर' के संस्करणों में, योगध्यान मिश्र द्वारा संपादित, कलकत्ते के, चौपेजी, संस्करण, और एक दूसरे, तुलसी कृत रामायण के छपे संस्करण में प्रयुक्त हुए के लगभग समान द्रुति गति से लिखे गए देवनागरी अक्षरों में, बंबई में लीथोग्राफ़ किए हुए, छोटे चौपेजी संस्करण की ओर संकेत करना आवश्यक है। यह संस्करण (बंबई का—अनु०), जिसकी, मेरा विश्वास है, असमय में ही मृत्यु द्वारा साहित्य से उठा लिए गए, स्वर्गीय चार्ल्स ओलोबा (Charles Olloba y Ochoa) नामक एक नवयुवक भारतीय-विद्याविशारद द्वारा उल्लिखित यूरोप में केवल एक प्रति है, ग्रंथ में विकसित कथाओं से संबंधित लीथोग्राफ़ किए गए चित्रों से सुसज्जित है। उसका एक संस्करण रुस्तम जी[1] द्वारा संपादित, पूना का, पृ० ४८३, है, एक लाला स्वामी दयाल द्वारा, फ़ारसी अक्षरों में, लखनऊ से प्रकाशित है, १८६४, १२० चौपेजी पृष्ठ, आदि। कैप्टेन होलिंग्स (Hollings) ने उसका पूर्ण, लगभग शाब्दिक, अनुवाद किया है, जो कलकत्ते से १८४८ में प्रकाशित हुआ है, ११८ और vii अठपेजी पृष्ठ, और श्री एफ़० बी० ईस्टविक (F. B. Eastwick) द्वारा एक दूसरा कम शाब्दिक अनुवाद

[1] 'कैटैलौग ऑव नेटिव पब्लिकेशन्स इन दि बॉम्बे प्रेसीडेंसी,' १८६७, पृ० २२६

है, जिसके साथ पाठ और शब्द-कोष भी दिया गया है। लल्लू रचयिता भी है :

२. 'लतायफ़-इ-हिन्दी',[1] या हिन्दुस्तानी लतीफ़ों के, उर्दू और हिन्दुई या ब्रजभाखा में सौ न्यूनाधिक रोचक छोटी-छोटी कहानियों का संग्रह। यह रचना कलकत्ते से १८१० में, 'दि न्यू साइक्लोपीडिया हिन्दुस्तानिका, एट्सीटरा' (हिन्दुस्तानी आदि का नया विश्वकोष) शीर्षक के अन्तर्गत छपी है; कारमाइकेल स्मिथ (Carmichael Smyth) ने उसका एक बड़ा अंश उसके वास्तविक शीर्षक 'लतायफ़-इ हिंद'[2] के अंतर्गत लंदन से फिर छापा है ; अंत में यह संग्रह कुछ पहले उद्धत 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' का अंश बना है।

३. 'राजनीति',[3] या राज्य की कला के, (नारायण पंडित, कृत) संस्कृत से हिंदुई या ब्रज-भाखा में अनूदित रचना। यह हिन्दुओं के नैतिक और नागरिक एवं सैनिक राजनीति को हृदयंगम कराने के उपयुक्त कहानियों का संग्रह है और जो लल्लू द्वारा हमारे लिए पुनरुज्जीवित किए गए पं० श्री नारायण द्वारा रचित, 'हितोपदेश' के सच्चे अनुवाद के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। उसके बाद 'पंचतंत्र' का चौथा अध्याय है। इस रचना के अनेक संस्करण हैं। सर्वप्रथम तो १८०९, कलकत्ते, का है, २५४ बड़े अठपेजी पृष्ठ। एक दूसरा भी कलकत्ते का है, १८२७, जो भारत

---

[1] 'लतायफ़-इ हिन्दी' (फ़ारसी लिपि से)

[2] लंदन, १८११, अठपेजी। इस संस्करण को बिदनूर के नवाब के मंत्री, मीर अफ़जल अली ने दुहराया है, और जो वही है जिससे मैंने एक पत्र अपने 'Rudiments de la langue hindoustanie' (हिन्दुस्तानी भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त) के प्रथम संस्करण के परिशिष्ट में उद्धृत किया है, पृ० ३९। उसका १८४० का एक दूसरा अठपेजी ही संस्करण है जिसके अंत में मीर तक़ी की एक कविता 'शुअला-इ इश्क' है।

[3] राजनीति

की 'जनरल कमिटी ऑव पब्लिक इन्सट्रक्शन' (शिक्षा-समिति) की आज्ञा से 'हिन्दी और हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' के संपादक, डब्ल्यू० प्राइस द्वारा प्रकाशित हुआ है। उसका आकार और उसके अक्षर बहुत छोटे हैं, संभवतः केवल १४२ ही पृष्ठ हैं। श्री एफ़० ई० हॉल (Hall) ने उसका एक संस्करण १८५४ में, इलाहाबाद से प्रकाशित किया जिसमें नोट्स और शेक्सपियर-कोष सहित एक शब्द-कोष है, vii, १६७, १० और १४ अठपेजी पृष्ठ। ए० एस० जॉनसन ने इस रचना के मूल का एक अनुवाद प्रकाशित किया है, और श्री लाँसरो (Lancereau) ने १८४६ में पेरिस के 'जूर्नाल एसियातीक' में उसका विश्लेषण दिया है।

लल्लू की ये भी रचनाएँ हैं :

४. 'सभा बिलास' या 'बिलास',[1] अर्थात् सभा के आनन्द। यह ब्रज-भाखा के विभिन्न प्रसिद्ध रचयिताओं के काव्य-अवतरणों का चुना हुआ संग्रह है। यह जिल्द खिज़िरपुर से देवनागरी अक्षरों में छपी है।[2] उसका एक संस्करण इन्दौर का १८६० का है।

५. 'सप्त शतिक', [3] या सात सौ दोहे। मैंने यह रचना कभी नहीं देखी, यद्यपि वह कलकत्ते से छपी हो सकती है। मेरे ख्याल से उसकी एक भी प्रति लदन में नहीं है। मैंने केवल उसे पुस्तक-विक्रेता की पुरानी सूचियों से जाना है; किन्तु मेरा अनुमान है कि यह गोवर्धन की रचना, जिसका शीर्षक भी 'सप्त शति'[4] या सात सौ दोहे है, का एक अनुवाद है। कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के, एफ़० एस० ग्राउज़ (Growse) ने उद्धरणों में से एक का लातीनी पद्य में अनुवाद किया है।

---

१ सभा बिलास

२ 'ऐनल्स ऑव दि कॉलेज ऑव फ़ोर्ट विलियम', परिशिष्ट, पृ० २८ और ४७३

३ सप्त शतिक

४ सप्त शति

६. 'मसादिर-इ भाखा' [1] अर्थात् भाखा (हिन्दी) की कर्त्ताकारक. संज्ञाएँ, गद्य में की गई तथा नागरी अक्षरों में लिखित व्याकरण संबंधी रचना। उसकी एक प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के मूल्यवान पुस्तकालय में है।

७. 'विद्या दर्पण'—ज्ञान का दर्पण। 'जनरल कैटैलौग' के अनुसार इस रचना में राम-कथा और भारतवासियों में प्रचलित कला और विज्ञान का संक्षिप्त सार है।[2]

८ 'माधो बिलास'—माधो (कृष्ण) के आनंद, संस्कृत से हिन्दी में अनूदित काव्य; आगरा, १८४३, अठपेजी ;[3] और अँगरेज़ी में 'A tale of Madho and Sulochana done into Hindi' शीर्षक सहित, आगरे से ही, १८६४ में, अठपेजी।

साथ ही लल्लू ने निम्नलिखित रचनाओं के रूपान्तर में सहायता की, देखिए :

१.'सिंहासन बत्तीसी'[4] अर्थात् सिंहासन की बत्तीस कहानियाँ। यह रचना, जो सर्वप्रथम संस्कृत में लिखी गई थी, फिर ब्रज-भाखा में अनूदित हुई, डॉक्टर गिलक्राइस्ट के कहने से मिर्ज़ा काज़िम अली जवाँ की सहायता से लल्लू द्वारा १८०१ में उर्दू, किन्तु देव-नागरी अक्षरों, में की गई। वह १८०५ में छपी। अंत में चमन ने उसे उर्दू पद्य में कर १८६६ में कानपुर से प्रकाशित किया।

---

[1] मसादिर भाखा (फ़ारसी लिपि से)

[2] मिर्ज़ायी पर लेख देखिए।

[3] ज़ेंकर (Zenker), 'बिबलिओथेका ओरिएंटालिस' (Bibliotheca Orientalis)' जि० २, पृ० ३०५। 'रागकल्पद्रुम' में भी इस ग्रंथ का उल्लेख है।

[4] सिंहासन बत्तीसी। इस रचना के और भी हिन्दी रूपान्तर हैं। मेरे निजी संग्रह में, अन्य के अतिरिक्त, एक अठपेजी और फ़ारसी अक्षरों में है। उसका शीर्षक है—'पोथी सिंहासन बत्तीसी'।

'सिंहासन' के अन्य अनेक संस्करण हैं, जिनमें से एक कलकत्ते का है, १८३९, बड़ा अठपेजी, और जो, डॉ० गिलक्राइस्ट के संरक्षण में कैथी-नागरी अक्षरों में प्रकाशित संस्करण के विपरीत या, और भी उचित रूप में, उनकी प्रणाली के अनुसार सुधारे हुए, शुद्ध देवनागरी अक्षरों में छपा है। यह संस्करण पहलों की अपेक्षा अच्छा है, क्योंकि उसकी शैली सुधरी हुई है। १८४३ में आगरे, और १८४६ में इन्दौर से भी वह छपा है। अंत में सैयद अब्दुल्ला ने १८६९ में उसका एक संस्करण लंदन से प्रकाशित किया, क्योंकि यह पुस्तक १८६६ से भारतीय सिविल सर्विस के विद्यार्थियों के लिए परीक्षा-पुस्तक के रूप में स्वीकृत है।

स्वर्गीय बेरन लेसकालिए (baron Lescalier) ने फ्रेंच में 'त्रोन आँशाँते' (Trône enchanté, जादुई सिंहासन) शीर्षक के अंतर्गत एक फ़ारसी कहानी का अनुवाद किया है जो इसी प्रकार की कथा पर आधारित है किन्तु जो तत्वतः हिन्दुस्तानी कहानी से भिन्न है।

२. 'बैताल पचीसी' [१] या 'वेताल पंचविंशति' अर्थात् एक प्रेतात्मा की पच्चीस कहानियाँ। पहली की भाँति, यह रचना सुरत कवीश्वर द्वारा संस्कृत से ब्रज-भाखा में अनूदित हुई और उस बोली से हिन्दुस्तानी में। इस द्वितीय रचना में मज़हर अली ख़ाँ विला ने लल्लू की सहायता की, अथवा उचित रूप में रखते हुए, उन्होंने स्वयं विला की सहायता की। इस प्रकार विला ही इस रूपान्तर के प्रधान रचयिता हैं। साथ ही फ़ोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दुस्तानी के तत्कालीन प्रोफ़ेसर जेम्स मोअट (James Mouat) ने इस रचना को दुहराने और उसमें से प्रचलित हिन्दुस्तानी में

---

[१] बैताल पच्चीसी

अप्रयुक्त व्रज-भाखा शब्द निकालने का कार्य तारिणी चरण...
को सौंपा।

इस रचना के अनेक संस्करण हैं : एक कलकत्ते से, १८०६; आगरे से, १८४३; इन्दौर से, १८४६। कैप्टेन होलिंग्स (Hollings) ने १८४८ में कलकत्ते से उसका एक पूरा अँगरेजी अनुवाद प्रकाशित किया है, अठपेजी, और श्री लाँसरो (Lancereau) ने १८५१ के 'जूर्नो एसियातीक' (Journal Asiatique) में उसका विश्लेषण दिया है। स्वर्गीय बी० बार्कर ने उसका अन्तर्पंक्ति अनुवाद और नोट्स सहित एक बड़ा अठपेजी संस्करण १८५५ में लंदन से प्रकाशित किया; अथक परिश्रमी डी० फ़ोर्ब्स ने कोष सहित एक संस्करण १८५७ में प्रकाशित किया; और संपादक बी० ईस्टविक (Eastwick) ने अंतर्पंक्ति सहित ही एक दूसरा अनुवाद १८५५ में किया।

लखनऊ के नवलकिशोर के जनवरी १८६६ के सूचीपत्र में उसके एक पद्यात्मक रूपान्तर का उल्लेख है; और 'वेताल पंचविंशति' शीर्षक के अंतर्गत ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने हिन्दी से बँगला में अनुवाद किया है।[1]

३. 'माधोनल'[2] का क़िस्सा जिसका रूपान्तर करने में उन्होंने फिर मजहर अली ख़ाँ विला की सहायता की।

४. 'शकुन्तला'[3] का क़िस्सा, जिसका रूपान्तर करने में उन्होंने काज़िम अली जवाँ को सहयोग प्रदान किया।[4]

---

[1] जे० लौंग, 'डेसक्रिप्टिव कैटैलौग ऑव बंगाली वर्क्स' पृ० ७८

[2] क़िस्सा माधोनल (फ़ारसी लिपि से)

[3] शकुंतला नाटक (फ़ारसी लिपि से)

[4] मेरा विश्वास है कि प्रायः इस रचयिता का लाल, जिसका मैं बहुत पहले उल्लेख कर चुका हूँ, के साथ भ्रम हो जाता है।

जिन रचनाओं का मैंने ऊपर उल्लेख किया है उनके अतिरिक्त ये भी लल्लू लाल कृत रचनाएँ कही जाती हैं :

१. 'लाला चन्द्रिका'—लाला के चंद्र की ज्योति,[1] 'सतसई' पर टीका ;

२. 'विनय पत्रिका'—विनय की पुस्तक, जिसके कलकत्ते, आगरे और ग़ाज़ीपुर से कई संस्करण हुए हैं। किन्तु इन अंतिम दो रचनाओं के वे केवल संपादक प्रतीत होते हैं, पहली कवि लाल या लाल कवि की है, और दूसरी तुलसी कृत।

लाल

लाल[2] या लाल कवि, अर्थात् लाल जो कवि हैं, एक प्रसिद्ध हिन्दू चारण, हिन्दी या ब्रज-भाखा पद्य में 'छत्र प्रकाश'[3]; या छत्र का इतिहास , रचना के रचयिता हैं, जो बुन्देलखण्ड के युद्धों और प्राचीन राजाओं के उत्तराधिकार क्रम पर, और बुन्देलों की युद्ध-प्रिय जाति की वीरता, निर्भीकता और साहस पर आधारित है। यह रचना, जो ऐतिहासिक है, बुन्देलखण्ड के प्रधान शासक प्रसिद्ध राजा छत्र साल के, जिनके शासन के साथ-साथ उनके पिता, राजा चम्पत राय, के भी ब्योरेवार विस्तृत वर्णन उसमें हैं, जीवन काल और संभवतः उनकी अध्यक्षता में लिखी गई प्रतीत होती है। छत्र साल के पहले या बाद का कोई राजा मुसलमानी विजय की बाढ़ रोकने, मुग़ल सम्राटों में सबसे अधिक

---

[1] 'लाला'—स्वामी, गुरु—को मुसलमान अंत में 'हे' के साथ लिखते हैं, जो वैश्यों और विशेषतः कायस्थों की उपाधि है। इसी प्रकार मुसलमान 'राजा' के स्थान पर 'राजाह' लिखते हैं, आदि।

[2] लाल—प्रिय

[3] छत्र प्रकाश

सुयोग्य, सबसे अधिक साहसी और सबसे अधिक वीर और . . . , जो इसी समय में हिन्दुओं को पीड़ित करने वाला, अत्यधिक असहिष्णु और अत्यधिक प्रतिहिंसात्मक था, की चुनी हुई सेनाओं पर आक्रमण करने और खदेड़ने में उनसे अधिक सफल हुआ प्रतीत नहीं होता। अपनी मूर्तियों के तोड़े जाने, अपने मंदिरों के विध्वंस होने, या उनके मस्जिदों में बदले जाने के कारण हिन्दुओं का क्रोध भड़क उठा और वे विद्रोह करने पर कटिबद्ध हो गए। एक बार उनके न्याय-संगत क्रोध के भड़क जाने पर, छत्र का धार्मिक जोश, सैनिक धाक और सिद्धान्त, जो कभी अलग न हुए, उन्हें विजय की ओर ले गए। इस सेनानायक, जो अपने गुणों और वीर चरित्र के कारण उनका विश्वासपात्र और उनका प्रिय बन गया था, के अंतर्गत उन्होंने अपने ऊपर अत्याचार करने वालों को तुरंत खदेड़ दिया। कैप्टेन डब्ल्यू० आर० पॉगसन ने लाल की रचना का 'ए हिस्ट्री ऑव बुन्देलाज़'[1] (बुन्देलों का इतिहास) के शीर्षक से अँगरेज़ी में अनुवाद किया है, और मेजर डब्ल्यू० प्राइस ने इस रचना के एक अंश का जिसमें छत्र साल का इतिहास है, 'दि छत्र प्रकाश ऑर बायोग्रेफ़ीकल ऐकाउंट ऑव छत्र साल एटसीटरा'[2] (छत्र प्रकाश अथवा छत्र साल आदि का जीवन-वृत्त) शीर्षक के अंतर्गत पाठ दिया है।

यह कवि, जिन्हें लाल-दास या लाला-दास[3] भी कहते हैं, रचयिता हैं, २. 'अवध बिलास' के १८ सर्गों में हिन्दी काव्य के,

---

[1] कलकत्ता, १८२८, चौपेजी

[2] वही, १८२९, अठपेजी (द्वितीय संस्करण में चौपेजी बताई गई है—अनु०)

[3] 'भक्तमाल' में 'लाल-दास' और कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय के संस्कृत के ग्रन्थों के सूचीपत्र में 'लाला-दास' अर्थात् कृष्ण (नंद के लाल) का दास।

जिसका उल्लेख मैं अभी मिर्जायी के लेख में करूँगा। १७०० संवत् (१६४३ ई०) में लिखित यह रचना अधिक प्राचीन तिथियों की हिंदुई रचनाओं की अपेक्षा अधिक व्यवस्थित रूप में संपादित है। जिस बोली में यह लिखी हुई है वह 'महाभारत दर्पण' के निकट है। वास्तव में यह केवल अवध में, जहाँ लाल रहते थे और जिसके संबंध में उन्होंने अत्यन्त गर्व प्रकट किया है राम की कथा है। निस्संदेह इस काव्य के प्रभाव के साथ मिले भावों के कारण हिन्दू लोग इस रचना को उपयोगी ज्ञान का सार समझते हैं। इसके अतिरिक्त, जिस बोली में इसकी रचना हुई है उसमें विभिन्न विषयों का निरूपण रहने के कारण 'अवध बिलास' अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हिन्दुई रचनाओं में से एक है। कलकत्ते की हस्तलिखित प्रति में ६०२ पृष्ठ हैं, जिसका एक तिहाई भाग दो-दो कॉलमों में है। वह सुलिखित है, और किनारे पर की गई शुद्धियों से यह प्रकट होता है कि वह बड़ी होशियारी के साथ दुहराई गई है।[1]

३ लाल दास हिन्दी में 'भारत की बारहमासी'—भारत के बारह महीने—के रचयिता हैं, जो 'राम की कथा' (Account of Rama) के नाम से भी कही गई है; आगरा, १८६४, अत्यन्त छोटे १२-पेजी ६ पृष्ठ;

इसके अतिरिक्त वे रचयिता हैं,

४. 'इन्द्रजाल प्रकरणम्', या 'भाषा इन्द्रजाल'[2]—तिलिस्म के चमत्कारों पर पुस्तक—के, जिसकी एक प्रति कलकत्ते की एशिया-टिक सोसायटी के पुस्तकालय में है;

---

[1] इस सूचना के लिए मैं श्री पैवो (Th. Pavie) का कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने कलकत्ते की हस्तलिखित प्रति देखी थी और उसका विश्लेषण किया था।

[2] अर्थात् संस्कृत 'इन्द्रजाल' के विपरीत हिन्दी में 'इन्द्रजाल'

५. 'गुरुमुखी'—गुरु के वचन—के, जिसके कई संस्करण हो चुके हैं, जिनमें से एक लाहौर का है, १८५१ ;

६. अंत में कुछ लोकप्रिय गीतों के।[1]

यह लेखक, 'लाल चन्द्रिका' शीर्षक बिहारी कृत 'सतसई' की टीका का रचयिता कवि या कबि लाल ही प्रतीत होता है।

कबि लाल

'लाल चन्द्रिका'—लाल की चन्द्र-किरणें – शीर्षक बिहारी लाल कृत 'सतसई' की एक टीका के रचयिता हैं। देवनागरी अक्षरों में पाठ सहित, यह टीका २१-२१ पंक्तियों के ३६० बड़े अठपेजी पृष्ठों में पंडित दुर्गाप्रसाद के निरीक्षण में, और बाबू अविनाशी लाल और मुंशी हरवंशलाल के व्यय से, बनारस में, गोपीनाथ के छापेखाने से, १८६४ में मुद्रित हुई है।

लाल (बाबू अविनाशी)

ने हिन्दी में 'शकुंतला नाटक' का संपादन किया है, १८६४ में बनारस से प्रकाशित, ११४ अठपेजी पृष्ठ।

लालच[2]

उपनाम 'हलवाई', केवल डॉ० गिलक्राइस्ट द्वारा अपने 'हिन्दुस्तानी व्याकरण', पृष्ठ ३३५ में उल्लिखित (हिन्दुई कवि), 'भागवत' के रचयिता हैं, या, उचित रूप में, 'भागवत पुराण', जिसके

---

[1] डब्ल्यू० प्राइस ने अपने 'हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' में, जि० २, पृ० २५०, प्रथम संस्करण में एक 'होली' उद्धृत की है।

[2] भा० लालच—लोभ,

बारहों स्कंधों का एक हिन्दी अनुवाद मिलता है, के दशम स्कंध[1] का रूपांतर या अनुवाद के रचयिता।[2]

मेरे पास इस ग्रंथ की एक हस्तलिखित प्रति है, जो भारत के पश्चिमी प्रान्तों की, 'पच्छम देस की भाखा', कही जाने वाली बोली में लिखी गई है, और जो तुलसी कृत 'रामायण' के लगभग समान है। तुलसी की भाँति, लालच का काव्य अनियमित रूप में दोहों से मिश्रित चौपाइयों में लिखा गया है, और, जैसा कि प्रायः होता है, उनमें (दोहों में) कवि ने अपने नाम का उल्लेख किया है। इसी का रूपान्तर अथवा इसी स्कंध के दूसरे अनुवादों को 'सुख सागर' शीर्षक भी दिया गया है।

इस रचना की जो प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है उसका शीर्षक बँगला अक्षरों में दिया हुआ है 'ब्रज विलास, ब्रज भाखा'—ब्रज के आनन्द, ब्रज की बोली में।[3] मेरे विचार से यह वही पोथी है जो 'ब्रज विलास'[4] शीर्षक के अंतर्गत मुद्रित हुई है, और जो कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के भारतीय पुस्तकों के सूचीपत्र में, ग़लती से, बाबू राम द्वारा रचित बताई गई है, किंतु जो, हिन्दी की अन्य अनेक रचनाओं की भाँति, इसके केवल संपादक हैं।

मेरी प्रति में हाथ का लिखा हुआ एक नोट है जिसमें कहा गया है कि इस रचना को, रचयिता का नाम, 'लालच', भी दिया जाता है।

---

१ 'भागवत दशम स्कंध' —'भागवत' की दसवीं पुस्तक

२ 'श्री भागवत' शीर्षक के अंतर्गत।

३ यह सूचना मुझे श्री पैवी (Th. Pavie) से मिली है।

४ इस काव्य का एक संस्करण १८६४ में आगरे से निकला है जिसका यह शीर्षक है, २०८ बड़े अठपेजी पृष्ठ, देवनागरी अक्षरों में। यह 'ब्रज बिलास' फ़ारसी में अनूदित हुआ प्रतीत होता है। देखिए 'ट्रूबनर्स लिटरेरी रेकॉर्ड' (Trubner's Literary Record), संख्या ४५।

क्या यह ब्रजबासी-दास वाले लेख में उल्लिखित रचना ही तो शायद नहीं है ; और यह ब्रजवासी-दास नाम लालच का दूसरा नाम हो, और लालच फिर उसका तख़ल्लुस या कवि-उपनाम हो ? जो कुछ हो, लालच ने अपनी रचना का निर्माण १५२७ विक्रम संवत् (१४७१) में किया, और इसलिए वे पन्द्रहवीं शताब्दी के लगभग मध्य में जीवित थे।

श्री पैवी (Th. Pavie) ने १८५२ में उसका पूर्ण अनुवाद किया, जिसके साथ उन्होंने एक रोचक भूमिका दी है। उनकी रचना का शीर्षक है 'कृष्ण और उनके सिद्धान्त'।

अंत में, 'भागवत' के अनेक हिन्दी रूपान्तर हैं। इनमें से हिन्दी पद्य में एक 'भागवत' का उल्लेख 'Biblioth. Sprenger' के सूचीपत्र में, संख्या १७२३ के अंतर्गत, हुआ है, ५५२ अठपेजी पृष्ठों का हस्तलिखित ग्रन्थ।

लाल जी-दास[1] (लाला)

ने विभिन्न रुपान्तरों के पाठ देखने के बाद 'भक्तमाल' का उर्दू में अनुवाद किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि उनकी रचना १२५८ हिजरी (१८४२) में प्रकाशित हुई।[2]

वज़ीर अली[3] (मीर और मुंशी)

दिल्ली के कॉलेज में अँगरेज़ी के प्रोफ़ेसर, रचयिता हैं :

१. (शिवप्रसाद की सहकारिता में गोल्डस्मिथ की पुस्तक का 'तर्जुमा-इ तारीख़-इ यूनान' के नाम से अनुवाद, १८४६)...

---

[1] भा० 'कृष्ण का दास'

[2] मेरठ का 'अख़बार-इ आलम', २१ मार्च, १८६७ का अंक

[3] अ० 'अली का वज़ीर'

२. 'पहाड़े की किताब' या 'पहाड़े की पुस्तक'—प्राथमिक पाठ्य-पुस्तक, और गणित ; आगरा, १८६८, १६ बारहपेजी पृष्ठ ;

३. मिल की 'Elements of Political Economy' के, दिल्ली से ही मुद्रित ।

वरज-दास[1]

वैष्णव महाराजों की 'वंशावली' ('श्री गोस्वामी महाराजानी') के रचयिता हैं; बंबई, १८६८, ८४ सोलहपेजी पृष्ठ ।

वर्गराय[2]

'गोपाचलकथा' के रचयिता, शाब्दिक अर्थ, गउओं की भूमि की कथा, अर्थात्, आगरा प्रान्त में भारत के प्रसिद्ध नगर, ग्वालियर, जिसके १००८ ईसवी वर्ष से अपने राजा हुए, की कथा । ११९७ में उसे मुसलमानों ने ले लिया था, किन्तु हिन्दू फिर से उसके मालिक बन गए । बाद को, १२२५ में, दिल्ली के पठान सुल्तान, अल्तमश, ने उस पर विजय प्राप्त की । वर्गराय की नागरी अक्षरों में लिखित इस रचना की एक प्रति राजकीय पुस्तकालय के फ़ौंद पोलिए (fonds Polier) की हस्तलिखित प्रतियों में पाई जाती है । हिन्दी और संस्कृत की सभी रचनाओं की भाँति, वह पद्यों में लिखी हुई है ।

वली मुहम्मद[3] (मीर)

संभवतः मुसलमान हो गए हिन्दू हैं, और जिन्होंने, जब वे हिन्दू थे, कृष्ण पर, हिन्दी में, दो कविताएँ लिखीं जिनका संपादन राम सरूप द्वारा हुआ है :

१. 'श्री कृष्ण की जनमलीला'—कृष्ण के बाल्यकाल की क्रीड़ाएँ ; फ़तहगढ़, १८६८, १३ पृष्ठ ;

---

[1] भा० अथवा 'ब्रज-दास'—ब्रज के पवित्र प्रदेश का दास

[2] भा० वर्गराय, पुस्तक का राजा

[3] अ० 'मुहम्मद का दोस्त'

२. 'बालपन बंसुरी लीला'—(कृष्ण के) बचपन की संगीत की क्रीड़ा ; वही, १४ पृष्ठ ।

वली राम[१]

रचयिता हैं :

१. 'राम गीता'—राम का गीत—के, जिसकी एक हस्तलिखित प्रति केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के किंग्स कॉलेज के पुस्तकालय में है;[२]

२. 'ज्ञान पोथी'—ज्ञान की पुस्तक—के, कविता; [३]

३. 'मिस्बाह उलहुदा'—निर्देशन का दीपक—के ।[४]

वल्लभ

लक्ष्मण भट्ट, तैलंग ब्राह्मण, के पुत्र वल्लभ स्वामी, वल्लभाचारियों के संप्रदाय के संस्थापक हैं । उनका जन्म १५३५ संवत् (१४७६) में चम्पारण्य में हुआ था ।[५] वे पहले जमुना के बाएँ तट पर, मथुरा से लगभग पूर्व में तीन कोस पर, गोकुल गाँव में रहते थे; किन्तु उन्होंने भारत के सब तीर्थ-स्थानों की यात्रा की । वे बाद को बनारस में बस गए । अंत में, अपना धर्म-प्रचार-कार्य पूर्ण कर लेने पर, उन्होंने हनुमान घाट पर गंगा में प्रवेश किया, जहाँ वे अंतर्द्धान हो गए । कहा जाता है उस स्थान से एक तीव्र ज्वाला उठी थी ।

अपने लेखक के धार्मिक जीवन और प्रचार-कार्य की सब बातों पर विचार करने से बहुत विस्तार हो जायगा, और न

---

[१] यह व्यक्तिवाचक नाम मिश्र प्रतीत होता है जिस का अर्थ 'राम का मित्र' है ।

[२] 'जर्नल रॉयल एशियाटिक सोसायटी', नई सीरीज़, जि०३, भाग १, में, ई० एच० पामर द्वारा दिया गया इन हस्तलिखित प्रतियों की सूची देखिए ।

[३] पिछला नोट देखिए ।

[४] वही

[५] उनके अद्भुत समझे जाने वाले जन्म के संबंध में विस्तार 'हिस्ट्री ऑव दि सेक्ट ऑव महाराजाज़' में देखिए, पृ० ३६ ।

कृष्ण, जिन्होंने साक्षात् दर्शन दिए,[१] की परम्परा पर आधारित वल्लभ द्वारा स्थापित 'पुष्टि मार्ग'—प्रसन्नता का मार्ग—नामक नवीन संप्रदाय के सिद्धान्तों का अध्ययन करना मेरा विषय है, संप्रदाय जिसका प्रधान उद्देश्य बाल-कृष्ण की भक्ति करना है। इसके अतिरिक्त मैं श्री विल्सन द्वारा हिन्दुओं के धार्मिक संप्रदायों पर किए गए विद्वत्तापूर्ण कार्य, 'एशियाटिक रिसर्चेज़' की जि० १६, ८४ तथा बाद के पृष्ठ, का केवल अनुकरण कर सकूँगा; इसलिए मैं पाठक का ध्यान उस ओर दिलाना चाहता हूँ। मेरे लिए यह कहना यथेष्ट है कि वल्लभ, विष्णु के उपलक्ष्य में, 'विष्णु पद' शीर्षक ब्रज-भाखा छंदों के रचयिता हैं; वे 'वार्ता' या 'बार्ता' शीर्षक एक हिन्दुस्तानी (बोली ब्रज-भाखा) रचना, जो संप्रदाय के गुरु और उनके पवित्र वैष्णव प्रधान शिष्यों से संबंधित अलौकिक कथाओं का संग्रह है, के नायक भी हैं। (शिष्यों की) संख्या चौरासी है,[२] उनमें स्त्री-पुरुष दोनों सम्मिलित हैं, और वे हिन्दुओं की सभी श्रेणियों के हैं। इस अंतिम रचना से लिए गए उद्धरण स्वर्गीय विल्सन[३] के सुन्दर विवरण में पाए जाते हैं, जिनके पास 'बार्ता' की एक प्रति है; वह नागरी अक्षरों में लिखी हुई अठपेजी जिल्द है।[४]

---

[१] उसी रचना में विस्तार देखिए, ३८ तथा बाद के पृष्ठ, तथा हिन्दुओं के धार्मिक संप्रदायों पर स्वर्गीय विल्सन के विवरण में, 'एशियाटिक रिसर्चेज़' की जि० १६, ८४ तथा बाद के पृष्ठ।

[२] फलतः इस ग्रंथ का शीर्षक भी 'चौरासी वार्ता' या 'चौरासी वैष्णव' है। उससे 'हिस्ट्री ऑव दि सैक्ट ऑव दि महाराजाज़' में उद्धरण मिलते हैं, ६५ तथा बाद के पृष्ठ।

[३] 'एशियाटिक रिसर्चेज़' में, जि० १६, ६५ तथा बाद के पृष्ठ

[४] उसका एक ४३५ अठपेजी पृष्ठों का संस्करण बेसमा परगना इगलूस, (Iglûs ? इगलास—अनु०) के राजा द्वारा प्रकाशित हुआ है, १८७०।

महाराजों के संप्रदाय के इतिहास[1] के रचयिता ने हमें ब्रज-भाखा बोली की हिन्दुस्तानी (अर्थात् हिन्दी) में लिखित चौहत्तर ग्रन्थों की एक सूची दी है, जो वल्लभ सम्प्रदाय में प्रामाणिक ग्रंथ माने जाते हैं। इन ग्रंथों में से, प्रथम ३९ संस्कृत से अनूदित हैं और दूसरे ३५ मौलिक हैं। सूची इस प्रकार है :

१. 'सर्वोत्तम'
२. 'वल्लभाष्टक'
३. 'कृष्ण प्रेमामृत'
४. 'विट्ठलेश-रत्न-विवरण'
५. 'यमनाष्टक'
६. 'बाल बोध'[2]
७. 'सिद्धान्त-मुक्तावली'
८. 'नव रत्न'[3]
९. 'अन्तःकरण-प्रबोध'
१०. 'विवेक-धैराश्रय'
११. 'कृष्णाश्रय'
१२. 'चतुर-श्लोक'[4]
१३. 'भक्ति-वर्द्धनी'
१४. 'जलभेद'
१५. 'पदेअनि' (Padéani)
१६. 'संन्यास-लक्षण'
१७. 'निरोध-लक्षण'
१८. 'सेवा-फल'
१९. 'शिक्षा-पत्र'
२०. 'पुष्टि प्रवाह मर्यादा'[5]
२१. 'गोकुलाष्टक'
२२. 'मधुराष्टक'
२३. 'नीन-अष्टक' (Nîn-aschtaka)
२४. 'जन्म वैफ़ताष्टक' (Vaïfat)

---

[1] 'हिस्ट्री ऑव दि सेक्ट ऑव महाराजाज़'

[2] अथवा 'बाल बोध'—बालक की बुद्धि। लाहौर से १८६३ में इस शीर्षक की एक रचना प्रकाशित हुई है, परन्तु, मेरा विश्वास है, जिसका प्रस्तुत से कोई साम्य नहीं है, और जिसमें उपदेश और शिक्षा हैं।

[3] अथवा 'नौ रतन'। इस शीर्षक की अन्य रचनाएँ हैं। रंगीन और मुहम्मद बख़्श पर लेख देखिए।

[4] इस रचना, जिसका नाम भी 'चतुर श्लोक भागवत' है, का एक अंश 'हिस्ट्री ऑव दि सेक्ट ऑव महाराजाज़', पृ० ८३, ८४ में उद्धृत मिलता है, और जिसकी एक टीका का उल्लेख पहली जिल्द, पृ० २५०, में हुआ है।

[5] हरिराय जी पर लेख में इस रचना के संबंध में प्रश्न उठा है।

२५. 'शरणाष्टक'
२६. 'नामावली-आचार जी'
२७. 'भुजंगप्रायणाष्टक'
२८. 'नामावली गुसांई जी'
२९. 'सिद्धान्त-भावना'
३०. 'सिद्धान्त-रहस्य'
३१. 'विरोध लक्षण'
३२. 'शृंगार-रसमण्डल'
३३. 'वैधवल्लभ'
३४. 'अग्नि-कुमार'
३५. 'शरण-उपदेश'
३६. 'रस-सिंधु'
३७. 'कल्पद्रुम'[1]
३८. 'माला-प्रसंग'
३९. 'चित-प्रबोध'
४०. 'पुष्टि-दृढ़-वार्ता'
४१. 'द्वादश-कुंज'
४२. 'पवित्र-मण्डल'
४३. 'पूर्ण मासी'
४४. 'नित्य-सेवा-प्रकार'
४५. 'रस-भावना'
४६. 'वल्लभाख्यान'
४७. 'ढोला'
४८. 'निज-वार्ता'
४९. 'चौरासी-वार्ता'
५०. 'रस-भावना-वार्ता'
५१. 'नित्य पद'
५२. 'श्री जी प्रागट'
५३. 'चरित्र-सहिता-वार्ता'
५४. 'गुसांई जी प्रागट'[2]
५५. 'अष्ट कविय' (Kaviya)
५६. 'वंशावली'
५७. 'वनयात्रा' या 'बनजात्रा'
५८. 'लीला-भावना'
५९. 'स्वरूप-भावना'
६०. 'गुरु-सेवा'[3]
६१. 'चितवन'
६२. 'सेवा-प्रकार'

---

[1] मैं नहीं जानता यदि यह वही रचना है जिसका उल्लेख मैंने जैसिंह पर लेख में किया है।

[2] मैं नहीं जानता यदि यह वही रचना है जो इसी शीर्षक की बाकुत (Bâkut) कृत है, और जिसका उल्लेख कर्नल टॉड के 'ऐनल्स ऑव राजस्थान' में हुआ है।

[3] 'गुरु की भक्ति'। इस रचना में, जिसका एक उद्धरण 'हिस्ट्री ऑव दि सेक्ट ऑव महाराजाज', पृ० ८४ में मिलता है, यह बताया गया है कि मनुष्यों की रक्षा करने की शक्ति में, गुरु स्वयं हरि (ईश्वर) से बड़ा होता है।

६३. 'माला-पुरुष'
६४. 'सत-बालक-चरित्र'
६५. 'यमुना जी पद'
६६. 'वचनामृत'[1]
६७. 'पुष्टि-मार्ग-सिद्धान्त'
६८. 'दश-मर्म'
६९. 'वैष्णव-बत्रिश-लक्षण'
७०. 'चौरासी-शिक्षा'
७१. 'सड़सठ-प्राढ' (Prâdha)
७२. 'द्वारकेश-कृत-नितक्रत'
७३. 'अचारजी-प्रागट'
७४. 'उत्सव-पद'

वहशत

मीर बहादुर अली वहशत[2] अवध के नवाब, शुजाउद्दौला, के दरबार में पदाधिकारी थे। उन्होंने ठेठ या शुद्ध हिन्दुस्तानी में 'बारह मासा', या बारह महीने, शीर्षक एक रचना का निर्माण किया है। वे लखनऊ के थे, और, कमाल के अनुसार, मियाँ हसरत के शिष्य थे, और, मुहसिन, जिन्होंने अपने तज़किरा में उनकी कविताओं के उदाहरण दिए हैं, के अनुसार, जुरत के।

वामन[3] (पंडित)

कोल्हापुर के निवासी, एक ऋग्वेदीय ब्राह्मण थे, और जो रामदास और तुकाराम के साथ स्नेह-बंधन में बंधे हुए थे। उनकी मृत्यु पण्डवदी (Pandvadî)में १५६५ शक संवत् (१५१७) में हुई। उन्होंने अनेक रचनाएँ संस्कृत में तथा उतनी ही बड़ी संख्या में हिन्दी में भी कीं। जनार्दन ने अपने 'कवि चरित्र' में निम्नलिखित का उल्लेख किया है :

१. 'यथार्थ दीपिका'—सत्य का दीपक—पर एक विस्तृत टीका ;

---

[1] यह रचना गोकुल-नाथ जी को संबोधित है।

[2] घृणा

[3] अथवा 'वामन'—बौना। 'बामन' ब्राह्मण के लिए भी कहा जाता है।

२. 'नाम सुधा'—ख्याति का अमृत ;
३. 'वन सुधा'—जंगल का अमृत ;
४. 'वेणु सुधा'—वंशी का अमृत ;
५. 'दधि मंथन'—जमे हुए दूध का मंथन ;
६. 'भामा विलास'—भामा का आनन्द ;
७. 'रुक्मिणी विलास'—रुक्मिणी का आनन्द ;
८. 'वामन चरित्र'—वामन की अथवा बौने के अवतार विष्णु की कथा ;
९. 'कालिया मर्दन'—कालिया नाग की मृत्यु ;
१०. 'निगम सार'—धार्मिक पुस्तकों का सार ;
११. 'चित सुधा'—आत्मा का अमृत ;
१२. 'कर्मतत्व'—भाग्य के तत्व ;
१३. 'राजा योग'—राजाओं की भक्ति ;
१४. 'चरण गुरु मंजरी'—गुरु चरण का फूलों का गुच्छा ;
१५. 'श्रुति कल्प लता'–(वेदांत के भाग) साधु पुस्तकों के सुनने की कल्पलता ;
१६. 'भीष्म प्रतिज्ञा'—भारत युद्ध में भीष्म की प्रतिज्ञा ;
१७. 'पाठ भाग'—पाठ का भाग ;
१८. 'लोप मुद्रा संवादु'—(शकुंतला की) अँगूठी खोने का विवरण ;
१९. 'भारत भाव'—भारत युद्ध का विचार ;
२०. 'राम जन्म'—राम की जीवनी ;
२१. 'सीता स्वयंवर'–सीता का विवाह ।

वाहबी[१] **(मुंशी और बाबू शीव या सिव-प्रसाद सिंह)**

बनारस के, संस्कृत-विद्वान् और स्वभावतः हिन्दी के अत्यधिक

---

[१] अ० '(ईश्वर द्वारा) दिया गया' Deodatus

पक्षपाती, यद्यपि उन्होंने उर्दू में लिखा है, अत्यधिक लिखने वाले सामयिक हिन्दुस्तानी-लेखकों में से हैं, क्योंकि, मेरा विश्वास है, उन्होंने क्या हिन्दी और क्या उर्दू में, लगभग पचास विविध रचनाएँ प्रकाशित की हैं। उन्होंने अँगरेज़ी में भी लिखा है।[1]

वे 'शिमला अख़बार'--शिमला के समाचार – जहाँ वे 'शिमला हिल स्टेट्स' के प्रबंधक थे, के पहले संपादक रह चुके हैं, जो बाद को शेख़ अब्दुल्ला द्वारा संपादित हुआ। यह पत्र, जो सप्ताह में दो बार निकलता है व्यापार के हित के लिए चीज़ों को ताज़ी क़ीमतें ('नरख-नामा') देता है।

आज कल शीव-प्रसाद बनारस में रहते हैं, जहाँ वे शासन-संबंधी कार्य करते हैं, और जहाँ, ऐसा प्रतीत होता है, सरकारी कमिश्नर, श्री एच० सी० टुकर (Tucker), ने उन्हें धार्मिक और नैतिक कहानियों या कथाओं का अँगरेज़ी से उर्दू में अनुवाद करने के काम में लगाया है।

उन अधिकांश रचनाओं के संबंध में जिनके वाह्वी रचयिता या अनुवादक हैं, विवरण इस प्रकार है :

१. श्री स्टीवर्ट द्वारा समीक्षा की गई और दिल्ली से १८४५ में प्रकाशित, डॉ० गोल्डस्मिथ कृत रोम के इतिहास (History of Rome) के संक्षिप्त रूप का अनुवाद , अठपेजी ;

२. श्री स्टीवर्ट द्वारा ही समीक्षा किया गया, 'Marshman's Brief Survey of History' के द्वितीय भाग का अनुवाद; प्रथम भाग का अनुवाद सरूप नारायण और शीव नारायण ने किया है।

३. 'भूगोल वृत्तांत' या 'बृत्तांत' – भूगोल की कथा, शिमला के

---

[1] अन्य के अतिरिक्त उनकी 'Strictures upon the Strictures', जिसका मैंने अपने १८७० के 'दिस्कूर' (Discours, व्याख्यान) में उल्लेख किया है।

स्कूलों के लिए रचित और उत्तर-पश्चिम प्रदेश में हर जगह प्रयुक्त हिन्दी का भूगोल ;

४. 'छोटा भूगोल हस्तामलक'—पृथ्वी, हाथ में चुल्लू – रंगीन चित्रों सहित संक्षिप्त भूगोल ; बनारस, १८५६, ६४ अठपेजी पृष्ठ ; उत्तर-पश्चिम प्रदेश के शिक्षा-विभाग द्वारा प्रकाशित ; उसके कई संस्करण हैं ;

५. 'बाल बोध'—बच्चों का ज्ञान, डब्ल्यू० एडवर्ड्स कृत 'English Manuscripts' शीर्षक रचना से अनूदित एक प्रकार की प्राथमिक पुस्तक और जिसके कई संस्करण हैं। अन्य बातों के अतिरिक्त, उसमें शिक्षाप्रद क़िस्से हैं।

६. 'विद्यांकुर'—विद्याओं का सार – अथवा अध्ययन के लिए भूमिका ;

७. 'तारीख़' या 'तवारीख़-इ बर्र-इ ओ बहार' (१८४५)... (उर्दू रचना)

८. 'जाम जहाँनुमा'—[1] ('भूगोल वृत्तान्त' का उर्दू अनुवाद, १८५६,१८६०)......

९. 'छोटा जाम जहाँनुमा' (१८६० – उर्दू)...

१०. अँगरेज़ी अक्षरों के सिखाने की उपाय'—अँगरेज़ी वर्ण-माला के अक्षरों को सिखाने की विधि; बनारस ; १८६०, २० अठपेजी पृष्ठ ;

११. (टी० डे० कृत प्रसिद्ध रचना 'Sandford and Merton'[2] का 'क़िस्सा-इ सैंडफ़ोर्ड ओ मेर्टन' शीर्षक से उर्दू-अनुवाद, १८६०, १८५५)

---

[1] पंडित वर्ग के मुसलमानों के अनुसार, इससे उस जादू के प्याले की ओर संकेत है जो यूसुफ़ के पास था।

[2] यह रचना, जो ख़ास तौर से बच्चों के लिए है, संक्षेप में बरक़ीं (Berquin) द्वारा अनूदित हुई है. और जो उनकी रचनाओं में है।

१२. 'दिल बहलाव', १८५८, १८६४ (उर्दू में)...

१३. 'मन बहलाव' – मन का बहलाना, गद्य और पद्य में लाभदायक शिक्षा और उपदेश ; इलाहाबाद, १८६०, ४८ अठपेजी पृष्ठ। यह रचना संभवत: ऊपर वाली का हिन्दी में अनुवाद या शायद मूल है।

१४. 'दस्तूरुल अमल पैमाइश',[१] १८५५ (उर्दू में)......

१५. 'मिसरात उलगाफ़लीन', १८५६ (उर्दू में)......

१६. 'वामामनरंजन'—स्त्रियों के लिए कहानियाँ (Tales for women) ; बनारस, १८५६, ६८ बड़े अठपेजी पृष्ठ ;

१७. 'बच्चों का इनाम', बच्चों की शिक्षा के लिए हिन्दी में छोटी-सी पुस्तक ; बनारस, १८६० ;

१८. 'बिनय (या विनय) पत्रिका सटीक', हिन्दी में 'टीका सहित भक्ति-संबंधी कविताएँ' ; बनारस, १८६८, ४१२ अठपेजी पृष्ठ ;

१९. 'मानव धर्म सार' या 'प्रकाश'—मनु के नियमों का सार या व्याख्या (The Ordinances of Manu), जिसमें कर्त्तव्यों की भारतीय व्यवस्था है, मनु की रचना का, संस्कृत और हिन्दी में संक्षिप्त रूप ; बनारस १८५७, ४६ बड़े अठपेजी पृष्ठ ;

२०. 'वर्णमाला' वर्णमाला के अक्षरों की माला—चित्रों तथा लाभदायक बातों और कहानियों सहित प्राथमिक पुस्तक (बाराखड़ी) ; बनारस, १८५७, २४ अठपेजी पृष्ठ। उसके अन्य संस्करण आगरा, शिमला, आदि के हैं।

२१. 'इतिहास तिमिर नाशक'—अज्ञान नष्ट करने वाला इतिहास—[२]अर्थात्, हिन्दी में, भारत का इतिहास, १२० और

---

[१] हुक्म चंद और वज़ीर पर लेखों में इसी शीर्षक की रचनाओं का उल्लेख देखिए।

[२] १८६४ और १८६५ से शुरू होने वाले मेरे व्याख्यान देखिए।

१३२ अठपेजी पृष्ठों के दो भाग। स्वभावतः दृष्टिकोण भिन्न होने के कारण मुसलमानों ने इस ग्रंथ की आलोचना की है।

२२. 'आईना-इ तारीख़नुमा' (१८६८ – ऊपर वाली रचना का अनुवाद और जो अँगरेज़ी में भी निकली है)...

२३. 'तारीख़ चीन ओ जापान' (एल० ओलीफ़ेंट कृत एलगिन के १८५७-१८५६ के मिशन का उर्दू में विवरण—एफ़० नैन्डी और शीव प्रसाद द्वारा अनूदित – १८६७)

२४. 'कुछ बयान अपनी ज़ुबान का'—हमारी वर्नाक्यूलर—२४ छोटे अठपेजी पृष्ठ ;

२५. 'शहादत कुरानी बर कुतुब रब्बानी' (अरबी और उर्दू में १८६०)......

सिव-प्रसाद, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, से मुद्रित उर्दू पत्र 'अवध अख़बार' के, जिसके नवल किशोर संचालक हैं, और जिनके महाराज मानसिंह के भवन में अपने प्रेस हैं, संपादक हैं। यह पत्र २४ से ८२ तक छोटे फ़ोलिओ पृष्ठों की प्रतियों में दो कॉलमों में[1] साप्ताहिक रूप में निकलता है, और उसमें प्रायः सिव-प्रसाद की कविताएँ मिल जाती हैं, अन्य के अतिरिक्त पहली और १५ दिसंबर, १८६८ के अंकों में, जिनसे उनका वह तख़ल्लुस मालूम हो जाता है जिसे मैंने लेख के शुरू में रखा है।

२६. श्री० एफ़० ई० हॉल द्वारा अपनी 'हिन्दी प्राइमर' में उल्लिखित, हिन्दी में, दमयंती की कथा;

२७. बीरसिंह की कथा (श्री एफ़० ई० हॉल के उच्चारण के अनुसार, 'वीर सिंह')।

रेवरेंड जे० लौंग ने अपने 'Selections from the Reco-

[1] मैं नहीं जानता यदि ये वही सिव प्रसाद हैं जो 'नूर नज़र'—दृष्टि का प्रकाश—शीर्षक, बुलंदशहर के साप्ताहिक उर्दू पत्र के संपादक हैं।

rds of the Bengal Government' में सिव-प्रसाद की रचनाओं की निम्नलिखित सूची दी है, जिनमें से अनेक का ऊपर उल्लेख हो चुका है :

१. हिन्दी में :

'Primer', चित्रों सहित, जिसके छठे संस्करण की पचास हज़ार प्रतियाँ निकली हैं; 'Orthographical Primer'; 'Reader'; 'Arithmetic'; 'Letterwriter'; 'Rudiments of knowledge'; 'Introduction to Geography' ; 'Rise and fall of the sikh nation' ; 'Self instructor'; 'Manual of teachers'; 'Miscellany';'A Tale of infanticide'; 'Easy reader' ; 'Geography' ; 'Tales for women'; 'Anecdotes' ; 'A Christian tale'; 'Another Christian tale' · 'Moral precepts, translated from the sanscrit' ; 'Wilson's Introduction to the Rig veda translated'; 'Extract from Manu' ।

२. उर्दू में :

'Miscellany' , कई भागों में ; 'Sandford and Merton, translated' ; 'Geography part. 1, part. 2, part. 3' ; 'Extracts from life in earnest' ; 'Dunnallan, a tale' ; 'Henry and his bearer';[1] 'Cleo and Marc, a tale' ; 'True heroism, a tale' ; 'A lecture on digestion' ; 'On railways (Lecture)' ।

---

[1] इस पुस्तक का एक नया संस्करण अवश्य होना चाहिए क्योंकि बम्बई के निज़ामुद्दीन ने उसका अनुवाद किया है ।

विद्या सागर[1] (ईश्वर चंद्र)

केप्टेन डब्ल्यू० एन० लीस (Lees) द्वारा फिर से मुद्रित, अठपेजी, हिन्दी में 'बैताल पचीसी' के एक संस्करण के संपादक हैं।

विनयविजय-गणि

चार भागों में, जैन धर्म की प्रिय रचना, 'श्रीपाल-चरित्र',[2] अथवा मालवा के राजा, श्रीपाल की कथा, के रचयिता। यह रचना उस रचना से नितान्त भिन्न है जो परमाल कृत है , यद्यपि उसका शीर्षक यही है, और जो एक जैन पुस्तक भी है। मैकेन्ज़ी संग्रह में उसका उल्लेख पाया जाता है, जि० २, पृ० ११३। भारतीयविद्या-विशारद श्री विल्सन द्वारा दिया उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

श्रीपाल की दो पुत्रियाँ थीं ; उनमें से मयनसुन्दरी नामक एक से अप्रसन्न होने के कारण, उसने उसका विवाह एक दरिद्र कोढ़ी के साथ कर दिया ; किन्तु यह कोढ़ी जैन था : उसने राजकुमारी को भी अपने धर्म में दीक्षित कर लिया, और उसका कोढ़ अच्छा हो गया।

श्रीपाल ने कंसंबी[1] के राजा, धवलेश को पराजित किया, और उसने उसकी पुत्री मदनमंजूषा से विवाह कर लिया। बाद को उसने पाँच और राजकुमारियों से भी विवाह किया जिनका पाणिग्रहण उसने विविध कौशलों से प्राप्त किया।

फिर उसने, चंपा के राजा, अजितसेन, को पराजित किया,

---

[1] भा० 'ज्ञान के समुद्र'

[2] श्रीपाल चरित्र

और उस नगर पर अधिकार कर लिया। उस शहर का वर्णन करते समय बीच में जैन धर्म की प्रशंसा की गई है। हिरण्यपुर का राजा, श्रीकण्ठ, उसके सिद्धांतों की व्याख्या करता और रोचक कथाओं से उन्हें स्पष्ट करता है। इसी कारण यह अंतिम भाग, जिसमें इस संप्रदाय के नौ प्रधान तत्वों का प्रतिपादन हुआ है, 'नवपद महिमा', अथवा नौ शब्दों की श्रेष्ठता, कहा जाता है।

विला

मिर्ज़ा लुत्फ़ अली विला,[1] जिनका दूसरा नाम 'मज़हर अली ख़ाँ विला'[2] है, सुलेमान अली ख़ाँ, जिनका नाम 'मिर्ज़ा मुहम्मद ज़मन घदाद' भी है, के पुत्र, और इस्पहान के निवासी मुहम्मद हुसेन उपनाम 'अली कुली ख़ाँ' के प्रपौत्र थे। वे हिन्दुस्तानी के एक प्रसिद्ध लेखक हैं, दिल्ली के रहने वाले, जहाँ वे एक महत्त्वपूर्ण पद पर थे। काव्य-क्षेत्र में वे प्रसिद्ध उर्दू-कवि, मिर्ज़ा जान तपिश के, और यहाँ दी गई सूचनाओं का मुझे एक भाग देने वाली जीवनी के लेखक, मसहफ़ी, के भी, शिष्य थे। उस समय जब कि यह पिछली लिखी जाती थी, विला, अपनी रचनाओं के संबंध में मीर निज़ामुद्दीन मामूँ से परामर्श करते थे। १८१४ में वे कलकत्ते में रहते थे। बेनी नारायण ने, जो उनसे विशेषतः परिचित थे, उनकी बारह[3] कविताएँ उद्धृत की हैं। वे लेखक हैं:

× (अन्य उर्दू रचनाएँ) ×

४. उन्होंने १२१५ हिजरी (१८०१) में, श्री लल्लूजी[4] की

[1] मित्रता, आदि

[2] 'बैताल पचीसी' की भूमिका में इसी प्रकार लिखा गया है।

[3] ग्यारह प्रधान रचना में, और एक परिशिष्ट में।

[4] दे० इस लेखक पर लेख

सहायता से,' 'क़िस्सा-इ माधोनल'[1] शीर्षक कहानी का उर्दू बोली में रूपान्तर किया। डॉक्टर गिलक्राइस्ट कृत 'हिन्दी मैनुअल ऑर कास्केट ऑव इंडिया'[2] में केवल प्रथम दस पृष्ठ देवनागरी अक्षरों में, कलकत्ते से, १८०५ में छपे हैं; किन्तु मेरे निजी संग्रह में उसकी एक पूरी प्रति है जो फ़ारसी अक्षरों में है। यह रचना पहले-पहल मोतीराम कवि[3] द्वारा ब्रज-भाखा में लिखी गई थी।

५. वे 'बैताल पचीसी' के हिन्दी-अनुवाद के रचयिता हैं, जो कलकत्ते से, देवनागरी अक्षरों में छपी है,[4] और जिसकी मेरे निजी संग्रह में एक हस्तलिखित प्रति फ़ारसी अक्षरों में है। 'बैताल पचीसी' की भूमिका के आधार पर, विला ही थे जिन्होंने

---

[1] इस रचना के संस्करण की भूमिका में कहा गया है कि यह विला और लल्लू-जी लाल कवि द्वारा ब्रज-भाखा से अनूदित है; किन्तु माधोनल की भूमिका में इस अंतिम लेखक का उल्लेख नहीं है।

[2] यह संग्रह कलकत्ते से चौंपेजी पृष्ठों में, इस शीर्षक के अन्तर्गत छपा है: 'Hindee Manual or Casket of India, compiled for the use of the Hindustanee students of the college of Fort-William under the superintendence of doctor Gilchrist' ('हिन्दी मैनुअल ऑर कास्केट ऑव इंडिया', डॉक्टर गिलक्राइस्ट के निरीक्षण में फ़ोर्ट-विलियम कॉलेज के हिन्दुस्तानी के विद्यार्थियों के लाभार्थ संग्रहीत); किन्तु इस रचना की छपाई अधूरी रह गई। उसमें सम्मिलित हैं: १ 'बाग़ ओ बहार'; २ 'नस्र-इ बेनज़ीर'; ३ 'बाग़-इ उर्दू'; ४ 'तोता कहानी'; ५ 'सिंहासन बत्तीसी'; ६ 'मिस्कीन का मर्सिया'; ७ 'शकुन्तला' ८ 'अख़लाक़-इ हिन्दी'; ९ 'बैताल पचीसी'; १० 'माधोनल'। उसमें इन रचनाओं के केवल अंश प्रकाशित हैं।

[3] उन पर लेख देखिए

[4] प्रथम संस्करण के केवल बीस पृष्ठ छपे हैं जो 'हिन्दी मैनुअल' का भाग होने वाले थे।

यह अनुवाद किया। जहाँ तक लल्लू जी, जो मुख पृष्ठ पर उल्लिखित हैं,[1] से संबंध है, उन्होंने स्पष्टत: उसका संशोधन किया और उसकी छपाई की देखरेख की

× (अन्य रचनाएँ) ×

विष्णु-दास[2] कवि

अर्थात् कवि विष्णु-दास, कभी-कभी केवल विष्णु कवि के नाम से संबोधित, एक 'स्वर्ग रोहणी' – स्वर्ग की सीढ़ी शीर्षक कविता के रचयिता हैं, जिसके संबंध में चार्ल्स दोशोआ (d' Ochoa) ने भारत से सूचना दी है कि आज कल उसकी एक प्रति राजकीय पुस्तकालय में है। इस कवि की रचना से उसके 'कलियुग' के वर्णन का अनुवाद मैंने 'ज़्नार्ं एसियातीक' (Journal Asiatique), १८५२, में दिया है, जिसका पाठ श्री लाँसरो (Lancereau) की देखरेख में प्रकाशित, मेरे हिन्दुई के संग्रह (Chrestomathie) में है।

यह कवि निस्संदेह वही है जिसकी कई कविताओं का अनुवाद मैंने डब्ल्यू० प्राइस द्वारा प्रकाशित पाठ के आधार पर तैयार किए गए हिन्दुई के लोकप्रिय गीतों के अपने संग्रह में दिया है। वे ब्राह्मण जाति के थे, जैसा कि उन्हें दी जाने वाली 'द्विज' उपाधि से पता चलता है।

---

[1] Translated into Hindoostanee by Mazhar Ali Khan-i Vila and Shree Lulloo Lal Kub moonshees in the College of fort William'. (फोर्ट विलियम कॉलेज के मुंशियों मज़हर अली ख़ाँ विला और श्री लल्लू लाल कवि द्वारा हिन्दुस्तानी में अनूदित')

[2] भा० 'विष्णु का दास'

वेणी[1]

शैव संप्रदाय के एक हिन्दी-लेखक हैं, जिनकी ओर कम ध्यान गया है, क्योंकि, सामान्यतः हिन्दी के लेखक वैष्णवों के संप्रदाय से सम्बन्ध रखते हैं।

वेदांग-राय[2]

'पार्सी प्रकाश'[3] -- खुलासा पार्सी – के रचयिता, रचना जिसमें हिन्दुओं और मुसलमानों के घरों में महीनों आदि के गिनने की विधि का वर्णन है, और जो शाहजहाँ की आज्ञा से लिखी गई थी। यह रचना मैकेन्ज़ी संग्रह में थी : प्रोफ़ेसर विल्सन द्वारा निर्मित संग्रह के सूचीपत्र में उसका उल्लेख है, जि० २, पृष्ठ ११०।

व्यास[4] या व्यास जी

मधुकर साह (शाह) के गुरु, अन्य के अतिरिक्त, हिन्दुई में एक पद्यांश के रचयिता हैं, 'पद' शीर्षक, अत्यधिक अज्ञात छोटी कविता, जो 'भक्तमाल' में 'मधुकर' लेख में पाई जाती है, और जिसका एक नया अनुवाद इस प्रकार है :

'जो सुख विष्णु के भक्तों के घरों में मिलता है वह बड़े-से-बड़े धनाढ्य के यहाँ नहीं मिलता, और सबसे बड़ी यही बात है कि जो पुत्र-जन्म से भी एक स्त्री को वंध्या सिद्ध करती है। उसके पास सुख है, वह उस जल को भक्ति के साथ पीता है जो वैष्णवों के पैर धोने के काम आता है, और जो उसे अपने शरीर पर लगाता है। यह सुख,

---

[1] भा० 'ब्राह्मण-संबंधी'

[2] भा० वेदांग राय, वेदों के शास्त्र का राजा

[3] पार्सी प्रकाश

[4] भा० 'फैलाव, विस्तार'

जो स्वप्न में लाखों पवित्र स्थानों में स्नान करने से भी नहीं मिल सकता, वह विष्णु के भक्तों की शकल देख लेने से मिल जाता है; वह उत्पन्न होकर मुश्किल से मिटता है। यह सुख वह नहीं है जो एक पवित्र और स्नेहशीला स्त्री के हृदय में मिलता है। जब किसी को यह मिल जाता है, तो विष्णु के भक्तों की बातें सुनकर उनके अश्रु प्रवाहित होने लगते हैं। इस सुख की समता घर में पौत्र-जन्म की प्रसन्नता भी नहीं कर सकती। अंत में, साधु-संगत का सुख, और उनके प्रति हार्दिक प्रेम ग़रीब व्यास के लिए लंका और मेरु के वैभव से अच्छा है।'

ज्वाला-प्रसाद ने आगरे से, १८ पृष्ठों के छोटे फ़ोलिओ रूप में, व्यास जी और मनु कृत बताए जाने वाले 'धर्म प्रकाश'—धार्मिक नियम का प्रकाश—के दो संस्करण निकाले हैं, अर्थात् संस्कृत और हिन्दी में, तथा संस्कृत और उर्दू में अगहन मास (संवत् १९२४ वर्ष की जनवरी-फ़रवरी) (१८६८) के उजियारे पक्ष में धर्म कृत्य करने की व्याख्या; और वही प्रकाशन फागुन (फ़रवरी-मार्च), चैत्र (मार्च-अप्रैल), जेठ (अप्रैल-मई) आदि महीनों के लिए।

शंकर-दास[1]

सिक्खों के एक इतिहास ('Origin of the Sikh power in the Penjab and political life of Maharaja Runjeet Singh, with an account of the present condition, religion, laws and customs of the Sikhs') के रचयिता हैं, जिसकी समीक्षा दिल्ली कॉलेज के राम चन्द ने की है।

शंभु[2]

शैव संप्रादय के हिन्दी रचयिता हैं। मैं यह बता चुका हूँ कि

---

[1] भा॰ 'शिव का दास'

[2] भा॰ 'पिता'

ऐसे शैव बहुत कम हैं जिन्होंने, हिन्दी या हिन्दुई में लिखा है। उन्होंने, परंपरा के अनुसार, पवित्र भाषा में ही लिखना पसन्द किया है।

शंभु चन्द्र मकर जी नामक एक और सामयिक लेखक हुए हैं, जिन्होंने भूपाल की रानी, बेगम सिकन्दरा, जिनका हाल ही में देहान्त हुआ है, की जीवनी पर ('हालात-इ जिंदगी') एक 'रिसाला' लिखा है; कलकत्ता, १८३६।[1]

शाद (राजा दुर्गा-प्रसाद)

अज़ीमाबाद (पटना) के रईस......(उर्दू रचनाएँ)...

वे संपादक हैं: १. 'पंचरत्न'- -पाँच रत्न—अर्थात् हिन्दी रामायण के रचयिता 'तुलसी-दास की पाँच कविताओं' के ; बनारस में लीथो में मुद्रित, १८६४, ६४ अठपेजी पृष्ठ ;

२. 'लाल चंद्रिका' के, लाल कवि द्वारा बिहारी कृत 'सतसई' पर टीका ;

३. 'सिंहासन बत्तीसी' की कथाओं के एक सचित्र उर्दू संस्करण के, ६७ छोटे चौपेजी पृष्ठ ; आगरा, १८६२, जो संस्करण मुंशी किशन लाल की देखरेख में हुआ है। मेरे विचार से उसके अन्य संस्करण भी हैं।

शिव चन्द्र-नाथ (बाबू)

पहले मेरठ के 'जाम-इ जमशेद'—जमशेद का प्याला—नामक एक छापेखाने, साथ ही इसी नाम के और इसी छापेखाने में छपने वाले एक उर्दू पत्र के, जिसका १८५३ में निकलना बन्द हो गया, संचालक थे।

---

[1] अलीगढ़ का १ ली अक्तूबर, १८६८ का 'अख़बार'; १८६८ का मेरा भाषण भी देखिए, पृ० ६।

१८४६ में, इन बाबू साहब ने उसी नाम का एक छापाखाना आगरे में स्थापित किया, और १८५१ में वहाँ से देशी स्कूलों के लाभार्थ स्कूलों के तत्कालीन बड़े निरीक्षक, श्री० एच० एस० रीड (Reid) द्वारा निर्मित अनेक पुस्तकें प्रकाशित कीं। अन्य के अतिरिक्त वे हैं :

१. 'पत्र मालिका'—पत्रों की माला—हिन्दी में,[१] संभवतः बारहखड़ी, अथवा जिसे अँगरेज़ी में 'प्राइमर' कहते हैं ;

२. 'महाजनी-सार दीपिका'—व्यापार के सार की दीपिका—हिन्दी में, श्री लाल कृत 'महाजनी-सार' का एक प्रकार का संक्षिप्त रूप; आगरा, १८५६ ;

३. 'चित्र चन्द्रिका'—चित्रों की चाँदनी। क्या यह वही रचना तो नहीं है, जो हिन्दी काव्य-शास्त्र पर राजा (बलवान सिंह) की इसी शीर्षक की रचना है ?

४. 'उर्दू आदर्श'—उर्दू दर्पण ;[२]

५. 'नक़्शजात-इ अज़ला'—ज़िलों के नकशे ;

६. 'नक़्शजात-इ मकतब'—स्कूलों के नकशे ;

७. 'Map of Asia' (एशिया का नकशा) ;

८. 'लीलावती', हिन्दी में ('लीलावती', हिन्दी संस्करण)।[3]

शिव दास[४] (राजा)

आगरा प्रान्तान्तर्गत जैपुर के एक हिन्दू लेखक हैं जिनकी देन हैं :

१. वॉर्ड द्वारा अपने हिन्दुओं के साहित्य के इतिहास (History of the Literature of the Hindus), जि० २,

---

१ देखिए श्री लाल पर लेख

२ ,, ,, ,, ,,

३ ,, ,, ,, ,,

४ 'शिव का दास'

पृष्ठ ४८१, में उल्लिखित रचना, 'शिव चौपाई', जिसका तात्पर्य है शिव की चौपाइयाँ।

२. वॉर्ड द्वारा ही अपने 'हिन्दुओं के साहित्य के इतिहास', जि०२, पृष्ठ ४८१ में उल्लिखित 'रत्न माला' – रत्नों की माला। मैं नहीं जानता यदि यह वही रचना है जिसका प्रयोग विल्सन ने अपने कोष (डिक्शनरी) के लिए किया : यह दूसरी (कोष) संस्कृत और हिन्दुई में, वानस्पतिक और खनिज दोनों प्रकार की, औषधियों के नामों की एक सूची है।

३. उसी प्रकार वॉर्ड द्वारा उल्लिखित 'शिव सागर' – शिव का समुद्र—भी इसी लेखक की देन है।

४. अत में वे 'पोथी लोक ऊकत, रस जगत'[1] शीर्षक रचना के भी रचयिता हैं। क्योंकि इस शीर्षक का अर्थ बहुत स्पष्ट नहीं है, मुझे उसका अनुवाद करने का साहस नही होता, इसलिए मैं ग्रंथ के विषय के बारे में अनभिज्ञ हूँ। फ़रज़ाद कुली (Farzâda Culi) की पुस्तक-सूची में उसका एक नए और अप्रचलित ढंग से लिखी गई के रूप में उल्लेख है, और उसमें लेखक का नाम 'सूबा अकबराबाद के राय शिव-दास' दिया गया है।

शिव नारायण (पंडित)

दिल्ली और आगरा के देशी कॉलेजों के प्रसिद्ध छात्र, और अँगरेज़ी के प्रधान अध्यापक, रचयिता हैं :

× (उर्दू रचनाएँ) ×

८. वे आगरे के उर्दू पत्र, 'मुफ़ीद ख़लाइक़'—जो लोगों के लिए लाभदायक है—,और 'सर्वउपकारी शीर्षक उसके हिन्दी रूपान्तर के संपादक हैं।

---

[1] अथवा 'लोकोक्ति रस युक्ति' जिसका अर्थ 'सांसारिक बातों के संबंध में रस का मूल्य' प्रतीत होता है।

१८५६ में शिव नारायण अजमेर के 'जग लाभ चिन्तक'—दुनिया के लाभ के लिए विचार—शीर्षक हिन्दी पत्र के संपादक थे।

उन्होंने संस्कृत और हिन्दी में 'षट् पंचाशिका'—छप्पन उक्तियाँ—का संग्रह किया है; आगरा, १८६८, ३२ बड़े अठपेजी पृष्ठ; 'मजमुआ-इ दिलबहलाव'—(साहित्यिक) मनोरंजक बातों का संग्रह—का हिन्दी में गीत और पहेलियों का, आगरे से ही १८६८ में मुद्रित, ३२ अठपेजी पृष्ठ; तथा अन्य अनेक रचनाओं का जिनका उनसे संबंधित लेखकों पर लिखे गए लेखों में उल्लेख हुआ है।

शिव नारायण-दास[1]

शिव-नारायणी संप्रदाय के संस्थापक, शिव-नारायण, (नेरिवाण Nérivâna) नारायण[2] नामक जाति के राजपूत, गाज़ीपुर के सेसन (Sésana)[3] गाँव के निवासी थे। वे मुहम्मद शाह के राजत्व-काल में रहते थे, और उनकी रचनाओं में से एक की तिथि संवत् १७६१ (१७३५ ईसवी सन्) है। उन्होंने अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने के लिए अनेक रचनाएँ प्रदान की हैं। हिन्दी पद्य में उनकी ग्यारह विभिन्न रचनाएँ बताई जाती हैं:

१. 'लौ या लव ग्रन्थ'; २. 'सन्त विलास'; ३. 'वजन ग्रन्थ'; ४. 'सन्त सुन्दर,; ५. 'गुरुन्यास'; ६. 'सन्त अचारी'; ७. 'सन्तोपदेश'; ८. 'शब्दावली'; ९. सन्त परवान'; १०. 'सन्त महिमा'; ११. 'सन्त सागर'।

---

[1] भा० 'विष्णु और शिव का दास'

[2] Nârâyana—मेरे विचार से इस शब्द के यही हिज्जे हैं। (मूल के प्रथम संस्करण में 'नेरिवाण' है—अनु०)

[3] 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृष्ठ ३०५। (मूल के प्रथम संस्करण में उन्हें चंदावन गाँव का निवासी बताया गया है—अनु०)

मैं नहीं कह सकता कि 'सन्त सरन' इन सब रचनाओं के संग्रह का नाम है। जो कुछ भी हो, इस अंतिम रचना की तीन फोलिओ जिल्दों में एक हस्तलिखित प्रति विद्वान् प्रोफ़ेसर विल्सन के पास है। उसमें शिव-नारायणी हिन्दी कविताएँ और पद हैं; वह नागरी अक्षरों में लिखी हुई है।

उनकी एक बारहवीं है, जो अन्य सब की कुंजी है; किन्तु अभी तक उसे किसी ने नहीं देखा; वह संप्रदाय के गुरु के निजी अधिकार में रहती है। यह व्यक्ति गाजीपुर ज़िले में बलसन्द (Balasand) में रहता है, जहाँ एक पाठशाला और प्रधान केन्द्र है।[1]

इस महापुरुष के एक धार्मिक गीत का पाठ और उसका अनुवाद 'एशियाटिक जर्नल'[2] में मिलता है। यह गीत उनके संप्रदाय के अनुयायियों में लोकप्रिय हो गया है, और जो हमें भारत के पालकी उठाने वाले से ज्ञात हुआ है।

कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

'मेरे दोस्तो, ईश्वर की दी हुई चीजों का गान करो। सदैव के लिए मानवी भ्रम छोड़ दो, अपनेपन से घृणा करो, साधु-संगति में रहो, महापुरुषों के साथ रहो; अपने हाथ से बजा कर खुशी में ढोल और झाँझ की ध्वनि उत्पन्न करो ...

यदि तुम अपने को सुधारना चाहते हो, तो विश्वास की धर्म की तलवार लो और सांसारिक भ्रमों को काट डालो...

संतों से आनंद प्राप्त करने में, शिव नारायण-दास द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलने में विलंब मत करो।'

---

[1] मौंट्गोमरी मार्टिन (Montg. Martin), 'ईस्टर्न इन्डिया' (East. India) जि० २, पृ० १३७

[2] जि० ३, तीसरी माला पृ० ६३७, १८४४

शिव-बख़्श[1] शकल[2]

अज़ीमगढ़ (Azîmgarh) के पंडित, ने 'प्रौवर्ब्स ऑव सोलोमन', 'सरमन ऑव दि माउंट' और सन्त मैथ्यू की धर्म-पुस्तक के तेरहवें अध्याय का हिन्दी छन्दों में अनुवाद किया है; ये अनुवाद भारतवर्ष में लीथो में छपे हैं।

शिव-राज[3]

जैपुर के लेखक, जिनकी देन वॉर्ड द्वारा अपने हिन्दुओं के साहित्य के इतिहास, जि० २, पृष्ठ ४८१, में उल्लिखित 'रत्न माला'[4] अर्थात् रत्नों की माला, शीर्षक रचना है। मैं नहीं जानता यदि यह वही है जिसका श्री विलसन ने अपने कोष के लिए उपयोग किया; यह अंतिम संस्कृत और हिंदुई में, जितनी वनस्पति-संबंधी उतनी ही खनिज, औषधियों के नामों की सूची है।

इसी लेखक की देन 'शिव-सागर'[5] अर्थात् शिव का समुद्र है, रचना जिसका उल्लेख भी वॉर्ड ने किया है।[6]

शुकदेव[7]

डब्ल्यू० वॉर्ड द्वारा अपनी 'ए व्यू ऑव दि हिस्ट्री, लिट्रेचर

---

[1] भा० 'शिव का दिया हुआ'

[2] क्या यह शब्द, अरब शब्द 'शक्ल', अर्थ 'रूप'—तो नहीं होना चाहिए? यदि ऐसा है, तो यह इस लेखक का तख़ल्लुस है।

[3] सिव राज—राजा सिव

[4] रत्न माला

[5] सिव सागर

[6] इन दोनों ग्रंथों का उल्लेख द्वितीय संस्करण में 'शिव-दास (राजा)' के अंतर्गत हुआ है। इसलिए द्वितीय संस्करण में 'शिव-राज' का उल्लेख नहीं है।—अनु०

[7] भा० शुकदेव, व्यास के पुत्र का नाम। स्वर्गीय एच० एच० विलसन वाली हस्त-

ऐंड माइथौलौजी ऑव दि हिन्दूज़, एट्सीटरा', शीर्षक, रचना, जि० २, पृ० ४८०, में उल्लिखित हिन्दी पुस्तक 'फादिलअली (Phâdilalî) प्रकाश' के रचयिता।

क्या यह रचयिता 'सुखदेव मिश्र' तथा साथ ही 'कवि राज' नामक हिन्दू लेखक ही तो नहीं है जिसका इलाहाबाद प्रान्त के प्राचीन नगर, ओरछा, के राजा के अंतर्गत, १६ वीं शताब्दी में आविर्भाव हुआ ? मर्दन नामक इस राजा के आश्रय में ही इस कवि ने साहित्य-सेवा की। उसकी रचनाएँ हैं :

१. 'रसार्णौ 'या 'रसार्णव' शीर्षक छन्दोबद्ध रचना जिसका संबंध, जैसा कि शीर्षक से ज्ञात होता है, काव्य तथा नाटक-संबंधी रसों से है;

२. 'पिंगल'—छंद—हिंदी, साथ ही जिसका शीर्षक 'भाषा पिंगल' है, और जिसका उल्लेख राग सागर द्वारा हुआ है। यह रचना बनारस से टिप्पणियों सहित, बाबू अविनाशी लाल और मुंशी हरवंश लाल के व्यय से मुद्रक गोपीनाथ द्वारा, १८६४, २३-२३ पंक्तियों के ५४ अठपेजी पृष्ठ, और १८६५, १६-१६ पंक्तियों के १०० अठपेजी पृष्ठ, में प्रकाशित हो चुकी है। विल्सन के सुन्दर संग्रह में उसकी नागराक्षरों में एक प्रति थी। इस प्रसिद्ध रचयिता के संबंध में मैं जो सूचनाएँ यहाँ दे रहा हूँ उसके लिए मैं उक्त विद्वान् भारतीय-विद्या-विशारद का कृतज्ञ हूँ;

३. 'रस रत्नाकर'—रस का समुद्र; बनारस, १८६६, २२-२२ पंक्तियों के ३२ अठपेजी पृष्ठ, हाशिए पर टिप्पणियों सहित;[1]

लिखित प्रति में यह नाम 'सुख'—आनन्द [तालव्य (?—अनु०) 'ष' सहित जिसे प्रायः 'ख' कहा जाता है] है। जहाँ तक 'देव्' या 'देव' शब्द से संबंध है, यह यहाँ एक आदरसूचक उपाधि है जो हिन्दुओं के नामों के अंत में 'साहिब' की तरह है, जो प्रायः मुसलमान नामों के साथ लगाया जाता है।

[1] यह रचना गोपाल चन्द्र कृत भी बताई जाती है। देखिए उन पर लेख।

४. 'फ़ाज़िल अली प्रकाश'—फ़ाज़िल अली का इतिहास—जिसकी एक हस्तलिखित प्रति केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के किंग्स कॉलेज में है।[1]

श्याम लाल[2]

योग वाशिष्ठ या योग बशिष्ठ[3]—परोक्ष को देखने की सर्वोच्च शक्ति—शीर्षक, तथा १८६८ में एक हज़ार अठपेजी पृष्ठों में कानपुर से मुद्रित, प्रसिद्ध संस्कृत रचना के फ़ारसी, तथा उर्दू से मिलते-जुलते, अक्षरों में भाखा (हिन्दी) अनुवाद के रचयिता हैं। इस रचना में, जो पहले-पहल दारा शिकोह की आज्ञा से फ़ारसी में अनूदित हुई तत्पश्चात भाखा और उर्दू में, प्रश्नोत्तरी रूप में, ध्यान लगाने और परमात्मा से आध्यात्मिक योग स्थापित करने की विधि बताई गई है।

श्याम-सुन्दर[4]

हिन्दी के एक ग्रंथकार हैं जिनके केवल नाम का मैं उल्लेख कर सकता हूँ।

श्री किशन[5]

आगरे से प्रकाशित तथा 'पाप मोचन'—पाप से मुक्ति—शीर्षक एक पाक्षिक हिन्दी पत्र के संपादक हैं। यह पत्र मुंशी ज्वाला

---

[1] ई० एच० पामर (Falmer) कृत इस पुस्तकालय की हस्तलिखित प्रतियों की सूची देखिए, 'जर्नल रॉयल एशियाटिक सोसायटी', जि० ३, भाग १, नवीन सीरीज़।

[2] भा० 'प्यारे कृष्ण'

[3] श्री केम्पसन (Kempson) की २० फ़रवरी, १८६९ की रिपोर्ट

[4] भा० 'सुन्दर लगने वाला श्याम' अर्थात्, 'कृष्ण'

[5] भा० 'देवता कृष्ण'

प्रसाद के न्याय-शास्त्र-संबंधी 'धर्म प्रकाश'—न्याय का प्रकाश—शीर्षक उर्दू पत्र का रूपान्तर है।

श्रीधव[1]

हिन्दी के एक रचयिता का नाम है जिनके संबंध में मुझे कोई सूचना प्राप्त नहीं हो सकी।

श्री धार[2] (स्वामी)

ब्राह्मण जाति के एक हिन्दी लेखक हैं जिनका जन्म पंढरपुर में १६०० शक-संवत (१६७८) में और मृत्यु १६५० (१७२८) में हुई। उनके पिता का नाम ब्रह्मानंद और उनकी माता का नाम सावित्री था। उन्होंने फ़कीरों का एक संप्रदाय स्थापित किया और निम्नलिखित ग्रन्थों की रचना की, जो कही जाती प्राकृत में हैं, किन्तु हैं हिन्दी में, जिनकी एक मोटी जिल्द बन जाती है :

१. 'पाण्डव प्रताप'—पाण्डवों की शक्ति ;
२. 'हरि विजय'—हरि की जीत ;
३. 'राम विजय'—राम की जीत ;
४. 'शिव लीलामृत'—शिव की क्रीड़ाएँ ;[3]
५. 'काशी खण्ड'—बनारस का हिस्सा ;
६. 'ब्रह्मचर्य खंड'—ब्राह्मण-जीवन ;
७. 'जैमिनी अश्वमेध'—जैमिनी द्वारा किया गया अश्वमेध ;
८. 'पाण्डुरंग महातुंग'—पाण्डवों को ऊँचा पर्वत ;
९. 'भगवद्गीता' पर एक टीका।

---

[1] भा० 'वसुओं नामक अर्द्ध-देवताओं में से एक का नाम'

[2] भा० 'श्री' आदरसूचक उपाधि; 'धार'-धारा, नदी

[3] इसी शीर्षक की एक रचना की ओर पहली जिल्द के पृष्ठ ३५२ और ४३१ पर संकेत दिया जा चुका है।

श्री प्रसाद[1] (मुंशी तथा पंडित)

× (उर्दू रचनाएँ) ×

रचयिता हैं :

४. 'जगत् भूगोल' – दुनिया का भूगोल—के, हिन्दी और उर्दू में, दो भागों में भूगोल, ४८ और ६४ पृष्ठ; मेरठ, १८६५, अठपेजी, और इलाहाबाद, १८६८, ४२ अठपेजी पृष्ठ। (प्रथम भाग)

श्री राम सिंह[2] (पंडित)

भारतीय रिवाजों पर, स्वर्गीय सर हेनरी इलियट, को समर्पित, पंक्तियों के बीच-बीच में नागरी अक्षरों में रूपांतर सहित, फ़ारसी अक्षरों में लिखित 'राज समाज' – देश का समाज—हिंदी पुस्तक के रचयिता हैं; १७-१७ पंक्तियों के १७८ पृष्ठ, १८५१ में प्रतिलिपि की गई।[3]

श्री लाल[4] (पंडित)

आगरे के, रचयिता हैं :

१. 'महाजनी सार' —व्यापार का सार – के, 'महाजनी पुस्तक'—हिन्दू महाजनों की पुस्तक – का हिंदी में संक्षेप।[5] इस रचना के कई संस्करण हैं, जिनमें 'सराफ़ी', अर्थात् ठीक-ठीक महाजनों या

---

[1] भा० 'श्री या लक्ष्मी का कृपा पात्र या दिया हुआ'

[2] भा० 'वीर (शेर) दिव्य राम'

[3] 'जर्नल एशियाटिक सोसायटी ऑव बेंगाल', जि० २३, पृ० २५६

[4] भा० 'लक्ष्मी का प्रिय'

[5] यह मेरे विचार से वही है जिसका उल्लेख 'सप्लीमेंट टु दि कैटैलौग ऑव दि लाइब्रेरी ऑव दि हॉनरेबुल ईस्ट इंडिया कंपनी' में 'Mahajans' Book or Merchants' accounts' शीर्षक के अंतर्गत उल्लेख हुआ है, आयताकार; आगरा, १८४६।

सराफ़ के, कहे जाने वाले नागरी अक्षरों में सराफों के बही खाते रखने की विधि बताई गई है। वह १८५६ में आगरा और इलाहाबाद से मुद्रित हुई है, १७ अठपेजी पृष्ठ।

२. 'पत्र मालिका'—पत्रों की माला (सरल पत्र लेखन-विधि -- Easy letter writer)—के, दो भागों में हिन्दी पत्रों की छोटी पुस्तक, १८५०-१८५१ में आगरे के एक ही छापेखाने में मुद्रित भी। ये दोनों रचनाएँ, स्कूलों के बड़े निरीक्षक, एच० एस० रीड द्वारा देशी स्कूलों के लाभार्थ प्रकाशित हुई हैं।

श्री लाल की 'पत्र मालिका' शीर्षक से ही एक अत्यन्त छोटी पुस्तक भी है, जो प्रत्यक्षतः पहली वाली का संक्षिप्त रूप है, और जिसका मेरे पास इलाहाबाद, १८६० का पाँचवाँ संस्करण है।

३. 'धर्म (या धरम) सिंह का वृत्तान्त'—धर्म सिंह की कथा—के। यह कथा श्री एच० एस० रीड (Reid) के कहने से, बच्चों की शिक्षा के लिए 'क़िस्सा धर्म सिंह' शीर्षक के अंतर्गत पहले-पहल उर्दू में लिखी गई थी, और उसकी कई बार कई-कई हज़ार प्रतियाँ मुद्रित हुईं; उदाहरण के लिए, सातवीं बार, दस हज़ार; इलाहाबाद, १८६०, १२ पृष्ठ। इस पुस्तक का मूल विचार श्री जॉन म्योर का दिया हुआ है।

उर्दू रूपान्तर चिरंजी लाल का किया हुआ है, और उसका शीर्षक है 'धर्म सिंह का क़िस्सा' – धर्म सिंह की कथा।[1]

इस पुस्तक में एक नीति-कथा है जिसका नायक धर्म सिंह नामक एक ज़मींदार है, जो अपने सद्व्यवहार से यशोपार्जन करने में सफल होता है, किन्तु अपनी लड़की के विवाहोपलक्ष्य में अपव्यय कर पीड़ित होता है; और अंत में दिखाया गया है

---

[1] 'आगरा गवर्नमेंट गजट', पहली जून, १८५५ का अंक

कि अनुभव द्वारा उसमें ज्ञान उत्पन्न होता है। यह कथा अत्यधिक लोकप्रिय हो गई है, और देशी स्कूलों में पढ़ाई जाती है। उसका फ़ारसी में 'क़िस्सा-इ सादिक ख़ाँ' शीर्षक के अंतर्गत अनुवाद हुआ है, और यह अनुवाद भी आगरे से छपा है।

४. 'खगोल सार' के, हिन्दी में उर्दू 'ख़ुलासा निज़ाम-इ शम्सी' से अनूदित सौर जगत-विवरण-संबंधी छोटी पुस्तक है, और दोनों आगरा और बनारस से कई बार मुद्रित हुई हैं, अठपेजी। देशी स्कूलों के लाभार्थ इस रचना का एक संक्षित रूप 'ख़ुलासा खगोल सार' शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित हुआ है।

५. 'ज्ञान चालीसी'—चालीस नीति-संबंधी कथन—दोहों में, बालकों की शिक्षा के लिए। उसके कई संस्करण हैं ; चौथा इलाहाबाद का है। एक संस्करण हिन्दी में टीका-सहित है, और जिसका शीर्षक 'ज्ञान चालीसी विवरण' है ; आगरा, १८६०, २४ अठपेजी पृष्ठ।

६. 'अक्षर दीपिका'—अक्षरों की ज्वाल, (प्राइमर नं० १), हिन्दी की प्राथमिक रचना, जिसके कई संस्करण हो चुके हैं, और जिसका देशी स्कूलों में प्रयोग किया जाता है। उत्तर-पश्चिम प्रान्त के स्कूलों के सब से बड़े निरीक्षक श्र. एच० एस० रीड (Reid) ने उसका सम्पादन और श्री लाल की सहायता से उसका हिन्दी में अनुवाद किया है। 'अक्षर अभ्यास' की अपेक्षा यह एक प्रकार की अधिक विधिवत् और विकसित प्राथमिक पुस्तक है। वह आगरा, लाहौर, दिल्ली और इलाहाबाद से कई बार छप चुकी है। सातवाँ संस्करण इलाहाबाद से हुआ है, १८५९, और एक हज़ार प्रतियाँ छपी हैं, २८ अत्यन्त छोटे चौपेजी पृष्ठ।

७. 'उर्दू आदर्श'—उर्दू का दर्पण—हिन्दी में, जिसके भी कई संस्करण हो चुके हैं। इसी पुस्तक में, जो एक प्रकार की प्राइमर या प्राथमिक व्याकरण है, बहुत रोचक बातें हैं। उर्दू भाषा

के जन्म और विकास तथा हिन्दी और फ़ारसी से उसके संबंध पर हिन्दी में लिखित वह एक रूपरेखा है।

८. 'गणित प्रकाश'—गणित की रोशनी—हिन्दी में, जिसके कई संस्करण हो चुके हैं, कुछ लीथो के, कुछ मुद्रित। वह चार भागों में गणित-संबंधी पुस्तक है, जिसके तीसरे और चौथे भाग इस संपादन के सहयोगियों बंसीधर और मोहन लाल द्वारा 'मबादी उल् हिसाब' के अनुवाद हैं।

९. 'छेत्र' या 'क्षेत्र चन्द्रिका'--खेत से संबंधित चमकती किरणें—एच० एस० रीड द्वारा संपादित और श्री लाल द्वारा हिन्दी में अनूदित, भूमि नापने आदि, आदि[1] की विधि-सम्बंधी दो भागों में हिन्दी पुस्तक। उसके आगरे आदि, से कई संस्करण हो चुके हैं; छठा बनारस का है, १८४५, अठपेजी। पंडित बंसीधर ने अपनी तरफ से उसका 'मिस्बाह उल् मसाहत'—क्षेत्र-विज्ञान का दीपक—शीर्षक के अन्तर्गत उर्दू में अनुवाद किया है।

१०. 'सूरजपुर की कहानी'—सूरजपुर की कथा—इसी अर्थ के शीर्षक, 'क़िस्सा-इ शम्साबाद'[2] का अनुवाद। एच० एस० रीड द्वारा सर्वप्रथम लिखित और पं० श्री लाल की सहायता द्वारा हिन्दी में अनूदित, यह ग्रामीण जीवन का एक चित्र है। उसका उद्देश्य एक नैतिक कथा के माध्यम द्वारा ज़मींदारों और किसानों के अधिकारों और भूमि-सम्पत्ति संबंधी बातें बताना है, तथा

---

१ 'ए ट्रीटाइज़ ऑन सर्वे, पार्ट फ़र्स्ट, मेनसुरेशन ; पार्ट सेकण्ड, प्लेन टेबिल सर्वेयिंग'

२ उसका एक संस्करण पंजाबी में, किन्तु उर्दू, अर्थात् फ़ारसी अक्षरों, में हाफ़िज़ लाहौरी का दिया हुआ है ; दिल्ली, १८६८, १६ अठपेजी पृष्ठ।

यह बताया गया है कि पटवारियों (भूमि के निरीक्षण के लिए रखे गए) की ओर से अनीति होने पर किस प्रकार सरकार से फ़रियाद की जा सकती है। इस रचना के, सब के सब कई-कई हज़ार प्रतियों के, कई संस्करण हो चुके हैं।

११. 'रेखा गणित'—रेखाओं की गणना।[1] आगरे से हिन्दी में प्रकाशित, इस रचना के तीन भाग हैं। लगभग सौ पृष्ठों के, पहले भाग में यूक्लिड की पहली और दूसरी पुस्तक हैं; १४४ पृष्ठों के, दूसरे भाग में यूक्लिड की तीसरी और चौथी पुस्तक हैं, आगरा, १८५६, छोटा चौपेजी। तीसरे भाग में छठी पुस्तक है। इस पुस्तक में प्रत्येक परिभाषा पाठ रूप में रख कर, उसके साथ व्याख्याएँ दी गई हैं। यह रचना, जिसके कई संस्करण हुए हैं, एच० एस० रीड (Reid), पं० श्री लाल और मुंशी मोहन लाल द्वारा हिन्दी बोली (dialecte) में लिखी गई है। मुंशी मोहन लाल की सहायता से, पंडित बंसीधर ने उसका उर्दू में अनुवाद किया है।[2]

१२. 'भारतवर्ष का वृत्तान्त' – (प्राचीन) भारत का इतिहास। ऐसा प्रतीत होता है, यह रचना संस्कृत के आधार पर श्री जॉन म्योर द्वारा निर्मित हुई और पं० श्री लाल द्वारा पहले गद्य में, फिर पद्य में, अनूदित हुई।

'भारतवर्ष का इतिहास' शीर्षक के अंतर्गत एक गद्य रूपांतर आगरे से भी प्रकाशित हुआ है, और कहा जाता है कि यह रचना बंसीधर कृत उर्दू 'तवारीख़' या 'तारीख़-इ हिन्दी'

---

[1] पूरा शीर्षक है—'रेखागणित सिद्धि फलोदय', और अँगरेज़ी में 'Geometrical Exercises'।

[2] इन लेखकों से संबंधित लेख देखिए

का अनुवाद है।[1] 'सिविल सर्विस' की हिन्दी परीक्षाओं के लिए पाठ्य-पुस्तकों में से वह एक है।

१३. 'तस्लीसुल्लुगात' – एक विषय से संबंधित तीन प्रकार के कोष, लगभग २०० पृष्ठों की, आगरे से मुद्रित, एक जिल्द में, तीन कॉलमों में, उर्दू, हिन्दी और अँगरेज़ी शब्द-कोष। यह ग्रंथ पंडितद्वय श्री लाल और बंसीधर, तथा मुंशी चिरंजी लाल की सहायता से एच० एस० रीड द्वारा लिखा गया है।

१४. 'समय प्रबोध'—पंचांग की पुस्तक—पंचांग, समय विभाजन, सवतों, मासों, ऋतुओं आदि की हिन्दी में व्याख्या।[2] यह रचना 'मिरातु स्सात'—समय का दर्पण – शीर्षक के अन्तर्गत उर्दू में रूपान्तरित हुई है।

१५. 'बीज गणित' – बीजगणित के प्राथमिक सिद्धान्त, दो भागों में, मोहन लाल की सहकारिता में संस्कृत से हिन्दी में अनूदित।

१६. 'लीलावती', भास्कराचार्य की इसी शीर्षक की गणित पर संस्कृत-रचना का हिन्दी-रूपान्तर। वह १८५१ में सिकन्दरा (आगरा) से मुद्रित हुई है।[3]

मेरे पास इस रचना का १८६४ में मेरठ से प्रकाशित एक संस्करण है जिस पर लेखक का नाम नहीं दिया हुआ, १६-१६ पंक्तियों के १६२ बहुत छोटे चौपेजी पृष्ठ।

१७. 'प्रश्न (Prascham) मंजूषा', भारतीय विद्यार्थियों के लिए एक प्रकार की पुस्तक, अर्थात् पाठ्य-क्रम में पढ़ी ज़ा चुकी हिन्दी

---

[1] इन पर लेख देखिए

[2] द्वितीय संस्करण १८५६ में इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ है, ८० अत्यन्त छोटे चौपेजी पृष्ठ।

[3] इसी रचना के अन्य रूपान्तरों के संबंध में निर्देश मुहम्मद हुसेन और शिव चन्द्र पर लेखों में देखिए।

पुस्तकों पर विद्यार्थियों से पूछे जाने वाले प्रश्नों की माला। ४० पृष्ठों के लगभग की यह एक पुस्तक है जिसका १८५२ में उल्लेख मिलता है।[1]

१८. 'भाषा चन्द्रोदय'—भाषा के चन्द्र का उदय, देशी लोगों के लाभार्थ हिन्दी व्याकरण ; आगरा, १८६०, १०३ अठपेजी पृष्ठ, 'कवायद उलमुबतदी' से अनूदित।

१९. 'बुदि विध्योद्यत' (viddhyodyat)—आदेश और शिक्षा के लाभ, हिन्दी में अनूदित और विवेचित, पद्य में संस्कृत वाक्यों का संग्रह, जिसके कई-कई हज़ार प्रतियों के कई संस्करण हो चुके हैं। मेरे पास, बनारस से मुद्रित, चौथे संस्करण की एक प्रति है, १९ अत्यन्त छोटे चौपेजी पृष्ठ।

२०. 'दिहाली (Dihâlî) दीप'—नापों की ज्वाल, अर्थात् हिन्दी और उर्दू में, नापों और तोलों को लिखित रूप में बताने की विधि।

२१. 'ज़मींदार के बेटे बुध सिंह का वृत्तांत'—धान (Dhân) राम जमींदार के बेटे, बुध सिंह के जीवन का विवरण।

२२. 'आराम'—बाग—हिन्दी में नैतिक दोहे और क़िस्से।

२३. 'बिधांकुर' या 'विद्यांकुर'—ज्ञान-संबंधी प्राथमिक बातें, रचना जिसका संबंध भौतिक जगत के तथ्यों, तारों तथा सौर जगत्, गर्मी, प्रकाश, वातावरण, पाला, बादल, पशु, बनस्पति और खनिज जगत् से है। यह रचना जो ज्ञान का संक्षिप्त कोष है, और जो कहा जाता है बंसीधर कृत 'हकायक उलमौजूदात' शीर्षक उर्दू रचना का अनुवाद है, वास्तव में 'भूगोल वृत्तांत' और बाबू शिव प्रसाद कृत 'मालूमात' का संशोधित रूप है। ये रचनाएँ चैम्बर्स कृत 'Rudiments of Knowledge,

[1] 'रिपोर्ट ऑन इन्डिजेनस एजूकेशन', आगरा, १८५२, पृ० २१८

introduction to the Sciences' के आधार पर कुछ और बातें जोड़ कर एक ही साथ रखी गई हैं ; रुड़की, १८५८, ६६ अठपेजी पृष्ठ ; लाहौर, १८६३। १८६१ का उसका एक और पहला संस्करण है, २३-२३ पंक्तियों के ८४ अठपेजी पृष्ठ।

२४. 'खेत कर्म'—खेत के काम, (उर्दू में) अनुवाद के अनुकरण पर रचना जिसमें उनका भी भाग है, और जो १८५० में सिकन्दरा से मुद्रित हुई है ; ५५ अठपेजी पृष्ठ।[1]

२५. 'शाला' या 'साला पद्धति'—(स्कूलों की) कक्षाओं पर पुस्तक, 'Directions to teachers' या 'Teacher's Guide' या 'On teaching' ; आगरा, १८५२, ४४ बारहपेजी पृष्ठ[2] ; तृतीय संस्करण, १८५६, अत्यन्त छोटा चौपेजी। यह रचना 'शरीउत्तालीम'—शिक्षा का मार्ग—का हिन्दी रूपान्तर है।[3]

२६. 'धरम सिंह शिवबंसपुर के लंबरदार का वृतान्त'—शिवबंसपुर के लंबरदार धरम सिंह की कथा, हिन्दी में ; इलाहाबाद, १८६८, १४ छोटे अठपेजी पृष्ठ।

श्रुतगोपाल-दास[4]

ये कबीर के प्रथम शिष्य थे। उनके द्वारा 'सुख निधान' का संपादन बताया जाता है, रचना जिसका उल्लेख कबीर वाले लेख में हो चुका है। इस पुस्तक में यह महान् सुधारक अपने को धर्म-दास के प्रति संबोधित करते हुए माना गया है। इस रचना में कबीर के सिद्धान्तों का प्रतिपादन पाया जाता है। स्वर्गीय विद्वान् श्री विलसन ने 'एशियाटिक रिसर्चेज़' की जिल्द १६, पृष्ठ ७० और

---

[1] तमीज़ पर लेख भी देखिए

[2] 'आगरा गवर्नमेंट गज़ट', पहली जून, १८५५ का अंक

[3] चिरंजी लाल पर लेख देखिए

[4] भा० श्रुतगोपाल-दास—'विष्णु (वेदों के रक्षक) का दास'

उसके बाद के पृष्ठों, में उसका सुन्दर ढंग से विश्लेषण किया है, और मैं उस ओर पाठक का ध्यान आकृष्ट किए बिना नहीं रह सकता।

श्वेताम्बर[1]

संभवतः एक जैन कवि हैं, जिनका उपनाम 'बरकवि'—चुना हुआ कवि, श्रेष्ठ कवि—है। जैनों के प्रधान संतों में से एक पर, हिन्दुई काव्य, 'ऋषभ चरित्र'—ऋषभ की कथा—उनकी देन है, जिसकी यूरोप में एक हस्तलिखित प्रति होने की सूचना कर्नल टॉड ने दी है।

सदल मिश्र[2] (पंडित)

'नासिकोपाख्यानम्'—नासिका की कथा—या 'चन्द्रावती' (चन्द्रमा के समान) शीर्षक संस्कृत की कथा के ब्रज-भाखा गद्य में एक अनुवाद के रचयिता हैं। अनुवाद का यह शीर्षक उन्होंने १८६० संवत् (१८०४) में, गिलक्राइस्ट के संरक्षण में, रखा, और जिसमें १३-१३ पंक्तियों के ११८ पृष्ठ हैं। फ़ोर्ट विलियम के पुस्तकालय में इस ग्रन्थ की जो हस्तलिखित प्रति है वह वही है जो कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है, जिसमें, जैसा कि ज्ञात है, पहली जोड़ दी गई है।

सदा सुख लाल[3] (मुंशी)

आगरे के...(उर्दू रचनाएँ)

८. वे हिन्दी और उर्दू दो बोलियों तथा दो विभिन्न रूपों और

---

१ '(श्वेत) वस्त्र धारण करने वाला'। जैन अपने, को दो हिस्सों में बाँटते हैं—'दिगंबर' (बिल्कुल नग्न रहना) और ('श्वेतांबर' 'श्वेत वस्त्र धारण करने वाले')।

२ यह शब्द, जो वास्तव में 'मिश्र' लिखा जाना चाहिए, कुछ ब्राह्मणों और साथ ही हिन्दू चिकित्सकों की एक उपाधि है।

३ भा० 'सदैव का सुख'

शीर्षकों के अंतर्गत प्रकाशित होने वाले एक साप्ताहिक पत्र के संपादक और लेखक हैं। 'बुद्धि प्रकाश'—बुद्धि का प्रकाश—और 'नूर-उल् अबसार'—देखने का प्रकाश—शीर्षक इन दो पत्रों को अँगरेज़ी गवर्नमेंट से प्रोत्साहन प्राप्त होता है। भारतीय स्कूलों के इन्सपेक्टर-जनरल, श्री एच० एस० रीड (Reid) की इच्छानुसार इन पत्रों में, ताज़े समाचारों के अतिरिक्त, इतिहास, भूगोल शिक्षा आदि पर अँगरेज़ी से अनूदित छोटे-छोटे लेख भी प्रकाशित होते हैं। अन्य के अतिरिक्त उसमें 'Abercrombie's Intellectual powers' से उद्धरण निकले हैं।

मैं नहीं जानता यदि ये वे ही पत्र हैं जो इस समय इलाहाबाद से 'आइना-इ इल्म'—विज्ञान का दर्पण – उर्दू में संपादित मासिक पत्र, और 'वृत्तांत दर्पण' – वर्णनों का दर्पण – हिन्दी में, तथा मासिक ही, शीर्षकों के अंतर्गत प्रकाशित होते हैं, जिनका उल्लेख उत्तर-पश्चिम प्रदेश के प्रकाशनों पर श्री केम्पसन (Kempson) की २० फ़रवरी की पिछली रिपोर्ट, संख्या ४६ तथा ४७, में हुआ है।

× × ×

१०. उन्होंने अँगरेज़ी 'Ganges Canal' का उर्दू में 'गंगा की नहर का मुख़्तसर बयान' शीर्षक के अंतर्गत उर्दू में अनुवाद किया, २४ चौपेजी पृष्ठ ; और उसी का, हिन्दी में 'गंगा की नहर का संक्षेप वर्णन' के समान शीर्षक के अंतर्गत।

उसका हिन्दी, उर्दू और अँगरेज़ी में एक चौपेजी संस्करण भी है, जो रुड़की[1] से अँगरेज़ी के 'Brief account of the Ganges Canal' शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित हुई है।

---

[1] इस विषय पर 'रिव्यू द लौरिएँत (Oriental Review), जून १८५५ की संख्या, पृष्ठ ४५८, में दिया गया नोट देखिए।

सफ़दर अली (मौलवी और सैयद)

जबलपुर के, मुसलमान विद्वान् जिन्होंने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया, और जो आज कल जबलपुर ज़िले के स्कूलों के इन्सपेक्टर हैं, रचयिता हैं :

१. 'अक्षरावली' के, अथवा हिन्दी के अक्षर लिखने की छोटी-सी पुस्तक। जबलपुर, १८६८, ३८ अठपेजी पृष्ठ।

× (उर्दू रचनाएँ) ×

समन[१] लाल

'ज्ञान गश्त', कायस्थ जाति का विवरण, स्वर्गीय सर एच० इलियट को समर्पित, और जिसमें ११-११ पंक्तियों के १३२ पृष्ठ हैं, के रचयिता हैं।[२]

समर सिंह[३] (राजा)

'पुष्पदन्त'[४] शीर्षक, 'महिम्न स्तोत्र'[५] के हिन्दी अनुवाद के रचयिता हैं। संस्कृत मूल, जो प्रकाशित हो चुका है, का शीर्षक 'महिम्न स्तव'[६] है। उसमें शिव की स्तुतियाँ दी गई हैं, और वह शैव

---

१ भा० 'बराबर, समान' और 'बराबरो' आदि

२ 'जर्नल ऑव दि एशियाटिक सोसायटी ऑव बेंगाल', जि० २३, पृ० २५६

३ भा० 'युद्ध का शेर'

४ अर्थात् 'फूलों के दाँत,' शीर्षक जिसे पहले संस्करण, पृ० ४०५, में भूल से एक हिन्दी लेखक का नाम बताया गया है।

५ (शिव संबंधित) 'गौरव का गान'

६ हिन्दी अनुवाद के साथ 'सटीक महिम्न स्तव' शीर्षक के अंतर्गत एक संस्कृत संस्करण भी है। कलकत्ता, १३ अठपेजी पृष्ठ। जे० लौंग, 'डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग' (Descrip. Catal.), पृ० १७, १८६७।

संप्रदाय संबंधी उन अल्पसंख्यक रचनाओं में से है जो भारतवासियों की आधुनिक भाषाओं में रूपान्तरित हुई हैं, क्योंकि जैसा कि सब लोग जानते हैं कि वैष्णव ही थे जिन्होंने हिन्दी में लिखा, जब कि शैवों ने संस्कृत में रचनाएँ कीं। स्वर्गीय एच० फॉश (Fauche) ने अपने 'Tétrade' (पहली जिल्द, ३६३ तथा बाद के पृष्ठ) में उसका फ्रेंच अनुवाद दिया है। उसका एक अनुवाद बँगला में—भाषा जिसके अक्षरों को बंगाल के शैव, हर हालत में, पसन्द करते हैं, यहाँ तक कि हिन्दी को बँगला अक्षरों में लिखने की हद तक—प्रकाशित हुआ है। बँगला अनुवाद का शीर्षक है 'महिम्न स्तव'। ईसाई धर्म स्वीकार करने वाले हिन्दू, रेवरेंड के० एम० बैनर्जी द्वारा किया गया इस रचना का एक अँगरेजी अनुवाद भी है।[१]

सरोधा-प्रसाद[२] (बाबू)

इलाहाबाद में होने वाले वार्षिक सम्मिलन के गुण-दोषों पर पुस्तक 'माघ-मेला'—जनवरी-फ़रवरी के महीने में होने वाला तीर्थयात्रियों का मेला—के रचयिता हैं; इलाहाबाद, १८६८, ३२ अठपेजी पृष्ठ।

सलीम सिंह

कुम्भ राणा के भतीजे, अपने चाचा और चाची मीराबाई की भाँति, हिन्दी के अत्यधिक प्रसिद्ध हिन्दी कवियों में गिने जाते हैं।[3]

---

१ 'जर्नल ऑव दि एशियाटिक सोसायटी ऑव बेंगाल' में, किन्तु आंशिक रूप में प्रकाशित, १३ अठपेजी पृष्ठ। जे० लौंग, 'डेस्क्रिप्टिव कैटेलौग' (Descript. Catal.), १८६७।

२ भा० 'दुर्गा' या 'सरस्वती' का दिया हुआ

3 टॉड, 'एशियाटिक जर्नल,' अक्तूबर १२८ १८४०, पृ०

सीतल-प्रसाद[1] तिवारी (पंडित)

बनारस के, 'Synopsis of Science' के हिन्दी अनुवाद के रचयिता हैं, जिसका शीर्षक उन्होंने 'सिद्धान्त संग्रह'—संक्षेप में सत्य—रखा है, और जो बनारस के, प्रोफ़ेसर फ़िट्ज़-एड्वर्ड हॉल (Fitz-Edward Hall) के उत्कृष्ट निरीक्षण में प्रकाशित हुई है। १८५५ में आगरे से मुद्रित, इस ग्रन्थ की पहली जिल्द में, ७२ पृष्ठों का एक भाग अँगरेज़ी में, तथा ६६ अठपेजी पृष्ठों का, देवनागरी अक्षरों में हिन्दी अनुवाद, है। इस कृति का उद्देश्य भारतीय ज्ञान-विज्ञान, विशेषतः 'न्याय' कहे जाने वाले दर्शन, और यूरोपीय ज्ञान-विज्ञान का समन्वय उपस्थित करना है।

'कवि बचन सुधा' में संस्कृत से हिन्दी में अनूदित नाटकों के अनुवाद में ये पंडित बाबू हरि चन्द्र के सहायक रहे हैं।

सीता राम[2]

चिकित्सा-संबंधी हिन्दी-ग्रंथ, 'दिल लगन'—हृदय का प्रेम—के रचयिता हैं, सर्वप्रथम १८६५ में मेरठ से प्रकाशित, ८६ अठपेजी पृष्ठ; तत्पश्चात् १८६८ में दिल्ली से, ८४ अठपेजी पृष्ठ।

सुंदर या सुंदर-दास[3]

हिंदुई के प्रसिद्ध शृंगारी कवि जिन्हें 'कविराज' या 'महाकवि' की शानदार उपाधि दी गई। उन्हें 'कवीश्वर', अर्थात् कवियों के सिरताज, भी कहा जाता है। वे शाहजहाँ के शासन-काल में हुए, और इसी शहंशाह, जिसकी कृपा का उन्होंने संवत् १६८८ (१६३२

---

[1] भा० '(महान् जैन संत) सीतल का दिया हुआ'

[2] भा० 'राम और उनकी अर्द्धांगिनी सीता के नामों का योग'

[3] भा० सुंदर दास—काम (प्रेम) का दास। मेरे 'रुदीमाँ ऐंदुई' (हिन्दुई के प्राथमिक सिद्धान्त) की भूमिका देखिए।

ईसवी सन्) में लिखित 'सुंदर सिंगार' या 'शृंगार',[१] अर्थात् प्रेम का शृंगार, रचना की भूमिका में गुणगान किया है, के आश्रय में अपनी रचनाओं का निर्माण किया। ऐसा प्रतीत होता है कि मतिराम की रचनाओं की भाँति इस रचना में स्वभाव, अवस्था तथा अन्य परिस्थितियों के अनुसार सुव्यवस्थित ढंग से विभाजित, और प्राचीन कवियों की भाँति गंभीर और विस्तृत सूक्ष्म रूप में तर्क-संमत लक्षणों सहित नायक और नायिकाओं का वर्णन है। ये कविताएँ न तो मनोरंजक हैं और न विनोदपूर्ण, किन्तु सरल हैं, और जातीय रुचि के अनुसार लिखी गईं प्रतीत होती हैं।[२] श्री विल्सन के सुन्दर संग्रह में इस रचना की एक हस्तलिखित प्रति थी। उसकी 'पोथी सुन्दर सिंगार' शीर्षक एक और पोथी कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में भी है; किन्तु इस पुस्तकालय की पुस्तकों के सूचीपत्र में रचयिता का केवल 'महाकवि' उपनाम से उल्लेख है। हीरा चंद ने उसे अपने 'ब्रज-भाखा काव्य संग्रह'—हिन्दी कविता का संग्रह—शीर्षक ग्रंथ के दूसरे भाग में बंबई से १८६४ में प्रकाशित किया है।[३] मैं नहीं जानता कि फ़रज़ाद कुली (Farzâda Culî) के सूचीपत्र में निर्दिष्ट 'पोथी सुन्दर बिद्या',[४] अर्थात् सुन्दर ज्ञान की पुस्तक, शीर्षक रचना के रचयिता सुन्दर-दास हैं।

सम्राट् शाहजहाँ की आज्ञा से संस्कृत से अनूदित 'सिंहासन बत्तीसी',[५] अर्थात् सिंहासन की बत्तीस कहानियाँ, रचना का ब्रजभाषा रूपान्तर भी इन्हीं सुन्दर ने किया। मेरे विचार से यह वही

---

१ सुंदर सिंगार, या संस्कृत हिज्जे के अनुसार 'शृंगार'

२ 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० ७, पृ० २२०, और जि० १०, पृ० ४२०

३ देखिए हीरा चंद पर लेख

४ 'पोथी सुन्दर बिद्या' (फ़ारसी लिपि से)

५ देखिए लल्लू पर लेख

रूपान्तर है जिसका वॉर्ड ने अपने हिन्दुओं के साहित्य के इतिहास[1] में 'सिंगासन बत्रिशी' शीर्षक के अंतर्गत उल्लेख किया है। इस रचना के उर्दू रूपान्तर सुन्दर की रचना के आधार पर किए गए हैं।

सुन्दर दास एक दर्शन संबंधी पुस्तक 'ज्ञान समुद्र'[2], अर्थात् ज्ञान का समुद्र, के रचयिता भी हैं ; बनारस, १८६६, ८४ बड़े अठपेजी पृष्ठ ; उसका तथा 'सुंदर विलास' – सुन्दर आनन्द—या—सुन्दर का विलास—का एक पहले का संस्करण है।

सुंदर-दास

दाऊद के शिष्य और करीम, जिन्होंने उनकी कविताओं के उदाहरण दिए हैं, द्वारा उल्लिखित, एक दूसरे हिन्दुस्तानी-लेखक का नाम प्रतीत होता है।

एक और गवैए अथवा रबाबी सुन्दर-दास का उल्लेख मिलता है, जिनकी धार्मिक कविताएँ 'आदि ग्रंथ' में सम्मिलित हैं।

सुंदर या सुन्दर-लाल[3]

हिन्दी या कहना चाहिए हिन्दुई में, मथुरा के बाल गोविन्द के निरीक्षण में, आगरे से फ़ारसी अक्षरों में मुद्रित, १७-१७ पंक्तियों के ११२ अठपेजी पृष्ठ, आठ-आठ पंक्तियों के छंदों में काव्य, 'बरत महातम'—(हिन्दुओं के) व्रतों की महिमा—के रचयिता हैं।

सुख-दयाल[4] (मुंशी)

जुडीशल-कमीशन के न्यायालय के उपाध्यक्ष, देवनागरी

---

[1] जि० २, पृ० ४८०

[2] ज्ञान समुद्र। 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० ३०५ ; मैकेन्ज़ी, जि० २, पृ० १०६

[3] भा० 'सुन्दर लगने वाला प्रिय'

[4] भा० 'सुख देने वाला दयालु'

अक्षरों में लाहौर से १८५६ में मुद्रित, ५० आयताकार अठपेजी पृष्ठों की, 'व्यापारियों की पुस्तक'—महाजनों और व्यापारियों की पुस्तक—के रचयिता हैं, जिसका स्वयं लेखक ने 'व्यापारियों दी पुस्तक' के समान शीर्षक के अंतर्गत पंजाब की ख़ास बोली ('पंजाबी बोली') और फ़ारसी अक्षरों में अनुवाद प्रस्तुत किया है, १८५६ में लाहौर से ही लीथो में छपी, आयताकार अठ-पेजी।

सुखदेव[1]

हिन्दू लेखक जिनका आविर्भाव १६ वीं शताब्दी में इलाहाबाद प्रान्त के पुराने नगर ओरछा (Orscha) के एक राजा के आश्रय में हुआ। मर्दन नामक इस राजा के आश्रय में ही इस कवि ने साहित्य-सेवा की। 'रसार्णा या 'रसार्णव[2]' शीर्षक पद्यात्मक रचना उनकी देन है, जो, जैसा कि उसके शीर्षक से प्रकट है, काव्यात्मक और नाटकीय रसों की व्याख्या करती है। प्रोफ़ेसर विल्सन के पास अपने सुन्दर संग्रह में नागरी अक्षरों में उसकी एक प्रति है। इस प्रसिद्ध रचयिता के संबंध में मैंने जो बातें यहाँ दी हैं उनके लिए मैं उस विद्वान् भारतीयविद्याविशारद का अनुगृहीत हूँ।

क्या यह रचयिता शुकदेव ही है ?[3]

---

[1] श्री विल्सन वाली हस्तलिखित प्रति में यह नाम 'शुषदेव' लिखा हुआ है; किन्तु मेरा विचार है कि 'शुष' 'सुख' के लिए है जिसका अर्थ है, 'आराम', 'शांति' 'प्रसन्नता'। जहाँ तक 'देव' से संबंध है, यह एक आदरसूचक उपाधि है; वह हिन्दुओं के नामों की तरह, मुसलमानों के नामों के साथ लगने वाले 'साहब' के बराबर है।

[2] रसर्नव

[3] द्वितीय संस्करण में यह 'शुकदेव' के अन्तर्गत है।—अनु०

सुदामा[1]

का स्वर्गीय एच० एच० विल्सन ने उन पवित्र कवियों में उल्लेख किया है जिनकी रचनाएँ सिक्खों के 'शंभु ग्रन्थ' नामक ग्रन्थ में संग्रहकर्त्ताओं द्वारा संग्रहीत की गई हैं। यह संग्रह बनारस के 'सिक्ख संगत' नामक उपासना-गृह में सावधानी के साथ सुरक्षित है।

सुदामा जी[2]

१७८६ शक संवत् (१८६४) में आगरे से प्रकाशित सात हिन्दी कविताओं के अत्यन्त छोटे चौपेजी, संग्रह में सुदामा जी कृत 'सुदामा जी की बाराखड़ी' (अथवा भारतीय वर्णमाला के बारह स्वरों की व्याख्या) पाई जाती है, दो भागों में, प्रत्येक के आठ पृष्ठ, आगरा १८६५; 'Tales of Sudama' नामक अँगरेज़ी शीर्षक के अंतर्गत, आगरा से, १८६४ में, अलग मुद्रित।

अन्य रचनाओं के शीर्षक इस प्रकार हैं :

'सूर्य पुराण'—सूर्य का पुराण ;

'गणेश पुराण'—(बुद्धि के देवता) गणेश का पुराण ;

'स्नेह लीला'—प्रेम की लीला ;

'दान लीला'—दान की लीला (कृष्ण-क्रीड़ा) १६ पृष्ठ ;

'करुणा बत्तीसी'– करुणा संबंधी बत्तीस दोहे ;

'नरसी मेहता की हुंडी (hundî)'—नरसी मेहता का मिट्टी का पात्र।

---

१ भा० 'इन्द्र के हाथी का नाम' और 'प्रेम सागर' में वर्णित एक रोचक कथा का दरिद्र ब्राह्मण नायक

२ 'जी' या 'ज्यू' भारतीय शब्द हैं जिनका अर्थ है 'आत्मा' और जो व्यक्ति-वाचक नामों के पीछे 'साहिब' की भाँति आदरसूचक उपाधि के रूप में लगाए जाते हैं और जो अँगरेज़ी Esq. (Esquire) के बराबर है।

सुरत कबीश्वर[1]

ने मुहम्मद शाह के राजत्व-काल में, और जयपुर-नरेश जैसिंह सिवई, वही जिन्होंने फ्रांस और पुर्तगाल के राजाओं को कुछ विद्वान् भेजने के लिए लिखा था और जिन्होंने 'यूक्लिड' (ज्यामिति) के मूल सिद्धान्तों का संस्कृत में अनुवाद किया,[2] की आज्ञा से 'बैताल पचीसी'[3] का ब्रजभाषा में अनुवाद किया। 'वेताल पञ्चविंशति' शीर्षक संस्कृत मूल के रचयिता शिव-दास हैं; किन्तु वह स्पष्टतः अप्राप्य है, क्योंकि परिश्रमी हिन्दू काली कृष्ण ने इस रचना का अँगरेज़ी अनुवाद ब्रजभाषा पाठ के आधार पर किया है।[4] कथा-कहानियों का यह संग्रह 'वृहत् कथा', या बड़ी कथा, शीर्षक एक प्राचीन संस्कृत कथा-कहानियों के अधिक बड़े और अत्यन्त प्रसिद्ध संग्रह का एक भाग ही है। 'सिंहासन बत्तीसी' (संस्कृत में ''सिंहासन द्वात्रिंशति') अर्थात् जादुई सिंहासन की बत्तीस कहानियाँ, और 'हितोपदेश' के बड़े भाग, और 'पंचतंत्र'[5] का संबंध भी उसी से है। वृहत् संग्रह सोमदेव[6] कृत है; उसका संकलन, ऐसा प्रतीत होता है, हमारे सन् की १२ वीं शताब्दी में हुआ। इस विशाल संग्रह का एक संक्षिप्त रूप विद्यमान है:

---

१ अर्थात् 'कवियों का राजा', यही मुसलमानों का 'मलिक उस्शुअरा' है।

२ 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १०, पृ० ६

३ लल्लू पर लेख देखिए

४ 'बैताल पचीसी', अथवा बैताल की पचीस कथाएँ, ब्रजभाषा से अँगरेज़ी में अनूदित, कलकता, १८३४, अठपेजी।

५ यूजेन बर्नौफ़ (Eugène Burnouf), 'जूर्नां दै सावाँ' (Journal des Savants) १८३३, पृ० २३६। 'वृहत् कथा' का विश्लेषण 'कलकत्ता मन्थली मैगैज़ीन', वर्ष १८२४ और १८२५ में दिया गया है। यह विश्लेषण 'ब्लैकवुड्स एडिन्बरा मैगैज़ीन', जुलाई १८२५ के अंक, में उद्धृत है।

६ विल्सन कृत संस्कृत डिक्शनरी (कोष) के प्रथम संस्करण की भूमिका, पृ० xi

उसका शीर्षक है 'कथा सरित् सागर', अर्थात् कथाओं की नदियों का समुद्र।

मैं नहीं जानता यदि 'बैताल पचीसी' का सुरत द्वारा रूपान्तर वही है जिसका उल्लेख वॉर्ड ने, 'वेताल पचीसी' शीर्षक के अन्तर्गत, अपने हिन्दुओं के साहित्य, आदि का इतिहास, जि० २, पृष्ठ ४८०, में किया है।

इसके अतिरिक्त इस रचना के साथ-साथ 'सिंहासन बत्तीसी' के भी, जिसका अभी उल्लेख किया गया है, भारत की कई आधुनिक भाषाओं में रूपान्तर विद्यमान हैं। इस विषय पर मैंने 'जूर्ना दे सावाँ' (Journal des Savants, १८३६, पृष्ठ ४१४) में महाराजा काली कृष्ण की रचनाओं पर अपने लेख में जो कुछ कहा है वह देखिए।

'बैताल पचीसी' का संस्कृत मूल लुप्त नहीं हो गया। श्री लासेन (Lassen) ने अपने प्राथमिक संस्कृत संग्रह में संस्कृत और लेटिन में उसे प्रकाशित किया है। उसका एक कलकत्ते का १८३३ संवत् और १७३१ शक-संवत् का भी एक संस्करण है, छोटा चौपेजी, और १८१६ से वही, 'एशियाटिक जर्नल'[1] में प्रकाशित होने वाले 'बैताल पचीसी' के एक अनुवाद में, जो संस्कृत मूल से किया गया बताया गया है, किन्तु लोग उसके हिन्दी अनुवाद को ही अधिक पसन्द करते हैं, जो अधिक पूर्ण और अपेक्षा कृत अधिक अच्छी और लोकप्रिय शैली में मिलता है।

ट्यूबिन्गेन (Tubingen) के पुस्तकालय में 'सिंहासन बत्तीसी' की संस्कृत में एक हस्तलिखित प्रति है, जिसकी श्री रौथ (Roth) ने प्रतिलिपि ली है और 'जूर्ना एसियातीक' (Journal Asiatique) में उसका विवरण दिया है।[2]

[1] जि० २, पृ० २७ और जि० ४, पृ० २२०

[2] सितंबर और अक्तूबर, १८४५

मेरे निजी संग्रह में हिन्दी छन्दों और फ़ारसी अक्षरों में एक 'सिंहासन बत्तीसी' है, १५-१५ पंक्तियों के १२० छोटे चौपेजी पृष्ठ।

हिन्दी के आधार पर ही बँगला में 'बत्रिश सिंहासन' शीर्षक के अंतर्गत अनुवाद हुआ है।[1]

यह ज्ञात है कि इस संग्रह में संग्रहीत कहानियों का उद्देश्य हिन्दुओं के सुलेमान, बिक्रमाजीत (विक्रमादित्य) के सद्गुणों को प्रकाश में लाना, और यह प्रमाणित करना है कि उन गुणों की समता नहीं हो सकी। समय-समय पर किसी साधु, किसी ब्राह्मण, किसी विद्यार्थी, किसी पण्डित, किसी शत्रु के प्रति उसकी उदारता, उसका वैराग्य, आदि बातें उसमें मिलती हैं।

सूदन[2] कवि

१७४८ में लिखित, दो सौ से भी अधिक हिन्दुई-कवियों की एक प्रकार की जीवनियों 'सुजान चरित्र'[3]—अच्छे व्यक्तियों का विवरण—के रचयिता हैं।

एक हिन्दी ग्रन्थ का भी यही शीर्षक है और जिसमें हिन्दी छन्दों में, भरतपुर के वर्तमान राजा के पूर्वज सूरज मल द्वारा सलाबत ख़ाँ तथा अन्य अफ़गान सामन्तों, के विरुद्ध ठाने गए युद्धों का वर्णन है। यह ग्रन्थ राजा की आज्ञा से, १८५२ में 'भरतपुर सफ़दरी प्रेस' से छप चुका है।

सूर या सूर-दास[4]

मथुरा के प्रसिद्ध ब्राह्मण, कवि और संगीतज्ञ, बाबा रामदास,

---

[1] दे०, जे० लौंग (Long) 'कैटैलौग ऑव बेंगाली बुक्स', पृ० १०

[2] भा० 'प्रिय, अच्छा लगने वाला'

[3] क्या यह 'सुजान हजारा' ही तो नहीं है ?

[4] भा० 'सूर (सूर्य) का दास'

जो स्वयं संगीतज्ञ थे, के पुत्र किन्तु जो अक्रूर[१] के अवतार समझे जाते हैं। उनका जन्म १४५० शक-संवत् (१५२८ ई०) में हुआ तथा सोलहवीं शताब्दी उत्तरार्द्ध, और सत्रहवीं शताब्दी के प्रथम पच्चीस वर्षों में अकबर के राज्यान्तर्गत उनका उत्कर्ष हुआ। सूर-दास अंधे थे; उन्होंने वैष्णव फ़क़ीरों के एक पंथ की स्थापना की[२], जो उनके नाम के आधार पर 'सूरदासी' या 'सूरदास पंथी' कहे जाते हैं। वे अनेक लोकप्रिय गीतों,[३] विशेषतः हिन्दुई में, विभिन्न लंबाई के, सामान्यतः छोटे, धार्मिक भजनों के रचयिता हैं। इन गीतों की प्रथम पंक्ति में विषय संकेतित रहता है, और उसी की कविता के अंत में पुनरावृत्ति होती है। ये कविताएँ, जो साधारणतः विष्णु की प्रशंसा में हैं, जिसकी संख्या सवा लाख बताई जाती है, साधारणतः वैष्णव फ़क़ीरों द्वारा गाई जाती हैं। सूर-दास 'बिशन पद' (या 'विष्णु पद') के आविष्कर्त्ता हैं; विष्णु, जिनके प्रति उनकी अगाध भक्ति थी के उपलक्ष्य में एक प्रकार का पद। अंधे साधु, इस कवि के रचे हुए राधा-कृष्ण संबंधी भजन अपने वाद्य-यंत्रों पर गाते हैं।

उनकी कविताओं के संग्रह का, जो, विचित्र बात है, फ़ारसी अक्षरों में लिखा हुआ है,[४] शीर्षक 'सूर सागर'[५] या 'बाल लीला'[६]

---

१ कृष्ण के पितृव्य तथा मित्र।

२ 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १६, पृ० ४८

३ प्राइस ने 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' में हिन्दी के लोकप्रिय गीतों के रूप में उनके अनेक (गीत) उद्धृत किए हैं।

४ साथ ही, यह 'संगीत राग कल्पद्रुम' में देवनागरी अक्षरों में प्रकाशित हुआ है। कलकत्ते और बनारस के कुछ संस्करण हैं जिन पर अँगरेज़ी में 'Songs in praise of krischna' है।

५ अर्थात् सूर (दास) का सागर

६ इस संग्रह की हस्तलिखित प्रति में, जो ईस्ट इंडिया हाउस के पुस्तकालय में

है। यह ग़ज़ल की तरह की, और 'राग' शब्द का शीर्षक लिए हुए 'राग' या 'रागिनी',[1] के किसी एक विशेष नाम सहित, छोटी-छोटी कविताओं द्वारा निर्मित एक प्रकार का दीवान है। उर्दू कवियों के अनुकरण पर, कवि का नाम अंतिम पंक्ति में आता है। इस रचना की एक प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है, जिसे उसी पुस्तकालय के सूचीपत्र में (स्पष्टतः क्योंकि, गद्य

मिलता है, लाइडेन (Leyden) के सुंदर संग्रह की संख्या २०३२, पहला शीर्षक जिल्द के मुख पृष्ठ पर और अंत में पढ़ने को मिलता है, और दूसरा पहले पृष्ठ की पीठ पर लिखा हुआ है। दूसरा शीर्षक पेरिस के राजकीय पुस्तकालय में सुरक्षित इस संग्रह की दो हस्तलिखित प्रतियों पर पाया जाता है, अर्थात् : संख्या ८०, फ़ौंद जाँती (fonds Gentil), ११८० हिजरी में, सूरत (Surate) में प्रतिलिपि की गई हस्तलिखित प्रति, और फ़ौंद पोलिए (fonds Polier) की संख्या २। अंतिम पहली वाली से कहीं अधिक बड़ी है; वह उससे प्रधानतः भिन्न है। जाँती वाली की नक़ल एक मुसलमान द्वारा की गई है, जो इन पवित्र शब्दों से प्रारंभ होती है 'बिस्मिल्लाह उलरहमान अलरहीम'—'दयावान और क्षमाशील ईश्वर के नाम में'। इसके विपरीत पोलिए वाला 'श्री राधा माधो बहार' (फ़ारसी लिपि में)—'श्री राधा की मधुर क्रीड़ाएँ', शब्दों से प्रारंभ होती है। प्रारंभिक पृष्ठ पर पढ़ने को मिलता है : 'किताब सूर सागर तमाम राग दमियान ऐन अस्त' (फ़ारसी लिपि में) अर्थात् 'सूर सागर की किताब जिसमें सब राग हैं'। दुर्भाग्यवश उसके कई विभिन्न लिपिकार हैं, और वह कई अन्य हस्तलिखित प्रतियों से मिलकर बनी प्रतीत होता है। कुछ स्थानों पर पंक्तियों के बीच में फ़ारसी में टिप्पणी (notes) लिखी हुई है। उसकी समाप्ति 'भागवत' के एक अंश से हुई मालूम होती है। पहली संभवतः केवल कुछ चुने हुए रागों तक सीमित है। बाक़ी के मुझे दोनों प्रतियों में एक-से अंश नहीं मिले; यह आश्चर्य-जनक नहीं क्योंकि कहा जाता है कि सूर-दास ने सवा लाख पद लिखे। विल्सन, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १६, पृ० ४८।

[1] इस रचना में उल्लिखित अनेक राग या रागिनियों के नाम गिलक्राइस्ट द्वारा अपने 'ग्रैमर' (व्याकरण), २७६ तथा बाद के पृष्ठ, में दी गई उनकी सूची में नहीं मिलते। संभवतः इन रागों में से कुछ के विभिन्न पर्यायवाची नाम हैं; इसके अतिरिक्त संगीत राग-रागिनियों के विभाजन की कई पद्धतियाँ हैं।

की भाँति, पंक्तियाँ एक दूसरी के बाद बराबर लिखी गई हैं) गद्य में लिखी कहा गया है। इसी रचना का वॉर्ड[1] ने हिन्दी पुस्तकों के संबंध में उल्लेख किया है। वह, फ़ोलिओ आकार में, लखनऊ से, १८६४ में, काली चरन द्वारा प्रकाशित हुई है, और गिरिधर की टीका-सहित उसका पूर्वार्द्ध, 'सूर शतक पूरब अर्ध'—सूर के सौ (रागों) का पूर्वार्द्ध—शीर्षक के अंतर्गत, बाबू हरि चन्द्र द्वारा, बनारस ; १८६६, ६६ अठपेजी पृष्ठ।

मैं नहीं जानता बुंदेलखंड की बोली में 'रास लीला',[2] जिसका उल्लेख वॉर्ड ने भी सूर-दास कृत एक रचना के रूप में किया है, उसी संग्रह का दूसरा नाम है, अथवा एक अलग रचना है। मैं यह भी नहीं जानता कि कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी की पुस्तक-सूची में, संगीत पर पद्यबद्ध रचना के रूप में उल्लिखित, सूर-दास कृत, 'रिसाला-इ-राग' नामक पुस्तक वही रचना है। वॉर्ड ने तो 'सूर-दास कवित्व' (सूर-दास की कविता) पुस्तक का और उल्लेख किया है जिसे उन्होंने जैपुर की बोली में लिखा बताया है।[3]

अंत में 'नल दमयन्ती' या 'भाखा नल दमन',[4] या संक्षेप में 'क़िस्सा-इ नल दमन', अर्थात् 'नल और दमन'[5], संस्कृत में नल और दमयन्ती कहे जाने वाले, भारत के प्रसिद्ध चरित्रों, की कथा, शीर्षक दस पंक्तियों के छंद में एक बड़ा महाकाव्य, यदि उसे इस नाम

---

[1] 'हिन्दुओं का इतिहास, आदि', जि० २, पृ० ४८०

[2] 'हिन्दुओं का इतिहास, आदि', पृ० ४८१

[3] वही

[4] इन शब्दों का शाब्दिक अर्थ 'नल दमन' है, कथा में (भारत की कथा-संबंधी भाषा)।

[5] मेरे निजी संग्रह में, इस रचना की एक सुंदर प्रति है, सूरदास की रचनाओं की भाँति फ़ारसी अक्षरों में। वह दिल्ली में तैयार हुई थी, १७५२—१७५३ में, अहमदशाह के शासनान्तर्गत।

से पुकारा जा सकता है, सूर-दास कृत बताया जाता है। उसकी हस्तलिखित प्रतियाँ अत्यन्त दुर्लभ हैं, क्योंकि 'कबि बचन सुधा' में उसकी किसी प्रति का पता बताने वाले को सौ रुपए का पुरस्कार घोषित किया गया है। अकबर के मंत्री, अबुलफ़ज़ल, के भाई, फ़ैज़ी ने इसी पाठ से तो अपनी फ़ारसी कथा का अनुवाद नहीं किया जो उसी विषय से संबंधित है? क्योंकि 'आईने अकबरी' में उसे हिन्दुई से अनूदित रचना कहा गया है।[1] ईस्ट इंडिया हाउस के पुस्तकालय में 'क़िस्सा-इ नल ओ दमन' शीर्षक नल और दमन की एक और कथा है, जिसे संस्कृत से अनूदित कहा गया है। वह तीन सौ पृष्ठों की चौपेजी जिल्द है (सं० ४२३, फौंद लीडेन —Fonds Leyden)।

सूर-दास की कविताओं का रघुनाथ-दास द्वारा संकलित 'सूर रत्न' या 'सूर सागर रत्न'—सूर (-दास) के सागर के रत्न—शीर्षक एक संग्रह बनारस से १८६४ में प्रकाशित हुआ है; २७४ अठपेजी पृष्ठ।

आगरे से, छोटे १२ पेजी आकार का, एक 'बारामासा'—बारह महीने, तीन-तीन पंक्तियों के छः छंदों की कविता, मुद्रित हुई है, जो सूर-दास द्वारा लिखित है या कम-से-कम इस प्रसिद्ध कवि कृत बताई जाती है, जिसका चित्र इस प्रस्तुत पुस्तिका के अंतिम पृष्ठ पर सुशोभित है।

बाबू हरि चन्द्र ने 'कबि बचन सुधा' के अंक ६ में सूर-दास की जीवनी पद्य और गद्य में प्रकाशित की है।

सेन या सेना[2]

अपने व्यवसाय की दृष्टि से नाई, तथा वैष्णव संत, 'आदि ग्रंथ' के चौथे भाग में सम्मिलित हिन्दी कविताओं के रचयिता हैं।

---

[1] जि० १, पृ० १०४

[2] भा० 'शिकारी बाज़'

सेना पति[1]

२०-२० पंक्तियों के १६ अठपेजी पृष्ठों के, बाबू गोकुल चंद की देखरेख में बनारस से १८६८ में प्रकाशित, 'षट् ऋतु वर्णन'—वर्ष की छः ऋतुओं का हाल—के रचयिता हैं।

सोपन-देव या सोपन-दास[2]

ज्ञान-देव के मित्र, 'कवि चरित्र' में उल्लिखित हिन्दी रचयिता हैं, और जिनकी मृत्यु १२१६ शक-संवत् (१२६७-१२६८ ई०) में हुई। वे ब्रह्मा के अवतार माने जाते थे।

हमीर मल (सेठ)

हिन्दी में लिखित तथा १८५० में आगरे से मुद्रित जैन धर्म की व्याख्या करने वाली 'पोथी जैन मत्ति'—जैनों के ज्ञान की पुस्तक—शीर्षक रचना के रचयिता हैं।

हर गोविंद (उमेद लाल)

'कीर्तनावली'—प्रशंसाओं की अवली—शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित, विभिन्न रचयिताओं द्वारा रचित ईसाई धार्मिक हिन्दी कविताओं के संग्रह के संग्रहकर्ता हैं। उसका प्रथम संस्करण अहमदाबाद से प्रकाशित हुआ है, १८५६,१६ अठपेजी पृष्ठ। द्वितीय संस्करण के विषय में मुझे ज्ञात नहीं है; किन्तु तीसरा भी अहमदाबाद से, वैसी ही गुजराती कविताओं सहित, प्रकाशित हुआ है, १८६७, ११७ अठपेजी पृष्ठ।

---

१ भा० 'सेना का नायक'

२ 'सोपन' 'स्वप्न' के लिए प्रतीत होता है, और 'देव' एक आदरसूचक उपाधि है। इसलिए जहाँ तक 'सोपन-दास' से संबंध है, इस मिले हुए शब्द का अर्थ हुआ 'स्वप्न का दास'।

हर नारायण[1]

एक सामयिक कवि हैं जिनकी एक हिंदुस्तानी ग़ज़ल १३ मार्च, १८६६ के लाहौर के 'कोहेनूर' में पाई जाती है। 'भागवत' के ग्यारहवें स्कंध के फ़ारसी अक्षरों में हिन्दी अनुवाद, 'आनन्द सिंध'—आनन्द का समुद्र—शीर्षक रचना भी उन्हीं की है २७८ अठपेजी पृष्ठ; दिल्ली, १८६८।

हर राय जी[2]

वल्लभ के शिष्य, ने ब्रजभाखा में लिखी हैं :

१. सड़सठ पापों, अपने गुरु के सिद्धान्तानुसार, उनके प्रायश्चितों और उनके फलों, पर एक रचना। 'हिस्ट्री ऑव दि सैक्ट ऑव दि महाराजाज़' (महाराजों के संप्रदाय का इतिहास), पृष्ठ ८२, में उसके कुछ उद्धरण पाए जाते हैं।

२. 'पुष्टि प्रवाह मर्याद'—चलती रहने वाली वंशावली की शान—शीर्षक रचना पर एक टीका, जिसका एक उद्धरण उसी रचना, पृ० ८६, में पाया जाता है।

हरि चन्दर या हरिश्चन्द्र (बाबू)

बनारस के, गोपाल चन्द्र के पुत्र, अब तक अप्रकाशित, प्रसिद्ध हिन्दी कविताओं के प्रकाशन के मासिक संग्रह, और जिसकी प्रथम प्रति अगस्त, १८६७ में प्रकाशित हुई, 'हरि बचन सुधा'—कवियों के वचनों का अमृत—के संपादक हैं। ये मासिक संग्रह, जो प्रत्येक १६ बड़े अठपेजी पृष्ठ के होते हैं, बाद में जिल्दों के रूप में बँध जाते हैं। जो मुझे प्राप्त हुए हैं उनमें श्री देवदत्त द्वारा

---

[1] भा० 'शिव' और 'विष्णु'

[2] इस रचयिता के नाम के हिज्जे 'हरि राय जी' भी हैं; किन्तु जो हिज्जे मैंने लिखे हैं मुझे वे ही ठीक मालूम होते हैं।

रचित 'अष्ट जाम' या 'अष्ट याम'—आठों पहर (दिन के विभाग)—पूरी कविता है ; और दो अन्य कविताओं का एक-एक भाग है, पहली संपादक के पिता, गोपाल चन्द्र कृत 'भारती भूषण'—वाणी का भूषण—शीर्षक, और दूसरी 'उक्ति युक्ति रस-कौमुदी'—कहने के ढंग में रस की चाँदनी ;

'बलराम कथामृत'—बलराम के अवतार की सुधा ;

'रत्नावली नाटिका'—रत्नावली का नाटक ;

'नहुष नाटक'—नहुष का नाटक—गोपीजन वल्लभ कृत, गोपाल चन्द्र द्वारा दुहराया गया ;

'अमराग बाग'—गिरधर दास कृत, जो गोपाल चन्द्र कृत 'बाल कथामृत' के सिलसिले में प्रतीत होती है;

'प्रेम रतन'—प्रेम का रत्न—बाबू रतन कुँवर ;

'पावस कवित संग्रह'—वर्षा ऋतु पर हिन्दी कविताएँ, आदि ।

बाबू साहब ने बनारस में अपने घर पर हुए एक कवि सम्मेलन की बारह उर्दू ग़ज़लों को 'ग़ज़लियात' शीर्षक के अंतर्गत १८६८, १३-१३ पंक्तियों के १६ अठपेजी पृष्ठ; हिन्दी पद्यों में अनूदित चुने हुए अंशों द्वारा निर्मित, १८६६ के लिए एक सुन्दर 'Forget me Not' को; 'कार्तिक कर्म विधि'—कार्तिक महीने में किए जाने वाले कामों के करने की रीति—हिन्दी में; बनारस १८६८, ३१ अठपेजी पृष्ठ, को प्रकाशित किया है ।

२६ अक्तूबर, १८६७ के 'अवध अख़बार' में घोषित रचना, 'तशरीह उस्सज़ा,'—सज़ाओं का विश्लेषण—अर्थात् भारत में दी जाने वाले शारीरिक दण्डों की संक्षिप्त सूची, पेनल कोड के अनुसार पुलीस-नियम, आदि, के रचयिता पंडित हरि चंद भी शायद यही हों ।

हरि-दास[1]

एक हिन्दुई कवि हैं जिनका एक पद डब्ल्यू० प्राइस ने अपने 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' में लोकप्रिय गीतों में उद्धृत किया है।

हरि-बख़्श[2] (मुंशी)

ब्रजभाखा और देवनागरी अक्षरों में 'भक्तमाल' के एक संग्रह के रचयिता हैं, जो १८६७ में सहना (Sahnah), ज़िला गुड़गाँव के 'मनबा उल् उलूम'—ज्ञानों का स्रोत—छापेख़ाने में छप रहा था। २१ मार्च, १८६७ के मेरठ के 'अख़बार-इ आलम' की सूचना के अनुसार, यह रचना ६०० पृष्ठों की होगी।

हरि लाल (पंडित)

हिन्दी में लिखित तथा 'इँगलिस्तान का इतिहास' शीर्षक इंगलैंड के एक इतिहास के रचयिता हैं; आगरा, १८६०, १६६ अठपेजी पृष्ठ।

हरिवा[3]

एक हिन्दी कवि हैं जिनका एक पद डब्ल्यू० प्राइस ने अपने 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' में लोकप्रिय गीतों के संग्रह में दिया है।

हरि हर[4]

एक हिन्दू लेखक हैं जिनके नाम का मैं उल्लेख कर सकता हूँ।

---

[1] भा० 'हरि अर्थात् विष्णु का दास'

[2] भा० फा० 'विष्णु की देन'

[3] भा० या 'हरिवान' अर्थात् 'इन्द्र'

[4] भा० 'विष्णु और शिव'

हरी-नाथ

हरी-नाथ जी[1] 'पोथी शाह मुहम्मद शाही,'[2] अर्थात् मुहम्मद शाह का इतिहास, के रचयिता हैं जिसकी एक हस्तलिखित प्रति नं० ६६५१ ई 'अतिरिक्त हस्तलिखित ग्रंथ', पर 'ब्रिटिश म्यूज़ियम' में सुरक्षित है।

हलधर-दास[3]

तुलसी कृत रामायण' की बोली, ब्रज-भाखा कही जाने वाली हिन्दुई के छन्दों में, कृष्ण के भतीजे सुदामा की कथा, 'सुदामा चरित्र' शीर्षक काव्य के रचयिता हैं। १८६० संवत् (१८१२ ई०) में देवनागरी अक्षरों में मुद्रित उसका एक संस्करण उपलब्ध है, ६२ अठपेजी पृष्ठ, उसमें स्थान का उल्लेख नहीं है, किन्तु संभवतः कलकत्ते से प्रकाशित हुई है।[4] मौंट्गोमरी मार्टिन कृत 'ईस्टर्न इंडिया', जि० १, पृष्ठ ४८५, में इस रचना का उल्लेख किया गया है।

हीरा[5] चंद खान जी (कवि)

बम्बई के, रचयिता या संग्रहकर्ता हैं :

१. १८६३ और १८६४ में बम्बई से अठपेजी आकार में अलग-अलग प्रकाशित, दो भागों में, 'ब्रज-भाखा काव्य संग्रह' —

[1] हरीनाथ—हरीस्वामी (विष्णु)

[2] 'पोती शाह मुहम्मद शाही'

[3] भा० 'हलधर का दास'। इस शब्द के आधार पर, जिसका अर्थ है 'हल धारण करने वाले', कृष्ण के भाई, बलराम का नाम लिया जाता है, जो उनका उपनाम है।

[4] मेरे निजी संग्रह में इसकी एक प्रति है। इसी हिन्दी रचना का रेवरेंड जे० लांग के (Descript. Catal.) (डेसक्रिप्टिव कैटैलौग) में उल्लेख है, कलकत्ता, १८६७।

[5] भा० 'हीरा'

ब्रजभाषा की कविता का संग्रह – के ; पहले में ५४ पृष्ठ, और दूसरे में १२० पृष्ठ हैं। पहले भाग में नंददास कृत 'नाममंजरी' या 'नाम माला', और 'अनेकार्थ मंजरी', दूसरी 'नाम माला' – नामों की माला – शीर्षक दो कोष हैं। दूसरे भाग में प्रसिद्ध कवि सुन्दर कृत 'सुन्दर सिंगार', और स्वयं प्रस्तुत रचयिता की कविता, 'हीरा सिंगार' – हीरे का शृंगार हैं।[1]

२. 'श्री पिंगल दर्श' – पिंगल का दर्पण – ब्रज भाखा में, ३४२ अठपेजी पृष्ठ ; बम्बई, १८६५।

३. १८६५ में उन्होंने प्रायः 'रामायण' के रचयिता वाल्मीकि कृत कहे जाने वाले और 'योग वासिष्ठ' – योग (ईश्वर से योग) पर वासिष्ठ[2] के विचार – शीर्षक दार्शनिक काव्य के हिन्दी अनुवाद का संपादन किया, लम्बे फ़ोलिओ में सचित्र ५२६ पृष्ठ।

योग पूर्णतः 'तसव्वुफ़' है, अर्थात मुसलमान सुफ़ियों की पद्धति, अथवा उनका 'मारिफ़त'—ध्यान।[3] इसमें राम वसिष्ठ, विश्वामित्र तथा अन्य मुनियों से वार्तालाप करते हैं, और सांसारिक जीवन की वास्तविकता पर, सत्कर्मों, भक्ति-आदि की अच्छाइयों पर वाद-विवाद करते हैं।

---

[1] 'कैटैलौग ऑव नेटिव पब्लिकेशन्स इन दि बॉम्बे प्रेसीडेंसी' (बंम्बई प्रेसीडेंसी में देशी प्रकाशनों का सूचापत्र), १८६६, पृ० २२६

[2] ऐसा प्रतीत होता है कि इस रचना के अनुवाद भी हैं, जिनमें से एक छत्तीस भागों का है, जिसका उल्लेख मैकैन्ज़ी कलेक्शन', जि० २, पृष्ठ १०६ में हुआ है।

[3] इस सिद्धान्त पर, मेरा 'la Poésie philosophique et religieuse chez les Persans' (The Philosophical and religious poetry among Persians, ईरानियों का दार्शनिक और धार्मिक काव्य) शीर्षक मेरा विवरण (Memoir) देखिए।

यही बड़ी रचना छः प्रधान भागों या खण्डों में विभक्त है जिनमें शीर्षक तथा विवेचन की दृष्टि से निम्नलिखित विषय हैं :

१· 'वैराग्य' – तप;

२. 'मुमुक्षु'—इच्छा रहित साधु;

३. 'उत्पत्ति'—जन्म होना;

४· 'स्थिति'—कर्त्तव्य के अनुसार व्यवहार;

५. 'उपशम'—धैर्य;

६. 'निर्वाण'—मुक्ति, दो भागों में विभक्त है।

हीरामन[1]

लोकप्रिय गीतों के रचयिता हैं जिसका एक नमूना ब्राउटन कृत 'पौप्यूलर पोयट्री ऑव दि हिन्दूज़', पृ० ७७, में पाया जाता है।

हुकूमत[2] राय

कायस्थ जाति के एक प्रसिद्ध वैद्य हैं जिन्होंने अनेक दोहरे, कवित्त, तथा अन्य हिन्दी कविताए लिखी हैं। वे दिल्ली प्रान्त में अरीयाबाद के निवासी थे।...(उर्दू रचनाएँ)

हेमंत पन्त

एक यजुर्वेदीय ब्राह्मण थे, जो दक्खिन में देवगीर या दौलताबाद के निवासी थे, और जिनकी मृत्यु १२०० शक-संवत् में हुई। उनकी 'कवि चरित्र' में उल्लिखित 'लेखन पद्धति' – लिखने की रीति—शीर्षक हिन्दी रचना है।

---

[1] भा० 'तोता'·

[2] भा० 'शासन, आदेश'

[3] भा० 'भारतीय ऋतु'

परिशिष्ट १

[मूल के प्रथम संस्करण से]

छपी हुई और हस्तलिखित
हिन्दुई और हिन्दुस्तानी रचनाओं की सूची
जिनका उल्लेख ग्रन्थों सहित जीवनियों में नहीं है

[यह केवल हिंदुई रचनाओं की सूची दी गई है। तासी ने * चिन्हित ग्रंथों का उल्लेख द्वितीय संस्करण के परिशिष्ट के अतिरिक्त अंश में भी किया है—अनु०]

'अनेकार्थ मञ्जरी'। पर्यायवाची हिन्दुई शब्दों का कोष।

अठपेजी जिल्द कलकत्ते से छपी, किन्तु जिसकी मेरा विचार है, एक भी प्रति यूरोप में नहीं है।

'अर्थमेटिक', हिन्दुई में, रेव० एम्० टी० ऐडम कृत—कलकत्ता, १८०७, अठपेजी।

यह रचना स्कूल बुक सोसायटी नामक संस्था द्वारा प्रकाशित अनेक पुस्तकों में से एक है। लेखक की अन्य अनेक रचनाएँ मिलती हैं।

'अशार इ भाखा मुतर्जम्मन-इ अकसाम-इ राग', अर्थात् भारतीय संगीत के रागों पर भाखा में कविताएँ।

ईस्ट इन्डिया हाउस में हस्तलिखित ग्रंथ, फ़ौद जॉन्सन, नं० १६७७।

'आत्मानुशासन'—भाखा में जैन रचना ('एशियाटिक रिसर्चेज़,' ज० १७, पृ० २४४)। श्री विल्सन के पास उसकी एक प्रति है।

वह जिनसेन के शिष्य, गुणभद्र की संस्कृत या प्राकृत रचना का अनुवाद है।

विद्वान् श्री विल्सन के अनुसार, जैन रचनाएँ अधिकतर आधुनिक हैं। साधारणतः, उनकी रचना जैपुर में, जैसिंह और जगत सिंह के राज्यान्तर्गत, हुई है।

'आर्टिकिल्स ऑव वार', का संक्षेप, कर्कपैट्रिक और विल्किन्स द्वारा अँगरेजी, फ़ारसी और हिन्दुस्तानी में।

Evangelium Lucae in Linguam Indostanicam translatum à Benj. Schultzio, edidit Jo. Henr. Callenbergius. Halae Saxonum, 1749, in-12.

बेनजमिन शुल्ज़ एक अत्यन्त उत्साही प्रोटेस्टेंट मिशनरी थे, जो दक्खिन में रहे थे, और जिन्होंने भारतवर्ष के इस भाग की बोल-चाल की भाखा (valgar idiom) से भी अपने को परिचित कर लिया था। एक हिन्दुस्तानी व्याकरण, और, इसी भाषा में, पवित्र बाइबिल का अनुवाद उनकी देन हैं।

'उपदेश कथा और इंगलैंड की उपाख्यान चुम्बक' Steward's Historical Anecdotes, with a sketch of the History of England, and her connexion with India. रेवरें० डब्ल्यू० टी० ऐडम द्वारा अनूदित। ऐंग्लो-हिन्दवी।— कलकत्ता, कलकत्ता स्कूल बुक सोसायटी के प्रेस में छपी, १८२५, अठपेजी।

हिन्दुस्तानी में इस रचना का शीर्षक है : 'उपदेश कथा और इंगलैंडकी उपाख्यानका चुम्बक अर्थात् उपदेशपूर्ण कथाएँ और इंगलैंड के इतिहास से अवतरण'। इस अनुवाद की अन्य कई रचनाएँ हैं, जिनमें से एक उसी भाषा में व्याख्या सहित हिन्दी कोष है। उसका अन्यत्र उल्लेख किया जायगा।

'एकविंशति स्थान,' इक्कीस श्रेणियाँ।

जैन रचना, भाषा में 'एशियाटिक रिसर्चेज़,' जि० १७, पृ०,२४४।

'ओल्ड टेस्टामेंट', हिन्दुई में।

लशिंगटन, 'कलकत्ता इंसटीट्यूशन्स', अपेंडिक्स, पृ० ५ (vii)।

'कथाएँ', नागरी अक्षर – कलकत्ता।

*'कल्प केदार'।

शीर्षक जिसका अर्थ, मेरे विचार से, 'पवित्र आदेशों का क्षेत्र' है। यह एक तांत्रिक या तंत्र (एक प्रकार का जादू) संबंधी रचना है। वह भाखा में लिखी हुई है। श्री विल्सन के पास उसकी एक प्रति है।

'*कल्प सूत्र'।

जैन रचना जिसमें संसार के वास्तविक युग के अंतिम तीर्थंकर या जिन, महावीर, तथा अन्य तीर्थंकरों के जन्म और कार्यों की, उलटे क्रम से, अंतिम की पहले, कथा है; और साथ ही उनमें से अनेक के वंशजों और शिष्यों की, जैसे ऋषभ, नेमिनाथ और महावीर। महावीर अत्यन्त प्रसिद्ध जैन प्रचारक हैं। अनुमान किया जाता है कि वे ईसवी सन् से पूर्व छठी शताब्दी में, बिहार प्रान्त में रहते थे। ग्रंथ के अंत में जैन-धर्म मानने वालों के लिए कर्त्तव्यों का उल्लेख है (एच० एच० विल्सन, 'मैकेन्ज़ीज़ कैटैलौग,' जि० २, पृ० ११५ तथा 'संस्कृत डिक्शनरी')।

*'कवि प्रकाश'।

वॉर्ड द्वारा 'हिस्ट्री, लिट्रेचर, एट्सीटरा ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं का इतिहास, साहित्य आदि), जि० २, पृ० ४८२ में उल्लिखित कनौज की बोली में रचना।

*'कवि विद्या', कवि की विद्या ।

फ़रज़ाद के पुस्तकालय में हस्तलिखित पोथी ।

*'किताब-इ मंतर', मंत्र या जादू की किताब, हिन्दी में ।

छोटा फ़ालिओ, ईस्ट इंडिया हाउस पुस्तकालय में हस्तलिखित पोथी, नं० ४४१, लीडेन (Leyden) संग्रह ।

*'किताब हज़ार ध्रुपद', हज़ार ध्रुपदों की किताब ।

भारतीय संगीत पर अद्भुत पुस्तक (सर डब्ल्यू० आउज़्ले—W. Ouseley—का सूचीपत्र, नं० ६१६) ।

*'गज-सुकुमार-चरित्र' ।

भाषा में जैन रचना ('एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० २४५) ।

'गीमाला' (Gîmâlâ), भरतपुर के राजा के एक पंडित द्वारा हिन्दी में अनुवाद सहित ।

कलकत्ता की एशियाटिक सोसायटी का सूचीपत्र ।

*'गोलाध्या' ।

लशिंगटन, 'कलकत्ता इंस्टी०', परिशिष्ट ४० (xl) । संभवतः यह 'गोलाध्याय' (भूगोल संबंधी पाठ) होना चाहिए ।

'चंद्रावती' ।

फ़ोर्ट विलियम कॉलेज के पुस्तकालय की, नागरी लेख में, हिन्दी की हस्तलिखित पोथी । इस रचना की एक प्रति कलकत्ते की एशियाटिक सोसायटी में है; लेखक ने अपना नाम सदल मिश्र लिखा है ।

*'चतुर्दश गुणस्थान', चौदह गुणों की पुस्तक ।

जैनों के धार्मिक सिद्धान्तों पर भाषा में लिखा गया ग्रंथ (विलूसन, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० २४४) ।

*'चारण-रास'

जैपुर की बोली में रचना, वॉर्ड द्वारा उल्लिखित, 'हिस्ट्री', लिट्रे० एंट्सीटरा ऑव दि हिन्दूज़', (हिन्दुओं का इतिहास, साहित्य, आदि) जि० २, पृ० ४८१ ।

'छान्दोग्य उपनिषद्,' सामवेद के इस उपनिषद् का हिन्दी अनुवाद ।

मैकेन्ज़ी, सूचीपत्र, जि० २, पृष्ठ ११० ।

'ज़हरों का बयान' (Mineral Poisons), ईस्ट इंडिया कंपनी की नौकरी में सर्जन और नेटिव मेडिकल इंस्टीट्यूशन के सुपरिंटेंडेंट पी० ब्रेटन (Breton) द्वारा—गवर्नमेंट लीथोग्रैफ़िक प्रेस, १५ जुलाई, १८२६ ।

'बयान जहरों का' (फ़ारसी लिपि से) । जहरों की व्याख्या । इस पुस्तक के दो संस्करण हैं: एक फ़ारसी अक्षरों में, मुसलमानों के लिए, और जिसकी विशेषता इन शब्दों से है 'बिस्मिल्लाह उलरहमान अलरहीम,' दयालु और क्षमाशील ईश्वर को अर्पित, जिन्हें संग्रहकर्ता ने ग्रंथ के प्रारंभ में रखा है; दूसरा देवनागरी अक्षरों में, हिन्दुओं के लिए, और जिसका प्रारंभ ब्राह्मण धर्म की स्तुति 'श्री गणेशायनमः' गणेश की स्तुति, से होता है । पहले में बड़े अठपेजी १३२ पृष्ठ हैं, दूसरे में पहले वाले के आकार के १३७ पृष्ठ । दोनों लीथो हैं ।

'ज़हरों का बयान' (Vegetable Poisons) ।

पी० ब्रेटन (Breton) द्वारा हिन्दुस्तानी में प्रकाशित रचना । उसके दो संस्करण हैं : एक फ़ारसी अक्षरों में, और दूसरा देवनागरी अक्षरों में; दोनों लीथो हैं ।

*'जोग बसन्त पोथी' ।

मुहम्मद-बख्श अली ख़ाँ के पुस्तकालय में हिन्दी का हस्तलिखित ग्रन्थ ।

'ज्ञान माला,' ज्ञान का हार।

फ़रज़ाद कुली के पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी।

Treatise on suspended Animation from the effects of submersion, hanging, noxious air and lightning, and the means employed for resuscitation. नेटिव मेडिकल इंस्टीट्यूशन के विद्यार्थियों के लाभार्थ मुद्रित।—१८२६, एक प्लेट सहित बड़े अठपेजी ३८ पृष्ठ।

संभवतः किसी भारतीय की सहायता से पी० ब्रेटन (Breton) द्वारा, हिन्दुस्तानी में लिखित, मूर्च्छा (श्वासावरोध) पर पुस्तक।

'दर बयान नतायक़ नायक ओ नायिका भेद हिन्दी बा अशार फ़ारसी' (फ़ारसी लिपि), फ़ारसी पद्यों के साथ नायक-नायिका भेद का बयान)।

फ़रज़ाद कुली के पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी।

'दर रिसाल-इ राग माला' (फ़ारसी लिपि), संगीत के रागों पर पुस्तक।

फ़रज़ाद कुली के पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी।

* 'दशात्तपणव्रतविधि'।

जिसका अर्थ प्रतीत होता है : 'दस प्रकार की अपवित्रताओं के शुद्धि कर्मों के लिए नियम।' यह जैनों की ब्रज-भाखा में लिखी गई, एक धार्मिक पुस्तक है, जिसका उल्लेख श्री विल्सन ने किया है, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० २४४।

*'दाद्रा'।

एक प्रकार का गान या पद, जैपुर की बोली में रचना, वॉर्ड द्वारा अपनी 'हिस्ट्री, लिट्रेचर, एट्सीटरा ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं का इतिहास साहित्य, आदि), जि० २, पृ० ४८१ में उल्लिखित।

'दाय भाग' : उत्तराधिकारों का विभाजन।

इस पुस्तक का अनुवाद, हिन्दी में, कलकत्ते से प्रकाशित हुआ है।

* 'दुर्गा भाषा'।

कनौज की बोली में रचना, वॉर्ड द्वारा उल्लिखित, 'हिस्ट्री, लिट्रेचर, एट्सीटरा ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं का इतिहास, साहित्य, आदि), जि० २, पृ० ४८२।

* 'दोहरा-राग' (फ़ारसी लिपि)। संगीत के रागों का पद्यात्मक वर्णन।

मुहम्मद बख्श, आदि के पुस्तकालय में हस्तलिखित पोथी।

* 'धन्नायी'।

कन्नौज की बोली में रचना, वॉर्ड द्वारा उल्लिखित, 'हिस्ट्री, लिट्रेचर, एट्सीटरा ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं का इतिहास, साहित्य, आदि), जि० २, पृ० ४८२।

'धर्म पुस्तक का सार'—ईसाई भजन।

छोटी बारह-पेजी, हिन्दुई में, दोहा और चौपाई में रचित।

* 'धर्म बुद्धि चतुष्पदि'। धार्मिक कर्त्तव्यों की उपयुक्तता पर चार पंक्तियों के छन्द (ब्रजभाखा)।

जैन रचना ('एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० २४४)।

*'धर्म शास्त्र', अर्थात क़ानून की पुस्तक।

पोलाँ द सैं-बारथेलेमी (Paulin de Saint-Barthélemy) द्वारा 'Musei Borgiani manuscripti Avenses etc.', पृ० १५६ शीर्षक ग्रंथ में उल्लिखित हिन्दुस्तानी रचना। मेरे विचार से यह मनु के ग्रन्थ, जिसका शीर्षक है 'धर्म शास्त्र मानव',

का एक रूपान्तर है। किन्तु यह अठारह भागों में विभाजित है, जब कि मनु के ग्रन्थ में केवल बारह हैं।

*'धू-लीला'।

कनौज की बोली में रचना, वॉर्ड द्वारा उल्लिखित, 'हिस्ट्री, लिट्रेचर, एट्सीटरा ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं का इतिहास, साहित्य, आदि), जि० २, पृ० ४८२।

'नाम माला' (फ़ारसी लिपि)।

फ़रजाद कुली के पुस्तकालय के सूचीपत्र में इस रचना, जो एक शब्द-संग्रह है, यदि शीर्षक का अर्थ, जैसा कि मेरा विश्वास है, 'नामों का हार' है, की तीन हस्तलिखित प्रतियों का उल्लेख है। तीन हस्तलिखित प्रतियों में से एक का शीर्षक 'रिसाला-इ नाम माला' अर्थात् 'नाम माला की पुस्तक' है।

*'नृसिंहोपनिषद्'।

इसी नाम के उपनिषद्, और जो 'अथर्ववेद' का अंतिम भाग है, का नौ खण्डों में अनुवाद। उसमें जीवन और आत्मा, प्रणव (Pranava) के स्वरूप या रहस्यमय शब्दांश 'ब्रह्म' तथा अक्षर जिनसे उसका निर्माण हुआ है; व्यक्ति की सत्ता और विश्वास में भेद का निरूपण है। इस कथा के चरित्र जितने रहस्यमय हैं उतने ही पौराणिक; उसमें वैदिक की अपेक्षा तांत्रिक पद्धति का अधिक अनुगमन किया गया है। (एच० एच० विल्सन, 'मैकेन्ज़ी कलेक्शन', जि० २, पृ० ११०)।

'न्यू टेस्टामेंट' (दि), आदि, मार्टिन के उर्दू अनुवाद से कलकत्ता ऑग्ज़िलियरी बाइबिल सोसायटी के संरक्षण में रेवरेंड डब्ल्यू० बाउले द्वारा हिन्दुई भाषा में किया गया = कलकत्ता, १८२६, अठपेजी।

फ़ारसी-अरबी शब्दों के मिश्रण बिना, हिन्दू प्रयोगों के अनुसार संपादित।

'न्यू टेस्टामेंट (दि) ऑव आवर लॉर्ड ऐंड सेविअर जीज़स क्राइस्ट', श्रीरामपुर के मिशनरियों द्वारा मूल ग्रीक से हिन्दुस्तानी भाषा में अनूदित। – श्रीरामपुर, १८११ चौपेजी।

'न्यू टेस्टामेंट' (दि), हिन्दुस्तानी में, हंटर द्वारा संशोधित। – कलकत्ता, १८०५, चौपेजी।

*'पत्ती सूत्र'।

जैन धर्म से संबंधित भाषा में रचना ('एशि० रिस०', जि० १७, पृ० २४४)।

'पद्म पुराण', पद्म का पुराण।

जैनों के बारह चक्रवर्तियों या प्रधान नरेशों में से एक, पद्म, पर भाषा में लिखित जैन कथा ('एशि० रिस०', जि० १७, पृ० २४५)।

'पर्वत पाल' (फ़ारसी लिपि) या 'रुक्मिनी मंगल' (फ़ारसी लिपि), रुक्मिनी का विवाह।

मेरे निजी संग्रह की लगभग १६० पृष्ठों की १२-पेजी हस्त-लिखित पोथी। यह रुक्मिनी के विवाह से संबंधित कविता है। उसकी रचना दोहरों तथा हिन्दुई के अन्य छंदों में हुई है। श्री लैंगलुवा (Langlois) ने अपने 'मौन्यूमाँ लित्रेअर द लिंद' (भारत की महान् साहित्यिक कृतियाँ), ८५ तथा बाद के पृष्ठ, में, इसी विषय पर, भागवत की एक घटना का अनुवाद किया है।

'पाप की बुराई' (Sin no trifle)।

इस छोटी-सी धार्मिक पुस्तक के दो संस्करण हैं; एक देवनागरी अक्षरों में, और दूसरा कैथीनागरी अक्षरों में, जो हिन्दु-

स्तानी लिखने के लिए बहुत प्रयुक्त होती है। यह अंतिम संस्करण कलकत्ते से १८२५ में छपा है ; दोनों में बारहपेजी बीस पृष्ठ हैं।

***'पुरुषार्थ सिद्धोपायण'।**

संवत् १८२७ में, जैपुर में अमृत चन्द सूरी द्वारा लिखित जैन पुस्तक। श्री विल्सन के पास इस रचना की एक प्रति है।

'पूजा पद्धति', पूजा विषयक कर्म-कांड।

भाषा में लिखित जैन धर्म की रचना ('एशि० रिस०', जि० १७, पृ० २४४)।

'अलंकार सिंगार' (फ़ारसी लिपि)।

इस शीर्षक का अर्थ 'अलंकारों पर पुस्तक' प्रतीत होता है। उसका उल्लेख फ़रज़ाद के पुस्तकालय के हस्तलिखित ग्रन्थों में हुआ है।

'पोथी कुहुक लीला' (फ़ारसी लिपि)।

मैं इन शब्दों के उच्चारण के संबंध में निश्चित नहीं हूँ, और, फलतः, उनके अर्थ के संबंध में। प्रस्तुत पोथी का उल्लेख फ़रज़ाद कुली की पुस्तकों के सूचीपत्र में है।

'पोथी छत्र मुकुट' (फ़ारसी लिपि)।

यदि मैंने ठीक पढ़ा है तो इस शीर्षक का अर्थ है, 'राजकीय छत्र और मुकुट की पुस्तक', फ़रज़ाद के पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी।

'पोथी जगत बिलास' (फ़ारसी लिपि), संसार के आनंदों की पुस्तक।

फ़रज़ाद कुली के पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी।

'पोथी प्रीति बाल' (फ़ारसी लिपि)।

मुहम्मद बख़्श के पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी।

* 'पोथी प्रेम' (फ़ारसी लिपि), प्रेम पर पुस्तक।

फ़रज़ाद के पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी। इस रचना का नाम स्पष्टतः 'प्रेम कहानी' भी है, क्योंकि मैंने एक दूसरे सूचीपत्र में (मुहम्मद बख़्श की पुस्तकों के में) 'शरह-इ प्रेम कहानी' अर्थात् 'प्रेम कहानी की टीका' शीर्षक रचना देखी है।

* 'प्रतिक्रमण सूत्र'।

भाषा में जैन रचना ('एशि० रिस०', जि० १७, पृ० २४४)।

'प्रेरितों के कार्य'।

Acts of Apostles (the) हिन्दवी में—लशिंगटन का कलकत्ता इंस्ट० एपे० XLI ।

Psalterium Davidis, in linguam Indostanicam translatum à Benjamins Schultzio, edidit J. H. Callenbergius – Halae, 1747, in-8.

'फर्ग्युसन कृत ज्योतिष', ब्रूस्टर (Brewster) द्वारा संक्षिप्त और रेव० मिल तथा श्री जे० टिटलर (Tytler) की सहायता से मिस बर्ड द्वारा हिन्दी में अनूदित।

रचना जिसका प्रेस में होना घोषित किया गया है, कलकत्ते से १८३४ में।

'फलित ज्योतिष' (की पुस्तक), संस्कृत और हिन्दी में, देवनागरी अक्षर।

७६ पृष्ठों का अठपेजी हस्तलिखित ग्रंथ, जो मेरे निजी संग्रह में है। वह अपूर्ण है।

'फ़ारसी और हिन्दुस्तानी भाषाओं की लोकोक्तियों और लोकोक्तिपूर्ण वाक्यांशों का संग्रह'। प्रधानतः स्वर्गीय टॉमस रोएबक द्वारा संग्रहीत और अनूदित।—कलकत्ता, १८२४, बड़ी अठपेजी।

हिन्दुस्तानी लोकोक्तियों वाला भाग ३६७ पृष्ठों में है। यह महत्त्वपूर्ण रचना भारतीयविद्याविशारद विल्सन द्वारा प्रकाशित हुई है, और उन्होंने, जिनकी अनेक रचनाओं ने उनके देशवासियों को हिन्दुस्तानी का अध्ययन करने के लिए प्रेरणा दी, प्रसिद्ध गिलक्राइस्ट को समर्पित की है। मेरा यह निश्चित विचार है कि भारतवर्ष की भाषाओं से संबंधित संग्रहों में हिन्दुस्तानी लोकोक्तियों का यह संग्रह सबसे अधिक उपयोगी रचनाओं में से एक है।

***'बर्णभवन संधि'**, अर्थात् वर्णों (Castes) के स्वरूप का सम्मिलन।

जैन धर्म के सिद्धान्तों और बाह्याचारों पर भाषा में लिखा गया एक और ग्रंथ (विल्सन, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० २४४)।

'बर्णमाला', या हिन्दू लिपि – श्रीरामपुर, १८२०।

बर्णमाला, बर्ण (अक्षर), और माला (हार) से।

'बाइबिल के अंश', दकन की हिन्दुस्तानी में शुल्ज़ (Schultz) द्वारा अनूदित – Hallé en Saxe, 1745—1747, अठपेजी।

राजकीय छापेख़ाने के भूतपूर्व अध्यक्ष, श्री मार्सेल (Marcel) का पुस्तकालय।

'बाइबिल' (पवित्र)—हिन्दुस्तानी में अनूदित, नागरी अक्षर – ५ जिल्द, अठपेजी, श्रीरामपुर, १८१२, १८१६, १८१८।

हिन्दुस्तानी शीर्षक हैं 'धर्म की पोथी' और 'ईश्वर की सारी बातें'। इन जिल्दों में, प्रोटेस्टेंटों द्वारा संदिग्ध समझने वाले अंशों के अतिरिक्त, प्राचीन और नवीन नियम की सब पुस्तकें हैं। पहली जिल्द में 'पेन्टाटॉइक' (Pentateuque) है; दूसरी में, इतिहास-पुस्तकें (les Livres historiques) हैं; तीसरी में, गीतों की पुस्तकें (les Livres poetiques) हैं; चौथी में भविष्यद्वक्ता की

पुस्तकें (les livres prophètiques) हैं; पाँचवी में, नया नियम है।

'बाइबिल'—मिशनरी बी० शुल्ज़ द्वारा हिन्दुस्तानी में अनूदित।

इस रचना की एक हस्तलिखित प्रति, दो चौपेजी जिल्दों में, बर्लिन के राजकीय पुस्तकालय में है, नं० १६० और १६१। इस सूचना के लिए मैं प्रोफ़ेसर फ़िलकेन (Vilken) का अनुगृहीत हूँ।

'बालविबोध'।

बाल = बच्चा, और विबोध = ज्ञान। जैन धर्म के सिद्धान्तों और वाह्याचारों पर, भाषा में, एक प्रकार की प्रश्नोत्तरी (विल्सन, 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० २४४)।

*'बिजय-पाल रासा', अर्थात् बिजय-पाल की गाथा।

बियाना (Biana) के इस प्रसिद्ध सम्राट् के संबंध में, उसके शौर्य, उसकी विजयों और उसकी प्रेम-कथाओं पर ब्रज-भाखा कविता (जे० एस० लशिंगटन, 'जर्नल ऑव दि एशियाटिक सोसायटी ऑव कैलकटा', १८३२, पृ० २७३)।

*'बिरह बिलास', प्रेम के आनन्द (शब्दार्थ, प्रेम के अभाव में)।

फ़ोर्ट विलियम कॉलेज के पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी, नागरी अक्षरों में लिखित।

'बेल (Bell) कृत पाठशाला बैठावने की रीति', एम० टी० ऐडम द्वारा हिन्दुई में अनूदित, स्कूल बुक सोसायटी द्वारा प्रकाशित।—कलकत्ता, १८३४।

'भारतीय मूर्तिपूजा का खण्डन'; इटैलियन में प्रत्येक पंक्ति के दुहरे अनुवाद सहित, जिनमें से एक, शब्द प्रति शब्द, पिछली शताब्दी के लगभग उत्तरार्द्ध में पी० कौस्टौरो डा बोर्जो (P. Costauro da Borgo) द्वारा किया गया। —१ जिल्द, २७० पृष्ठों की चौपेजी।

रोम में, प्रोपैगाँद (Propagande) के बोर्जिया (Borgia)

संग्रहालय का हिन्दी हस्तलिखित ग्रंथ। [सर्वश्री द लूर्ड (de Lurde) और चिनट्राट (Cintrat) द्वारा लेखक के पास भेजी गई कार्डिनल माई (Mai) की सूचना।']

'भूगोल और ज्योतिष की रूपरेखा'—(Outlines of Geography and astronomy), **कलकत्ता, १८२५, अठपेजी।**

कलकत्ते की स्कूल-बुक सोसायटी द्वारा प्रकाशित रचना। हिन्दुस्तानी में उसका शीर्षक 'भूगोल वृत्तांत', अर्थात् पृथ्वी मंडल का वर्णन, है।

'भूगोल और ज्योतिष पर प्राथमिक पुस्तक', (Elementary Treatise on Geography and Astronomy), **हिन्दी में।**

मेरा विचार है, कलकत्ते से, नागरी अक्षरों में प्रकाशित पुस्तक।

'मनोरंजक कथाएं' (Pleasing Tales) **(ऐंग्लो-हिन्दुई)—कलकत्ता, १८३४।**

ये मनोरंजक कथाएँ स्कूल-बुक सोसायटी द्वारा प्रकाशित हुई हैं।

'ममालिकि हिन्द की ज़ुबानों की असल बुनयाद संस्कृत है'।

जे० रोमर द्वारा हिन्दुस्तानी (नागरी अक्षरों) में लिखित थीसिस, और 'प्रीमीटी ऑरिएंटालिस', कलकत्ता, १८०४, शीर्षक ग्रन्थ में सम्मिलित।

'महावीर स्तव'—महावीर की प्रशंसा।

भाषा में लिखित, और जैन धर्म से सम्बन्धित रचना। ('एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० २४५)। महावीर अंतिम और अत्यन्त प्रसिद्ध जैन प्रचारक हैं। लोगों का अनुमान है कि वे बिहार (Bahâr) प्रान्त में, ईसवी पूर्व छठी शताब्दी में रहते थे। विल्सन, 'संस्कृत डिक०'।

'मूल सूत्र' (प्रारंभिक नियम), रो (Rowe) कृत हिन्दी स्पेलिंग की पुस्तक। प्रथम संस्करण—कलकत्ता, १८२०, अठपेजी। वही, द्वितीय संस्करण, अठपेजी—कलकत्ता, १८२३।

फ़ारसी अक्षरों में, स्कूल-बुक सोसायटी के खर्च से, कलकत्ते से प्रकाशित, एक हिन्दुस्तानी स्पेलिंग की पुस्तक और है।

*'मृगावती चौपई'[1]।

भाषा में लिखित जैन कथा और श्री विल्सन द्वारा अपने 'मेम्वायर ऑन दि हिन्दू सेक्ट्स' (हिन्दू संप्रदायों का विवरण), 'एशियाटिक रिसर्चेज़' की जि० १७, पृ० २४५।

'मेथड्स ऑव ट्रीटमेंट फ़ॉर दि रिकवरी ऑव पर्सन्स डेड'। (मृत पुरुषों को जीवित करने के इलाज के नियम) ;डॉ० गिलक्राइस्ट द्वारा हिन्दुस्तानी में अनूदित, और टी० मायर्स (T. Myers) द्वारा फ़ारसी तथा नागरी अक्षरों में लिखित।—लंदन ,१८२६।

*'योग वसिष्ट'।

मैकेन्ज़ी संग्रह में हिन्दी की हस्तलिखित पोथी। यह वेदान्त दर्शन के सिद्धान्तों पर एक रचना है जिसमें राम वसिष्ठ, विश्वामित्र तथा अन्य ऋषियों के साथ वार्तालाप द्वारा भौतिक सत्ता की अवास्तविकता, कर्म और भक्ति के गुणों, और आत्मा की श्रेष्ठता पर विचार करते हैं। यह रचना छत्तीस भागों में है। संस्कृत से इसका अनुवाद हुआ है। (विल्सन, 'ए डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग ऑव मैकेन्ज़ी कलेक्शन', जि०२, पृ० १०६)

*'रत्न चुर मुनि', मुनि रत्न चुर।

---

[1] इस शोर्षक का अर्थ मृगावती को अर्थात् मृगावती पर चौपई या चार पंक्तियों का छन्द प्रतीत होता है।

जैन कथा पर भाषा में चौपई ('एशि० रिस०', जि० १६, पृ० २४५) ।

*'रसिक बिद्या' (फ़ारसी लिपि) ।

'रसिक', जो विशेषतः प्रेम-संबंधी मामलों में गुप्त विचारों और क्रियाओं के जानने की कला है, पर हिन्दी रचना। उसका नाम 'पोथी रसिक विद्या' भी है। फ़रज़ाद के पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी ।

*'राम विनोद' ।

वैष्णवों का ग्रन्थ, जिसकी एक प्रति श्री प्रोफेसर विल्सन के पास अपने निजी संग्रह में है।

'रोगांतक सार', अर्थात् सर्वोत्ताम दवाइयाँ ।

आंद्रे फ़ोर्ब्स (André Forbes) द्वारा प्रकाशित, हिन्दुस्तानी में, मेटीरिया मेडिका । कलकत्ता , १८११, अठपेजी ।

*'वसन्त राजा' ।

जैपुर की बोली में रचना, वॉर्ड द्वारा उल्लिखित, 'हिस्ट्री लिट्रेचर, एट्सीटरा ऑव दि हिन्दूज़' ('हिन्दुओं का इतिहास, साहित्य, आदि), जि० २, पृ० ४८१ ।

*'वाणी भूषण' ।

कनौज की बोली में रचना, वॉर्ड द्वारा उल्लिखित, 'हिस्ट्री, लिट्रेरेचर एट्सीटरा ऑव दि हिन्दूज़' ('हिन्दुओं का इतिहास, साहित्य, आदि'), जि० २, पृ० ४८२ ।

*'षट्त्रिंशत् कर्म कथा' ।

इस शीर्षक का आशय 'छत्तीस कर्मों की कथा' प्रतीत होता है। यह जैन धर्म-संबंधी भाषा में एक रचना है ('एशि० रिस०', जि० १७, पृ० २४४) ।

'सती होने की रीति हिन्दुओं में अपने पति के साथ भलमनसी और मया के चलन के बाहर है'।[1]

डब्ल्यू० चैंबलिन द्वारा हिन्दुस्तानी (नागरी अक्षरों) में लिखित थीसिस। वह 'प्रीमीटी ऑरिएंटालिस' (Primitiae Orientales), कलकत्ता, १८०४ शीर्षक ग्रंथ की तीसरी जिल्द में मिलती है।

'सत्य मुक्त मार्गका संक्षेप'।

बारहपेजी उन्नीस पृष्ठों की छोटी-सी प्रश्नोत्तरी।

'सवाल जवाब'।

बच्चों के लाभार्थ बारहपेजी सात पृष्ठों की छोटी-सी प्रश्नोत्तरी।

***'सान्ति जिन स्तव'।**

जैन धर्म-संबंधी भाषा में रचना ('एशि० रिस०', जि० १७, पृ० २४५)।

***'सालभद्र चरित्र', सालभद्र की कथा।**

जैन-कथा। श्री विल्सन द्वारा हिस्ट्री ऑव दि रिलीजस सैक्ट्स ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं के धार्मिक संप्रदायों का इतिहास) में उल्लिखित रचना ('एशि० रिस०', जि० १७, पृ० २४५)।

***'सिंजार सिरोमनी'।**

भाखा में राधा वल्लभी संप्रदाय की रचना, जिसके संबंध में प्रोफ़ेसर विल्सन का दिया हुआ विवरण (Mémoire) देखा जा सकता है ('एशि० रिस०', जि० १६, पृ० १२५)। इस विद्वान् के पास इस रचना की नागराक्षरों में एक हस्तलिखित प्रति है।

---

[1] अँग्रेज़ी में शीर्षक इस प्रकार है —'Suicide (The) of the Hindoo Widows, by burning themselves with the Bodies of their deceased Husbands, is a practice repugnant to the natural feelings and inconsistent with moral duty'. —अनु०।

Summmula Doctrinae Christianae in linguam Hindostanicam translata à Benjamino Schultzio; edidit J. H. Callenbergius—Halae, 1743, अठपेजी ।

'सुसमाचार' ।

देशी विद्वानों द्वारा हिन्दुस्तानी में अनूदित; विलियम हंटर द्वारा मूल ग्रीक सहित संपादित और संशोधित (नागरी अक्षर)—कलकत्ता, १८०५ ।

'सूयाभय'—तूरी ।

वॉर्ड द्वारा अपने 'हिन्दुओं का इतिहास, साहित्य, आदि', जि० २, पृ० ४८१ में उल्लिखित, जैपुर की बोली में रचना ।

'सेनानी पोथी', इँगलिश और हिंदी में, पैदल सिपाहियों के लिए संग्रहीत । भाग १ में स्क्वैड और कंपनी की क़वाइद का वर्णन है ; भाग २ में मैनुअल और प्लैटून की क़वायद के बोल, आदि हैं, जे० एस० हैरिअट (Harriot) कृत—अठपेजी ।

इस उपयोगी पुस्तक का पहला भाग कलकत्ते से १८२६ में, और दूसरा भाग श्रीरामपुर से १८२८ में छपा है। वे दो कॉलमों में छपे हैं, एक अँगरेजी में और दूसरा हिन्दी में। दूसरा भाग एक लीथोग्रैफ़ चित्र से सुसज्जित है जिसमें दो सिपाही दिखाए गए हैं। रचयिता जनरल हैरिअट हैं, जिनकी ११ फ़रवरी, १८३९ को पेरिस में मृत्यु हुई ।

'सेलेक्शन फ्रॉम दि पॉप्यूलर पोएट्री ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं के लोकप्रिय काव्य का संग्रह) ; टी० डी० ब्राउटन द्वारा संकलित और अनूदित ।—लंदन, १८१४, १५६ बारहपेजी पृष्ठ ।

इस ग्रंथ के रचयिता ने, जिसकी मृत्यु लंदन में १६ नवंबर, १८३५ को हुई, इस शीर्षक के अंतर्गत हिन्दुई के कुछ लोकप्रिय गीत संग्रहीत किए हैं। दुर्भाग्य से वे लातीनी अक्षरों और

उन्हीं हिज्जों में लिखी गई है जो उसके लिए बहुत ठीक नहीं बैठते।

***'सेवासखी वानी', या केवल 'वानी' अथवा 'बानी'।**

जैन संप्रदाय की रचना। प्रोफ़ेसर विल्सन के पास उसकी नागराक्षरों में एक प्रति है : इसके अतिरिक्त उसमें चालीस भाग हैं।

'स्त्री शिक्षा' (Apology for female education), खड़ीबोली हिन्दी में—कलकत्ता, १८२२, अठपेजी।

कलकत्ता स्कूल बुक सोसायटी द्वारा प्रकाशित रचना।

'स्त्री शिष्य विधायक', स्त्री शिक्षा का समर्थन, हिन्दुई में—कलकत्ता, १८३४।

संभवत: वही पुस्तक है जिसका 'ऐपौलौजी फ़ॉर फ़ीमेल ऐजुकेशन' शीर्षक के अंतर्गत ऊपर उल्लेख हो चुका है।

'हिन्दवी में कथाएँ' (मूल में नीति कथा शीर्षक, अर्थात् नीति की कथाएँ)—कलकत्ता, १८३२, बारहपेजी ; अन्य संस्करण १८३४ में।

यह पुस्तक स्कूल-बुक सोसायटी द्वारा प्रकाशित हुई है।

'हिन्दवी में चार ससमाचर' (Gospels)।

लशिंगटन, 'कलकता इंस्टी०' (Calcutta Inst.), परिशिष्ट (App.) ४१ (XLI)।

'हिन्दी पद्य में कथाएँ', आदि।

ईस्ट इंडिया हाउस की चौपेजी हस्तलिखित पोथी, लीडेन (Leyden) संग्रह, नं० २५, १८६१ संवत् (१७८५ ईसवी) में लिखित।

'हिन्दी रोमन ऑरथीपीग्रैफ़ीकल अल्टीमेटम, अथवा दि हिन्दुस्तानी स्टोरी टैलर', जे० बी० गिलक्राइस्ट कृत—लंदन, १८२०, अठपेजी, द्वितीय संस्करण।

कलकत्ते से प्रकाशित, 'हिन्दी स्टोरी टैलर' का नवीन संस्करण इसमें केवल सौ कहानियाँ हैं ; पहले संस्करण की भाँति, उनकी पुनरावृत्ति पहली बार फ़ारसी अक्षरों में, दूसरी बार देवनागरी अक्षरों में, तीसरी अंतिम बार लातीनी अक्षरों में, हुई है। इन तीनों भागों के १४० पृष्ठ हैं ; भूमिका और टिप्पणियाँ, २१४ पृष्ठ। कोई रूपान्तर नहीं है।

'हिन्दी स्टोरी टैलर, अथवा लिखित और साहित्यिक माध्यम के रूप में हिन्दुस्तानी में प्रयुक्त सामान्य और संयुक्त रोमन, फ़ारसी और नागरी अक्षरों की मनोरंजक व्याख्या', जे० गिलक्राइस्ट कृत। — कलकत्ता, १८०२—१८०३, अठपेजी।

डॉक्टर गिलक्राइस्ट द्वारा प्रकाशित ग्रंथों में से यह ग्रन्थ सबसे अधिक उपयोगी है। उसके दो भाग हैं : पहले में १०८ छोटी-छोटी कहानियाँ हैं ; दूसरे में, जो अलभ्य है, अधिक लम्बी कहानियाँ हैं।

'हिन्दुई कहावतें'—कलकत्ता, १८३४।

'हिन्दुस्तानी (दि) इज़ दि मोस्ट जेनेरली यूसफ़ुल लैंग्वेज इन् इंडिया'—डब्ल्यू० बी० बेली द्वारा हिन्दुस्तानी (देवनागरी अक्षरों) में लिखित दावा, और 'एसेज़ बाइ दि स्टूडेंट्स ऑव दि कॉलेज ऑव फ़ोर्ट-विलियम इन बेंगाल, १८०२' शीर्षक रचना में प्रकाशित।

इस दावे का कुछ अंश एस० आर्नट (S. Arnot) ने अपने हिन्दुस्तानी व्याकरण में, देवनागरी और फ़ारसी दोनों अक्षरों में, उद्धृत किया है।

'हिन्दुस्तानी, बंगाली, फ़ारसी और अरबी में, फ़ोर्ट विलियम कॉलेज के विद्यार्थियों की परीक्षाएँ और अभ्यास', प्रोफ़ेसर

गिलक्राइस्ट द्वारा प्रकाशित—कलकत्ता, १८०१ और १८०२ चौपेजी।

'हिन्दुस्तानी भाषा और भद्दे नागरी अक्षरों में राम तथा अन्य पौराणिक व्यक्तियों के संबंध में कथाएँ'।

मर्सडेन (Mersden) संग्रह की एक हस्तलिखित पोथी, उसके सूचीपत्र का पृ० ३०७।

'हिन्दू गीतों का संग्रह' : पद, टप्पा, होली, राग, आदि।

श्री विल्सन के संग्रह में हस्तलिखित पोथी।

परिशिष्ट २

[मूल के द्वितीय संस्करण से]

देशी रचनाओं की सूची

जिनका उल्लेख जीवनियों, ग्रन्थों तथा उद्धरणों में नहीं हुआ।

१. धर्म और दर्शन

'अध्यात्म प्रकाश'—परमात्मा की विभूति।

भाषा का हस्तलिखित ग्रंथ, चैम्बर्स संग्रह, दोहरों से मिश्रित गद्य में, १८२४ संवत् (१७६८) में लिखित।

'अष्टाक्षर टीका'—आठ अक्षरों के मंत्र पर टीका, अर्थात् 'श्री कृष्ण आश्रय नाम मम'—कृष्ण मेरे रक्षक हैं—मंत्र पर; ब्रज-भाखा में।

'महाराजों के सम्प्रदाय का इतिहास' ('Histotry of the Sect of Maharajas')।

'उखा चरित्र'—उखा या उषा की कथा; हिन्दी में।—आगरा, १८६५, ३२ पृष्ठ।

जे० लौंग, 'कैटेलौग', पृ० ४१।

'उपदेश प्रसाद'—अच्छी शिक्षा का प्रसाद; हिन्दी में।

'कन्हैया का बालपन'—कृष्ण की बाल्यावस्था।—आगरा, १८६३, १६ अठपेजी पृष्ठ।

'कान्हलीला'—कृष्ण की लीला। मथुरा, १८६५, १२ पृष्ठ।

जे० लौंग, 'कैटेलौग', पृ० ४४।

'कालिका अस्तुत'—काली की स्तुति ।—लाहौर, 'कोह इ नूर' मुद्रणालय ।

'कृष्ण का बालपन'—कृष्ण की बाल्यावस्था, हिन्दी में कविता ।—१८ बारहपेजी पृष्ठ ।

'कृष्ण की बारा मासी'—कृष्ण के बारह मास, गीत ।—आगरा, १८६४, सोलहपेजी ।

'कृष्ण गीत'—कृष्ण का गीत । आगरा, १८६५, १६ पृ० ।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ४० ।

'कृष्ण फाग'—कृष्ण के सम्मान में होली के गीत ।—आगरा, १८६४, १६ बारहपेजी पृष्ठ ।

'कृष्ण माला'—कृष्ण की माला, कविता ।

जनवरी, १८६६ का, लखनऊ के, नवल किशोर का सूचीपत्र ।

'कृष्ण लीला'—कृष्ण की लीला ; हिन्दी में ।—आगरा, १८६४, १६ पृ० ।

'गमकारी उपदेश का संक्षेप'—स्कूलों के लाभार्थ, मूल अँगरेजी से हिन्दुस्तानी में अनूदित, सर्वोत्तम ग्रन्थों से लिए गए नीति-वाक्य ।

उसके उर्दू और हिन्दी में कई संस्करण हैं ('रिपोर्ट,' आदि; आगरा, १८५३, पृ० ६१) । मुझे उसका एक कलकत्ते का संस्करण ज्ञात है, १८३७, ५० अठपेजी पृष्ठ, फ़ारसी अक्षरों में ।

'गिरधर मूल'—कृष्ण पर टीका (कृष्ण का गान), हिन्दी में ।—आगरा, १८६४, ८ अठपेजी पृष्ठ ।

'गोकुल नाथ कृत वर्णामृत'—गोकुल-नाथ की चौबीस कथाएँ और वचन; हिन्दी में ।—१८७०, ३५ अठपेजी पन्ने; परगना इगलास में बेसमा के राजा द्वारा प्रकाशित ।

'गोवर्द्धन नाथ स्योध भव वार्ता'—गोवर्द्धन-नाथ के जीवन की कथा, हिन्दी में।—५४ अठपेजी पन्ने।

'छान्दोग्य ('छांदोग्ञ') उपनिषद्'—सामवेद की टीका।

ज़ेंकर (Zenker), 'बिब्लिऑथेका ऑरिएंटालिस' (Bibliotheca Orientalis)।

'ज्ञान माल'—ज्ञान की माला, कृष्ण द्वारा अर्जुन को दिया गया उपदेश और शिक्षा; हिन्दी में।—८० छोटे अठपेजी पृष्ठ।

१८६८ में उसका दिल्ली से एक अनुवाद उर्दू में हुआ है, २२ अठपेजी पृष्ठ।

'तर्क संग्रह'—सामान्य तर्क शास्त्र; अँगरेज़ी और हिन्दी अनुवाद सहित, संस्कृत पाठ।—इलाहाबाद, १८५१, ७२ अठपेजी पृष्ठ; बनारस, १८५१।

मूलतः अरणमम् (Anmam) भट्ट द्वारा लिखित और बनारस कॉलेज के तत्कालीन प्रिंसीपल, स्वर्गीय डॉ० बैलैन्टाइन द्वारा प्रकाशित।

'धर्मानुसंधान'—धार्मिक सत्य की खोज, ब्राह्मण धर्म के विरुद्ध की गई आपत्तियों का उत्तर, उर्दू और हिन्दी में।—लाहौर, १८६८, ४४ अठपेजी पृष्ठ।

'नीति दीपिका'—नीति का दीपक ; हिन्दी में।—बरेली, १८६५।

जे० लौंग, 'कैटैलौग,' पृ० ३३।

'नीत बिनोद' या 'नीति विनोद'—नीति का आनंद।

नीति-वाक्यों का संग्रह; १८५१ में भारतवर्ष में मुद्रित, हिन्दी रचना।

'पद चंद्रिका'—शिक्षा का चन्द्रमा ; हिन्दी में।

'प्रसाद मंगल'—प्रसाद की शुभ घड़ी ; हिन्दी में।

'प्रेम शागर' ('प्रेम सागर'), भवान चन्द्रवासुक द्वारा शुद्ध हिन्दी में अनूदित ।—कलकत्ता, १८६७, ४६२ अठपेजी पृष्ठ ।

'बाँसुरी लीला'—वंशी की लीला (कृष्ण की क्रीड़ाएँ); हिन्दी में—आगरा, १८६४, ८ अत्यन्त छोटे बारहपेजी आयताकार पृष्ठ ।

'बारह खड़ी' ('श्री कृष्ण बलदेव जी की')—कृष्ण और बल की बारह खड़ी, कृष्ण और बल संबंधी कहानियाँ।—आगरा, १९१९ संवत् (१८६३), ८ छोटे बारह-पेजी पृष्ठ ।

'बिशन सहस्रनाम'—विष्णु के हज़ार नाम ; देवनागरी अक्षरों में—लाहौर, कोह इ नूर मुद्रणालय ।

'जातियों के संबंध में' (On Caste), 'सतमत निर्णय'—अच्छी बुद्धि का प्रमाण—के आधार पर; हिंदुई में ।—इलाहाबाद, २४ पृ० ।

'भक्त रखने वाले'—भक्तों की (याद के) रखवाले; संस्कृत उद्धरणों सहित, हिन्दी में ।

राधावल्लभियों की एक प्रकार की धार्मिक नियमावली ।[1]

'भोपाल कृत'—भोपाल का काम—फ़तहगढ़, १८४० ।

हिन्दू धर्म पर, बिना किसी विशेष शीर्षक के रचना ।

'मन चेतन'—मन का चिंतन; हिंदुई में ।—श्रीरामपुर ।

'मन लीला'—मन की लीला, कृष्ण की क्रीड़ाओं से संबंधित हिन्दी कविता ।—आगरा, १८६४, ३६ अठपेजी पृष्ठ ।

'महादेव चरित्र'—शिव की कथा; हिन्दी में ।

शैव रचना ।

'महावीर स्तव'—महावीर की स्तुति संबंधी कविता ।

---

[1] संप्रदाय जिसके अनेक अनुयायी विशेषतः वृन्दाबन और गुजरात के बीच स्थित प्रदेश में पाए जाते हैं—मौंट्गोमरी मार्टिन, 'ईस्टर्न इंडिया', पहली जिल्द, पृ० १०६ ।

'युगल बिलास'--दम्पति की क्रीड़ा अर्थात् कृष्ण और राधा की; हिन्दी में।--आगरा, १८६४, ४० छोटे बारहपेजी पृष्ठ।

'राम गीत'--राम का गीत, 'अध्यात्म रामायण' के 'उत्तर काण्ड' के आधार पर।--बनारस, १८६८।[1]

'राम चन्द्र-नाम सहस्र'—राम के सहस्र नाम, 'पद्म पुराण' के आधार पर; हिन्दी टीका सहित, संस्कृत में।–बनारस, १८६८।

'राम नाम महात्म'—राम नाम की महिमा; हिन्दी में।—बनारस, १८६५, ४८ पृष्ठ।

'लीला चरित्र'—(कृष्ण की) लीलाओं की कथा, वैष्णव रचना।

'इंडियन मेल', १८५२, पृ० १७२।

'विद्यार्थी की प्रथम पुस्तक'—विद्यार्थियों की प्राइमर।—बरेली, १८६५।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ३३।

'वेद तत्त्व'—वेदों का सार, एच० एच० विल्सन द्वारा 'ऋग्वेद' के अनुवाद की भूमिका का हिन्दी अनुवाद।—आगरा, १८५४, ८२ अठपेजी आयताकार पृष्ठ।

'शगुनावली'—शकुनों की पुस्तक, बधली द्वारा ('बधली कृत') रचित, शकुनों और अंधविश्वासों के विरुद्ध; हिन्दी में।—दिल्ली, १८६८, १६ अठपेजी पृष्ठ।

'शिव पंच रत्न'—शिव के पाँच रत्न, हिन्दुस्तानी टीका सहित कविता।—बनारस, १८६८।

'श्याम सुखेली पदावली'—कृष्ण की सुखवाली सेविका; हिन्दी में।—बनारस।

'श्री सनीसर'—शनिश्चर, कृष्ण-भक्ति और सूर्य-वंशियों पर; हिन्दी में।—कलकत्ता, १८३५, ३५ अठपेजी पृष्ठ।

---

1 दे० एकनाथ पर लेख, पहली जिल्द, पृ० ४३०

'सत-नाम (पोथी)'—(भगवत् के) सौ नामों की पुस्तक, पद्य में।

लखनऊ के, नवल किशोर का जनवरी १८६६ का सूचीपत्र।—क्या यह वही ग्रन्थ तो नहीं है जो इसी शीर्षक का कबीर का है?

'सत्य नारायण की कथा'—सत्य नारायण का वर्णन, तथा इस देवता से कृपा की याचना; हिन्दी में।—मेरठ, १८६५, २४ पृष्ठ; और हिन्दी तथा संस्कृत टीका सहित, आगरा, १८६८, ४४ अठपेजी पृष्ठ।

'सत्या शिक्षावली'—अच्छी शिक्षाएँ; हिन्दी में।—आगरा, १८६५; प्रथम भाग, २४ पृ०; दूसरा भाग, ४८ पृष्ठ।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ४०।

'सत्रजय महात्म'—(विष्णु के पक्ष में) शत्रु की विजय की महिमा।

'सहस्र नाम' या 'विष्णु सहस्र नाम'—(विष्णु के) सहस्र नाम, हिन्दी में।—मेरठ, १८६५, और कलकत्ता, १८६५, १२ अठपेजी पृष्ठ।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ३३।

'सहस्र लीला'—(कृष्ण की) सहस्र लीलाएँ; हिन्दी में।

'हनुमान चालीसी'—हनुमान के चालीस (कर्म)—('हनुमान का वर्णन'); हिन्दी में।—आगरा, १८६४, ४ पृष्ठों की पुस्तिका।

'हनुमान फाग'—[१] हनुमान की होली, हनुमान का हिन्दी में दूसरा वर्णन।—आगरा, १८६४, २० पृष्ठों की पुस्तिका।

---

[१] शब्द 'फाग' का अर्थ रँगी हुई बुकनी, जिसे होली—भारतवासियों का आनंदोत्सव—में एक दूसरे पर फेंकते हैं, और गाना भी है जो उस समय गाया जाता है।

'हरि भक्त प्रकाश'—हरि के भक्तों की कथा।

सोहना (Sohanā) से १८६७ में प्रकाशित 'भक्त माल' के एक उर्दू-अनुवाद का ऐसा ही शीर्षक है, चौपेजी, जिसके बारे में मुझे विद्वान् भारतीयविद्याविशारद फ़िट्ज़ एड्वर्ड हॉल (Fitz Edward Hall) ने बताया और जिनके कारण मैं ग्रन्थकारों और ग्रन्थों की तालिका में बीच-बीच में अनेक संशोधन कर सका हूँ।

'हिन्दू यात्रियों को शिक्षा'; हिन्दुई में, कैथी—नागरीअक्षर—इलाहाबाद, १२ पृष्ठ।

'हेम रतन'—सोने का रत्न, हिन्दी में धार्मिक रचना।—मेरठ १८६५।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ३७।

२. न्याय शास्त्र

'विधवा विबाह व्यवस्था', बा० नवीन चन्द राय द्वारा शास्त्रीय पाठों के प्रमाण से विधवा स्त्रियों के विवाह की व्यवस्था, और विरोधी पक्ष के तर्कों का खण्डन; हिन्दी और संस्कृत में।—लाहौर १८६६, ४८ अठपेजी पृष्ठ।

३. ज्ञान-विज्ञान और कलाएँ

'अमृत सागर'—अमृत का समुद्र, महाराजा प्रताप सिंह की आज्ञा से, जयपुर की बोली में लिखित, औषध-संबंधी हिन्दी-रचना।—१८६४ में आगरे से मुद्रित, ३०४ अठपेजी पृष्ठ।

'ट्रूब्नर्स रेकॉर्ड (Trübner's Record), ३१ मई, १८६६

एक अन्य संस्करण दिल्ली की बोली में, लखनऊ, १८६४, ६२६, अठपेज पृष्ठ।—वही, १६ अगस्त, १८६६।

'केंग्रनवे' (Kengranawé)।

मकानों और मंदिर के निर्माण की विधि और इमारतों की नींव

रखने की शुभ घड़ी के बारे में निश्चित होने के संबंध में, अठारह हजार श्लोकों की, एक हिन्दी कविता का इस प्रकार का शीर्षक है। मौंट्गोमरी मार्टिन (Montg. Martin), 'ईस्टर्न इंडिया', पहली जिल्द, पृ० ३२६।

'केसराज शास्त्र'—तीन हजार श्लोकों में, वास्तुकला अथवा और भी ठीक पत्थर की मूर्ति, शिल्प आदि काटने पर शास्त्र या हिन्दी कविता।

मौंट्गोमरी मार्टिन (Montg. Martin), 'ईस्टर्न इंडिया,' पहली जिल्द, पृ० ३२६।

'क्षेत्र प्रकाश'—खेतों का स्पष्टीकरण।

पद्य में कृषि-संबंधी पुस्तक, जिसके बाद गणना करने, महीनों के नामों तथा अन्य बातें जो प्राय: जीवन के व्यापार में काम आती हैं, पद्य और गद्य में कुछ वाक्यों, तथा फ़ारसी और हिन्दुस्तानी में कुछ छोटी-छोटी कहानियों की एक पुस्तक है। बिब्लिओथेका रिशल्यू (Biblioth. Richelieu), ऊएसाँ (Ouessant) संग्रह, नं० ३।

'गणित पते'—गणित के पन्ने, हिन्दी में, गणित पर प्रश्न।—दिल्ली, १८६३, १०० अठपेजी पृष्ठ।

उसके अन्य संस्करण हैं, एक उदाहरण के लिए, आगरे का, १८६५, केवल ५४ पृष्ठों का।—जे० लौंग, 'कैटैलौग,' पृ० ४०।

'गणित प्रकाश'—गणित की व्याख्या; हिन्दी में उत्तर-पश्चिम प्रदेश के देशी स्कूलों द्वारा स्वीकृत रचना।

भाग १—A Treatise on arithmetic upto the rule of three.

भाग २—From rule of three to the cubic roots.

भाग ३—From practice to fellowship.

भाग ४—From decimals to combinations.

'आगरा गवर्नमेंट गज़ट', पहली जून, १८५५ का अंक।

'गणित वोपदेव कृत'—वोपदेव का गणित; हिन्दुई में।—बम्बई।

ज़ेंकर (Zenker), 'बिब्लिओथेका ऑरिएंटालिस' (Bibliotheca Orientalis)।

'चिकित्सार'—औषधियों की पुस्तक; भाखा में।

चैम्बर्स संग्रह (Collection Chambers), पृ० २४, सूचीपत्र में नं० १२।

'जंत्री'।

इस नाम की अनेक भारतीय जंत्रियाँ, जितनी उर्दू में उतनी ही हिन्दी में, हैं, जो भारत में हर वर्ष प्रकाशित होती हैं।

'तिथि चन्द्रिका'—चन्द्र-ग्रहों का चन्द्रमा।

हिन्दी में, कुछ हिन्दू पंचांगों का शीर्षक। मेरे पास एक १८६० (१९१७) का है।—बनारस, ३२ बारहपेजी पृष्ठ और तालिका

'पंच भूतवादार्थ'—पाँच तत्त्वों का रसायन (पाँच हिन्दू तत्त्वों के रसायन पर व्याख्यान); दो कॉलमों में, हिन्दी और अँगरेज़ी में।—बनारस, १९१६ संवत् (१८६०), शब्दावली और प्लेटों सहित, ७६ छोटे चौपेजी पृष्ठ।

'पत्रा'।

हिन्दी में इस शीर्षक के अंतर्गत लिखे गए, हिन्दू पत्रे बहुत हैं, जो प्रत्येक वर्ष दिल्ली, लाहौर, बरेली, बनारस, इन्दौर, बुलन्दशहर, आदि से निकलते हैं।

'पहाड़ की पुस्तक'—पहाड़े की किताब।—दिल्ली, १८६८, २६ सोलहपेजी पृष्ठ।

'पारजूतक (पोथी)'—संगीत की सीढ़ी पर पुस्तक ; हिन्दी में ।

यह कविता राग-रागिनी मालूम करने की विधि और वाद्य-यंत्र बजाने के संबंध में है । बलदेव के पुत्र, दीना-नाथ ने 'रिसाला-इ इल्म-इ मूसीकी'—संगीत के ज्ञान पर पुस्तक—शीर्षक के अंतर्गत उसका फ़ारसी में अनुवाद किया है ।[1]

'पुस्तक ग्रहणों की'—ग्रहणों की किताब; हिन्दी और उर्दू ।—आगरा, ४४ चौपेजी पृष्ठ ।

'प्रसाद मंगल'—प्रसाद की अच्छी विधि, विविध प्रकार के मन्दिरों पर, पाँच सौ श्लोकों में, हिन्दी कविता ।

मौंट्गोमरी मार्टिन (Montg. Martin), 'ईस्टर्न इंडिया', पहली जिल्द, पृ० ३२६ ।

'राग दर्पण'—राग का दर्पण ।

फ़क़ीरुल्लाह द्वारा फ़ारसी में अनूदित, भारतीय संगीत पर हिन्दुई रचना । मूल रचना का संग्रह ग्वालियर के राजा मान सिंह की आज्ञा से हुआ था ।

'राग पोथी'—राग की पुस्तक ।

यह रचना, जिसकी स्वर्गीय डी० फ़ोर्ब्स ने अपने पूर्वी हस्त-लिखित ग्रंथों के मूल्यवान संग्रह में से प्रति मुझे दी थी, कबीर, नानक, तथा अन्य कबीर-पंथी, सिक्खों और कुछ वैष्णव धार्मिक कवियों के लोकप्रिय भजनों और गीतों का, फारसी अक्षरों में, संग्रह है ।

१८५० में, 'राग की पोथी' शीर्षक ही एक पोथी बनारस से प्रकाशित हुई है ।

---

[1] दे० डब्ल्यू० आउज़ले (Ouseley), 'ओरिएंटल कलेक्शन्स' (पूर्वी संग्रह), पहली जिल्द, पृ० ७५ ।

'राज बल्लभ'—राज की कला, भवनों की वास्तुकला पर, चौदह सौ श्लोकों में, हिन्दी कविता।

मौंट्गोमरी मार्टिन (Montg. Martin), 'ईस्टर्न इंडिया,' पहली जिल्द, पृ० ३२६।

'रिसाला मोती की जौ निकालने का' या 'रिसाला इस्तिख़राज-इ जौ-इ मवारीद'—सीप से मोती अलग करने की विधि; हिन्दी में।— हैदराबाद, १२५१ (१८३५—१८३६), ४८ छोटे चौपेजी पृष्ठ।

'रूप मण्डल'—सौन्दर्य की परिधि।

मूर्तियों और शिल्पों के रूप पर हिन्दी रचना।—मौंट्गोमरी मार्टिन (Montg. Martin), 'ईस्टर्न इंडिया', पहली जिल्द, पृ० ३२६।

'रोगान्वित सार'—रोगियों की भलाई।

फ़ोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दी के प्रोफ़ेसर, कैप्टेन जॉन टेलर की सहायता से लिखित 'मैटीरिया मैडिका' पर हिन्दी रचना और बनारस के 'मतबा मुफ़ीद-इ हिंन्द' नाम के छापेख़ाने से १८५१ में प्रकाशित उसका एक संस्करण, उर्दू में २८८ पृष्ठों का, १८६५ में आगरे से निकला है। – जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ४१।

'रेल की टिकट', हिन्दी पद्य में।-लुधियाना, १८६७, १० बारह-पेजी पृष्ठ।

'लोक प्रकाश'—संसार का स्पष्टीकरण, हिन्दी में भूगोल।—आगरा, १८६४, ८० छोटे अठपेजी पृष्ठ।

'वस्तु शास्त्र'—इमारत बनाने की पुस्तक, दो हज़ार श्लोकों में, मकानों की वास्तुकला पर कविता।

मौंट्गोमरी मार्टिन (Montg. Martin), 'ईस्टर्न इंडिया,' पहली जिल्द, पृ० ३२६।

'वेदान्त त्रयी', अर्थात् 'तत्त्वबोध', 'आत्म बोध', 'मोक्षसिद्धि'; हिन्दुस्तानी में टीका सहित, संस्कृत में।—बनारस, १८६८।

'शिक्षा सार'—शिक्षा-नीति संबंधी विवाद, हिन्दी में।—लाहौर, 'कोह-इ नूर' मुद्रणालय।

'शीघ्र बोध सटीक'—ज्ञान प्राप्त करने का सरल उपाय, संस्कृत और हिन्दी में।—आगरा १८६७,७४ पृष्ठ।

'सामुद्रिक' (सामुद्रिक शास्त्र पर हिन्दी रचना)।—लाहौर, १८५१, और कलकत्ता, १८६५, ४७ अठपेजी पृष्ठ।

इस रचना में, जिसका उल्लेख पहली जिल्द, पृ० ४६७, में हो चुका है, सामुद्रिक चिन्हों सहित हाथ का एक चित्र दिया हुआ है।

'हिन्दुई में, कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण ज्ञान-विज्ञानों के हिस्सों के संक्षिप्त विवरण सहित, ज्ञान के लाभों पर पुस्तक।'— कलकत्ता, १८३६, ३० बारहपेजी पृष्ठ, कलकत्ता स्कूल बुक सोसायटी।

उसके कई संस्करण हैं, जिनमें से एक अठपेजी।

४. इतिहास और भूगोल

'अलीगढ़' (जिले का संक्षिप्त भौगोलिक विवरण); उर्दू और हिन्दी में।—१८६५।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ३५।

'उपदेश प्रसाद'—मगध बोलियों में, ऐतिहासिक अंशों का संग्रह।

टॉड कृत 'ऐनल्स ऑव राजस्थान'।

'काशी खण्ड'—बनारस जिले का इतिहास, हिन्दुई में।—२६१ अठपेजी पृष्ठ।

तीन भागों में महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ, बिना स्थान और तिथि दिए मुद्रित, किन्तु, मेरा अनुमान है, कलकत्ते से। उसकी एक प्रति लन्दन की रॉयल एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है।

'कुमारपाल चरित्र'—कुमारपाल का इतिहास।

राजपूत हस्तलिखित ग्रंथ, टॉड द्वारा देखा गया, और उन्हीं के द्वारा चन्द के समय का लिखा माना गया।

'गोल प्रकाश' — भूमण्डल का इतिहास, भूगोल की हिन्दी पुस्तक। —१८६५ में आगरे से मुद्रित।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ४१।

'चन्दर राज्ञ रास' चंद्र-संबंधी राजाओं की क्रीड़ा; हिन्दी में।

श्री पैवी (Th. Pavie) के गुजराती और मरहठी भाषा पर विवरण (Mémoire) में उल्लिखित।

'जगत विलास' — दुनिया के आनंद।

मारवाड़ पर हस्तलिखित ग्रंथ, टॉड द्वारा उल्लिखित, 'ऐनल्स ऑव राजस्थान'।

'जैगन पोथी' — जैगन की पुस्तक, अँगरेज़ी में 'Jaïgan' s War with Hanifa'।—कलकत्ता, १८६५, १५० अठपेजी पृष्ठ।

उसके कई संस्करण हैं — जे० लौंग, 'कैटैलौग,' पृ० २१।

'दिहात की सफ़ायी—गावोंकी सफ़ाई। — इलाहाबाद, ६ चौपेजी पृष्ठ।

'धर के राजाओं की ख़बर' — पृथ्वी के राजाओं का इतिहास।

हिन्दी रचना, १८५१ में भारत में मुद्रित।

'नकशे' (भूगोल संबंधी)।

हिन्दुस्तानी में वे बहुत बड़ी संख्या में प्रकाशित हुए हैं, जितने फ़ारसी अक्षरों में उतने ही देवनागरी अक्षरों में। एक तासाँ (Tassin) नामक फ्रांसीसी ने, अन्य के अतिरिक्त, दुहरे अक्षरों में एक दुनिया का नकशा तथा हिन्दुस्तान का एक सुन्दर नकशा छः पन्नों में बनाया है।

'नीति बिनोद' या 'विनोद' — लंदन शहर के विवरण सहित, प्राचीन

ब्रिटेन-निवासियों का हिन्दी में विवरण। – इन्दौर, १८५०।

'प्राथमिक भगोल और इतिहास; हिन्दुई' – कलकत्ता, १८२७, कलकत्ता स्कूल बुक सोसायटी।

'बंसावली राठार' – राठौरों की वंशावली।

इस प्रकार का शीर्षक एक बड़े वंश-पत्र का है जिसे अमझेरा (Amjherra) के राजा के कारबार (प्रधान मंत्री) सन्तक राम (Santak Râm) ने १८२० में मालकम[1] को दिखाया था।

राजपूतों की भाषा या भाखा में जिसे मरहठे रँगरी (Rangrî) भाखा – मध्य भारत के ब्राह्मणों की हिन्दी – कहते हैं, लिखा गया यह वंश-पत्र नब्बे फ़ीट लंबा और सोलह इंच चौड़ा था, दोनों तरफ़ लिखा हुआ था। मालकम ने जो कहते हुए सुना और स्वयं देखा उसके आधार पर इस ग्रंथ में मध्य भारत में बस जाने वाली इस जाति के सब वंशों, और उनके थोड़े से भी पद वाले या ख्याति वाले व्यक्तियों का ठीक-ठीक उल्लेख है।

'भारत का इतिहास, (मार्शमैन कृत) अत्यन्त प्राचीन काल से लेकर मुग़ल वंश की स्थापना तक'।

रेवरेंड जे० जे० मूर (Moore) द्वारा प्रकाशित उसके दो रूपान्तर हैं—एक उर्दू में और दूसरा हिन्दी में।— 'रिपोर्ट ऑव दि जनरल कमिटी ऑव इन्सट्रक्शन फ़ॉर दि ईयर १८३९—१८४०', कलकत्ता, १८४१, पृ० १०५; और 'प्रोसीडिंग्स ऑव दि वर्नाक्यूलर ट्रान्सलेशन सोसायटी', १८४५, पृ० १७।

इन रचनाओं के, जिनमें लगभग ३०० पृष्ठ हैं, कई संस्करण हैं, जिनमें से एक कलकत्ते का है, १८४३ अठपेजी; एक दूसरा १८४६ का है; हाल में मेजर फ़ुलर का निकाला हुआ एक दिल्ली और एक लाहौर का है, १८६५, चौपेजी। उनमें से कुछ-एक लातीनी अक्षरों में हैं।

[1] 'सेंट्रल इंडिया', जि० २, पृ० १२८

उर्दू रूपान्तर दिल्ली कॉलेज के देशी प्रोफ़ेसरों द्वारा हुआ है।

'भूगोल कूर्माचल'—अचल कूर्म पर पृथ्वी मण्डल, एक और भूगोल; हिन्दी में।—आगरा, १८६५, ६४ पृ०।

जे० लॉंग, 'कैटैलौग', पृ० ४१।

'भूगोल विचार'—पृथ्वी मण्डल पर विचार, भूगोल की पुस्तक; हिन्दुई में।—कलकत्ता। एक अन्य संस्करण बनारस का है।

जेंकर (Zenker), 'बिबलिओथेका ऑरिएंटालिस (Bibliotheca Orientalis)।

'भूगोल सूचन'—भूमण्डल पर विचार, भूगोल-संबंधी रचना; हिन्दी में।—आगरा।

'भूपाल बर्णन'—भूपाल का हाल; हिन्दी में।

'मान चरित्र'—राजा मान का इतिहास।

टॉड कृत 'ऐनल्स ऑव राजस्थान'।

'राज प्रकाश'—मेवाड़ के राजाओं का इतिहास।

टॉड कृत 'ऐनल्स ऑव राजस्थान'।

'राजा सभा रंजन'—राजा की सभा का चित्रण।

१८२८ संवत् (१७७१) के पूस (दिसंबर से जनवरी) के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को लिखित इतिहास-संबंधी छोटी-सी पुस्तक।

इस जिल्द में रचनाओं के कई खण्ड या भाग हैं। सबसे बड़े का, जो दस अध्यायों या सर्गों में विभाजित, पूर्ण है, संबंध, मेरे विचार से, 'ऐनल्स ऑव राजस्थान' में उल्लिखित, चित्तौड़ के प्रसिद्ध राजा, हमीर से है।

'राजाओं का वर्णन'—राजाओं की प्रशंसा (दो राजा)। हिन्दुस्तानी में, नागरी अक्षर।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० २०।

'लंका का इतिहास', अथवा राम और रावण की लड़ाई।

सड़क रिशल्यू के पुस्तकालय का ब्रज भाखा का हस्तलिखित ग्रंथ, हैमिल्टन और लैंग्लै (Hamilton and Langlés) सूचीपत्र का नं० ४।

इस हस्तलिखित ग्रन्थ के न तो आदि में और न अन्त में कोई हिन्दुस्तानी शीर्षक है, केवल ग्रंथ के हाशिए पर कई बार 'लंका' शब्द लिखा हुआ है।

उसमें विभिन्न प्रकार के पद्य हैं, और संस्कृत के अनुसार, पृष्ठों की चौड़ाई के अनुसार लिखा गया है।

मुझे यह बताया गया है कि यह पोथी 'रामायण' का केवल एक अंश है, क्योंकि उसका प्रारंभ इन शब्दों से होता है—'सिंधु बचन सुनि राम'।

'विश्वकर्मा चरित्र'—विश्वकर्मा का इतिहास; हिन्दी में।

'शत्रुजय महात्म'।

'ऐनल्स ऑव राजस्थान' में, टॉड द्वारा उल्लिखित, जैन ग्रन्थ।

'हमीर-रास'—चित्तौड़ के राजा हमीर का इतिहास।

टॉड के 'ऐनल्स ऑव राजस्थान,' जि० २, पृ० २६६ तथा बाद के पृष्ठ, और मेरे 'हिन्दुई भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त,' पृ० ७ में उल्लिखित हिन्दुई पद्यों में इतिहास।

'हरि चन्द्र लीला'—राजा हरि चन्द्र की कथा।

मौंट्गोमरी मार्टिन, 'ईस्टर्न इंडिया', जि० २, पृ० १०३।

'हिन्दुस्तानी चरित्र'—हिन्दुस्तानी इतिहास।

मद्रास की 'उपय (Upay)-युक्त ग्रन्थ करण सभा' कही जाने वाली सोसायटी द्वारा प्रकाशित।—जे० मुलौख (J. Mull-och) कृत 'क्लैसीफ़ाईड कैटैलौग ऑव तमिल प्रिन्टेड बुक्स।'

५. सरस साहित्य

'अर्जुन बिलास'–अर्जुन का आनंद, अर्जुन सिंह कृत।–बहरामपुर, १८६४, ४४७ चौपेजी पृष्ठ।

हिन्दी काव्य जो मुझे श्री फिट्ज़ एड्वर्ड हॉल (Fitz Edward Hall) ने बताया था।

'आज़मगढ़ रीडर', चुनार के स्वर्गीय रेवरेंड डब्ल्यू० बाउले (Bowley) द्वारा मूल अँगरेज़ी से शुद्ध हिन्दी में अनूदित। इलाहाबाद, 'मिशन प्रेस', और आगरे से।

इस रचना का मूल, एच० सी० टुकर (Tucker) द्वारा विभिन्न अँगरेज़ी लेखकों के चुने हुए अंशों का संग्रह है। रेवरेंड डब्ल्यू० ग्लेन (Glen) का किया हुआ, और नं० १ आगरे से, नं० २ मिर्ज़ापुर से, २३८ पृष्ठों में, मुद्रित उसका एक उर्दू अनुवाद है।

'उदिध बृन्ध'—हिन्दी वर्ण-विपर्यय, पद्य जिनका चाहे जिधर से पढ़ने से एक ही अर्थ निकलता है।–बनारस, १८४६।

'ऋत मंजरी'–ऋतुओं का गुच्छा।—लाहौर, 'कोह-इ नूर' मुद्रणालय।

'कथा सार'—कथा का सार।

उत्तर-पश्चिम प्रदेश के देशी स्कूलों के लाभार्थ हिन्दी कहानी।

'क़बित संग्रह'—(हिन्दी) कविताओं का संग्रह।

हिन्दुस्तानी और ज़ेंद के अध्ययन में अत्यधिक लगे रहने वाले, स्वर्गीय जॉन रोमर की कृपा से प्राप्त मेरे निजी पुस्तकालय का हस्तलिखित ग्रंथ।

'कवित्व रत्नाकर'—कविता के रत्नों की खान; ब्रजभाखा में।

चैम्बर्स संग्रह का हस्तलिखित ग्रन्थ, जो आज कल प्रूस (Prusse) के में है। डॉ० फ़ोर्ब्स वाले संस्करण के, सूचीपत्र का नं० २२८।

'कहानी की पुस्तक'—कहानी की किताब; हिन्दी में।—बनारस से मुद्रित।

'क़िस्स-इ मिहतर यूसुफ़'—बड़े यूसुफ़ का इतिहास।

स्वर्गीय दोशोआ (d' Ochoa) द्वारा लाए सूचीपत्र के अनुसार, मुहम्मद-पनाह नामक भूप की मस्जिद में मिला हस्तलिखित ग्रन्थ।

'केला नारियल दन्द'—केला और नारियल के बीच वाद-विवाद।—कलकत्ता, १८६३, अठपेजी।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० २१।

'ख़ालिक बारी'—बड़ा सिरजनहार,[1] फ़ारसी-हिन्दुस्तानी का छोटा शब्द-कोष।—लाहौर, १५-१५ पंक्तियों के १६ बारहपेजी पृष्ठ।

'गर्ब चिंतामणि'—आत्मा का गर्व, हिन्दी कविता जिसका उल्लेख 'जर्नल ऑव दि एशियाटिक सोसायटी', वर्ष १८३६, पृ० ८०५, में हुआ है, जिसके दो पद्यों का अनुवाद इस प्रकार है:

'राजा कर्ण, जिन्होंने प्रचुर मात्रा में स्वर्ण का दान किया, नष्ट हो गए। वे क्षण भर में नष्ट हो गए, और उनका निवास-स्थान (समाधि) जंगल में बनाया गया है।'

'चिट्ठियों की पुस्तक'—हिन्दी की चिट्ठियों संबंधी पुस्तक।—बनारस से मुद्रित।

'चित्र गोपाल' (मसनवी)—गोपालों के स्वामी (कृष्ण) का वर्णनात्मक काव्य।

लखनऊ के, नवल किशोर का जनवरी, १८६६ का सूचीपत्र।

---

[1] इस रचना के प्रथम शब्द।

'जै सिंह कल्प द्रुम' – जै सिंह का कल्प द्रुम।

प्रसिद्ध जयपुर नरेश, जै सिंह की आज्ञा से लिखित, संस्कृत, अरबी, फ़ारसी और हिन्दी भाषाओं का बड़ा विश्व-कोष। – 'कलकत्ता रिव्यू', फ़रवरी, १८६७।

'ज्ञान दीपिका' – ज्ञान की लौ, स्त्रियों के लिए जो अपने को शिक्षित बनाना चाहती हैं; हिन्दी में। – बरेली, १८६५, २६ पृ०।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ३६।

'ज्ञान प्रकाश' – ज्ञान संबंधी स्पष्टीकरण।

उत्तर-पश्चिम प्रदेश के देशी स्कूलों के लाभार्थ हिन्दी व्याकरण।

'तुलसी शब्दार्थ प्रकाश' – तुलसी के पद्यों के अर्थों का स्पष्टीकरण, जया (Jayâ) गोपाल द्वारा ; हिन्दी में। – बनारस, १८६६, १४४ अठपेजी पृष्ठ।

'ध्रुव लीला' – ध्रुव की कथा, मीरा लाल द्वारा; हिन्दी में। – दिल्ली, १८६८, ८ अठपेजी पृष्ठ।

'नक़्लियात-इ हिन्दी'—हिन्दी में लघु कथाएँ।—लखनऊ, १८४५, अठपेजी।

'पट्टन का विध्वंस', अर्थात् सोमनाथ पट्टन, एक मुसलमान द्वारा लिखित हिन्दी कविता।

टॉड, 'ट्रैविल्स इन् वैस्टर्न-इंडिया', पृ० ३२१।

'पद माला'—पदों की माला, छंदों पर पुस्तक ; हिन्दी में।—आगरा, १८६४, १२ पृ०।

'पद्यात्मक कहानी' या 'Lais'।

कर्नल टॉड ने मध्य भारत के चारणों द्वारा रचित इस प्रकार की काव्य-रचनाओं के नाम दिए हैं, कविताएँ जो, तीन सौ से अधिक

की संख्या में, मेवाड़ नरेश के पुस्तकालय में हैं, और जिनमें से एक प्रति उन्होंने ली जो दो मोटी फ़ोलिओ जिल्दों में हैं।

'पन्नन की बात'—४१४ कथाओं का संग्रह।—बड़ा चौपेजी, नागरी अक्षर।

कर्नल टॉड द्वारा संग्रहीत हिन्दुई हस्तलिखित ग्रंथ।

'पहली पुस्तक'—पहली किताब, बच्चों की शिक्षा के लिए।—बनारस, १८६४, २४ अठपेजी पृष्ठ।

'पांडव गीत'—पांडवों का गीत, हिन्दी कविता।

'फूल चरित्र'—फूलों का चरित्र, भारतवर्ष के ख़ास-ख़ास फूलों का वर्णन करने वाली छोटी कविता।

हस्तलिखित ग्रंथ जो मेरे निजी संग्रह में है।

'बद्री-नाथ ओ फ़र्रुख़ाबाद की कहानी'—बद्रीनाथ और फ़र्रुख़ाबाद का इतिहास।

यह रचना 'फ़र्रुख़ाबाद बद्रीनाथ की कहानी' के उलटे शीर्षक से भी बताई गई है।—'आगरा गवर्नमेंट गज़ट', पहली जून, १८५१ का अंक।

'बन मधो'—बन का शहद, हिन्दी छन्द शास्त्र।—आगरा, १८६४।

'बरण प्रकाश'—वर्णमाला का स्पष्टीकरण; हिन्दी में।

लखनऊ के नवल किशोर का जनवरी, १८६६ का सूचीपत्र।

'बरतन चरित्र'—बर्तन की कथा, हिन्दी कहानी।—आगरा, १८६४, २० पृ०।

'बलदेव जी की बारहखड़ी'—बल की खड़िया के बारह चिन्ह, हिन्दी कविता।—८ बारहपेजी पृष्ठ।

'बागूवरवेन्द्र वीर सिंह वर्णन', हिन्दी दोहों में।—बनारस, १८४६, अठपेजी।

'बारह मासा'—बारह महीने, बेनी माधो कृत, राधा का विरह-वर्णन, हिन्दी कविता।– दिल्ली, १८६८, ८ सोलहपेजी पृष्ठ।

'बृत्तांत धर्म सिंह'– धर्म सिंह की कथा ; हिन्दी में।

'बोध चतुर्पथ चन्द्रिका'– बुद्धि के चार पथों का चन्द्रमा (हिन्दी और संस्कृत प्राइमर)।– मिर्ज़ापुर।

'भाषा का व्याकरण'– भाषा (भाखा) या हिन्दी व्याकरण, भारतीय सरकार द्वारा इन्स्टीट्यूट को दिया गया।

'भाषा कोष' या 'भाषा अमर कोष'– राग सागर द्वारा उल्लिखित, हिन्दी में अमर सिंह का कोष।

'मित्र लाभ'– एक मित्र का लाभ।– बनारस, १८५२।

संभवत: संस्कृत के आधार पर 'हितोपदेश' का हिन्दी अनुवाद।

'मेले की कहानी'– एक मेले की मनोरंजक कथा।– बनारस, १८५६, १८ बारहपेजी पृष्ठ।

'मोती बिनोला का झगड़ा'– मोती और बिनौले के बीच झगड़ा, कहानी ; हिन्दी में।– आगरा, १८६८, ८ सोलहपेजी पृष्ठ।

'मोहिनी चरित्र'– मोह लेने वाली कथा, 'फ़सान-इ अजायब' का प्राण कृष्ण द्वारा हिन्दी अनुवाद।– दिल्ली, १८६६, १८० अठपेजी पृष्ठ।

'रस खानि'– रस की खान, हिन्दी कविता।– आगरा, १८५८, ८ सोलहपेजी पृष्ठ।

'रस माला'– रस की माला ('पश्चिम भारत में, गुजरात प्रान्त का हिन्दू इतिहास, ऐलैग्ज़ैंडर किनलौख फ़ोर्ब्स (Alex. Kinloch Forbes) कृत, चित्रों सहित।– लंदन, १८५६, दो जिल्द, अठपेजी।

जेंकर, 'बिब्लिओथेका ऑरिएंटालिस' (Bibliotheca Orientalis)।

'रस राज' – रस का राजा (कवियों की रचनाओं से संग्रह)। – आगरा, १८६४, २०० पृ० ।

'रामायण गीत' – 'रामायण' का गीत ।

उत्तर-पश्चिम प्रदेश के स्कूलों के लाभार्थ हिन्दी कविता ।

'लछमण शतक' – लक्ष्मण पर सात पद्य । – बनारस, १८६७, अठपेजी ।

'लघु चन्द्रिका' – (व्याकरण के) चन्द्रमा की हलकी चाँदनी ।

उतर-पश्चिम प्रदेश के स्कूलों के लाभार्थ हिन्दी व्याकरण ।

'लड़कों की कहानी'— बच्चों के लिए कहानियाँ ; हिन्दी में, नागरी अक्षर । – मिर्ज़ापुर ।

'लड़कों की पुस्तक' – बच्चों की पुस्तक, हिन्दी बारहखड़ी । – शिमला, १८५० ।

'लेफ्टिनेंट कर्नल लेन (Lane) द्वारा अनुवाद, दृष्टान्त और व्याख्या सहित, मद्रास स्कूल बुक सोसायटी द्वारा प्रकाशित, हिन्दुस्तानी कहावतों का संग्रह (A)', १८७० ।

'वाक्यों, कहानियों और कहावतों (का संग्रह)' ; हिन्दुस्तानी में । – कलकत्ता, १८०४, अठपेजी ।

'विनतावली' – गानों का संग्रह । – बनारस, १८६५, ५२ अठपेजी पृष्ठ ।

'शिक्षा की वार्ता' – जो शिक्षा के लिए प्रयुक्त होती है ; हिन्दी में । – लाहौर, 'कोह-इ नूर मुद्रणालय' ।

'शिक्षा प्रकार' या 'प्रचार' – शिक्षा की विधि, अर्थात् ईसप (Esope) , फ़ैद्र (Phèdre) आदि की कहानियाँ अँगरेज़ी से अनूदित और इस भाषा के अध्ययन के उपयुक्त बनाई गईं । – आगरा, १८५३, ५० बारहपेजी पृष्ठ, चित्रों सहित ।

उत्तर-पश्चिम प्रदेश के देशी स्कूलों के लाभार्थ नीति और शिक्षा-संबंधी रचना ।

'शिशु बोधक'—हिंदुई रीडर।—कलकत्ता, १८३८, १८४६ और १८५१, ३ जिल्द, बारहपेजी।

'संगीत ध्रू का'—ध्रू की प्रशंसा में कविता; हिन्दी में।—दिल्ली, १८६८, ३६ सोलहपेजी पृष्ठ।

'सनीचर की कथा'—सनीचर का वर्णन, उसके आदर में पद्य; हिन्दुस्तानी में।—आगरा, १८६०, १० सोलहपेजी।

'सभा बिलास'—सभा के आनंद।

जि० २, पृ० २३२ में उल्लिखित रचना के अतिरिक्त, कई और संग्रह हैं जिनका यही शीर्षक है। एक, अँगरेज़ी में, 'Readings in poetry' शीर्षक सहित, रेवरेंड डब्ल्यू० बाउले का है, आगरा, स्कूल बुक सोसायटी; एक दूसरा, देवनागरी अक्षरों में, जॉन पार्क्स लेडली (John Parks Ledlie) का है, आगरा, १८५७, ७२ अठपेजी पृष्ठ, और अन्त में एक डब्ल्यू० प्राइस का है, कलकत्ता, १८२८, अठपेजी। उन सब में हिन्दी की चुनी हुई कविताओं के अंश हैं।

'समान' (Samân)—तैयारी।

उत्तर-पश्चिम प्रदेश के स्कूलों के लाभार्थ हिन्दी व्याकरण।

'सरस रस'—शुद्ध रस।

राग सागर द्वारा अपने 'संगीत राग कल्प द्रुम' में उल्लिखित हिन्दुई रचना।

'साँच लीला'—सच्चा खेल, रसिक राय कृत।

उत्तर-पश्चिम प्रदेश के लिए प्रकाशित हिन्दी कविताएँ।

'सिंगार' या 'शृंगार संग्रह'—सजावट का संग्रह (काव्य पर एक हिन्दी रचना), हिन्दी कविताएँ।—बनारस १८६५, २७३ पृष्ठ।

'स्त्री उपदेश' – स्त्रियों से संबंधित उपदेश, पं० सीता राम द्वारा कथोपकथन। – बुलंदशहर, १८६५, १६ पृ०।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ४०।

'स्त्री शिक्षा' – स्त्रियों की शिक्षा, बनारस के, पं० राम जस कृत। – बरेली, १८६५, ३६ पृ०।

उत्तर-पश्चिम प्रदेश की सार्वजनिक शिक्षा समिति द्वारा प्रकाशित हिन्दी रचना।

'हनुमान नाटक' – हनुमान का नाटक, राग सागर द्वारा उल्लिखित; हिन्दी में।

इसी विषय का संस्कृत नाटक एच० एच० विल्सन द्वारा अनूदित हिन्दू थिएटर के अंशों में है।

'हरिवंश पुराण', लाल जी द्वारा, संस्कृत पुराण का हिन्दी पद्यों में संक्षेप। – बनारस, १९२६ संवत् (१८३६), २५-२५ पंक्तियों के ४६३ अठपेजी पृष्ठ।

'हिन्दी भाषा का व्याकरण' – भारतीय भाषा का व्याकरण (सरल प्रश्नोत्तरी के रूप में, युवकों की शिक्षा के लिए हिन्दी व्याकरण)। – कलकत्ता, १८५३, ६८ बारहपेजी पृष्ठ, और आगरा, १८५५, ५५ अठपेजी पृष्ठ।

मिशनरी बडेन (Buden) की, अँगरेज़ी से अनूदित।

'हिन्दुई रीडर, सरल वाक्यों और नैतिक तथा मनोरंजक कहानियों का संग्रह'। – कलकता, १८३७, ३ जिल्द, बारहपेजी।

६. मिश्रित

'अष्ट वक्र'—आठ टेढ़े ; ब्रज-भाखा में।—बंबई, १८६४, ४५२ अठपेजी पृष्ठ।

'आनन्द रस'—आनन्द का रस, ग्यारह भागों (एकादश स्कंध) में विभाजित रचना।

'कुरंग बामा'—दोषपूर्ण शरीरों की स्त्रियाँ, एक राजपूत राजा की तीन लड़कियों की साहसिक कथा ; हिन्दी में।

सिक्रा दोतल्ला (Sicrâ Dotalla) द्वारा इस रचना का बँगला पद्यों में अनुवाद हुआ है, १०० बारहपेजी पृष्ठ।—जे० लौंग, 'सेलेक्शन्स फ्रॉम दि रेकॉर्ड्स ऑव दि बेंगाल गवर्नमेंट', कलकत्ता, १८५६।

'गया महातम'—(बिहार के प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान) गया का महत्त्व ; हिन्दी में।—मेरठ, १८६५।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ३३।

'घरों का बर्णन'—घरों का बयान ('The Two Houses'); हिन्दी में, नागरी अक्षर।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ३५।

'जात कसौटी' जातियों की कसौटी।—तिरहुत, १८६५।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ३२।

'ज़िला इटावा के हल्का बन्दी मद्रिसों के पढ़ने वालों को शिक्षा'—इटावा हलके के स्कूलों के विद्यार्थियों के लिए शिक्षा ; हिन्दी में ; ऐलेन ए० ह्यूम कृत।—इटावा, १८५८, २० अठपेजी पृष्ठ।

'तर्क संग्रह'—तर्कों का संग्रह ; हिन्दी में।

'दिहात पथ प्रकाश'—देहात की रीतियों का वर्णन ; हिन्दी में।—लाहौर, 'कोह-इ नूर' मुद्रणालय।

'मुतफ़रिकात'—मिश्रित।

अठपेजी हस्तलिखित पोथी, ईस्ट इंडिया लाइब्रेरी का नं० ६०८, जिसमें हैं १. दोहरों और चौपाइयों में एक कविता, बिना लेखक के नाम की, 'नुस्ख़-इ हिन्दुई', जिसका संबंध मुसलमान धर्म के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक मतों से है ; २. अनेक ग़ज़लें तथा अन्य पद्यांश, अधिकतर सूरदास और कबीर, जिन्हें यहाँ सैयद उपाधि दी गई है, के ; ३. भारतीय इलाजों के नुस्ख़े।

किसी यूरोपियन द्वारा लिखे गए, शीर्षक के अनुकरण पर इसी हस्तलिखित ग्रन्थ में कोकशास्त्र का अनुवाद 'नुस्ख़-इ कामीर' ('कामिल') और 'नुस्ख़-इ अमलियत ओ नुसूश'—दस्तकारी और शिल्प सम्बन्धी पुस्तक—हैं।

'मूरख समझवान'—मूर्खों की समझ।

१८५७ में दिल्ली लेने के बाद अँगरेज़ सरकार द्वारा ख़रीदी गई पुस्तकों में मिली रचना, सूचीपत्र का नं० १०६०।

'Satyana raya nacadika—पुराणों से संग्रहीत, 'इतिहास समच्चयों' का एक अध्याय।—आगरा अठपेजी।

'सुजान शतक'—बुद्धिमान के सौ।

सुयोग कवि और संगीतज्ञ, मुहम्मद शाह के मुन्शी, आनन्द घन, कायथ, जो नादिर शाह द्वारा मथुरा की लूट में मारे गए, द्वारा पद्यों में हिन्दी रचना।

'सोने लोहे का क़िस्सा', या 'झगड़ा'—सोने और लोहे की कथा, या दो धातुओं में वादविवाद, नज़ीर (वली मुहम्मद) कृत; हिन्दी में।—आगरा, १८६५, ८ अठपेजी पृष्ठ; दूसरा संस्करण १८६८ का, दिल्ली।

जे० लौंग, 'कैटैलौग', पृ० ४२।

'हिन्दी (खड़ी बोली) में स्त्री-शिक्षा की व्याख्या'।—कलकत्ता, १८२२, अठपेजी, स्कूल बुक सोसायटी।

अतिरिक्त अंश

(Addenda)

× × ×

(प्रथम संस्करण के परिशिष्ट में * चिन्हित ग्रंथ दूसरे संस्करण के इस अतिरिक्त अंश में हैं। इसलिए उनका यहाँ उल्लेख नहीं किया गया। निम्नलिखित प्रथम

संस्करण के परिशिष्ट में नहीं है। प्रथम संस्करण के परिशिष्ट में जो ग्रंथ * चिन्हित नहीं है वे द्वितीय संस्करण के इस अतिरिक्त अंश में नहीं हैं—अनु०)

'जंगनामा-इ राव भाऊ'—राव भाऊ के युद्ध की पुस्तक ।

पानीपत नगर के निकट, ७ जनवरी, १७६१ को मुसलमानों द्वारा मरहठों पर स्मरणीय विजय पर कविता। मुसलमान सेना का नायक, काबुल का सम्राट्, अहमद शाह अब्दाली, था ; मरहठों की सेना का राव भाऊ था। मैकेन्ज़ी संग्रह में इस रचना की एक हस्त-लिखित प्रति थी। देखिए, एच० एच० विल्सन द्वारा प्रकाशित उसका सूचीपत्र, जि० २, पृ० १४५।

'मधु-नायक सिंगार' ।

फ़रज़ाद कुली के पुस्तकालय में हस्तलिखित पोथी। यदि मैंने यह शीर्षक ठीक पढ़ा है, तो उसका अर्थ होना चाहिए 'मधुर प्रेमी का शृंगार' और तब यह संभवतः कृष्ण संबंधी शृंगार रस की रचना है ; किन्तु मैं इस अनुवाद के संबंध में निश्चित नहीं हूँ क्योंकि मैं पुस्तक का विषय नहीं जानता।

'मसनवी-इ जान पहचान', हिन्दी कविता ।

यदि 'जान पहचान' रचयिता का नाम नहीं है, तो शीर्षक का अर्थ है 'आत्मा के पहचानने पर मसनवी'।

'सुरूद हिन्दी'—संगीत पर, हिन्दी में, रचना ।

मुहम्मद बख्श के पुस्तकालय में हस्तलिखित पोथी।

'हठ्ठ प्रदीप' ।

वॉर्ड द्वारा उल्लिखित, जयपुर की बोली में रचना, 'हिस्ट्री, लिट्रेचर एट्सीटरा, ऑव दि हिन्दूज़' (हिन्दुओं का इतिहास, साहित्य, आदि), जि० २, पृ० ४८१।

परिशिष्ट ३

[मूल के द्वितीय संस्करण से]

उर्दू और हिन्दी पत्रों की अकारादिक्रम से सूची

[यहाँ केवल हिन्दी-पत्रों की सूची दी गई है—अनु०]

'अमृत बाज़ार पत्रिका' – बाज़ार के अमृत की पत्रिका; १८७० की समीक्षा (Review), पृ० ७२।

'अवध गज़ट समाचार'—अवध के गज़ट के समाचार, लखनऊ से; १८६५ का व्याख्यान, पृ० ११।

'उदन्त मार्तण्ड' – समाचारों का सूर्य, श्रीरामपुर से।

'उदैपुर गज़ट' – उदैपुर का गजट ; १८६६ का व्याख्यान, पृ० १८।

'कवि वचन सुधा' – कवियों के वचनों का अमृत, बनारस से; I, ५७७।

'ग्वालियर अखबार' – ग्वालियर के समाचार या ग्वालियर गज़ट; II, २१७।

'चीनापटन वृत्तांत'—मद्रास के समाचार।

'जग लाभ चिंतक' – जग के लाभ पर विचार, अजमेर से; II, ३३८; III १३१।

'जगत् समाचार' – मेरठ से ; १८६६ का व्याख्यान, पृ० १५।

'ज्ञान दीपक' – ज्ञान का दीपक, कलकत्ते से; I, १८७।

'ज्ञान दीपिका' – ज्ञान का दीपक, सिकन्दरा से; १८६७ का व्याख्यान, पृ० २६।

'ज्ञान प्रदायिनी पत्रिका' – ज्ञान बाँटने वाली पत्रिका, लाहौर से; II, ३७८, ४४१; III, २५२।

'तत्व बोधिनी पत्रिका' – बुद्धि के सार की पत्रिका, बरेली से; I, ५१४।

'धर्म प्रकाश' – न्याय का स्पष्टीकरण, आगरे से; II, १५८; और १८६६ का व्याख्यान, पृ० १५।

'पाप मोचन' – पाप से छुटकारा, आगरे से; I, २६१, III, १५८, और १८६६ का व्याख्यान, पृ० १७।

'प्रकाश'—स्पष्टीकरण; II,११६ (वही जो 'धर्म प्रकाश' है)।
'प्रजाहित'—प्रजा की भलाई, इटावा से, II, ६१।
'बनारस अख़बार'—बनारस के समाचार; I, ४८६; II, ५७२।
'बनारस गज़ट'।
'विद्या दर्श'—विद्या पर दृष्टिपात, आगरे से; III,II।
'बृत्तान्त दर्पण'—समाचारों का दर्पण, आगरे से।
'बृत्तांत बिलास'—समाचारों का विलास, भोटान में जमून (Jamûn) या जम्बू (Jambu) से ; १८६७ का व्याख्यान, पृ० २६।
'ब्यौपारी श्री अमृतसीर'—अमृतसीर का व्यापारी; १८६७ का व्याख्यान, पृ० २६।
'भरत खण्ड अमृत'—भारत का अमृत; आगरे से, I, ३०१।
'मार्तण्ड'—सूर्य, कलकत्ते से; II, ४२३।
'मालवा अख़बार'—मालवा के समाचार, इन्दौर से; III, १६।
'रतन प्रकाश'—रत्नों का स्पष्टीकरण, बुंदेलखंड में, रतलाम से; I, ३०८।
'रुहेलखण्ड अख़बार'—रुहेलखण्ड के समाचार, मुरादाबाद से।
'लोक मित्र'—लोगों का मित्र, सिकन्दरा से; १८६३ का व्याख्यान, पृ० ८।
'विक्टोरिया गज़ट', सहानरपुर से।
'वृत्तान्त दर्पण'—समाचारों का दर्पण, इलाहाबाद से; III, १२।
'शिमला अख़बार'—शिमला के समाचार; I, ८८ III, २६६।
'समय बिनोद'—समय का आनन्द, नैनीताल से; II, ६६।
'समाचार'—ख़बर, लखनऊ से।
'सर्व उपकारी'—सबके लिए कार्य, आगरा से; III, १३१।
'सुधाकर अख़बार'—संतोष-जनक समाचार, बनारस से; II, ५७१।
'सुधा बर्षा'—अमृत की वर्षा, कलकत्ता से।
'सूरज प्रकाश'—सूर्य का स्पष्टीकरण, आगरा से।
'सोम प्रकाश'—चन्द्रमा का स्पष्टीकरण, १८६८ का व्याख्यान, पृ० ८।

———

परिशिष्ट ४

(अनुवादक द्वारा जोड़ा गया)

[वह अंश जो मूल के प्रथम संस्करण के द्वितीय भाग में है, किन्तु जो न मूल के प्रथम संस्करण के प्रथम भाग और न मूल के द्वितीय संस्करण के किसी भाग के मुख्यांश में है।—अनु०]

मधुकर साह[१]

छप्पय

राजपुत्रों में, मधुकर उनमें से हैं जिन्होंने विष्णु के भक्तों का अत्यधिक आदर किया।

उन्होंने मथुरा और मेड़ता के विष्णु-भक्तों का, जिन्हें आवश्यकता थी, और जिन्होंने अपने काम-क्रोध के विरुद्ध सफलतापूर्वक संघर्ष किया था, पोषण किया। राम और हरी के सेवक अन्य देवताओं से संबंधित संप्रदायों के प्रासादों को नष्ट होते देख कर संतुष्ट थे। करम सिंह[२] ने अपनी इच्छानुसार, उच्च आदर्शपूर्ण नायक, त्रिलोकी के राजा और पवित्र कृत्यों के पूर्ण करने वाले, राम का व्रत लिया। और परमेश, अमर स्वामी, अदृश्य नायक, कान्हर (कृष्ण) ने मधुकर साह को सर्वस्व दिया।

राजपुत्रों में, मधुकर उनमें से हैं जिन्होंने विष्णु के भक्तों का अत्यधिक आदर किया।[३]

---

१ 'साह', शाह—बादशाह—के स्थान पर है: 'बादशाह' को 'पातसाह' भी कहा जाता है। मेरे विचार से मधुकर वही मधु सिंह हैं जिन्होंने १६ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में शासन किया।

२ ऐसा प्रतीत होता है कि यह दूसरा नाम मधुकर का ही है।

३ मूल छप्पय इस प्रकार है:

'भक्तन को आदर अधिक राजबंश में इन कियो।

टीका

ओरछा[1] के भूप, मधुकर ने अपने पास आने वाले विष्णु के सेवकों के पैर धोकर, और इस प्रकार से मिले जल को पीने का भार लिया। इस व्रत पर क्रुद्ध हो उनके सब भाई एक गधा लाए, उसकी गर्दन में माला पहिना और माथे पर चंदन लगा कर, उसे महल में घुसा दिया, और स्वयं दरवाज़े पर रह गए। मधुकर दौड़े, इस गधे के पैर धोए, और यह कहते हुए उसके पैरों पर सिर रख दिया: 'तो क्या मेरे नगर के सब लोग वैष्णव हो गए हैं, क्योंकि धर्म ने इस गधे के द्वारा अपने को ही प्रकट किया है? इस प्रकार, मनुष्यों के अभाव में, गधे में पूर्णता ढूँढ़नी चाहिए।'

राजा के गुरु, व्यास, वहाँ थे, और इस परिस्थिति में उन्होंने यह पद पढ़ा:

पद

सच्चा सुख केवल विष्णु-सेवकों के घरों में मिलता है; वहाँ के अतिरिक्त अपार धन-राशि नपुंसक पुत्र की भाँति है।—यह सुख उसी को मिल सकता है जो भक्ति-पूर्वक वैष्णवों का चरणामृत पीता है और उसी को मोक्ष मिलता है। जो सुख न निद्रा में है, न असंख्य पवित्र स्थानों में नहाने में है, विष्णु के भक्तों के दर्शन से मिलता है; इससे सब दुःख दूर हो जाते हैं।—यह सुख वह नहीं है जो पवित्र

लघुमथुरा मेरता भक्त अति जैमल पोषे।
टोड़ भजन निधान रामचन्द्र हरिजन तोषे।
अभै राम इक रस नेम नीमा के भारी।
करमशील सुरतान भगवान बीर भूपति व्रतधारी।
ईश्वर अछैराज राइ मल काहर मधुकर-नृप सर्बस दियो।
भक्तन को आदर अधिक राजबंश मैं इन कियो।'—अनु०

[1] अथवा उरछा, प्राचीन 'अरिजय' (Arijaya), इलाहाबाद प्रान्त का नगर, और जो पहले बुंदेल जाति की राजधानी था।

और स्नेहपूर्ण नारी के आलिंगन से मिलता है।--जब वह मिल जाता है, तो विष्णु के भक्तों की कथाएँ सुनकर अश्रु-वर्षा होती है...।--यदि यह सुख साधुओं को मिल जाय तो उनकी आकृति परिवर्तित हो जाय,[1] और दीन व्यास को लङ्का और मेरु[2] प्राप्त हो जायँ।

पुराणों में शिव ने जो कहा है वह इस प्रकार है :

संस्कृत श्लोक

संप्रदायों में सर्वोत्तम विष्णु-संप्रदाय है; किन्तु जो और भी अधिक सुफल चाहते हैं, वह उनके दासों का आदर करने से मिलता है।

---

[1] अर्थात्, 'वे प्रसन्न होंगे'

[2] ब्राह्मणधर्मावलंबी भारत के दो प्रधान पवित्र स्थान।

परिशिष्ट ५

(अनुवादक द्वारा जोड़ा गया)

[वह अंश जो मूल के प्रथम संस्करण के द्वितीय भाग में है, किन्तु जो न मूल के प्रथम संस्करण के प्रथम भाग और न मूल के द्वितीय संस्करण के किसी भाग के मुख्यांश में है—अनु०]

राँका और बाँका

राका पति बांका तिया बसै पुर पंडुर[1] में उर में न चाह नेकु रीति कुछु न्यारिये। लकरीन बीनि करि जीविका नवीनै करै धरै हरि रूप हिये तासों यों जियारिये। विनती करत नामदेव कृष्ण देवजू सों कीजै दुख दूरि कही मेरी मति हारिये। चलौ लै दिखाऊं तब तेरे मन भाऊं रहे बन छिप दोऊ थैली मग मांझ डारिये ३६३ आये दोऊ तिया पति पाछे बधू आगे स्वामी औचक ही मग मांझ संपति निहारिये। जानी यों युवति जात कभू मन चलि जात याते वेगि संभ्रम सों धूरि वापै डारिये। पूछी अजू कहां कियो भूमि में निहुरि तुम कही वही बात बोली धनहू बिचारिये। कहै मोको राका ऐपै बांका आजू देखी तुही[2] सुनि प्रभु बोले बात सांची है हमारिये ३६४ ॥

नामदेव हारे हरि देव कही औरै बात जोपै दाहगात चलौ लकरी

---

[1] मूल पाठ में 'पुण्डुरपुर' है। किन्तु यह वही नगर है जिसका प्रश्न पृ० ४८ (मूल के प्रथम संस्करण की द्वितीय जिल्द का पृष्ठ—अनु०) में उठ चुका है। अतः मैंने यहाँ समान हिज्जे ग्रहण किए हैं (अर्थात् Pandurpur, न कि Pundurpur—अनु०)।

[2] तासो ने इसका फ्रेंच में अनुवाद किया है : राँका ने उससे कहा 'तुम मुझसे अधिक पूर्ण हो'। किन्तु फुटनोट में शाब्दिक अनुवाद दिया है : जितनी मैं राँका नहीं हूं उतनी तुम बांका अधिक हो।—अनु०

सकेरिये। आये दोऊ बीनिबे को देखी इक ठौरी ढेरी द्वै हू मिली पावे तेउ हाथ नहीं छेरिये। तब तौ प्रगट श्याम लायो यों लेवाइ घर देखि मूढ़ फोरा कह्यौ ऐसे प्रभू फेरिये। बिनती करत जोरि अंग पट धारो भारो बोझ परो लियो पीर मात्र हेरिये ३९५ ॥[1]

---

[1] दे० 'भक्तमाल सटीक' (नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, १८८३ ई०, प्रथम संस्करण) में 'टीका राकाबांका की'। मूल छप्पय न तो तासी ने दिया है और न इस 'भक्तमाल सटीक' में है।—अनु०

तासी द्वारा फ्रेंच में दिए गए अनुवाद और इसमें कोई अंतर नहीं है। अंतर केवल गद्य और पद्य का है।

परिशिष्ट ६

(अनुवादक द्वारा जोड़ा गया)

जै देव (जय देव)[1]

की जो इसवी सन् से अर्द्ध शताब्दी पूर्व जीवित थे, जो ब्राह्मण संत के रूप में प्रसिद्ध होने के अतिरिक्त संस्कृत-कवि के रूप में भी प्रसिद्ध थे, हिन्दू लेखकों में विशेष उल्लेख होना आवश्यक है।[2] वास्तव में लाल ने, अपने 'अवध विलास' की भूमिका में, उन्हें अत्यधिक प्रसिद्ध हिन्दू कवियों की श्रेणी में रखा है और उनकी इसी विशेषता के कारण मैंने उनका यहाँ उल्लेख किया है, न कि 'गीत गोविंद' शीर्षक उनके प्रसिद्ध संस्कृत काव्य के कारण, जिसके वे रचयिता हैं, किंतु जिस काव्य का अनुवाद और जिसकी टीका हिन्दी में हुई है।

उनसे संबंधित 'भक्तमाल' से अंश इस प्रकार है :[3]

छप्पय

जयदेव कवि नृप चक्कवै खंड मंडलेश्वर आनि कवि।
प्रचुर भयो तिहूं लोक गीत गोविंद उजागर।
कोक काव्य नव रस सरस श्रृंगार को आगर।
अष्टपदी अभ्यास करै तिहि बुद्धि बढ़ावै।
राधा रवन प्रसन्न सुन तहां निश्चै आवै।

---

१ भा० 'जय का देवता'

२ 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १७, पृ० २२८

३ टॉड ने 'ऐनल्स ऑव राजस्थान', जि० १, पृ० ५४० में जो कुछ कहा है वह भी देखिए।

संत सरोरुह खंड को पदमावति सुख जनकन रवि ।
जयदेव कवि नृप चक्कवै खंड मंडलेश्वर आनि कवि ।

टीका

किंदु बिलु[१] ग्राम तामें भये कबिराज भर्यो रसराज हिये मनमन चाखिये । दिन दिन प्रति रुख रूखतर जाइ रहे गहे एक गूदरी कमंडल को राखिये । कही देवै बिप्र सुता जगन्नाथ देवजू को भयो याको समय चल्यो देन प्रभु भाखिये । रसिक जयदेव नाम मेरोई स्वरूप ताहि देवौ ततकाल अहो मेरी कहौ साखिये ।।

चल्यो द्विज तहां जहां बैठे कविराज राज अहो महाराज मेरी सुता यह लीजिये । कीजिये बिचार अधिकार बिस्तार जाके ताही को निहारि सुकुमारि यह दीजिये । जगन्नाथ देवजू की आज्ञा प्रतिपाल करौ टरौ मति धरौ हिये नातो दोष भीजिये । उनको हजार सोहैं हमको पहार एक तात फिरि जावौ तुम्है कहा कहि खीजिये ।। सुता सों कहत तुम बैठी रहौ याही ठौर आज्ञा शिरमौर मेरे नहीं जात टारिये । चल्यौ अनखाइ समझाइ हारे बातनि सों मन तू समुझि कहा कीजै शोच झारिये । बोले द्विज बालकी सों आपनो बिचार करौ धरौ हिये ध्यान पै जात न सँभारिये । बोली कर जोरि मेरो जोर न चलत कछू चाहो सोई होहु यह वारि फेरि डारिये ।।[२] जानी जब भई तिया कियो प्रभु जोर मोपै तौपै एक झोपड़ी की छाया करि लीजिये । भई तब छाया श्याम सेवा पधराइ लई नई एक पोथी[३] मैं बनाऊं मन कीजिये । भयो जू प्रगट गीत सरस गोविंद जू को मन में प्रसंग शीश

---

१ इस गाँव के वास्तविक नाम और स्थान के बारे में जोन्स और कोलब्रुक एक मत नहीं हैं । देखिए, लासेन (Lassen) : 'गीत गोविंद', प्रस्तावना, पृ० १ ।

२ प्रदक्षिणा—धार्मिक दृष्टि से किसी व्यक्ति या वस्तु के चारों ओर घूमना ।

३ क्योंकि वह ईश्वर की दृष्टि द्वारा पवित्र हो गई थी ।

मंडन को दीजिये । यही एक पद मुख निकसत शोच पर्यौ धर्यौ कैसे जात लाल लिख्यौ मति रीझिये ॥

संस्कृत पद

द्वाविमौ पुरुषौ लोके शिर शूल करौ परौ। गृहस्थश्च[१] निरारंभोयति नश्च परिग्रहः । शीश मंडलस्मरगरल खंडन मम शिरसि मंडन देहि पद पल्लवं मुदारं ।[२]

नीलाचल[3] धाम तामें पंडित नृपति एक करीवही नाम धरि पोथी सुखदाइये । द्विजनि बुलाइ कही वही है प्रसिद्ध करौ लिखि लिखि पठौ देश देशनि चलाइये[४]। बोले मुसकाइ विप्र छिप्र सों दिखाइ दई नई यह कोई मति अति भरमाइये । धरी दोउ मंदिर में जगन्नाथ देव जू के दीनी यह डारि वह हार लपटाइये ॥ पर्यो शोच भारी नृप निपट खिसानो भयो गयो उठि सागर में बूड़ो यह बात है । अति अपमान कियो कियो मैं बखान सोई गोइ जाति कैसे आँच लागी गात गात है । आज्ञा प्रभु दई मति बूड़ै तू समुद्र मांझ दूसरो न ग्रंथ वैसो वृथा तन पात है । द्वादश श्लोक लिखि दीजै सर्ग द्वादश में ताही संग चलैं जाकी ख्यात पात पात है । सुता एक माली की जु बैंगन[५] की बारी मांझ तोरै बनमाली गावै कथा सर्ग पांच की । डोलैं जगन्नाथ पाछे काछे अंग मिही झंगा आछैं कहि घूमै सुधि आवै विरह आंच की । फट्यौ पट देखि नृप पूछी अहो

---

१ ब्राह्मणों की सामाजिक व्यवस्था का इसे दूसरा आश्रम समझना चाहिए, 'विवाहित व्यक्ति' । यह शब्द 'गृह'–घर–से और 'स्थ'–रहने वाला–से बना है ।

२ ग्रंथ में यह पद हिन्दुई में अनुवाद सहित संस्कृत में है । 'गीत गोविन्द' में यह, सर्ग १०,१९, छं० ८ में पाया जाता है ।

3 विल्सन इस नगर को उड़ीसा के तट पर बताते हैं, 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १६, पृ० ५२ ।

४ अर्थात्, उसकी प्रतियाँ घुमाना ।

५ ऐग प्लान्ट (Solanum Melongena)

भयो कहा जानत न हम अब कहौं बात सांच की। प्रभु ही जनाई मन भाई मेरे वही गाथा लाये वह बालकी कोपालकी में नाच की।

धीर समीरे यमुना तीरे वसति बने बनमाली [१]

फेरो नृप डोंड़ी यह ओड़ी बात जानी महा कहा राजा रंक पढ़ै नीकी ठौर जानि कै। अत्तर मधुर औरु मधुर सुरनि ही सों गावै जब लाल प्यारी ढिग ही लै मानि कै। सुनो यह रीति एक मुगल[२] ने धारि लई पढ़ै चढ़े घोरे आगे श्याम रूप ठानि कै। पोथी को प्रताप स्वर्ग गावत हैं देव बधू आप ही जो रीझे लिख्यौ निज कर आनि कै॥ पोथी की तौ बात सब कही मैं सुहात हिये सुनो और बात जामें अति अधिकाइये। गांव में मुहर मग चलत में ठग[3] मिले कहौ कहां जात जहां तुम चलि जाइये। जानि लई आप खोलि द्रव्य पकराइ दियो लियो चाहो जोई सोई सोई मोको लाइये। दुष्टनि समझि कही कीनी इन बिद्या अहो आवै जो नगर इन्हैं बेगि पकराइये॥

एक कहै डारो मारि भलो है बिचार यही एक कहै मारो मति धन हाथ आयो है। जो पैले पिछानि कहूँ कीजिये निदान कहा हाथ पांव काटि बड़े गाढ़ पधरायो है। आयो तहां राजा एक देखि कै बिबेक भयो छयो उजियारो औ प्रसन्न दरशायो है। बाहिरि निकसि मानौ चन्द्रमा प्रकाश राशि पूछो इतिहास कह्यो ऐसो तन पायो है॥ बड़ोई प्रभाव मानि सकै को बखानि अहो मेरे कोऊ भूरि भाग दरशन कीजिये। पालकी बिठाय लिये किये सब ढूंढ़ि नीके जीके भाये भये कछु आज्ञा मोहिं दीजिये। करौ हरि साधु सेवा नाना पकवान मेवा आवैं जोई सन्त तिन्हैं देखि देखि भीजिये। आये वेई ठग माला

---

१ पाठ में यह पद केवल संस्कृत में है। जय देव के काव्य में यह पाया जाता है, और वहीं से लिया गया है, ४(५), ११, छं० ८।

२ तासो ने इस मुगल का नाम 'मोर मधो' लिखा है और उसे लाहौर का बताया है।—अनु०

3 इस समय तक इस शब्द का अर्थ है 'चोर' और 'धोखा देने वाला, बहकाने वाला'। यहाँ यह पहले अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, और उसमें भी खींच तान के साथ।

तिलक बिलक किये किलकि कै कही बड़े बंधु लखि लीजिये ॥ नृपति बुलाइ कही हिये हरि भाय भर ठरे तेरे भाग अब सेवा फल लीजिये। गयो लै महल मांझ टहल लगाये लोग लागे होन भोग जिय शंका तन छीजिये। मांगै बार बार बिदा राजा नहिं जान देत अति अकुलाय कही स्वामी धन दीजिये। दै कै बहु भांति सो पठाये संग मानसहू आवौ पहुंचाइ तब तुम पर रीझिये।[1]

पूछै नृप नर कोऊ तुम्हरी न सरवरि है जिते आये साधु ऐसी सेवा नहिं भई है। स्वामी जू सों नातो कहा कहो हम खाहिं हाहा राखिये दुराइ यह बात अति नई है। हुते इक ठौरे नृप चाकरी में तहां इन कियोई बिगारु मारि डारौ आज्ञा दई है। राखे हम हितू जानि ले निदान हाथ पाव वाही के ई शान हम अब भरि लई है ॥ फाटि गई भूमि सब ठग वे समाइ गये भये ये चकित दौर स्वामी जू पै आये हैं। कही जिती बात सुनि गात गात कांपि उठे हाथ पांव मोड़े भये ज्यों के त्यों सुहाये हैं। अचरज दोऊ नृप पास जा प्रकाश किये जिये एक मुनि आये वाही ठौर धाये हैं। पूछै बार बार शीश पायन में धारि रहे काहे पै उघारि कैसे मेरे मन भाये हैं ॥

राजा अति अरगही कही सब बात खोलि निपट अमोल यह संतन को भेश है। कैसो अपकार करौ तऊ उपकार करैं ढरैं रीति आपनी ही सरस सुदेश है। साधुता न तजैं कभू जैसे दुष्ट दुष्टता न यही जानि लीजै मिलैं रसिक नरेश है। जान्यो जब नाम ठाम रहौ इहां बलि जांव भयो मैं सनाथ प्रेम भक्ति भई देश है ॥ गयो जालि बाइ ल्याइ कबिराज राजति यौं किया लै मिलाय आप रानी ढिग आई है। मर्यो एक भाई वाको भई यौं भौजाई सती कोऊ अंग काढ़ि कोऊ कूदि परी धाई है। सुनत ही नृप बधू निपट अचंभौ भयौ इनकौ न भयौ फेरि कहि समुझाई है। प्रीति की न रीति यह बड़ी बिपरीति अहो छूटै तन जबै प्रिया प्राण छुटि जाई है ॥

---

[1] यह कथा जोसेफ़ की कथा की प्रतिच्छाया प्रतीत होती है।

ऐसी एक आप कहि राजा सों यहीं लै कै जावौ बाग स्वामी नेकु देखौं प्रीति को। निपट बिचारी बुरी देत मेरे गरैं छुरी तिया हठ मान करी ऐसे ही प्रतीति को। आनि कहैं आप पाये कही याही भांति आइ ढिग तिया देखि लो ढिगई रीति को। बोली भक्त वधू अजू वे तौ हौं बहुत नीके तुम कहा औचक ही पावत हौं भीति को॥ भई लाज भारी पुनि पुनि फेरि कै सँभारी दिन बीति गये कोऊ तब तब वही कीनी है। जानि गई भक्त वधू चाहत परीक्षा लियो कही अजू पाये सुनि तजी देह भीनी है। भयो मुख श्वेत रानी राजा आये जानी यह रची चिता जरौं मति भई मेरी हीनी है। भई सुधि आपु को जु आये बेगि दौरि इहां देखी मृत्यु प्राय नृप कही मरी दीनी है॥ बोल्यो नृप अजू मोहि तरैई बनत अब सब उपदेश लै कै धूरि में मिलायो है। कह्यौ बहु भांति ऐवे आवतन शांति किहूं गाई अष्टपदी सुर दियो तन ज्यायो है। लाजन को मार्यो राजा चाहै अपघात कियो जियो नहीं जात भक्ति लेशहू न आयो है। करि समाधान निज ग्राम आये किंदु बिल्व जैसो कछू सुन्यों यह परचौ लै गायो है॥

देवधुनी सोत हौ अठारह कोस आश्रम ते सदा अस्नान करैं धरैं योग ताई को। भयो तन वृद्ध तऊ छांड़ै नहीं नित्य नेम प्रेम देखि भारी निशि कही सुखदाई को। आवो जनि ध्यान करौ करौ जनि हठ ऐसो मानी नहीं आऊं मैं हीं जानौं कैसे आई को। फूले देखौं कंज जब कीजियो प्रतीति मेरी भई वाही भांति से वै अब लौं सुहाई को॥[1]

---

[1] 'भक्तमाल' के मूल छप्पय की टोका तासी ने किसकी टीका से ली है, यह उन्होंने नहीं लिखा। उपर्युक्त अंश प्रियादास कृत 'भक्तिरस बोधिनी टीका' से लिया गया है। उसमें और तासी द्वारा दिए गए अंश में मौलिक साम्य तो है, किन्तु विस्तार और अनुवाद की दृष्टि से उपर्युक्त अनुवाद शब्दशः नहीं है।—अनु०

परिशिष्ट ७

(अनुवादक द्वारा जोड़ा गया)

संकर[1] आचार्य

ने, ईसवी सन् की नवीं[2] शताब्दी में, नवीनता के प्रवर्तक वैष्णवों के विरुद्ध कट्टर हिन्दुत्व या शैवमत को शक्ति प्रदान करना चाहा, और संन्यासी ब्राह्मणों का एक मठ स्थापित किया। किन्तु इस प्रसिद्ध व्यक्ति और प्रख्यात संस्कृत लेखक का मैं यहाँ केवल इसलिए उल्लेख कर रहा हूँ क्योंकि उसनें हिन्दी में भी लिखा प्रतीत होता है।

यह ज्ञात है कि अन्य के अतिरिक्त सौ शृंगारिक कविताओं का प्रसिद्ध संग्रह 'अमर शतक' उनकी देन है जिसे स्वर्गीय द शेज़ी (Chézy) ने प्रकाशित और आंशिक रूप में फ्रेंच में अनूदित किया है, और जिसकी कुछ टीकाकारों ने रहस्यवादी अर्थ में व्याख्या की है।[3] उनकी 'तत् अनु संदान'—तत्व और अण के

---

[1] अथवा 'शंकर', शिव के नामों में से एक

[2] किन्तु जे० लौंग, 'डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग', पृ० १४, का केवल बारहवीं शताब्दी की ओर झुकाव है। जिस युग में यह प्रसिद्ध हिन्दू रहा उसके बारे में विभिन्न मत हैं। कोलब्रुक, विल्सन और राम मोहन रॉय के अनुसार ईसवी सन् की नवीं शताब्दी अत्यधिक संभावित तिथि है। ट्रॉयर (Troyer), 'कश्मीर का इतिहास' (Histoire du kachemyre), पहली जिल्द, पृ० ३२७, और 'पार्वती स्तोत्र', 'जूर्ना एसियातीक', १८४१।

[3] 'एशियाटिक रिसर्चेज़', जि० १०, पृ० ४१६

भेद – शीर्षक रचना का, ब्रज-भाखा[1] में, 'आनन्द प्यूशारा' (Pyû-shârâ) शीर्षक के अंतर्गत, अनुवाद हो चुका है, और बुलन्द-शहर से १८६५ में प्रकाशित हो चुका है।[2]

उनसे संबंधित 'भक्तमाल' का लेख इस प्रकार है :

छप्पय

कलियुग धर्मपालक प्रगट आचारज शंकर सुभट।
उतश्टंखल अज्ञान जिते अनईश्वरबादी।
बौध कुतर्की जेन और पाषंड है आदी।
बिमुखनि को दियो दंड ऐंचि सनमारग आनैं।
सदाचार की सीव बिश्व कीरतहिं बखानैं।
ईश्वर अंश अवतार महि मर्य्यादा माड़ी अघट।
कलियुग धर्मपालक प्रगट आचारज शंकर सुभट।

टीका

शिव के आंशिक अवतार, संकर, द्रविड़ ब्राह्मण,[3] शिवशर्मा के पुत्र थे। जब वे बालक थे तभी उनके पिता की मृत्यु हो गई। जब वे पाँच वर्ष के थे, उनका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ। आठ वर्ष की अवस्था में उनकी शिक्षा प्रारंभ हुई, और शीघ्र ही अपने गुरु, गोविन्द स्वामी, की भाँति विद्वान् भी हो गए। जब वे बारह वर्ष के हुए, वे दिग्विजय के लिए निकले। पहले वे बद्रिकाश्रम गए। वहाँ उनकी व्यास से भेंट हुई। उन्होंने इस मुनि की पवित्र कृतियों की टीका की थी, और उन्होंने वह उन्हें दिखाई। व्यास प्रसन्न हुए, और उनसे कहा : 'तुम्हारी अवस्था वास्तव में सोलह वर्ष की है; अच्छा,

[1] १८६६ के प्रारंभ का भाषण।

[2] जे० लौंग, '१८६७ का डेस्क्रिप्टिव कैटैलौग', पृ० ४०

[3] ब्राह्मण दो बड़ी शाखाओं में विभाजित हैं ; द्रविड या द्रविड़, और गौड या गौड़, और इन शाखाओं में से हर एक में पाँच-पाँच जातियाँ हैं।

मैं तुम्हें सोलह वर्ष और देता हूँ। इस प्रकार तुम बत्तीस वर्ष पृथ्वी पर रहोगे।'

तत्पश्चात् वहाँ से वे मण्डन मिश्र के यहाँ गए। वहाँ उनका इस आचार्य से शास्त्रार्थ हुआ। किन्तु मडएन मिश्र की पत्नी, जो सरस्वती का अवतार थी, उनके शास्त्रार्थ में निर्णायक थी। उसने दोनों के गलों में एक-एक पुष्प-माला डाल दी, और उनसे कहा : 'जिसकी माला पहले सूख जायगी वही पराजित मान लिया जायगा।' शास्त्रार्थ करते समय, मण्डन मिश्र के गले की माला सूख गई। तब संकराचार्य ने चिल्लाकर कहा: 'तुम मेरे शिष्य बनो।' मण्डन मिश्र की पत्नी ने कहा: 'वे केवल आधे हैं, उनका दूसरा अर्ध भाग मैं हूँ।[1] वे उस समय तक तुम्हारे शिष्य नहीं हो सकते जब तक मैं तुमसे पराजित न हो जाऊँ।' तत्पश्चात् मण्डन मिश्र की पत्नी से शास्त्रार्थ हुआ, किन्तु वह उन्हें 'रस-शास्त्र'[2] पर ले आई। किन्तु संकर अभी बालक और सरल ब्रह्मचारी थे, और वे 'रस-शास्त्र' से अनभिज्ञ थे। इसलिए शास्त्रार्थ की तैयारी करने के लिए उसने उन्हें एक मास दिया। तब संकर उठे, उन्होंने एक मृत राजा का शरीर धारण किया[3] और अपने शिष्यों से अपने वास्तविक शरीर की रक्षा करने के लिए कहा।[4] एक महीने में जब वे 'रस-शास्त्र' का अध्ययन कर चुके, तो उन्होंने फिर अपने स्वाभाविक शरीर में प्रवेश कर लिया, और मण्डन मिश्र की पत्नी के साथ शास्त्रार्थ करने गए। उनकी विजय हुई, और उसके पति को अपना शिष्य बना लिया।

---

[1] 'पत्नी' के लिए हम भी फ्रेंच में 'अर्द्ध' कहते हैं।

[2] 'प्रेम का ग्रंथ'; मेरे विचार से, वही जो 'कोक-शास्त्र' है।

[3] यह भली भाँति समझा जा सकता है कि यह रनिवास की रानियों के साथ पति का कार्य पूर्ण करने और 'रस-शास्त्र' का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति थी।

[4] इस भय से कि कोई उसे जला न दे, और साथ ही वे उसे फिर धारण न कर सकें।

एक दिन जब संकराचार्य एक ऊँचे स्थान पर बैठे हुए थे, एक कापालिक फ़क़ीर[1] उनके पास आया, और उनसे यह बात कही : "भगवन्, ज्यों ही मैं शिव के ध्यान से मुक्त हुआ, वे प्रकट हुए और मुझ से कहा 'कोई वर माँगो'। तब मैंने उनसे मुझे अपने दरबार में दाखिल करने की प्रार्थना की। उन्होंने मुझे उत्तर दिया : 'यदि तुम किसी महान् सम्राट्, या अध्यात्म विद्या में पारंगत किसी जोगी का सिर ले आओगे तो मैं तुम्हारी इच्छा पूर्ण करूँगा। इस उत्तर के बाद, उनकी शर्त पूरी करने के लिए बहुत घूमा हूँ किन्तु व्यर्थ ही। मैं तुम जैसे व्यक्ति को पाने में निरन्तर निराश हुआ; इसलिए तुम मुझे अपना सिर दो।" संकराचार्य ने उससे कहा : 'तुम बुद्धिमान हो; मुझे मेरे सिर से क्या लाभ मिलेगा ? इसलिए मैं तुम्हारे उसे ले लेने के लिए राज़ी हूँ। किन्तु यदि मुझे इसी क्षण मारोगे तो मेरे शिष्य यह कार्य देख कर, तुम्हें मार डालेंगे, इसलिए तुम्हें उस समय सिर काटना चाहिए जब तुम अकेले रहो।' कापालिक ने, इस बात से सहमत हो उसे पसन्द किया। तब संकर उस स्थान पर गए जहाँ उन्होंने अपना सिर कटाने का वचन दिया था, और ध्यान-मग्न होकर बैठ गए। सिर काटने के लिए कापालिक भी वहाँ पहुँचा। संकर का सनन्दनाचार्य (Sanandanâchârya) नामक शिष्य बाहर बैठा था। इस अजनबी का कुविचार देखकर, उसने नरसिंह की स्तुति की। देवता प्रकट हुए, उन्होंने कापालिक को हृदय पर आशीर्वाद दिया[2] और साथ ही इतनी जोर से हँसे कि संकर का ध्यान टूट गया। नरसिंह का यह अद्भुत कार्य देखकर संकर ने उनकी स्तुति की। तब नरसिंह ने उन्हें आशीर्वाद दिया और अन्तर्धान हो गए।

---

[1] अर्थात्, 'पीने के लिए मनुष्य की खोपड़ी काम में लाने वाला।

[2] शब्दशः, 'उन्होंने उसका हृदय चकनाचूर कर दिया', अर्थात् 'उन्होंने उसे मृत्यु प्रदान की।'

संकर इस स्थान से उठे, और अपने पितामह, गुरु गौड़पाद, के पास गए, जिन्हें उन्होंने वह ग्रन्थ दिखाया जिसकी उन्होंने रचना की थी। पितामह पाठ सुनकर, प्रसन्न हुए और उन्हें अपनी स्वीकृति दे दी।

वहाँ से वे कश्मीर गए। इस प्रदेश के पंडितों ने उनसे प्रश्न पूछे जिनके उन्होंने उत्तर दिए। तत्पश्चात् वे 'सरस्वती स्थान'—सरस्वती का निवास-स्थान—नामक जगह गए और सिंहासन पर बैठने की इच्छा प्रकट की। किन्तु उन्हें एक आकाश-वाणी सुनाई दी, जिसने कहा : 'तुम सिंहासन पर बैठने योग्य नहीं हो, क्योंकि तुमने सांसारिक आनन्द चखा है।'[१] उन्होंने उत्तर दिया : 'नहीं, मैंने इस शरीर से सांसारिक आनन्द नहीं चखा।' इस उत्तर से प्रसन्न हो कर, उन्हें सिंहासन पर बैठने की आज्ञा दे दी गई। अपने अनुयायियों की अनुमति से, वे वस्तुतः उस पर बैठ गए।

उन्होंने दिग्विजय की और बत्तीस वर्ष की अवस्था प्राप्त की। तब वे अपने वास्तविक घर चले गए।[२]

दासनामी (Dâsnâmîs) नामक संन्यासियों की स्थापना उन्हीं के द्वारा हुई।[3]

ऐसा प्रतीत होता है कि एक और संकर या शंकर थे जिन्होंने हिन्दुस्तानी में लिखा है। मेरे स्वर्गीय मित्र एफ़० फ़ॉकनर (Falconer) के चित्र-संग्रह पर, सतारा के नवाब के वकील, मीर अफ़ज़ल अली द्वारा लिखित पाठ के आधार पर, इस लेखक की एक ग़ज़ल का अनुवाद इस प्रकार है :

---

[१] क्योंकि वास्तव में यह केवल, उनके द्वारा पुनर्जीवित, मृत राजा के शरीर से था, कि शंकर ने जनानखाने की स्त्रियों के साथ संसर्ग किया था।

[२] अर्थात्, 'अपने वास्तविक निवास-स्थान, चिरंतन निवास-स्थान (आकाश) को।'

[3] एच० एच० विल्सन, 'एशियाटिक रिसर्चेज', जि० १७, १७२ तथा बाद के पृष्ठ

उन सभी मनोवांछित वस्तुओं को जो दुनिया में पाई जाती हैं, मैंने सारहीन पाया।

चिकित्सक ने प्रेम की बीमारी की कोई दवा नहीं निकाली, मैंने वास्तव में इस रोग को दुस्साध्य पाया है।

यदि कोई अपने प्रेम का सुखपूर्ण अन्त चाहता है तो उसे धैर्य और उत्सर्ग से काम लेना चाहिए।

इस कठोर हृदय मूर्ति से दया अपरिचित है; अपने हृदय की घण्टिका की प्रबल ध्वनि व्यर्थ जाती है।

मैं ख़ेमे और हरम में घूम आया हूँ; किन्तु, इच्छा रहने पर भी, क्या मुझे दिल का काबा मिल सकता है?

हे शंकर, तब क्या तू, बिना बदनामी मोल लिए, प्रेम के आनन्द का रस प्राप्त कर सकता है?

———

अनुक्रमणिका

(पुस्तक के केवल मुख्यांश—अ से ह तक—में आए ग्रन्थों तथा पत्रों की अनुक्रमणिका)

× × × ×

(केवल उन महत्त्वपूर्ण यूरोपियन लेखकों की अनुक्रमणिका जिनका तासी ने अत्यधिक उल्लेख किया है)